TIGHT BINDING BOOK

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_178806

UNIVERSAL
LIBRARY

OUP—552—7-7-66—10,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 83/099M Accession No. H2919

Author

Title

This book should be returned on or before the date last marked below.

सन्हैयालाल ओम

मकड़ी का जाला



राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली
सर्वोदय साहित्य मंदिर

मूल्य : आठ रुपये
प्रथम संस्करण : नवम्बर, १९५९
प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली
मुद्रक : युगान्तर प्रेस, दिल्ली

प्रस्तावना

अपने इस उपन्यास के बारे में मैं कोई बहुत बड़ा वक्तव्य देना नहीं चाहता। फिर भी मैं यह कहना चाहूंगा कि कई दृष्टियों से यह मेरे अब तक के अन्य उपन्यासों से विशिष्ट है। आदर्शवाद या यथार्थवाद के आग्रहों में मैं प्रायः नहीं पड़ता, किन्तु प्रस्तुत उपन्यास में मैंने चरित्र का अनुसरण करने की चेष्टा की है, और विशेषतः नारी-चरित्र का अनुसरण करने की। नर या नारी के सम्बन्ध में मेरी आस्था में कोई चढ़ाव-उतार नहीं है। नारी की वकालत के लिए यद्यपि आधुनिक समाज में, और खासकर भारतीय समाज में, काफी आवश्यकता और अवसर है, किन्तु मुझमें उसके लिए लोभ नहीं है। न ही मैं पुरुष की एकान्त श्रेष्ठता पर हामी हूं; वह कई स्थलों पर प्रकृत्या हीन है, और जहां नहीं है, वहां भी वह कितनी ही गहरी निचाई में उतर सकता है। नारी भी, उसी तरह, कई मानों में पुरुष से हीन है, और वह भी अपने प्रकृत ऊंचाई के क्षेत्र में भी, कितनी ही निचाई में उतर सकती है। नर-नारी की पारस्परिक अपेक्षा, सहानुभूति और आकर्षण का पर्याप्त महत्व है; सृष्टि के विकास में उसकी महत्वपूर्ण भूमिका को भी कोई नज़रअन्दाज़ नहीं कर सकता। किन्तु मैं मानता हूं, आज मानव समाज की मौलिक आवश्यकताएं सभ्यता के प्रकाश में इतनी संस्कारित हो चुकी हैं, कि नर-नारी की पारस्परिक अपेक्षा को सहज रूप में केवल मनोवैज्ञानिक ही कहना चाहिए, और इसीलिए आज नर या नारी कोई भी निरपेक्ष रूप में ही अपने क्षेत्र में पर्याप्त विकास कर सकता है। रहा प्रश्न मनोवैज्ञानिक

अपेक्षा का, सो मैं समझता हूं, हमारा वैयक्तिक विवेक, सामाजिक चेतना, तथा आचरण की विशिष्ट पृष्ठभूमि में विकसित हमारी वासनाएं और आदतें इस सीमा में ईप्सित व्यतिरेक पैदा कर सकती हैं, और कर रही हैं।

यदि इस तथ्य में सत्य का थोड़ा भी अंश हो, तो नर-नारी के मिलन की सम्पात-रेखा पर, हमें नये क्षितिज की खोज करनी ही पड़ेगी। यदि हमें ऐसा अभिनव क्षेत्र नहीं मिला, या हमने ही किसी ऐसे क्षेत्र की उद्भावना नहीं की, तो नर-नारी के सम्बन्धों में निकट भविष्य में ही हमें एक ऐसे अवरोध का सामना करने के लिए तैयार रहना चाहिए, जो हमारी सभ्यता ही के लिए चुनौती हो जाए। इस अवरोध के लक्षण हम इस समय समाज में तो पाते ही हैं, व्यक्ति के जीवन में भी इन दरारों का अभाव नहीं है।

पर यह तो, निकट ही क्यों न हो, भविष्य की बात है। वर्तमान में भी इन क्षितिजों की खोज के अभाव ने हमारे दाम्पत्य जीवन को कितना खोखला बना दिया है, यह हम सब जानते हैं; आज का समूचा ही साहित्य इन समस्याओं से भरा पड़ा है। मैंने प्रस्तुत उपन्यास में चाहा है कि नारी के मनोविज्ञान की गहराई में प्रवेश कर उसके व्यक्तित्व के विकास की मौलिक आवश्यकताओं का सूत्र पाया जाए, और उनकी ओर समाज का सहानुभूतिपूर्ण ध्यान आकृष्ट किया जाए। एक पुरुष के लिए कदाचित् यह कार्य अत्यन्त ही दुष्कर है। फिर हमारे, और खास कर नारी के जीवन की प्राकृतिक इकाइयों पर आर्थिक, नैतिक और सामाजिक विधि-निषेधों की कितनी परतें चढ़ी हुई हैं, इनको भेदकर मूल उत्स को पाना शायद असम्भव ही हो, किंतु फिर भी मैंने चेष्टा की है। हो सकता है कि कोई नारी ही यह कह दे कि मेरी अनुभूति मिथ्या है, कि मैं उसकी भावनाओं का स्पर्श नहीं पा सका। इस कथन में सत्य हो भी सकता है, नहीं भी हो सकता है। अपने अचेतन की बात को चेतना की सतह पर लाकर देखना अभी हमने सीखा ही कहां है, और अपने

आग्रहों से भी अभी हमने छुट्टी कहां पाई है ? किन्तु मानव-इतिहास की तरह मन का भी एक इतिहास है, और सच पूछा जाए तो उसका वैज्ञानिक अन्वेषण ही एक अच्छे उपन्यास का कार्य है। मैं समझता हूं, नारी-चरित्र की आवश्यकता का सहानुभूतिपूर्ण चित्रण कदाचित् विश्व-साहित्य में पहली बार अकुतोभय-भाव से फ्रांसिसी लेखक फ्लाबेयर ने अपने उपन्यास 'मदाम बावरी' में किया था। मैंने भारतीय नारी को लिया है, उसके मानसिक गठन में कितनी जड़ता (frustration) और कितना कीट (rust) लग सकता है, इसके लिए परिस्थितियां पैदा की हैं, और उस गहराई में ले जाकर मैंने उसे छोड़ नहीं दिया। उसके मातृत्व तथा पतिव्रत के संस्कारों को भी मैंने कसौटी पर कसा है। मैंने उसे समाज की मान्यताओं के बीच केवल अपनी बात कहने ही का अवसर नहीं दिया, बल्कि व्यक्तित्व के विकास की परिधि में उसकी रुचि और संस्कारों के अनुकूल मनचाही भूमिका खेलने का अवसर भी दिया है। और सेक्स की सीमा के आगे एक नये निस्सीम क्षेत्र के क्षितिज की प्रतीति कराने का भी मेरा प्रयत्न इसमें है।

मैं समझता हूं, कथा साहित्य के प्रभावशाली तत्व वे ही हो सकते हैं, जो लेखक के व्यक्तित्व में निहित हों। कथा के चरित्र लेखक की भावनाओं और मनोवेगों के ही मूर्त रूप होते हैं और इन भावनाओं तथा मनोवेगों के बीच लेखक की मनोभूमि का सम्बन्ध ही इन विभिन्न पात्रों के बीच का सम्बन्ध होता है। किसी रचना की श्रेष्ठता इन सम्बन्धों की सचाई और वास्तविकता पर ही निर्भर करती है। वस्तुतः इसीलिए मिथ्या होते हुए भी हमें लेखक की सृष्टि सत्य प्रतीत होती है। वह हमें पकड़ पाती है, केवल निहित तत्वों की विविधता के कारण नहीं, प्रत्युत इन तत्वों की संयुक्त गतिशील समग्रता के कारण। लेखक के इस निस्संग व्यक्तित्व को प्रस्तुत रचना में मैंने मूर्त रूप दिया है। साहित्य में चाहे यह नया प्रयोग लगे, किन्तु यह एक सचाई है, जो हर रचना में परदे के पीछे रहती ही है। मैं उसे परदे के बाहर रंगभूमि में घसीट लाया हूं।

इस चरित्र में कल्पना और यथार्थ का अजीब मिश्रण है, जिसमें अनुपात खोजने की चेष्टा नहीं की जानी चाहिए। फिर भी सत्य यह है कि यह व्यक्ति लेखक स्वयं नहीं है, है केवल उसका शुद्ध व्यक्तित्व। और इस पात्र की भौतिक परिस्थितियों की वास्तविकता उतनी ही उधार ली हुई है, जितनी कथा-निर्वाह के लिए आवश्यक थी। हां, मनोविश्लेषण का पैमाना लेकर नाप-जोख करने वाले आलोचक अपने मत के लिए स्वतंत्र हैं।

पात्रों के सम्बन्ध-निर्माण में चाहे मेरा अचेतन उत्तरदायी रहा हो, किन्तु उनके निज के व्यक्तित्व-निर्माण में मेरा चैतन्य ही उत्तरदायी रहा है। मैंने चेष्टा की है कि मैं अधिक से अधिक इस माने में निर्लेप रहूं, और अपने व्यक्तित्व को उनपर थोपने की अपेक्षा उनके व्यक्तित्व से ही तादात्म्य प्राप्त करूं। इस निर्लिप्ति ही में एक लेखक की सफलता है।

यथार्थ और कल्पना के इस द्वन्द्वात्मक आग्रह के कारण पात्रों के ऊपर वास्तविक व्यक्तियों की छाया चाहे आ गई प्रतीत हो, पर उनका विकास मेरा निज का है। लेखक की सृष्टि कोई निराली नहीं होती, उसमें भी हम-आप ही बसते हैं। यदि कोई इनमें अपने आपको देखने की चेष्टा करे, तो वह मेरे श्रम की सफलता ही का प्रमाण होगा। मैं उसका स्वागत करता हूं—सबसे आगे अपने अछद्म नाम-रूप में मैं तो हूं ही! किन्तु मैं तब भी प्रार्थना करूंगा, कि पाठक मेरी कल्पना का प्रसाद ही ग्रहण करे, दंड ग्रहण करके मुझे लज्जित न करें। सच तो यह है, जैसा कि मैं कह भी चुका हूं, कि ये सभी पात्र मेरी कल्पना ही के प्रतिनिधि हैं, वास्तविक व्यक्तियों से यदि ये कुछ लेते-देते दिखाई दें, तो वह भ्रांति ही है।

पाठक लेखक का परमेश्वर ही होता है। मेरे पाठक ने मुझे पढ़ा अवश्य है, पर अपनी सामर्थ्य और अभावों को जानने का उसने मुझे कम ही अवसर दिया है। मैं पाठक को बहलाना नहीं चाहता, यद्यपि पकड़े अवश्य रखना चाहता हूं—उसे बरगलाना तो कतई नहीं चाहता, फिर

भी यदि वह इन पृष्ठों में अपने आप को पहचान सके, भूल भी सके, तो वह मुझे ज़रूर याद करे, यही मेरी उससे प्रार्थना है। अपने व्यक्तित्व का तो मैंने इसमें विनियोग ही कर दिया है।

शुभ कामनाओं के साथ—

८/ए, नन्दन रोड, भवानीपुर,
कलकत्ता २५.
२० अक्तूबर, १९५९

—सन्हैयालाल ओझा 'स्नेह'

७

नरवरोत्तम नारायण नटनागर ने—नटनागर मुझे क्षमा करें, उनका गुणानुवाद प्रारंभ करने की जल्दी में, संविधान द्वारा प्रदान की हुई उनके नाम को भूमिका 'श्री' मैं भूल गया हूं, प्रायश्चितस्वरूप मैं लिखता हूं श्रीमान् नरवरोत्तम नारायण नटनागर ने अपने ताम्बूल-राग-रंजित अधरों को १८० के कोण पर समानान्तर करके कहा, 'आप लोगों को धन्यवाद देने में मिसेज़ नटनागर भी मेरे साथ हैं। आपने सचमुच बड़ी कृपा की है!'

जोशी ने कहा, 'मिसेज़ नटनागर को पाकिट में छिपाते फिरते हो क्या दोस्त?'

'दिल में तो ज़रूर छिपाते फिरते होंगे!' नानकचन्द ने फबती कसी।

धर्मप्रकाश ने कहा, 'पाकिट में निकल जाएं तो भाइयो, सीने पर चिपके हुए पाकिट की तलाश करना!'

जूनियर जोशी कहता-कहता रुक गया कि मिसेज़ नटनागर तो श्री नरवरोत्तम नारायण नटनागर के सिर पर चढ़कर बोल रही हैं!—पर प्रकट में वह यह तो कह गया, 'जादू वह जो सिर पर चढ़कर बोले!'

जब कि श्री नरवरोत्तम नारायण नटनागर खिसियाने-से खीस निपोरते हुए सबकी बातों का अपनी और मिसेज़ नटनागर की ओर से भी रस-पान-सा करते दिखाई दे रहे थे, नानकचन्द ने झुककर उनके कन्धे पर

हाथ रखा और पूछा, 'यार, माल तो तुमने लज्जतदार खिलाया, खुदा करे, तुम्हारा माल भी उतना ही लज्जतदार हो, पर एक बार तो ज़रूर भाभी की शकल दिखानी पड़ेगी ! क्यों भाइयो, आपका क्या ख्याल है ?'

लगभग सभी बोल उठे, 'बिल्कुल दुरुस्त ! भाई नटनागर जी, इसके बिना तो आज का यह सब प्रोग्राम फीका रहेगा !'

धर्मप्रकाश ने कहा, 'ऐसी क्या बात है ?—अबकी सण्डे (रविवार) आप सबकी इनके घर पर चाय रही ! चार बजे !'

श्री नरवरोत्तम नारायण नटनागर ने किंचित् घबराते हुए कहा, 'पर भाई साहिब, मुझे ज़रा मिसेज़ नटनागर से पूछ तो लेना चाहिए था !'

धर्मप्रकाश ने किंचित् हंसकर कहा, 'वे क्या आपसे दूर, मेरा मतलब···।'

बीच ही में रोककर नटनागर बोले, 'सो तो मैं समझता हूं, पर उनको यह सब प्रबन्ध करने में कितनी असुविधा होगी यह तो वही जान सकती हैं !'

जोशी ने कहा, 'मालूम देता है, भाभी काली हैं।'

जूनियर जोशी ने उत्तर दिया, 'जोशी जी, यह आप मिसेज़ नटनागर का अपमान करते हैं।'

जोशी बोला, 'तो फिर दिखाने में हिचकिचाते क्यों हैं ?'

नटनागर को जोश आ गया, 'अच्छा तै रही, सण्डे को चार बजे !'

यह थी श्री नरवरोत्तम नारायण नटनागर द्वारा अपने विवाह के उपलक्ष्य में अपने कार्यालय के सहयोगियों को दी हुई दावत, जिसका प्रबन्ध किया गया था एक होटल में।

इतवार को चायपान का आयोजन किया गया। श्री नरवरोत्तम नारायण नटनागर सरकारी क्वार्टर ही में रहते थे। पास ही में कुछ दूर हटकर बड़े बाबू धर्मप्रकाश का क्वार्टर था, बाईं ओर नानकचन्द रहते थे। दूसरे बाबुओं के क्वार्टर भी इसी तरह बिखरे हुए थे। पूर्व में उनका दफ्तर था।

कुर्सियां और मेज़ें दफ्तर से मंगवा ली गईं। रेशम के सुन्दर धागों से कढ़े हुए बेल-बूटेदार मेज़पोश को टेबल पर इस तरह बिछाया गया कि बेलबूटे अतिथियों की दृष्टि को पकड़ें ही। पास-पड़ोस से एक टी-सेट मांग लिया गया था, उनके घर की भी चार कप-प्लेटें मौजूद थीं। कांच के दो गिलासों में फूलदान भी सजा दिए गए थे! क्वार्टर के पीछे वाले चौक में सारी व्यवस्था की गई थी।

चम्मच पूरे न थे, इसलिए शक्करदानी ही के चम्मच से काम चलाया जा रहा था। पकौड़ियों के मसाले की सभी तारीफ कर रहे थे। रसोई-घर में पकौड़ियां बनाती हुई मिसेज़ नटनागर एक कान इधर भी लगाए बैठी थीं।

जूनियर जोशी दफ्तर में श्री नटनागर का असिस्टैण्ट था। नानक-चन्द ने उससे कहा, 'श्री नटनागर अकेले ही 'सर्व' कर रहे हैं; जोशी, तुम्हारा कर्तव्य है कि तुम भी सहायता करो।'

धर्मप्रकाश ने कहा, 'और तुम अभी बच्चे हो! तुम्हें कहीं रोक-टोक भी न होगी!'

जब कि श्री नटनागर कुछ लाने के लिए रसोईघर की ओर गए, नानकचन्द ने इशारा किया और जूनियर जोशी उठकर 'भाई साहिब, भाई साहिब' कहता एकदम भीतर चला गया।

कमला, उर्फ मिसेज़ नटनागर एकाएक व्याकुल हो गईं। यद्यपि उनको आदेश मिल चुका था, कि वे घूंघट नहीं निकालेंगी, पर किसी अपरिचित के उनके सामने आने की अपेक्षा उनके ही उन अपरिचितों के सामने जाने की बात थी। लजाकर उन्होंने सिर का आंचल खींच लिया।

देखकर जूनियर जोशी बोला, 'अरे भाभी, यह क्या करती हैं? मैं तो इनके छोटे भाई जैसा हूं। उमर में, ओहदे में—सभी में!'

कमला की अपेक्षा श्री नटनागर ही को अधिक लज्जा अनुभव हुई। उन्होंने शीघ्र ही आगे बढ़कर प्रगतिगामिता का परिचय देना उपयुक्त समझा, स्वयं ही उन्होंने कमला का घूंघट उलट दिया। कमला 'ना-ना'

करती ही रह गई। उसकी आंखें नीचे झुक गईं।

जोशी ने एक ही क्षण में देखा कि सूखी-सी लड़की है; पक्का रंग, बैठे हुए गाल, खड़े दांत, पतली-सी नाक और झुकी हुई आंखें; काजल की रेखा से मालूम पड़ता था कि वे ज़रूर खूबसूरत होंगी। जोशी ने पलक झांपते में यह भी देख लिया कि मुंह पर उनके कुछ हलकी रोमावलि है, वस्तुतः इसीलिए उनका मुंह कुछ पक्के रंग का दिखाई देता है, वरना कोई बात नहीं कि रंग को खासा-अच्छा न कहा जाए। दुबली-पतली, इसलिए खड़ी होने पर श्री नटनागर से कुछ लम्बी भी दिखाई दे रही थीं।

श्री नटनागर लम्बे न थे; यद्यपि उनकी राय थी कि लम्बा आदमी मूर्ख होता है, किन्तु फिर भी लम्बा होने की ओषधियों का विज्ञापन वे बिना पढ़े छोड़ते न थे। उनकी ऊंचाई चार फुट छः इंच से अधिक न थी; शरीर कोई खास दुबला न था, बल्कि पेट कुछ मोटा ही था, सिर भी गोल, यानी शरीर का सारा बोझ उनकी टांगों पर ही था; वे अनुपाततः छोटी तो थीं ही, शायद अधिक भार के कारण दुबली भी थीं, अतः श्री नटनागर गोल-गोल चलते थे; समता बनाए रखने के लिए उन्हें चलते समय सिर, हाथ और पेट सबको हिलाना पड़ता था। उनकी चाल एक टाइप थी।

घूंघट की खींचतान में मिसेज़ नटनागर के बेसन से भरे हुए हाथ श्री नटनागर के भाल से छू गए, अतः वहां पर बेसन का निशान हो गया। कपाल पर तो नटनागर के आंखें थीं नहीं, इसलिए वे देख न सके, और कमला ने नज़र जो नीची की तो उठाना उसे भारी पड़ गया।

जोशी ने कहा, 'भाभी, नमस्ते नहीं कीजिएगा? मैं भाई साहब का असिस्टैण्ट हूं, मुझे कहते हैं कमलनयन जोशी!'

नटनागर ने कहा, 'लजाती क्यों हो! नमस्ते का जवाब दो!—और जोशी, तुम्हारा नाम कमलनयन है, तो मिसेज़ नटनागर का नाम जानते हो?—अच्छा ये ही बताएंगी तुम्हें। नाम सुनकर खुश होओगे!'

नमस्ते का उत्तर देते हुए मिसेज़ नटनागर बोली, 'मुझे कमला कहते हैं !'

गला कुछ बेसुरा-सा मालूम दिया, पर जोशी को लगा, कुछ धीरे बोलने से उसकी स्वाभाविकता नष्ट हो गई हो। किन्तु तत्काल ही उसने कहा, 'तभी तो भाभी, मालूम देता है, हमारा-आपका कुछ पूर्वजन्म का संस्कार है। मैं कमल, आप कमला, और फिर यहां···'

कमला ने एक क्षण के लिए, केवल एक क्षण के लिए ही अपनी आंखों को ऊपर उठाकर देखा, देखा कि लड़का बुरा नहीं है, किन्तु तभी उसकी दृष्टि नटनागर की जासूस नज़र से टकरा गई, वह शीघ्र ही पकौड़ियां निकालने में लग गई।

बाहर आते ही नानकचन्द ने टोका, 'नटनागर जी, आपके कपाल पर भाभी ने क्या डिठौना लगा दिया है ?—पर हमारी नज़र लगेगी नहीं, यह बताए देते हैं।'

सीनियर जोशी ने कहा, 'नज़र लगना ही हो तो अब नटनागर को क्या लगेगी !—भाभी के होते हुए भैया को कौन पूछने लगा ?'

कमलनयन ने कहा, 'भाभी ने निशान लगा दिया है। नये-नये ठहरे ! मरदुओं की भीड़ में पहचानने में कठिनाई न हो !'

बड़े बाबू भी बोल उठे, 'भाई नटनागर, इनका मतलब समझे न ?'

नटनागर के अधर उसी १८० के कोण पर हंस रहे थे, बोले, 'चाय-पार्टी का मकसद ही यही था कि सब मिलकर खुशी मनाएं।'

नानकचन्द ने कहा, 'थ्री चीयर्स टू नटनागर, हिप हिप हुर्रे !—भाभी, अगर हुकुम दो तो बाज़ार से कल एक पट्टा खरीद लाऊं ! औरतों की म्युनिसिपालिटी शहर के इन गबरू जवानों की तलाश में ही रहती है, पट्टा देखकर फिर किसीको हिम्मत न होगी कि इनके पास फटकें !'

हंसी का कहकहा चारों ओर फैल गया।

पान लेकर श्रीमती जी को स्वयं आना पड़ा। —नीची दृष्टि से ही

उन्होंने एक मूक नमस्ते की और चल देने का उपक्रम किया, कि नानकचंद ने कहा :

'भाई नटनागर जी, इस पार्टी की कसम, जब तक भाभी अपने हाथ से सबको पान न दें, कोई पान को छुएगा भी नहीं !'

सभी मित्रों ने समर्थन किया।

नटनागर ने श्रीमती जी से कहा, 'क्या हर्ज है ?—तुम तो बेकार लजा रही हो ! आजकल के ज़माने में अगर महिला थोड़ी आगे बढ़ी हुई न हो तो वह केवल अपना ही नहीं, अपने पति का भी बड़ा अहित करती है। चलो, इसी बहाने मैं तुम्हारा सबसे परिचय करा दूंगा !'

नई लड़की, पति के अहित से डरकर बेचारी ने नटनागर का आदेश स्वीकार कर लिया।

उपस्थित सदस्यों को पान मिलने लगा, और कमला को उनका परिचय। 'ये हैं हमारे बडे बाबू श्री धर्मप्रकाश बी० ए०; मेरे ऊपर खास तौर से मेहरबान हैं। ये हैं हमारे अन्यतम मित्र श्री नानकचन्द, साहब बहादुर के निजी सहायक; आप श्री के० एन० जोशी—कृपानारायण जोशी, मेरे सहयोगी, बड़े ही जिन्दादिल; इन्हें तुम जानती ही हो, जूनियर जोशी—के० एन०, यानी कमलनयन जोशी, मेरे सहायक; और···'

जब तक कि श्री नटनागर आगे वाले का परिचय दे रहे थे, कमलनयन ने पान लेते समय कमला के हाथ को अंगुली से छू दिया, उसकी कनपटियां सुर्ख हो गईं; एक क्षण को फिर दोनों के नेत्र मिले—श्री नटनागर का परिचय चलता रहा, किन्तु कमला ने फिर कुछ नहीं सुना, वह कुछ सुन ही नहीं सकी।

धन्यवाद की तुमुल ध्वनि में चाय की यह संक्षिप्त पार्टी भी समाप्त हुई।

नव दंपति ने मुस्कराकर एक दूसरे की ओर देखा, लहरों के हलकोरों में उनकी नाव आगे बढ़ रही थी। जीवन की कहानी का शीर्षक मुखर होने का प्रयत्न करने लगा।

२

किन्तु, इसके पूर्व कि कथा आगे बढ़े, आप श्री नरवरोत्तम नारायण नटनागर का परिचय कुछ और सूक्ष्म रेखाओं में देखना चाहें ! अठारह बरस की उमर में प्रवेशिका (मैट्रिक) पास करके, वे इस कार्यालय में क्लर्क हो गए थे। पिता पुरानी सिंधिया रियासत के किसी कस्बे में गिरदावर थे। यहां पर दूर के रिश्ते में कोई मामा थे, उन्हींके यहां रहकर मैट्रिक पास किया, और उन्हींकी सिफारिश से नौकरी भी लग गई। छ.-सात साल हो गए उस बात को। क्लर्क को जीवन के प्रारम्भ में कुछ संघर्ष तो करना ही पड़ता है; तीनेक वर्ष तक दफ्तर में लोटन कबूतर रहकर श्री नटनागर ने आखिर अपनी पोजीशन जमा ली, और तब से बराबर उन्नति करते हुए अब अपने विभाग के प्रमुख लेखक हो गए हैं। साल भर हुआ, दफ्तर के उपनिवेश में इन्हें रहने को मकान भी मिल गया है। मामा का घर छोड़कर तब से वे यहीं रहते हैं।

पर यह परिचय तो सभी क्लर्कों का हुआ करता है। हमारे नायक नटनागर जी इतने-से परिचय से संतुष्ट होने वाले नहीं। उनके व्यक्तित्व को प्रतिष्ठित करने के लिए, और बारीक कलम की आवश्यकता है।

पहली बात तो, आजकल वे अपना नाम नरवरोत्तम नारायण नटनागर नहीं लिखते। उन्होंने उसे संक्षिप्त कर लिया है मिस्टर एन० एन० नटनागर ! हस्ताक्षर भी वे बड़े मजे के करते हैं : नामाक्षरों के लिए वे लिखते हैं 'एन्' और फिर उसपर '३' की संख्या लिख देते हैं, जिसका अर्थ होता है 'एन्-क्यूबिक' यानी एन् की तीन बार आवृत्ति; और पूर्ण हस्ताक्षरों के लिए लिखते है, 'एन्-क्यूबिक अटनागर' ! हस्ताक्षरों में कुछ विशिष्टता चाहिए ही, सो यही उनकी विशिष्टता है। कुछ दोस्त उन्हें कभी-कभी मौज में 'मिस्टर एन्-क्यूबिक' के नाम से पुकार भी लेते हैं, और ये हंसकर उसी नाम से बोल भी लिया करते हैं।

यहां पर उनके मूल नाम की मौलिकता पर भी हमारा ध्यान खिंच आना स्वाभाविक है। नाम में व्यक्ति का महत्व ही नहीं, उसका अस्तित्व भी हम स्थापित करने का प्रयत्न देखते हैं। व्यक्ति मर जाता है, पर तब भी नाम जीवित रह सकता है, अतः व्यक्ति से अधिक नाम बढ़ जाए तो आश्चर्य ही क्या है ? भारतवर्ष में नाना के घर पैदा होने वाले बच्चों के नामों की एक तालिका है, जो उसके जन्म के सम्बन्ध की ओर इंगित करती है। नंदलाल, नंदकिशोर, इसीके बिगड़े हुए रूप नोंदराम, नंदिया और कवित्वमय रूप नन्द, उपेन्द्र आदि इसी तालिका से सम्बन्ध रखते हैं। श्री नटनागर के पिता लाला नन्दलाल जी भी नाना के घर पैदा हुए थे, अतः जब उनके पुत्र भी नाना के घर ही पैदा हुए, तो उनके नाम की समस्या उपस्थित होना स्वाभाविक ही था। उपेन्द्र आदि संस्कृत शब्दों की ओर उनका ध्यान जा नहीं सका, और दूसरे नामों में से कुछ चुना जाना उन्हें अच्छा न लगा। झुंझलाकर नाना-नानी बच्चे को 'नाना' ही कहने लगे, और उनका शिष्ट नाम हो गया 'नाना लाल' !—धीरे-धीरे पुकारने का नाम हो गया उनका 'नन्ना' !

नन्दलाल जी गुजराती न थे, वरना मैट्रिक तक आते-आते श्री नटनागर को अपने व्यक्तित्व-प्रदर्शन के लिए श्री नरवरोत्तम नारायण नटनागर जैसे बड़े नामाभिधान की शरण न लेनी पड़ती, और वे सरलता से अपना कवित्वमय ही नहीं, चित्रमय नाम रख लेते 'ननु नटनागर'; किन्तु जब यह नहीं हो सका, तो नहीं ही हुआ !

स्वाभाविक था कि नन्ना नाम उन्हें अच्छा न लगे, इसलिए 'नन्ना' शब्द को नामाक्षर मानकर किसी सुन्दर-से नाम का आविष्कार करना आवश्यक था। लाला-वंश की फारसी के कीचड़ में अंग्रेजी का कमल बनकर उसका उद्धार करने का उन्हें श्रेय था, अपने नाम ही का फिर क्यों उद्धार न किया जाए ? किसीने 'नर-नारायण' सुझाया, किसीने 'नरोत्तम नारायण'; किन्तु फिर भी इनमें विशेष विशेषता न थी। उन्हीं दिनों पाठ्य पुस्तक की कविता-पंक्ति में, मात्रा और तुक के प्रयत्नों से

निकाले गए किसी कवि द्वारा प्रयुक्त 'नरवरोत्तम' शब्द पर उनकी दृष्टि अड़ी, और अड़ ही गई। स्वीकार करने के सिवा कोई चारा न था, कवि ने वह शब्द इन्हींके लिए गढ़ा था, तभी तो लेखक, संकलक, सम्पादक, प्रकाशक, पाठ्य पुस्तक-निर्वाचक, परीक्षक, अध्यापक आदि समस्त क-अंतकों के चक्रव्यूह से बचकर यह शब्द उनकी दृष्टि तक पहुंच पाया था। नारायण शब्द और जोड़कर उसे मौलिक भी कर लिया गया।

नरवरोत्तम नारायण, नाम तो हो गया, पर आगे भी तो कुछ होता है !—उनके पिता भटनागर कायस्थ थे। नाम के आगे लिखते तो न थे, पर कहलाते तो थे। श्री नरवरोत्तम नारायण ने अपने नाम से मेल खाने के लिए 'भटनागर' शब्द का भी कवित्वमय जीर्णोद्धार कर डाला, वह हो गया नटनागर, चटनी की तरह चटपटा-मसालेदार ! सम्पूर्ण नाम को प्रसन्नता और असीम संतोष के साथ उन्होंने मानो अपनी आंखों से प्रत्यक्ष देखा, कविता की पंक्ति के समान कई बार अधरों पर गुनगुनाया, और सहस्रनाम पाठ की भांति ही अपनी नोट-बुक पर सहस्र बार उसे लिखकर उसके असीम सौंदर्य को ससीम साधनों द्वारा आंकने की चेष्टा की। शीघ्र ही, स्वल्प समय में यह नाम उनका कॉपी राइट पेटेण्ट, सर्वाधिकार सुरक्षित, सुविशेष-विशेषक हो गया।

और अब और भी विशिष्ट रूप से वे कहलाते हैं, मिस्टर एन्-क्यूब अटनागर !

शायद आप भूले न होंगे, उनकी लम्बाई चार फुट छः इंच से अधिक नहीं है। रंग उनका अच्छा-खासा गोरा है। चाल उनकी अपनी है, कोई सुन्दरता के साथ उसकी नकल तक नहीं कर सकता। सिर गोल, पेट गोल; गोल धरती पर, अपना स्थान बनाने के प्रयत्न में अभी-अभी उन्होंने विवाह किया है कमला के साथ, जिसे आप देख ही चुके हैं ! यों शादी उनकी जल्दी हो जानी चाहिए थी, किन्तु बुरा हो इन जाति वालों का, कुछ दुर्वाद फैला बैठे थे इस कुटुम्ब के लिए ! श्री नटनागर का नाना के यहां जन्म लेना इन लोगों के लिए रहस्य की बात थी। वे कहते हैं कि

श्री नटनागर के पिता नन्दलाल के विवाह को नौ महीने समाप्त ने में कुछ समय शेष था, फिर तो लोगों ने आसमान से कुलाबे मिलाए, नन्दलाल जी के जल्दी-जल्दी में विवाह करने की बात भी याद की गई, आदि-आदि। इसलिए नटनागर को कमला ज़रा कठिनाई से मिली, जब कि वे स्वयं मैट्रिक पास होकर भी खाने-कमाने लायक हो गए, और माता-पिता से अलग मकान लेकर रहने लगे !—कमला मिली और खूब मिली !

वैसे अच्छे-खासे रंग का गोल चेहरा उनका बुरा नहीं लगता। काफी चौड़ा उनका ललाट है, बाल पीछे की ओर जाते हैं, प्रवृत्ति यह है कि ललाट बढ़ते-बढ़ते बालों की जमींदारी को दखल कर लेना चाहता है। आंखें, जैसी कि आदमी की होनी चाहिएं; न बड़ी, न छोटी, बल्कि गड्ढे में ठीक तरह बैठी हुई ; नाक साधारणतया ठीक, ज़माने के साथ कटकर फिर सम्हल जाने वाली, नीचे की ओर झुकी हुई, ऊपर की ओर उठी हुई ! फिर भी, जैसी कि इस युग की प्रवृत्ति है, उनकी नाक चाहे आपको निर्दोष दिखाई दे, उन्हें ऐसी नहीं दिखाई देती। ओठ भरे हुए, और काफी लम्बे, चेहरे के सारे अर्धव्यास पर फैले हुए, जिससे हर समय मुंह खोलते ही १८०° का कोण बन जाता है। हंसते हैं तो ओठों ही ओठों में कभी नहीं, उनका सारा गोल मुंह उछल पड़ता है, ओठ दांतों का रास्ता छोड़ देते हैं, सारी बत्तीसी मानो बिखर जाना चाहती है, बत्तीसी के बीच में ठेठ गले का हिस्सा—यानी खिलखिलाकर हंसते हैं। किसीने कहा भी था कि उनका मुंह हंसता नहीं, हिनहिनाता है।—अवश्य ही मनुष्य हिनहिनाता नहीं, पर घोड़ा भी तो नहीं बोलता, शायद उनकी हंसी आदमी के हिनहिनाने और घोड़े के बोलने का मध्य-बिन्दु थी। एक बात तो थी ही, श्री नटनागर चाहकर भी, और न चाहकर भी हंस सकते थे।

अपनी अंग्रेज़ी पर उन्हें नाज़ था, हिन्दी के इस गौरव के युग में उन्होंने हिन्दी की भी कुछ परीक्षाएं पास की थीं, अपने भाषा-ज्ञान के

आगे वे अन्य किसीको कुछ नहीं समझते थे। शादी के पूर्व उनकी वेश-भूषा सामान्य-सी थी—पजामा, कमीज़, कोट और खुला सिर; परन्तु शादी के बाद एकदम परिवर्तन हुआ, पूरे सूटेड-बूटेड-अपटूडेट, टाई-कॉलर-पिन, बूट तक सूट से मेल खाते हुए।

मेरा खयाल है कि श्री नटनागर को अब आप सरलता से कैसी भी भीड़ में पहचान लेंगे।—तो फिर मैं कहता चलूं :

श्री नटनागर के क्वार्टर में, पीछे की ओर खुले में एक स्थान पर टीन छाए जा रहे थे ताकि बरसात में ईंधन आदि रखा जा सके। छोटी-छोटी दो कैंचियां, रेल के खम्भों पर खड़ी की जाने वाली थीं। कैंचियां बनाई जा रही थीं।—दो बज चुके थे, और श्री नटनागर भोजन करके पुनः दफ्तर चले गए थे।

कमला खाट पर बैठी ऊन से एक स्वेटर बुन रही थी। महरी को चौका उठा देने के लिए कह दिया गया था। खिड़की के ठीक सामने चौक में कारीगर और मज़दूर काम कर रहे थे। एक ओर आग जल रही थी, जिसमें लोहा गरम किया जा रहा था। गरम हो जाने पर उसे काटकर जोड़ दिया जाता था। घन की आवाज़, मज़दूर के हांफने की आवाज़, और रह-रहकर पेड़ पर बोल उठने वाले कौए की आवाज़, सब इतनी स्वाभाविक हो गई थीं कि कमला को अपने आप तक का ध्यान न था। वह स्वेटर की जाली में किरोशिए के साथ ही साथ अपने आपको भी उलझाती जा रही थी।

तो शहर की ज़िन्दगी का यह नमूना है।—रहने का मकान कोई खास बुरा नहीं, आबोहवा भी ठीक ही है।—शहर की चहल-पहल, नये-नये खेल-तमाशे, पड़ोसियों की चुहल, नया फैशन, पति का दुलार—सब नई चीज़ें थीं उसके लिए। छोटे-से कस्बे की रहने वाली थी, तीसरी जमात तक स्कूल में पढ़ा भी था। मां-बाप गरीब घर के, उनकी गृहस्थी का बोझा ढोकर ही इतनी बड़ी थी। यहां पर महरी मिली तो उसके पैर आसमान से जा लगे।

सिखाने के लिए पतिदेवता कम नहीं; क-ख-ग से लगाकर दफ्तर की फाइलों तक की सब बातें बताने के लिए पूरे तौर से तैयार। सदैव संध्या को दफ्तर से लौटते ही उसे ठीक तरह से कपड़े पहनाना, शृंगार के बाद 'शापिंग' और 'मार्केटिंग' के लिए बाज़ार ले जाना, लौटकर चाय पीना, फिर घूमने जाना, या सिनेमा-थिएटर और फिर लौटकर भोजन, दो घंटे तक पढ़ाई, और तब थककर सो जाना। चारों ओर आनन्द ही आनन्द था। पहली तारीख को तनखा, और शेष ३० दिनों में मनमाना खर्च !—और तभी एक सिन्धी महिला रखी गई, उसे सीना-पिरोना-कशीदा काढ़ना आदि सिखाने के लिए, और एक म्यूजिक मास्टर रखा गया, संगीत सिखाने के लिए ! कमला जीवन की गति में भागने लग गई थी।

यों पतिदेवता, देवता जाने कैसे होते हैं, पर मज़ का मनुष्य है। खाता-पीता है, खिलाता-पिलाता है, उसकी देखरेख करता है, परवाह करता है, चार आदमियों में बड़ाई करके फूला नहीं समाता, और कुछ उठा नहीं रखता उसे सुखी करने में। शादी के पहले कितना डरती थी वह पति नाम के भयंकर जानवर से !—सोचती थी—कि यह करेगा, वह करेगा; यह न करने देगा, वह न करने देगा; हंसने न देगा, रोने न देगा—पर सब कुछ तो बड़ा अच्छा है ! कहीं भी तो कुछ नहीं हुआ। पति यदि ऐसा ही होता है, तो नाहक उसे हौवा मान लिया गया है, और ऐसा वह होता ही है, कमला खुद जो जान गई है।

और पड़ोसी ?—वह धर्मप्रकाश, कैसा घूर-घूरकर देखता है, लगता है खा जाएगा ! लम्बा-चौड़ा ताड़ जैसा, बीवी उसकी भैंस जैसी; बड़ा बाबू है तो हुआ करे ! खुशामद करे कमला की जूती। क्यों जाऊं उसके यहां, उसकी बीवी के तो ज़मीन पर पैर ही नहीं पड़ते ! खुशामद करे वह, जिसे नौकरी करना है; और मेरे यहां तो चार बार चाय पी गया है !

एक वह बन्दर है कृपानारायण जोशी, उछल-उछलकर टांगें रखने वाला; बात करता है तो सारे शरीर से, हंसता है तो सिर हिलाता

हुआ, कपड़े पहनता है मानो थैले हों। और उसकी श्रीमती जी, औरत है कि जनती ही चली जा रही है, साल भर नहीं हुआ कि कलैण्डर तैयार; रुकने का नाम ही नहीं लेती। है तो बित्ती-सी, पर हाथ भर लम्बी जीभ रखती है, तैल में से अंगूठी निकालती है। बोलने लग जाए तो अच्छे-अच्छे तीसमारखां के पित्ते पानी हो जाते हैं। बेचारे जोशी की क्या बिसात, खरगोश लगता है उसके सामने !

यह सामने वाला छोकरा खूब है !—छोकरा, कमला कुछ मुस्करा उठी, अरे ! वे तो छोकरा कह सकते हैं, उनके हाथ नीचे जो काम करता है, पर तुझसे तो दो-चार साल बड़ा ही होगा। हुआ करे; पर है खूब ! बोलता क्या है, हंसी का फव्वारा छोड़ देता है, हरदम फूल झड़ते ही रहते हैं।—आंखों से मानो अंधेरी रात में ठंडी चांदनी फैल जाती है, दूर खड़ा रहता है, पर मानो कोई गुदगुदा रहा हो। पान लेते समय उस दिन उसने हाथ जो छू दिया, जैसे बिजली जाग उठी। छरहरा बदन, जी चाहता है बाहों में भर लिया जाए, और कभी न छोड़ा जाए ! नाम भी क्या सुन्दर है !—कमलनयन, कमलनयन; जीभ पर किसीने शहद टपका दी, पलकों को आधा ढंककर, ओठों से उसे छिपा देने की तबियत होती है—कमलनयन !

घन की आवाज़ें एक लय के साथ हवा में झूम रही थीं, काल की अनवरत प्रवाह जैसी रेंगती हुई लम्बी कृष्ण देह में मानो विषैली कुण्डलियां पड़ रही हों। गर्म लोहे की सुर्ख छड़ों पर घाव करने वाली छैनी, घन की भयानक चोट खाकर मानो लोहे के तृष्णा-दग्ध अधरों पर अपना तीक्ष्ण दंशन छोड़ देती है, किन्तु उस आग से जलकर शीघ्र ही दूर जा गिरती है, संडासी की पकड़ तक शिथिल हो जाती हैं, किन्तु वह बलिष्ठ लुहार कन्सीराम अपनी भयानक मांसल भुजाओं को फैलाकर, फिर उस छैनी को संडासी में फंसाता है, फिर चोट पड़ती है। फिर वही अग्निमय दंशन, फिर छैनी का प्रत्यावर्तन—और लोहे के बदन में दरार बढ़ती जाती है। पूंजीवाद की शोषण-प्रणाली का जड़ संस्करण—

संडासी, छैनी, घन, लोहा, शोषण की कड़ियां, एक दूसरे से विद्रोह करती हैं, किन्तु लुहारों का षड्यन्त्र, पूंजीवादी प्रणाली की भांति एक दूसरे को विश्रस्त करता हुआ निर्बाध चला जा रहा है।

एक भयानक आवाज़ से कमला का ध्यान टूट गया, दृष्टि उठाकर उसने देखा कि घन चलाने वाले मजदूर ने घन को एक ओर पटक दिया है, और अपनी कमर पर सीधा होकर बाएं हाथ की तर्जनी से ललाट पर बिखरे हुए पसीने के मोतियों को समेटकर जमीन पर चुआ रहा है। कमला ने देखा और देखते ही रह गई। उसने इस आदमी को पहले भी देखा है, परन्तु केवल आंख से ही देखा है, ध्यान से नहीं।

याद पड़ता है उस आदमी ने इसे 'दादू' कहकर पुकारा था—'अबे दादू के बच्चे!'—शायद यही उसका नाम हो! सचमुच यही उसका नाम था! अजीब आदमी है; आदमी है या तमाम भयानक जानवरों और आदमी के बीच की कोई वस्तु! ऊंट की लंबाई, भैंसे की मुटाई, गैंडे की भयानकता, और आदमी का ढांचा। इस्लाम की संस्कृति से उत्पन्न 'दाऊद' हिन्दू संस्कृति में आते-आते घिस-घिसाकर 'दादू' हो जाने वाला उसका नाम; अफ्रीका के हब्शीपने से चलकर, भारतवर्ष की तराइयों तक आ पहुंचने वाली मनुष्यता की स्थानिक विशेषताओं से ओत-प्रोत उसका शरीर-पिंजर; और अपने पूर्वज गोरिल्ला की वृत्तियों से लगाकर आज के मानव की आदिकालिक संस्कृतियों की विकासवादी धारा से समन्वित उसकी चिन्तन-मुद्रा, सब मिल-मिलाकर उसके बाहुल्यपूर्ण शरीर को बहुकालिक और बहुस्थानिक व्यक्तित्व दे रहे थे। उसे देखकर आंखें फिरा लेना असम्भव था, और उसकी ओर देखकर संतोष प्राप्त करना भी उतना ही असम्भव था। देखने योग्य न होने पर भी मानो उसे देखे बिना आंख मानती न थी!

जो पाजामा वह पहने हुए था, उसे उसने मोड़कर घुटनों पर चढ़ा रखा था। काफी लम्बी-लम्बी टांगें थीं, उतनी ही मोटी भी, बड़े-बड़े बालों से ढंकी हुई।—उतनी ही लम्बी और चौड़ी पगथली, चौड़े-पृथुल

पंजे पर अंगुलियां—मालूम पड़ता था, सब कुछ इतना मोटा था कि एक सांचे में ढल नहीं पाया, इसलिए पृथक्-पृथक् सांचे में ढालकर, बाद में सबको चिपका दिया गया है !—पंजों के काले रंग पर रास्ते की धूल और पसीने ने मिलकर, कहीं सफेद कहीं मटमैला चित्र खींच दिए हैं। उसी अनुपात में ऊंचा और चौड़ा पेट तथा वक्ष का भाग, एक गन्दे बनियान से ढंका हुआ; बनियान जगह-जगह फटी हुई ही नहीं, लम्बाई में कुछ छोटी भी थी, अतः नाभि के पास का त्रिभुज बड़ा अजीब-सा दिखाई दे रहा था। बाहें खुली हुई उतनी ही लम्बी और मोटी, जिनमें मछलियां तैर रही थीं, गला मानो उठे हुए कंधों के बीच दबा दिया गया था, जिसमें काली डोरी से कोई तावीज बंधा हुआ चौड़े तने हुए सीने पर हिल रहा था। छोटे-छोटे कान, नाक एकाएक ही नोक पर उठी हुई, दोनों ओठ काफी फैले हुए किन्तु मांसल, ललाट ऊपर की ओर नुकीला होता हुआ, बहुत ही छोटा सिर, जिसपर छोटे-छोटे रूखे-सूखे बाल जो कानों के पीछे जाकर सघन हो गए थे। केवल उसकी गोल छोटी आंखों का भाव बड़ा निरीह, अनासक्ति से भरा हुआ मालूम देता था। आंखों की दृष्टि मिलने पर मालूम देता था मानो एक करुण पुकार निमंत्रण दे रही है, जिसकी उपेक्षा करना बड़ा कठिन होगा, वरना उसकी ओर देखकर तबियत हिल उठना स्वाभाविक है, और चित्त का उचाट हो आना भी उतना ही स्वाभाविक है। उसका नाम दादू है !

और लुहार कन्सीराम भी सामान्य व्यक्ति नहीं, कठोर परिश्रम से सधी और गठी हुई उसकी देह उसके स्वभाव की कठोरता का भी परिचय दे रही थी। वह कुशल कारीगर था, दादू अकुशल सहायक; कन्सीराम अभी मालिक था, दादू मज़दूर; वह हाकिम था, यह नौकर, उसे छः रुपया रोज़ मिलता था, इसे एक रुपया आठ आना—यद्यपि श्रम और आवश्यकता की दृष्टि से विलोम अनुपात पर दृष्टि जाना ही स्वाभाविक है।

लोहा ठण्डा हो चुका था, उसे फिर पास में जलने वाले आग के

जगरे पर रख दिया गया। जब तक वह लाल रहता है, तभी तक उसे चोट पहुंचाई जा सकती है। कठिन तपस्या में लोहा भी पानी हो जाता है। नरम होने पर चोट उसपर कारगर हो जाती है।

जब तक लोहा गरम हो दोनों ने बीड़ियां निकालीं; जगरे से छुआकर उन्हें प्रदीप्त किया, और सफेद धुएं में दोनों के चेहरे व्याप्त होने लगे। लोहे का एक दूसरा टुकड़ा गरम हो चुका था। देखकर दादू बोला :

'उस्ताद, यह तो गरम हो गया !'

कन्सीराम ने बीड़ी का एक लम्बा कश खींचा, फिर सिरे को आंगन पर ज़ोर से दबाकर बुझाते हुए उसे अपने कान में खोंस लिया, और बोला 'लो तुम छैनी पकड़ो, मैं चोट मारता हूं। तुम तो बैल हो बिलकुल—घन पटकने में सिरफ ताकत ही नहीं, अकल भी चाहिए। इस तरह चोट पड़नी चाहिए कि छैनी घुसती ही चली जाए !'

घन लेकर जब कन्सीराम खड़ा हो गया तो दादू ने संडासी से छैनी को पकड़कर लोहे पर रख दिया। बीड़ी तब भी उसके मुंह में उलझी हुई थी; धुआं नाक, मुंह और आंख के रस्ते बाहर निकल रहा था। घन की चोटों का गीत शुरू हो गया। कमला किरोशिए पर लगी हुई आंटियों को गिनने लगी।

कुल मिलाकर उन्नीस आंटियां हैं, झुका हुआ फूल कितनी आंटियों के बाद शुरू होगा ?—ऊपर से एक ज्यादा—ऊपर कितनी आंटियों के बाद सफेद धागा शुरू हुआ था ?—तेरह पर या पन्द्रह पर; भूल गई, फिर से गिनना पड़ेगा। कमला गिनने लगी, एक, दो, तीन—

दादू कैसा भयानक आदमी है, देखते ही बदन में कंपकंपी छूट जाती है। वैसे रंग काला है, पर आदमी को ऐसा ही तो लम्बा-चौड़ा होना चाहिए। आदमी और पिद्दी जैसा, वह भी कोई आदमी है ?—गोरे रंग में रखा ही क्या है ?—उन जैसों को चार को दैंबा ले, और चूं तक न करें;—हां यह दादू उन जैसे चार को दबा ले ! आदमी क्या है, भूत है। हाथ और पैरों में मांस की कैसी गांठें बंधी हुई हैं। जब घन उठता है

तो नसें फूल जाती हैं; मांस की लम्बी-लम्बी पेशियां पानी की लहरों की तरह टकरा जाने के लिए मचल उठती हैं; नथुनों में सांस भर जाती है, और नीचे के ओठ को दांतों से दबाकर जब समस्त शक्ति के साथ घन को वह नीचे पटकने को होता है, तो उसकी लम्बाई छः इंच और बढ़ जाती है, जब एक तीक्ष्ण हुंकार कर वह घन को छैनी पर पटकता है तो 'घट्ट' की एक आवाज़ के साथ लोहे के लाल शरीर में छैनी आधा इंच तक घुस जाती है। पर! फिर कहीं का कहीं मन जा लगा—उसे स्वेटर की आंटियां अभी गिनना है!—यहां तक वह गिन चुकी थी, पर कितनी? ऊहूं, फिर से गिनना पड़ेगा!

रंग का यदि सवाल न हो, तो मुंह भी कोई वैसा खराब नहीं है! खिड़की के बाहर निगाह उठाकर कमला ने उसकी ओर एक बार देख लिया। कन्सीराम घन चला रहा है और दादू मुंह में बीड़ी उलझाए उसी तरह संडासी से छैनी पकड़े निर्द्वन्द्व भाव से बैठा हुआ है।—ओठ बड़े हैं; पर शरीर को देखते हुए कुछ बड़े तो होंगे ही! मुंह भी वैसे कोई खास चौड़ा नहीं। उनका मुंह तो ठीक ऐसा ही चौड़ा है। दूना है तो क्या, आदमी भी तो उनसे चार गुना है! नाक जरूर भद्दी-सी है; जड़ से कुछ उठी हुई होती! पर नाक का इसमें क्या दोष?—और आंखें?—आह, जैसे उनमें पानी भरा हुआ है, साफ पानी, जिसके तले तक को देखा जा सके; और कहीं छलक पड़ा, तो देखने वाले की सारी तस्वीर धरातल पर खिंच आएगी!—बुरा हो इन आंटियों का, गिनने ही में नहीं आतीं!—एक, दो, तीन, चार—

अकस्मात् ही मानो कमला को एक धक्का लगा। 'अरे, मर गया रे!' चिल्लाता हुआ दादू ज़मीन पर लोट गया, और घन को एक ओर फेंकते हुए कन्सीराम उसे उठाने के लिए लपका। क्या हो गया एकाएक?—कमला ने सलाइयां नीचे पटक दीं, और एकदम से चौक में दौड़ पड़ी।

कन्सीराम और दादू दोनों ही अपना-अपना काम सधे हुए यंत्र की भांति कर रहे थे—संडासी की पकड़ आप ही आप छैनी को अपने आसन

पर स्थिर सीधी कर देती थी, लोहे की छड़ पर उसकी नोक ठीक जगह बैठ जाती थी, और घन की चोट खाकर पुनः उसे पूर्व स्थिति में आने में कुछ भी समय नहीं लगता था। सब काम स्वाभाविक गति से हो रहे थे, दादू दाहिने हाथ से संडासी पकड़े हुए था, यदि कभी संडासी की समता करने में कुछ गड़बड़ी हो जाए तो बायां हाथ सहायता के लिए आगे बढ़ जाता था, और सब पूर्ववत् हो उठता था, चोट मारने वाले को पता नहीं लगता था। दादू का बायां हाथ उसके ओठों में उलझी हुई बीड़ी से संलग्न था। कन्सीराम भी उसी तरह अपने आपको भूले हुए यंत्रवत् ही कार्य कर रहा था। दुहरी कमर पर वह जरा-सा दबाव डालता, कंधे ऊपर की ओर उछलते, हाथों की बद्ध संपुटी एक चक्कर काटती, और सीधे खड़े होने के साथ ही घन थामे हुए उसके दोनों हाथ सिर के ऊपर खड़े हो जाते। सांस को दबाकर अपने पंजों पर खड़े होकर वह घन को नीचे लाता।

दादू के मुंह से एकाएक बीड़ी की पकड़ ढीली पड़ गई, पर तभी उसने अनुभव किया कि संडासी के जबड़ों में छैनी की पकड़ भी उसी तरह ढीली पड़ गई है। यदि छैनी टेढ़ी हो गई तो लोहा टेढ़ा कटेगा, अब भी लोहा पहले जैसा जमे हुए ताजा रक्त के समान लाल है, उसने छैनी को सम्हालने के लिए अपना बायां हाथ बढ़ाया—सभी कुछ पूर्व के समान ही स्वाभाविक गति में यंत्रवत् ही हुआ, चित्तवृत्ति का कोई अंश इस व्यापार के अनुवीक्षण में व्यय नहीं हुआ, किन्तु कदाचित् कन्सीराम के अव्यक्त मन ने इसे देख लिया, और उसके हाथों की दिशा ही कुछ बदल गई। चोट छैनी ही पर लगी, किन्तु ठीक जगह नहीं। जलते हुए लाल लोहे पर दादू का बायां हाथ उसपर टेढ़ी छैनी, और घन की भरपूर चोट !—दर्द के मारे दादू वहीं ज़मीन पर दुहरा-तिहरा हो गया। ठीक समय पर कन्सीराम ने उसे उठा लिया, वरना पास में धधकता हुआ आग का जगरा, और इधर गरम किया हुआ, मानो अपने काटे जाने के कारण क्रोध से लाल लोहा। जो हो गया, वह सामने था; जो नहीं हुआ

उसकी कल्पना करना व्यर्थ है—वहां क्या नहीं होता ?

कमला ने देखा, और उसके हाथ के तोते उड़ गए ! ज़मीन पर उस मानवाकार दानव या कह लीजिए दानवाकार मानव की देह पड़ी हुई थी, लगभग निश्चेष्ट; जला-कुचला, रक्त से लथपथ उसका वायां हाथ मिट्टी में तड़फड़ाता हुआ, दाहिना हाथ, उछल-उछलकर फूट पड़ने वाली छाती पर, और सिर गर्दन की जगह से कभी बाईं तरफ, कभी दाहिनी तरफ मुड़ता हुआ ! पानी के बाहर जैसे विद्ध मछली तड़फड़ाती है ।

मुंह पर भयानक पीड़ा, काले ओठ और भी काले पड़ते जा रहे थे। लम्बी सांस को बाहर जाने देने के लिए, और उतनी ही हवा को भीतर लेने के लिए दोनों ओठों की संपुटी खुल गई थी, मुंह के किनारे से पानी बहने लग गया था, और आंखें आंसुओं से गीली होकर बन्द पड़ी थीं। असह्य पीड़ा के कारण उसके मुंह से कोई शब्द भी नहीं निकल पा रहा था । कमला ने ऐसा दृश्य कभी देखा न था, यदि वह अकस्मात् ही आंखें बन्द न कर लेती तो कदाचित् अचेत हो जाती ।

कन्सीराम ने कहा, 'बाई साहब, आप कुछ मदद कर सकोगी ?'

'क्या करना है ?'

'खून को रोकना ज़रूरी है ! अगर आप कुछ कपड़ा दे दें, और इसके हाथ को थाम लें तो पट्टी मैं बांध दूंगा । मिट्टी में लग जाने से ज़हर फैल जाने का भी डर है । फिर मैं डाक्टर से कहकर कुछ इन्तज़ाम कर ही लूंगा ।'

'मैं कर सकूंगी ?'

'अगर थोड़ी हिम्मत रखें तो कर सकेंगी ।'

'अच्छी बात है ।' कहकर कमला ने अपना दस्ती रूमाल कन्सीराम को थमा दिया । कन्सीराम ने उसे फाड़कर अपने काम में लाने योग्य बनाना शुरू किया । कमला घायल हाथ को अपने हाथों में लेकर नीचे बैठ गई । आंखों की कोरों से दादू ने कमला की ओर दृष्टि डाली, और मानो उस मूर्ति को अपनी आंखों ही में छिपाने के लिए उसने आंखों को

पुनः बंद कर लिया।

एक दस्ती रूमाल से क्या होता ? एक पट्टी भी पूरी तौर से नहीं बंध पाई !

कन्सीराम ने इधर-उधर देखा, 'धत्तेरे की ! पगड़ी ही बांधता होता तो आज काम तो आती !'

कमला ने महरी को आवाज़ दी, पर मालूम देता है, बाहर ही के रास्ते वह लौट गई। कमला ने साहस का काम किया। अपनी ही साड़ी का एक हिस्सा फाड़ दिया, और बोली, 'क्या होगा अब इस बेचारे का ?'

'डॉक्टर, शायद हाथ काटे !'

'सच ?'

'हां, नहीं तो ज़हर चढ़ने से जान पर आ बनने का अंदेशा है !

'लगी कैसे यह ?'

कन्सीराम ने एक क्षण तक कुछ सोचा, और फिर कहा, 'बीड़ी सम्भालने में छैनी ठीक जगह नहीं बैठी और उसे हाथ से ही ठीक करने लग गया ! खुद की बेवकूफी को कोई क्या करे ?'

दर्द से तड़फड़ाते हुए दादू ने फिर आंखें खोलीं, निहोरा करती हुई उन निरीह आंखों ने कन्सीराम को मानो चुनौती दी, झूठ क्यों बोलते हो ? मेरा हाथ गड़बड़ा गया, या तुम्हारा ? परन्तु वह मज़दूर था, और यह मिस्त्री; नौकर दोनों थे, फिर भी छोटे-बड़े के उस अन्तर में एक मालिक था, दूसरा मज़दूर ! दादू ने उस करुण दृष्टि को फिर कमला पर डाला और मानो मूक प्रार्थना करके वे बंद हो गईं। बन्द पलकों पर आंसू छलछला उठे।

कन्सीराम ने कहा, 'पांच मिनट अगर आप इसके पास बैठी रह सकें, तो मैं दफ्तर में इत्तला कर दूं, और फोन से कहकर डॉक्टर को बुलवा लूं। एम्बुलेन्स की गाड़ी आ जाएगी तो बेचारा जल्दी ही पहुंच जाएगा !'

कमला ने स्वीकार कर लिया। कन्सीराम की अनुपस्थिति में कमला

से दादू ने पानी भी पिया।

कुछ ही देर बाद एम्बुलेन्स-कार आ गई, डॉक्टर भी आया, और देख-दिखाकर दादू को अस्पताल पहुंचा दिया गया। इधर दफ्तर में इत्तला पहुंचा दी गई।

इसी बीच कमला ने दादू से ही कुछ पूछ-पुछाकर उसकी असहाय निरवलम्ब अवस्था का पता लगा लिया था। जिस समय दादू को स्ट्रेचर पर डाला जा रहा था, हाथ उठाकर उसने कमला से प्रणाम करने की चेष्टा की थी, किन्तु एक हाथ के अपाहिज हो जाने से उसका मनोरथ पूरा न हो सका। विवशता के कारण जब उसकी आंखों से फिर पानी बहने लगा, तो कमला को भी महसूस हुआ कि अगर वह खड़ी रही, तो उसकी आंखों की चोरी भी छिपी न रहेगी। दादू वहां से बाहर ले जाया जाए, इसके पहले ही वह भीतर कमरे में अदृश्य हो गई।

३

जी हां, यह है हमारी छोटी-सी रेलवे का बड़ा दफ्तर। आकार-प्रकार में तो खैर, जितना लम्बा-चौड़ा है, उससे न तो बड़ा ही कहा जा सकता है न छोटा ही, पर संस्कार में अवश्य जहां बड़ा है, वहां बड़ा, और जहां छोटा है वहां छोटा! मसलन इमारत के ठीक बीच में महा-व्यवस्थापक—जनरल-मैनेजर—का कमरा काफी बड़ा है, उनके सकर्तक (सेक्रेटरी) का कमरा ठीक उनके कमरे के पास ही बहुत छोटा है। और मज़ेदार बात यह है कि सकर्तक महोदय काम बहुत बड़ा करते हैं, व्यवस्थापक महोदय से भी अधिक। आसपास बड़े कमरों में छोटे बाबुओं के करीने से बैठने की व्यवस्था है। और कई अफसरों को बड़े-बड़े कमरे के छोटे-छोटे हिस्सों में प्रतिस्थापित किया गया है, किसी बड़े मन्दिर में

छोटी-छोटी असंख्य मूर्तियों की भांति। छोटी रेलवे का दफ्तर होते हुए भी काफी बड़ा है; कह सकते हैं आवश्यकता से अधिक।

यों, संस्कार में तो सभी बड़े है, छोटे से छोटा चपरासी अपने आपको जमादार मानता है, छोटे से छोटा बाबू अपने को बड़ा बाबू मानता है, और छोटे से छोटा अफसर अपने आपको सीधा जनरल-मैनेजर ! जिनको मोटी तनखाएं मिलती हैं, उनके खर्च का अनुपात बहुत छोटा है, काम भी उन्हें बहुत कम करना पड़ता है, केवल कागज़ों पर दस्तखत करना, पर जवाबदारी उनकी, कहते हैं, बहुत है, मानो उसी-का प्रतीक बनकर उनका क्रोध अपने मातहत अफसरों और क्लर्कों पर सदैव बरसा करता है, कागज़ पर दस्तखत करते समय भी, और चाय का कप खाली करते समय भी। उधर बाबू लोग, वेतन उनके संक्षिप्त, किन्तु व्यय का भार उतना ही विपुल; काम भी उनका उतना ही विपुल रहता है, सवेरे से शाम तक सख्त कुर्सी पर बैठे कागज़ पर पेंसिल घिसा करते हैं, आध घंटे के लिए बीच में सरकारी कैण्टीन से एक आने की एक कप चाय और आध आने की सड़े तेल की कचौड़ी खाकर आसानी से बवासीर की सेवा का पुरस्कार प्राप्त कर लेते हैं। दिन भर वैसे अफसरों की फटकार भी खाने को मिलती ही रहती है, इसलिए उनका हाजमा भी गड़बड़ाया रहता है। शाम को फिर दो घंटे अतिरिक्त बैठने पर भी उन्हें मालूम देता है कि कागजों का ढेर घटने की अपेक्षा बढ़ ही गया है, तो एक मोटी सांस लेकर चल देते हैं, कभी बैलगाड़ी पर, और कभी अपने ही पैरों पर ! क्लर्क के जीवन में ऐसी बातों के सिवा और है ही क्या ?

हां, आप ठीक कहते हैं, यहां पर हमारे पूर्वपरिचित श्री नरवरोत्तम नारायण नटनागर बैठते हैं। महत्वाकांक्षी तो हैं ही ! विभागीय लेखक हैं, पर सोचते हैं कि अफसर हैं। ठीक तो है, कई अफसर हैं, जो इनसे भी गन्दी और गलत अंगरेज़ी लिखते हैं। सिफारिश न होती तो कोई उन्हें नटनागर के अधीनस्थ क्लर्क तक के लिए न पूछता ! यों उनके पास

भी हाथ नीचे दो-तीन क्लर्क हैं ही। एक को आप जानते भी हैं—वही के० एन० जोशी—कमलनयन जोशी, जी हां—कमलनयन जोशी, कृपानारायण जोशी नहीं।

वे भी यों तो के० एन० जोशी ही हैं, सीनियर कहते हैं उन्हें; वे उधर बैठते हैं, वे भी विभागीय लेखक हैं, हमारे यहां विभागीय लेखक को हेडक्लर्क कहने का रिवाज ही है, हां हां, सीनियर जोशी के पास विभाग तो है, पर कोई सहायक क्लर्क नहीं, फिर भी हेडक्लर्क तो हैं ही! बडे मजे के आदमी हैं। थैले जैसे कपड़े, सिर पर बड़ा-सा साफा, उछल-उछलकर चलते हुए; और मुफलिसी का राग तो जीभ पर रखते ही हैं—उनकी बीवी, क्या करें बेचारे! बच्चा जनने की लोकलाइज्ड इंडस्ट्री—स्थानीकृत उद्योग है! लगभग पौन दर्जन, और एक को छोड़कर सब लड़कियां—कोर्ट की डिगरियां कहिए न उन्हें! मुफलिसी तो है ही। इसलिए वे घर पर कम रहते हैं, बाहर अधिक, दफ्तर में काम कम करते हैं, बातें अधिक; बातों में सुनते कम हैं, बोलते बहुत; और बोलने में तथ्य कम रहता है, कचरा ज्यादा—एक बात अपनी मुफलिसी, और अगर कोई उन्हें उधार देकर, फिर पैसा वापिस न मांगे! इसीलिए आप उन्हें प्रायः अपनी कुर्सी पर नहीं देखेंगे, सदैव दूसरों की कुर्सी पर ही!

उधर पार्टीशन की ओट में? वह है श्री धर्मप्रकाश का आफिस! जाने क्या-क्या नहीं है वह! इस कमरे में आफिस सुपरिण्टेण्डेण्ट, उधर बड़े बाबू, और उस कमरे की दुम में मैनेजर की दुम, हां सेक्रेटरी कहा जाता है उसे। सब डरते हैं—छोटा आदमी बड़ा बना हुआ—ऐसों से डरा ही जाता है।

मेरी क्या बात पूछते हैं आप! मैं उधर बैठता हूं; हां, वह बेंत की कुर्सी, छोटी-सी टेबल, यह रेडियो जैसी? अरे भाई, यह है इण्टर कॉम—डिक्टोफोन—यानी, बस यही समझ लो, अपने दफ्तर का लोकल टेलीफोन। सब तो नहीं पर हमारे अफसर हमसे सीधे इससे बात कर सकते हैं। करते-वरते नहीं, कर सकते हैं। हां, सबकी टेबलों पर तो नहीं;

मेरी नियुक्ति कुछ इसी तरह की है। यहां मेरे साथी बैठते हैं ! ओहदा ? एक क्लर्क का ओहदा ही क्या ! कागज़ और कलम की नौकरी ठहरी ! कभी-कभी टेबल की स्याही से चिट्ठी लिखकर, फाउण्टेन पेन से हस्ताक्षर भी मैं ही कर देता हूं, ताकि दूसरे व्यक्ति यही समझें कि लिखी किसी क्लर्क ने है, और हस्ताक्षर किसी अफसर ने किए हैं !

अच्छा, उस दिन जो किसीका हाथ जल गया था, उसके बारे में जानना चाहते हैं ? बैठिए, बैठिए ! दुर्घटना से सम्बन्ध रखने वाले कागज़-पत्र इसी विभाग में आते हैं। मेरा हेडक्लर्क बड़ा भला आदमी है। अमलों के हथकण्डे जानता ज़रूर है, उमरयाफ्ता आदमी जो ठहरा, पर बिना आवश्यकता उनका प्रयोग नहीं करता। फाइल देख लूं, डॉक्टर की रिपोर्ट अब तक तो आ ही जानी चाहिए।

दादू नाम बताया न आपने ? हां, यह नम्बर है फाइल का और यह रही फाइल ! डॉक्टर की रिपोर्ट—देखिए, यह रिमाइण्डर, यह रिमाइण्डर; अजी पूछिये मत, दफ्तरियत की इन दिनों कोई सीमा नहीं; रिमाइण्डर की राह देखकर ही जवाब लिखने का रिवाज है ! यह लीजिए, यह रिपोर्ट रही डॉक्टर की ! ऐं ? हिज़ हैण्ड हैज़ बीन एम्प्यूटेटेड—उसका हाथ काट डाला गया ? हाथ कट गया ? ज़िन्दगी बरबाद हो गई बिचारे की, पक्षी के पंख कट गए। क्या करेगा अब बेचारा ? अकुशल, अनस्किल्ड मज़दूर, घर पर बाल-बच्चे, सब कुछ होंगे ही ! क्या कहा ? कम्पन्सेशन—क्षति-पूर्ति ? हां, मिलनी तो चाहिए ! किन्तु नहीं-नहीं, ऐसे कागज़-पत्र मेरे विभाग से सम्बन्ध नहीं रखते। वर्क्समेन कम्पेन्सेशन ऐक्ट के अनुसार क्षतिपूर्ति के दावों की जांच के लिए एक निरीक्षक भी है, स्पेशल मजिस्ट्रेट भी; कानून की पूर्ति तो करनी ही पड़ती है ! बस उसके बाद, जो आपकी इच्छा हो आप करने के लिए स्वतंत्र हैं। कानून के पंजे से बचने की आपको सतर्कता अवश्य बरत लेनी चाहिए।

वही अपने परिचित मिस्टर एन्-क्यूब अटनागर—नहीं जानते ? अजी नटनागर को नहीं जानते—हां वही, वही उस विभाग के काम-

चलाऊ हेडक्लर्क हैं, काम चलाऊ इसलिए कि अभी मुस्तकिल नहीं हुए हैं; हां-हां होने में क्या संशय है ! हो ही जाएंगे। बड़ी पहुंच है भाई, उनकी ! बड़े-बडे आदमी चाय पीने जाते हैं उनके यहां; और काबिल आदमी भी हैं ही; अभी-अभी शादी हुई है। सो तो मानता हूं कि नई शादी और चाय पिलाने की क्षमता, किसीकी तरक्की के लिए काबलियत का पैमाना नहीं होता, पर यह है जनयुग — कलियुग से एक चरण आगे, जिसकी हमारे शास्त्रकारों तक ने कभी कल्पना नहीं की। जाने क्या-क्या हो सकता है इस युग में ! वहीं, उस परले कमरे में बैठते हैं; कोने में टेढ़ी कुर्सी जमाए, टेढ़ी गर्दन से बैठे हुए ! आदमी टेढ़े हैं, इसमें क्या शक है ? टेबल पर कागज़ को टेढ़ा रखकर टेढ़ी कलम से बड़ा टेढ़ा लिखते हैं—अक्षरों का शरीर ही नहीं, उनकी आत्मा तक वैसी ही टेढ़ी होती है कटार की तरह। उनकी टेढ़ी दृष्टि से बच बहुत कम पाता है। मामला चाहे कितना सीधा क्यों न हो, उनकी टेबल पर गया नहीं कि उस जैसा टेढ़ा फिर दूसरा कोई मामला नज़र नहीं आता।

मुझे यहीं से रुखसत कीजिए। देख नहीं रहे, टेबल पर काम कितना पड़ा है ? अखबार और किताब तो खैर पढ़ता ही हूं ! समय निकाल ही लेता हूं; अगर इतना समय न निकाल सकूं तो मैं काम को क्या निबटाऊं, काम ही मुझे निबटा दे। काम का बहाना खूब कहा आपने ! फैशन तो है ! एक अफसर हैं, जो उधर बैठते हैं ! मक्खी मारते हैं मक्खी ! दिनभर; जिस अफसर की टेबल पर चाय आई, वहीं लपक जाते हैं; और इनसे फुरसत मिलती है, तो क्लर्कों की ज़िन्दगी मुहाल कर देते हैं। पर बात करिए, कहेंगे काम में बिल्कुल गले तक गर्क हैं, कभी मरने की भी फुरसत नहीं मिलती। पर, फिर कभी कहूंगा आपके बारे में; अभी तो आप मुझे छुट्टी दीजिए।

जी, मैं नहीं चल सकूंगा ! दुश्मनी ? खूब कही आपने ! नटनागर जी से कोई दुश्मनी कर सकता है ? उनकी चाय-पार्टियों का स्वाद, उनकी आपाद-मस्तक हंसी की छलछलाहट, वे क्या कभी दुश्मनी करने

के काबिल हैं ? लेकिन फिर भी मैं कुछ सभी से कतराता हूं, और सब मुझसे कुछ कतराते हैं। मैं, मैं जो हूं मेरे बारे में ? आप तो सब जानते ही हैं ! विदा, फिर। हां-हां बता क्यों न देंगे ! उन्हींके घर पर काम करते-करते तो बेचारे का हाथ कटा है ! मिसेज नटनागर की परिचर्या का पुरस्कार भी, कहते हैं, मिला है उसे। शायद इसीलिए जान बच गई बेचारे की, वरना मर ही गया था। अच्छा विदा मित्र ! फिर मिलेंगे। क्या कहा ? जनरल मैनेजर के पास ही क्यों न चले जाएं ? बात तो ठीक है। हां, वह वहीं पर सभी सूचनाएं एकत्रित करवा देंगे। यही ठीक है, बिल्कुल ठीक !

श्री नटनागर की टेढ़ी टेबल के चारों ओर काफी भीड़ लगी हुई थी। कमरे के लगभग सभी क्लर्क उनके चारों ओर खड़े हुए थे, और नटनागर बड़े खिचे हुए-से, किसी भयानक छाया के कारण मलीन मुंह बैठे थे, अपने हवास को एकत्रित करने के प्रयास में।

कृपानारायण ने कहा, 'बात तुमने अजीब कही है, और चिन्ता जैसी है, पर एन्-क्यूब, डॉक्टर कोई बूदम ही मालूम पड़ता है !'

नानकचन्द बोले, 'ज़रा डॉक्टर का नाम तो बताना भई !'

'डॉक्टर माथुर को नहीं जानते क्या ?'

'डॉक्टर माथुर ?' कृपानारायण ने कन्धों को उछालकर टेबल के और निकट आते हुए कहा, 'डाक्टर माथुर ने कहा और तुमने मान लिया !'

नटनागर ने नीची गर्दन किए हुए कहा, 'तुम नहीं जानते जोशी, उसे टी० बी० का काफी अनुभव है।'

नानकचन्द ने उत्तर दिया, 'सो मैं मान सकता हूं। उसकी बीवी टी० बी० से मरी। उसकी मां की मृत्यु का भी, कहते हैं, यही कारण था। उसकी एक बड़ी बहन अब भी सेनेटोरियम में रोग-मुक्ति की राह देख रही है। और हम सब इन्हीं डॉक्टर माथुर के साथ आशा कर सकते

हैं, कि रोग-मुक्ति उसकी अवश्य होगी। विवाद की यदि बात रहे तो केवल इतनी-सी कि वह शारीरिक मुक्ति होगी या आध्यात्मिक ! सो डॉक्टर माथुर को टी० बी० का अनुभव तो है ही।'

कमलनयन ने कहा, 'क्या यह विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि स्वयं डॉक्टर माथुर टी० बी० का शिकार नहीं है ?'

'भाई, किसी सर्जन को भी बता दिया होता।'

नटनागर ने उत्तर दिया, 'अब इन सब डॉक्टरों को बताकर समय बरबाद करने में क्या लाभ होता ? जितने डॉक्टर उतने मत ! मैं आज संध्या को ही जा रहा हूं। मिसेज नटनागर भी साथ ही जाएंगी।'

कमलनयन ने कहा, 'भाई साहिब, भाभी को साथ कहां लिए जा रहे हैं ? कष्ट होगा, आपको भी और उन्हें भी। बम्बई कोई छोटा-सा शहर तो है नहीं !'

'तो बम्बई जा रहे हो भाई !'

'क्या करूं न जाऊ तो। लाइफ को रिस्क में तो डाल नहीं सकता !'

नानकचन्द ने मानो किसी तथ्य का आविष्कार करके कहा, 'टी० बी० वार्ड का इंचार्ज कौन है जी एन्-क्यूब ?'

'वही डाक्टर माथुर !'

'तो, मैं समझता हूं, उसका कहना मानकर तुम लाइफ को रिस्क में डालोगे।'

'तुम तो यार, डॉक्टर माथुर से प्रेज्यूडिस्ड हो।'

'प्रेज्यूडिस्ड नहीं एन्-क्यूब, मैं सच कहता हूं। वह जिस वार्ड में होता है, जिस मूड में होता है, उसकी बेगार अपने मन पर सदैव ढोता रहता है। उन दिनों दांत का वार्ड-डॉक्टर कहीं छुट्टी गया था। ये हजरत काम देख रहे थे—एक मलेरिया के मारे हुए बीमार किसान का दांत ही उखाड़ बैठे !'

'कैसे-कैसे ?' करीब-करीब सभी ने एक साथ पूछा।

'अरे मजेदार किसा है। गांव का कोई अपढ़ किसान था। कहां

कौन-सा वार्ड है, सो तो जानता न था, गले में डॉक्टरों की ट्रेडमार्क नली लगाए इन्हें इनके कमरे से बाहर निकलते देखकर पीछे पड़ गया। उसकी बात तो कुछ सुनी नहीं, जल्दी में थे, उसे वार्ड में बैठकर राह देखने को कह गए और आगे बढ़ गए। जूड़ी में ठिठुरता हुआ बेचारा बदनसीब किसान कोने में कम्बल ओढ़े गठरी बना बैठा था। जब डॉक्टर माथुर लौटे, उन्होंने बुलाकर किसान को टेबल पर लिटा दिया। बेचारा समझा कि सूई लगा रहे हैं। डॉक्टर साहब ने कम्पाउण्डर की सहायता ली। उसने किसान का सिर थामा। डॉक्टर ने मुंह खोलने को कहा। किसान ने समझा, जीभ देखना चाहते हैं। और इसके पहले कि किसान कुछ समझे और कहे, डॉक्टर माथुर ने कोकीन का इंजेक्शन देकर एक अच्छी-भली नीचे की दाढ़ को निकालकर रख दिया।'

'वाकई ?'

'हॉस्पिटल का बच्चा-बच्चा जानता है। किसान बेचारा चिल्लाया, तो डॉक्टर ने कहा, अरे तेरा दांत सड़ गया था। उसीकी वजह से बुखार है। अब ये गोलियां भी ले जा। जा, दिन में तीन बार गरम पानी के साथ लेना। ठीक हो जाएगा।'

कमलनयन ने कहा, 'भाई साहब, तब तो !···'

नटनागर बोले, 'नहीं, ऐसी तो बात नहीं है। मैं यहां के वैद्यराज जी से भी मिल चुका हूं ! प्राणाचार्य को तो जानते हैं न।—यह देखिए उनका नुस्खा !'

संकेत-नाम और संकेत-लिपि के कारण रोग के नाम का तो जीर्णोद्धार नहीं हो सका, किन्तु औषध का नाम तो पढ़ा जा सका। च्यवनप्राश अवलेह था, सिद्ध बाजीकरण प्रयोग संख्या ७, स्वर्ण भस्म, पारद भस्म —पढ़कर कृपानारायण बोले, 'अरे, यह तो ताकत का नुस्खा है, ताकत का !'

'क्षय के निदान में शक्ति का उपचार न होगा तो होगा किसका ?'

कृपानारायण ने कुछ धीरे से कहा, ताकि कोई सुन भी न सके,

और सभी सुन भी लें—'यह तो चिकित्सा है पुंसत्वहीनता की !'

श्री नटनागर ने सुनकर अनसुना कर देने ही में कुशल समझा, पर एक वक्रदृष्टि उन्होंने अवश्य कृपानारायण के ऊपर प्रक्षिप्त की।

किन्तु कमलनयन ने फिर सूत्र सम्हाला। इतनी जल्दी एक आवश्यक प्रसंग का इस तरह सरलता से टल जाना किसीको ईप्सित न था।

कमलनयन ने कृपानारायण को उद्दिष्ट कर कहा, 'मालूम पड़ता है, इन्हीं ओषधियों के अनुभव और प्रयोग से आपने कलैंडर के बारहों पत्ते पूरे भरने का संकल्प कर रखा है। कितने, तीन ही तो घटते हैं न ?'

कृपानारायण लज्जित न हुए, बोले 'और संतुष्ट होओगे मित्र, शादी हुए को नौ वर्ष अभी पूरे नहीं हुए हैं।'

'सच ?'

'झूठ क्यों कहने लगा ! —बल्कि एन्-क्यूब, मेरा कहा मानो तो टी० बी० के भूत को तो मारो गोली, और इस वैद्यराज के नुस्खे को ही प्रमाण मानकर थोड़ी अच्छी-सी चिकित्सा करवा लो।'

एक सज्जन थे, अवकाश-प्राप्ति की सीमा पर पहुंचे हुए। पचपन वर्ष की जिन्दगी का परिश्रम उठाकर भी जो जवानों को पुंसत्व के क्षेत्र में सदैव चुनौती देते सुने जाते थे, दूसरे विवाह की अपेक्षाकृत युवती पत्नी से सदैव डरा करते थे। इस प्रकार की ओषधियों का उन्हें भी पर्याप्त अनुभव था। बोले :

'यदि यही बात हो अटनागर जी, तो एक हकीम को मैं भी जानता हूं। बड़े आजमूदा नुस्खे जानता है। ताकत की दवाओं का तो शहन्शाह है, शहन्शाह। शर्तिया इलाज करता है। जिनको कोई आस नहीं रहती उनको नई जिन्दगी देता है, बिल्कुल नई। बीमार को सभी कोई खड़ा कर सकते हैं, वह तो एक बार मुर्दे को खड़ा कर देगा !'

नानकचन्द ने मुस्कराकर कहा, 'अपनी हिम्मत दिखाने के लिए आखिर कोई मुर्दा न मिले तो फिर जीवित बीमार को वहां तक आसानी से पहुंचा

भी तो देता है।'

कुछ लोगों ने सुनकर मुस्करा दिया, पर जिन्हें सुनना चाहिए था उन्होंने नहीं सुना।

नटनागर ने कहा, 'उनसे भी मिलता चलूंगा ! कहां रहते हैं वे ?'

'उनका पता मेरे पास लिखा हुआ है। अभी लिखवा देता हूं।'

कमलनयन ने फिर पुराना सूत्र सम्हालकर कहा, 'पर भाई साहब, मेरी राय है, अभी भाभी को न ले जाइए। नई जगह में आपको बड़ी तकलीफ पड़ेगी। फिर आप तो रहेंगे इधर-उधर। इन सभी डॉक्टर-वैद्य-हकीमों से मिलने-मिलाने जाएंगे और ये ?'

'पर यहीं छोड़ूं भी तो किसके भरोसे ?'

'क्यों ? —आपका घर है। और हम पड़ोसी क्या आखिर मर गए हैं ? —जिस चीज़ की उन्हें जरूरत होगी, बराबर उसका इन्तजाम कर दिया जाएगा। आप कह रहे थे आपकी माता जी भी तो आने वाली हैं।'

'इरादा यही है कि मिसेज़ अटनागर को वहीं 'मदर' के पास छोड़ दूं, और फिर बम्बई जाऊं !'

'लेकिन यह क्या भाभी के लिए बेकार मुसीबत न होगी ? —उनकी पढ़ाई मे भी हर्ज होगा।'

'यह बात तो है ! —मैं समझाऊंगा उन्हें। अगर वे मान गईं, तो यहीं रहेंगी। पर कमल, उनकी जिम्मेदारी तुम्हारे सिर रहेगी। तुम्हारे कहने से मैं उन्हें यहां छोड़ रहा हूं।'

—कि तभी चपरासी ने आकर एक चिट दिया, और कहा, 'साहब सलाम बोलते हैं।'

'मैं आया !' कहकर श्री अटनागर ने एक फाइल तलाश करनी प्रारम्भ की। सहायता के लिए कमलनयन को कहा। बड़ा सिर पटका, पर फाइल न मिली। अटनागर ने निराश होकर कहा,

'ऐन वक्त पर कम्बख्त फाइल ही गायब हो गई। मैं कहता हूं जोशी, तुम पूरे गधे हो। फाइलों को कभी सम्हालकर नहीं रखते।,

चपरासी दूसरी बार फिर याद दिला गया। साथी लेखक मीमांसा करने लगे कि फाइल को सम्हालकर नहीं रखने में और गधा होने में कौन-सी तुल्ययोगिता है !

कमलनयन ने पूछा, 'पर यह तो बताइए, फाइल आपको चाहिए कौन-सी ?'

'अरे वही दादू के एक्सिडेण्ट की।'

'वह तो उस परले सेक्शन (विभाग) में होगी !'

'नहीं, नहीं, हमारे सेक्शन की फाइल बाबा, कम्पेनसेशन की !'

'ओह आई सी (मैं समझा)। पर देखिए तो, यह आपके बगल में। यही तो रखी है ! अभी तो आपने इसपर नोट लिखवाया है।'

'हां, हां, मैं भूल ही गया था। नोट लिख दिया न।'

'पढ़ लीजिए।'

'पढ़ूंगा क्या ? —साहब जल्दी मचा रहे हैं। तीन बार तो चपरासी आ चुका है।'

अटनागर ने फाइल उठाई और चल दिए। इधर यार लोगों में चुहल फैलने लगी।

नानकचन्द ने जूनियर जोशी के कन्धे पर हाथ रखकर कहा, 'मुबारकबाद देता हूं जोशी, पर अमानत में खयानत का इरादा तो नहीं है न ?'

जोशी ने उत्तर दिया, 'खयानत जैसी अमानत भी तो हो।'

सीनियर जोशी बोला, 'तो बड़े बाबू चक्कर पर चक्कर जो काटते हैं सो क्या यों ही है ? —उड़ो मत।'

'बड़े बाबू का काम बड़े बाबू जानें !'

'और तुम न जानोगे'—नानकचन्द ने कहा—'कोयले की दलाली करो, ऐसे भोले तो हो नहीं तुम !—अच्छा यह बताओ ! यह टी० बी० क्या बला है ?'

'तो इसकी कैफियत भी मुझे देनी पड़ेगी ?'

'तो क्या मैं दूंगा ?—जिम्मेदारी जिसपर छोड़ी जाती है वह नाक पर

क्या मक्खी भी न बैठने देगा ?'

'भाई मेरे, जिम्मेदारी तो छोड़ी है आज, अभी ! और वह भी तब, जबकि भाभी को यहां रहना मंजूर हो जाए।'

सीनियर जोशी ने कहा, 'अरे टी० बी०-वी बी तो बस यों ही है। शर्त लगा सकता हूं। बेचारे को मेहनत करते-करते साल भर हो गया, लेकिन कुएं का डोल खाली का खाली ! टी० बी० का तो बहाना भर है। है न कमल यही बात ?'

'हो सकता है।'

'हो क्या सकता है, है !—मैं शर्त बद सकता हूं।'

नानकचन्द ने कहा, 'तो हम दोस्त लोग क्या मर गए हैं।—इस दिन ही काम न आए तो किस दिन काम आएंगे !—कहो तो चरस चला दें कुएं पर। दसवें महीने फसल न कट जाए तो मूंछ मुंडा लें।'

दूर बैठे एक और बाबू को बात में रस आया। थे भी रसीले; नाम राधावल्लभ ! उम्र रिटायर होने के नज़दीक। बोले, 'तुम चरस चला दोगे तो क्या चक्कर काटने वाले लोग लोटा-डोर पर गुज़र कर लेंगे ?'

नानकचन्द ने कहा, 'अच्छा, दिल के मारों में आप भी हैं। विजया की मात्रा दूनी करनी पड़ेगी !'

'दूनी होगी तब तो प्रलय हो जाएगा, प्रलय।'

कृपानारायण ने आंख मटकाकर कहा, 'बड़े बाबू से झड़प करोगे ?'

तब तक राधावल्लभ ने हथेली पर तम्बाकू और चूना मल लिया था; फांककर उसे मसूढ़े में एक ओर दबाया और ऊंचा मुंह करके बोले, 'क्लाक टॉवर के नीचे ऐसे बड़े बाबू कौड़ी के तीन बिकते हैं।'

'उनके मुंह पर कहोगे ?'

'ज़रूरत पड़ी तो उनकी बंदरिया के मुंह पर भी···!'

'तो किसी दिन तुम्हारी हिम्मत भी देखेंगे।'

'किसी दिन क्यों, आज, अभी, लो चलो !'—कहकर वे उठ खड़े हुए।

कमल ने बीच-बचाव करते हुए कहा, 'आपकी हिम्मत के क्या कहने बाबूजी ! आपने तो ऐसे कई देखे होंगे।'

'यही क्या, तुम्हारे मैनेजर जैसे आधे दर्जन देख चुका हूं !'—उनके सामने से सभी लोग हट जाया करते थे। यह कहना कठिन था कि कब उनके पोपले मुंह में ठूंसे हुए तम्बाकू के पीक का प्रसाद बाहर निकलकर सुनने वाले को अपने रंग में न रंग दे। यों भी बोलने में उनके मुंह से शाब्दिक ही नहीं, वास्तविक छींटाकशी भी अविराम हुआ करती।

नानकचन्द ने कहा, 'अच्छा बाबूजी, क्या आप हमारे अटनागर बाबू से भी लोहा ले सकते हो ?'

यह खुली चुनौती थी !

राधावल्लभ ने कपाल पर आंखें चढ़ा लीं; उनका ढीला चश्मा नाक की नोक से मानो गिरते-गिरते रुका। बोले, 'उस जोरू के गुलाम से ?....'

तभी अटनागर बाबू फाइल उठाए कमरे में प्रविष्ट हुए। सभी क्लर्क चुप हो गए। अटनागर ने निश्चय ही राधावल्लभ की बात सुन ली थी।

सभी क्लर्कों ने इशारे से नानकचन्द की ओर देखा और नानकचन्द ने तब राधावल्लभ की ओर। राधावल्लभ ने पुनः अपनी कुर्सी पर दखल जमा लिया था। छेड़ते हुए नानकचन्द ने कहा, 'कहिए न बाबूजी आगे ?'

'तो क्या मैं डरूंगा किसीसे ?'

अटनागर ने मुंह उठाकर देखा, सभी के मुंह पर मुस्कराहट व्याप्त थी। शीघ्र ही अटनागर के ओठ एक सौ अस्सी डिग्री पर खिंच गए; और उसने कहा :

'जोरू का गुलाम कौन है बाबू राधावल्लभ ?'

'समझ लो, अगर तुम्हीं होओ !'

अटनागर बाबू की सघन भ्रुवों से, मानो दो भूखे भेड़िए छूट पड़े, राधावल्लभ ने चश्मे के ऊपर से अपनी कंजी आंखों को अटनागर की

विषैली दृष्टि से टकराने दिया, मानो यह बतलाने के लिए कि मुझे तुम्हारी इस दृष्टि की तनिक भी चिन्ता नहीं है। उसने नितान्त सहज मुद्रा से कागज उलटना शुरू कर दिया। गलफड़े में लसीली तम्बाकू चक्कर काटने लगी। अटनागर ने थूक निगलकर जरा गर्दन को हिलाया कि देखने वाले देख लें कि अटनागर कच्ची गोली नहीं खेली है, समय आने पर राधावल्लभ भी समझ जाएगा।

कमलनयन ने परिस्थिति को सम्हालना चाहा; राधावल्लभ की ओर मुखातिब होकर कहा।

'जोरू का गुलाम कौन नहीं होता राधावल्लभ बाबू ?—तुम्हीं कौन बचे हो ?'

तम्बाकू के शोरबे को सुरक्षित रखने के लिए उन्होंने मुंह को ऊंचा उठाया और कहा, 'दुधारू गाय की लात खाने में क्या शर्म है ?—पर बट्टर की लात तुम्हारे बाबू ही को मुबारक हो।'

बात कुछ हलकी पड़ गई, पर अटनागर ने उस ओर ध्यान न देकर कमलनयन से कहा, 'काम करो जोशी, काम करो। यह फाइल लो; जरा वर्क्समेन कम्पेनसेशन ऐक्ट देखकर बताओ, दादू के केस में क्या किया जा सकता है ?'

और दूसरे लोग अपनी-अपनी कुर्सियों पर खिसक गए, कमलनयन भी कुछ अप्रतिभ हो गया। बोला, 'किन्तु आपने तो नोट दिया था कि दादू अपनी ही गलती से आहत हुआ है, वह किसी रकम को पाने का मुस्तहक नहीं है।'

'लिखा तो है; पर इन सिरफिरे अफसरों के सर का कोई क्या करे !—कोई बात उनके भेजे में बैठे तब न ! किसीने आकर कह दिया कि मिलना चाहिए, बस क्लर्क के सिर सवार ! खैर अपनी तरफ से तो लिख दिया है।'

कमल ने दबे स्वर से कहा, 'बेचारा कुछ पा जाए तो दुआ ही देगा आपको।'

'यह कोई सदावर्त नहीं है कमल, हमें अपनी रिस्पॉन्सिबिलिटी (जिम्मेदारी) समझनी ही चाहिए। भावुकता से दिमाग का बैलेन्स (संतुलन) बिगड़ जाता है।'

'किन्तु—'

'जानते हो, एक क्लर्क की सफलता किसमें है ?'

'नहीं तो !'

'इसीमें कि वह प्रत्येक प्रस्ताव की विरोधी दृष्टिकोण से आलोचना करे।'

'पर इससे लाभ ?'

'वह एडमिनिस्ट्रेशन (शासन) की पॉलिसी (नीति) को अपहोल्ड (बनाए) रखता है !'

'चाहे वह नीति भ्रमपूर्ण हो ?'

'यह हमारे देखने की बात नहीं कमल, यह आफिसर्स के देखने की बात है। ऐण्ड द किंग कमिट्स नो मिस्टेक (और राजा कोई गलती नहीं करता।)'

'पर बेचारे दादू के मामले में कहां 'किंग' है और कहां 'मिस्टेक' है ?'

'भई ! काम करो, तुम तो बेकार की बहस करने लग जाते हो। माइण्ड यू (सावधान रहो।) यह प्रवृत्ति क्लर्क के लिए अयोग्यतासूचक है।'

'वहां कब बातचीत हुई इसके बारे में ?'

'कोई एक नेता आया था ! बस साहब बहादुर सहानुभूति का समुद्र बन गए ! कहने लगे, अरे नागर, मैं चाहता हूं कि इस गरीब मजदूर के लिए कुछ किया जाए।—लो, तुम्हारे चाहने से हो क्या जाता है। कोई खाला का घर तो है नहीं। बजट में देखना पड़ेगा, फाइनेन्शियल एडवाइजर (आर्थिक सलाहकार) की राय लेनी पड़ेगी और फिर यह सब दर्देसर क्यों ? क्या रेलवे ने उसके हाथ पर हथौड़ा पटका था ? मैंने तो

कह दिया कि अगर आप कुछ करना चाहते हैं, तो उसमें प्रेसिडेण्ट (राष्ट्रपति) की स्वीकृति की आवश्यकता होगी !'

'फिर ?'

'फिर क्या ?—कहने लगे, वह सिरपच्ची तो खैर न करनी पड़े, पर यहीं कोई रास्ता निकालो !'

'रास्ता कैसे मिलेगा भाई साहिब ? बेचारे गरीब के लिए अगर कुछ हो सके ···'

'बस यह ऐक्ट देख लो, फिर ज़रा 'एस्टाब्लिशमेण्ट कोड' (नियुक्ति-नियम-संहिता) उठा लेना, या उसमें न मिले, तो 'फैक्टरीज ऐक्ट'; और 'एक्सिडेण्ट मैन्युअल' (दुर्घटना-नियम) भी देख लो—ज़रा जल्दी से; मैं जाऊं उसके पहले, और मैं ज़रा जल्दी जाना चाहता हूं। शाम की गाड़ी से जाने के लिए तैयारी करनी है।'

कमल सिर खुजाने लगा। इन सब ग्रन्थ रत्नों का नाम सुनकर ही उसकी सहज सहानुभूति और सदय भावना काफूर हो गई। दादू ने चोट खाई है, यह तो ठीक है, और इस अवस्था में यदि उसे किसी प्रकार की सहायता मिल जाए, तो यह और भी ठीक है, किन्तु यह जो शब्दों के जाल में फंसे हुए कानून को खोज निकालने का चक्रव्यूह-प्रवेश है, उसे अर्जुन-पुत्र अभिमन्यु से, काल-देश और परिमाण के मान से इतना अधिक भिन्न क्या एक सामान्य क्लर्क सम्पन्न कर सकेगा ?—सप्त महारथियों से मरने की अपेक्षा, सिंह द्वार पर ही हथियार रख देने में क्या बुराई है ?

कमल ने कहा, 'भाई साहब, इस समुद्र में गोता लगाकर, दादू का दारिद्रय दूर करने के लिए मोती तो क्या, कांच भी नहीं लाया जा सकेगा।'

'फिर क्या करें ?—साहब अभी मांग रहे हैं।'

'एक तरकीब बताऊं ?—आपकी बात भी रह जाएगी और साहब का मन भी !'

'कैसे ?'

'साहब खुद तो इन पोथों को देखने से रहे !'

'अरे, वे क्या देखेंगे !—शकल देखकर ही भड़क जाएंगे वे।'

'तो दूसरा नोट लिख दो कि कानून में तो कोई गुंजायश है नहीं; किन्तु यदि एडमिनिस्ट्रेशन सदय भावना से कुछ करना चाहता है, तो दादू को अस्पताल से छूटने पर कोई हलके काम की नौकरी दे सकता है। मसलन लाइन पर फाटक वाले चौकीदार की जगह, या दफ्तर में चपरासी या ऐसा ही कुछ—'

'ठीक तो है, ऑफिस में एक खलासी की जगह खाली भी तो है। अच्छा, यही नोट लिख दो। मैं हस्ताक्षर कर दूंगा ! तब तक मैं ज़रा घर हो आऊं। तुम्हारी भाभी को सामान बांधने के लिए कुछ इन्स्ट्रक्शन (सूचनाएं) दे आऊं।'

'पर वे तो नहीं जा रही हैं न ?'

'यह भी तै कर आता हूं।'

—उनके पीठ फेरते ही फिर सब चूहे बिल से सिर निकालकर कमलनयन की मेज पर इकट्ठे होने लगे। राधावल्लभ अपनी ही कुर्सी पर से बोला—मुंह की थूंथनी उसी तरह हवा में ऊपर की ओर उठाए हुए मानो कोई बैल अपने मालिक को निकट आया देख, कुछ पाने की उम्मीद में अपने नथुने फैला देता है !

'कमलनयन, एक सीख माने, तो ऐसे मामलों में गहरे मत उतरना !'

'यानी ?'

'यदि कहीं आगे सम्हला नहीं, तो यह अटनागर का बच्चा छोड़ेगा नहीं तुझे; जहर का बुझा हुआ है यह !'

'कैसे कहते हो यह ?'

'देखा नहीं ?—जो बिना कारण ही दूसरों के मामलों को बिगाड़ना अपना कर्तव्य समझता है, उसकी नीयत का क्या ठिकाना ?'

कमलनयन ने कहा, 'उपदेश तो गुरू जी, ठीक है; पर आप क्या किसीसे कम हैं !'

लम्बी सांस-सी लेकर राधावल्लभ ने कहा, 'तुम्हारी चांदी है दोस्त; कह सकते हो। अंगूर खट्टे हैं हमारे लिए ! पर हमारा क्या है ! बावन साल के हो चुके, तीस साल से ज्यादा की नौकरी हो चुकी, किसी भी साल रिटायर हो सकते हैं। वरना···'

कृपानारायण ने कहा, 'वरना ?'

'अबे जा बे लंगूर !—घर में आटे-दाल का इन्तजाम है या नहीं ?'

नानकचन्द ने कहा, 'कलियुग है राधावल्लभ जी, सुनते हैं नाम की बड़ी महिमा है। यह भी तो कमलनयन न सही, के० एन० जोशी तो है; उम्मीदवारी के लिए शत-प्रतिशत न हो, नब्बे प्रतिशत अवसर तो होगा ही।'

एक टाइपिस्ट ने कहा, 'उम्मीदवारी करने कौन दे इस बेचारे को ! अभी तो कैलेण्डर के तीन पत्ते जो बाकी हैं। कण्ट्राक्ट (ठेका) जब तक पूरा न हो जाए, इसे हाथ-पैर हिलाने कौन देगा ?'

एक दूसरे बाबू ने कहा, 'अरे ठेके की अवधि के दिन रह गए हैं केवल ढाई बरस ! अंडा सेने आदि का समय निकाल दो तो भी एक महीना फुर्सत का नहीं रह जाता !'

नसीर अहमद डिस्पैचर ने कहा, 'इश्क करने के लिए कमर में ही नहीं, अण्टी में भी ज़ोर चाहिए जनाब, और यह फटीचर, मुफलिस—'

टाइपिस्ट ने कहा, 'फटीचर मुफलिस न कहो खां साहब !—सोने की तिजारत करता है, सोने की। क्यों जोशी, झूठ करता हूं ?'

जोशी ने कहा, 'अरे वह कोई तिजारत में तिजारत है ! एकाध तोला सोना खरीद लिया। दूसरे दिन भाव चढ़ गया तो दो-चार रुपये मार लिए, वरना सोना पड़ा है दुःख तो देता नहीं।'

'और भाव उतर गया तो ?'

'बुखार तो चढ़ ही जाता है।' नानकचन्द ने कहा, 'पर उससे इश्क-बाजी में क्या फर्क हो जाता है ?'

एक हज़रत बोले, 'एक भेद की बात कहूं ?—कृपानारायण ने अपने

मकान का आधा हिस्सा एक सिंधी शरणार्थी को किराए दे दिया है। लड़की है एक उनके, जो जादू जानती है जादू !'

'तो फिर ?'

'तो फिर क्या ! कृपानारायण उसकी कृपा के लिए मुंह ताका करते हैं, और किराए का पैसा वसूल करने में भी गफलत कर जाते हैं।'

राधावल्लभ ने कहा, 'यह भी तिजारत है भाई। भाव कभी चढ़ गया, कभी उतर गया।'

कमलनयन ने तब तक अपनी फाइल पूरी कर ली थी। वह इस चुहलबाजी से बेखबर रहा हो सो भी बात नहीं—एक कान इधर एक कान उधर; कहीं कुछ का कुछ लिख दिया तो फिर पढ़कर ठीक कर देगा तब तक वह भी क्यों न कृपानारायण के इस नये रोमान्स में कुछ थोड़ा-बहुत रस प्राप्त करे कि तभी एक ही साथ सबसे बड़े बाबू और सबसे छोटे साहब धर्मप्रकाश अपने लम्बे-लम्बे डग भरते हुए ठीक उसीकी टेबल के सामने खड़े हो गए। वहां खड़े सभी बाबुओं के मुंह पर हवाइयां उड़ने को हो गईं। राधावल्लभ अपनी ही कुर्सी पर एक फाइल के पन्ने उलटता दिखाई दिया।

'क्या कर रहे हो तुम लोग यहां इकट्ठे होकर ?'

जवाब नदारद; सभी लोगों की दृष्टि नीचे पैरों पर झुकी हुई।

फिर कृपानारायण की ओर मुखातिब होकर बमक उठे, 'ऐण्ड यू जोशी, हमेशा शिकायत करते हो कि काम बहुत है, फुरसत नहीं मिलती ! दिसिज़ द वे यू, डोण्ट गेट फुरसत ! (इस तरह तुम्हें फुरसत नहीं मिलती !)'

'सर, सर—'

'ह्वाट सर !—गो टू योर प्लेसेस ! (अपने-अपने स्थान पर जाओ ! न तो खुद काम करेंगे और न दूसरों ही को काम करने देंगे ! नेक्स्ट टाइम (दूसरी बार) अगर आप इस तरह मिले, माइण्ड यू, सीरियस एक्शन विल बी टेकन ! (सावधान, कड़ी कार्यवाही की जाएगी !)'

इतने में कमलनयन प्रकृतिस्थ हो चुका था! उसने सामने वही फाइल रख ली, जैसे सारे समय उसीमें व्यस्त था। तभी धर्मप्रकाश उसकी ओर अभिमुख हुए!

'और तुमने भी वह नोट तो क्यों लिखा होगा?'

तनिक मुस्कराकर कमलनयन ने कहा, 'आइ डिडंट अलाउ माइसेल्फ टू बी एन्ग्रॉस्ड बाइ देम! (मैं उन लोगों से बचा रहा!) यह लीजिए नोट! तैयार है।'

'इज़ इट? (ऐसा क्या?) थैंक्यू।'

और फाइल उठाए हुए, धर्मप्रकाश लौट गए!

तात्पर्य यह कि कटे हुए हाथ के दादू को वहीं पर दफ्तर में खलासी की जगह मिल गई! क्षतिपूर्ति की कोई रकम उसे नहीं मिली, कह दिया गया कि दुर्घटना में दोष उसीका था। उसे जो खलासी की जगह दी जा रही है, वह भी सरकार की, और खासकर श्री नरवरोत्तम नारायण नटनागर की मेहरबानी का फल है। श्री नटनागर के प्रति वह कृतकृत्य हो गया।—क्षतिपूर्ति न मिली, इसके लिए उसे किसीके निकट शिकायत न थी। छोटे आदमी की कामनाओं को अंगुलियों पर गिना जा सकता है, और उनके प्राप्त होते ही, उन्हें संतोष भी हो जाता है।

४

अंधेरी रात थी। बिजली का दीपक निर्वापित था। जाने कितनी देर तक सो चुकने के बाद नींद उड़ चुकी थी, और कोशिश करने पर भी पकड़ाई नहीं दे रही थी। कभी कविता की पंक्ति को सांचे में ढालने की चेष्टा करता, कभी कहानी के कथानक को सोचता, या फिर किसी धुंधले क्षण में अपने आपको नोबल-पुरस्कार के दरवाजे पर दस्तक देता

देखता, पर मन को कहीं पर आवास नहीं मिल पा रहा था। घड़ी टिक-टिक कर रही थी; पर क्या समय होगा, यह देखने का न उत्साह ही था, न सुविधा ही। हुआ तो इधर करवट बदल ली, या फिर अंधेरे में ही छत की कड़ियां गिनने लगे।

खुली खिड़की में से तारे झांक रहे थे, उनके ऊपर तना हुआ आकाश कुछ कहता-सा दिखाई दे रहा था; कभी-कभी हवा के झोंके बदन की सुस्ती को झकझोर डालते !—यही नहीं, बाहर आंगन में बिखरे सूखे पत्तों में भी उन झोकों से मुखरता भर जाती थी। मध्य रात्रि के सूने निर्जन-अभ्यंतर में पवन क्या किसीसे परिहास कर रहा था ?

मन न माना। खाट पर से उठा और उस ओर पड़ी स्टूल पर रखी सुराही से पानी पीने के पहले अनजाने ही खिड़की पर आ खड़ा हुआ।—वह उधर वृक्ष-वृन्त के पास ही क्या कोई खड़ा हुआ है, या निरा भ्रम-मात्र ?—नहीं, नहीं; वह तो कोई मनुष्य-मूर्ति है; वह हिली; किसीकी राह देखती-सी मालूम देती है !—शोर मचाऊं ? चोर दिखाई देता है। पर नहीं; और भी कोई ज़रूर होगा ! किसी मकान में चोरी कर रहे हों, और यह बाहर खड़ा पहरेदारी कर रहा हो।—तब तो आवाज़ देनी ही चाहिए।—इस ओर अवश्य ही उसकी पीठ है; उधर जोशी का—कमलनयन जोशी का क्वार्टर है ! अकेला तो है, और है ही क्या उसके घर में ? उसके ठीक सामने, दाहिने हाथ की ओर, पहला क्वार्टर है श्री अटनागर का; अटनागर तो तीन-चार दिन हुए छुट्टी गया हुआ है; अवश्य उसकी पत्नी अकेली है। कहीं····

एकाएक वह छायामूर्ति वृक्ष की आड़ में हो गई। जोशी के मकान के दरवाजे से प्रकाश की एक पतली खड़ी रेखा दिखाई दी; वह कुछ और अधिक मोटी हुई। पर तभी प्रकाश को आड़ में कर दिया गया, या बुझा दिया गया। उसके दरवाजे के सामने कुछ फुसफुसाहट सुनाई दी; देखा कि—दो छाया-मूर्तियां आगे बढ़ीं, एक उनमें स्त्री की आकृति मालूम दी। तीन-चार कदम चलने के बाद पुरुष आकृति रुक गई, और एक क्षण के

बाद परावर्तित हो गई। स्त्री आगे की ओर धीरे-धीरे सावधानी के साथ बढ़ने लगी। हलकी आहट से मालूम दिया, जोशी के मकान का दरवाज़ा बन्द हो गया। मेरी सांस रुकी हुई थी।—दरवाजे की आहट से स्त्री एक क्षण के लिए रुक गई।

वृक्ष की आड़ से वह मूर्ति निकलकर आगे बढ़ने लगी, मालूम दिया, उसने उस महिला का पीछा किया। दो-चार कदमों तक तो उसे खयाल न हुआ कि कोई पीछा कर रहा है, किन्तु जैसे ही वह अटनागर के मकान के पास पहुंची कि उस पीछा करने वाली मूर्ति ने पीछे से उसके कंधे पर हाथ रख दिया। मकान के पृष्ठभूमि में आ जाने के कारण उसके सामने क्या हो रहा था, यह एकाएक दिखाई नहीं दिया, किन्तु कुछ फुसफुसाहट की आवाज़ अवश्य हुई। सोच ही न पाया, कि शोर मचाऊं, या बिजली जलाऊं या टार्च की रोशनी उनपर फेंककर पहचानने की चेष्टा करूं—पर मन ने कहा कि यहां पर एक रहस्य का अभिनय हो रहा है, और उसे स्पष्ट कर देने से उसका सौंदर्य नष्ट हो जाएगा, शायद कुछ आफत भी हो।—चोरी का कथानक यह अवश्य नहीं है; जितना दिखाई दे जाए देखते रहने में ही क्या बुराई है ?

फुसफुसाहट से काम चला नहीं, कुछ छीना-झपटी-सी मालूम दी, और तभी नारी-कंठ से निकली दूर से कुछ-कुछ सुनाई दी जाने वाली ध्वनि का मैंने अर्थ लगाया, 'मैं सहायता के लिए चिल्लाती हूं।'

मालूम पड़ा उसके मुंह पर हाथ रख दिया गया, जिससे कि जब वह सचमुच चिल्लाने लगी तो अस्पष्ट चीख के सिवा कुछ सुनाई नहीं दिया।

पर कमलनयन के घर के तभी किवाड़ खुले। मुझे मालूम ही न था, कब से मेरे हाथ में टार्च आ गई थी; इसलिए जैसे ही वह अपने घर से बोला, 'कौन ?' वैसे ही मैंने टार्च का बटन दबा दिया—प्रकाश को अनुसरण करते हुए देखा कि एक व्यक्ति मेरे मकान के सामने की ओर भाग रहा था—बाजू की खिड़की में से प्रकाश डाल रहा था, इसलिए सामने की ओर प्रकाश जा नहीं सकता था। वह आदमी आगे भाग गया।

अटनागर के मकान पर रोशनी डाली तो दानव की देह लिए दादू दरवाजे से बाहर आ रहा था, और मकान के ठीक सामने खड़ी थी वह नारी, भीता-चकिता हरिणी की भांति ! तब तक कमलनयन उसके पास आ रहा था।

मैंने खिड़की में से ही आवाज़ लगाई, 'क्या बात है ?'

'पता लगाता हूं।' कहकर कमलनयन और आगे बढ़ा।

दरवाज़ा खोलकर टार्च लिए मैं भी बाहर निकला; और जब तक कि मैं अटनागर के मकान तक पहुंचूं, देखता क्या हूं कि वे लोग वहां पर नहीं हैं। शायद भीतर कमरे में चले गए थे। क्या ज़रूरत थी कि मैं भी घर में जाता ?—और टार्च जलाकर देखने की भी क्या ज़रूरत थी ?—परावर्तित होने को मैंने पैर मोड़े कि तभी आवाज़ आई—आवाज़ मैं पहचानता था, वह दादू की थी—'बाबू साहब, भीतर आ जाइए; आपको बुला रहे हैं !'

'बुला रहे हैं ?—पर क्यों ?'—मैं भीतर जा पहुंचा।

देखता हूं कि कमरे में एक ओर लालटेन की धुंधली रोशनी में मुंह किए हुए अश्रु-रुद्ध दृष्टि से श्रीमती कमला अटनागर दीवार की ओर देख रही हैं; शायद कुछ कह रही थीं, किन्तु मुझे आया देखकर एकाएक ही चुप हो गई हैं। दूसरी ओर सामने कमलनयन कुर्सी की पीठ से हाथ टिकाए मेरी ओर दृष्टि फिरा रहा है। चेहरे पर दोनों के हवाइयां उड़ी हुई मालूम दीं !

पहुंचते ही कहा, 'भाभी जी, नमस्कार !—क्या बात हो गई ?'

जवाब दिया कमलनयन ने, 'कोई चोर मालूम देता है। उसने बाहर से किवाड़ खटखटाए; इन्होंने समझा दादू है, दरवाजा खोला तो देखती हैं कि कोई गुण्डा है।'

—अधूरी बात को देवी जी ने पूरा किया—'चाहा कि शोर मचाऊं, पर उसने मुंह पर हाथ रख दिया, और दूसरे हाथ से खींचकर वहां तक घसीट ले गया ! यह तो गनीमत हुई कि कमल बाबू जाग गए....'

मैंने पूछा, 'पर आप क्यों उठीं ?—कोई आने वाला तो था नहीं !'

कमला देवी उत्तर के लिए कुछ इधर-उधर देखने लगीं तो कमल-नयन ने कहा :

'इन्हें ख्याल न था कि दादू आ गया है। नरवरोत्तम बाबू नहीं हैं, तो रईस बना हुआ है। सिनेमा देखता फिरता है ! क्यों रे ठीक है न ?'

दादू की मुद्रा से मालूम न हुआ कि क्या ठीक है और क्या ठीक नहीं ! पर फिर भी वह बोला, 'सिनेमा देखने तो आपने कहा तभी गया हूं....'

'पूछा तो, क्या तब इनकार करता ? यह तो तुझे पूछने के पहले ही सोचना चाहिए था !—पर—' बात का रुख बदलकर बोला—'और फिर सोता है तो ऐसा कि कुम्भकर्ण भी होता तो हार मान जाता। इतना सब कुछ हो गया, दरवाजे खटखटाए गए, मगर हजरत की नींद ही अब खुली !'

मैं चुपचाप बैठा हुआ सब कुछ सुनता रहा, और मन ही मन मुस्कराता जाता था। मनुष्य धोखा देने के लिए दूसरों को कितना मूर्ख समझता है, और स्वयं कितना मूर्ख बन जाता है ?—चोर कोई किवाड़ क्यों खट-खटाने लगा, और देवी जी से घर की देहली से बाहर सामना करने का क्या मतलब है ?—जब उसने मुंह पर हाथ रख दिया, तब वह उन्हें खींच कैसे सका ?—झटके में जब देवी जी परवश होकर घसीटी जाने लगीं, तब तो वे जरूर ही चिल्ला सकने की अवस्था में होंगी ?—और कमल बाबू ही क्यों, स्वयं मैं भी ज़रा-सी धीमी-सी फुसफुसाहट पर कैसे जाग गया ?—अथवा दादू की कुम्भकर्णी नींद का आधार इसी बात से कितना कच्चा है ?—इन सभी बातों को एक क्षण में धुएं के बादल की तरह उड़ाया जा सकता है, पर क्यों ?—मैंने कमला की ओर उड़ती दृष्टि डाली; मालूम देता था वे मेरी ही ओर देख रही थीं; पर उन्होंने नज़रों को चार होने का मौका न दिया !

मैं उठ खड़ा हुआ, बोला—'सावधान रहना चाहिए। कोई किवाड़

खटखटाए तो जब तक वह आवाज देकर अपना परिचय न दे ले, किवाड़ न खोलना चाहिए ! अच्छा, चल दिया ।'

कमल ने कहा, 'मैं भी चलता ही हूं !' और उसने भी हाथ जोड़े; पर मैं उसकी राह न देखकर बाहर हो लिया, और आगे बढ़ा, किन्तु अपने मकान के फाटक पर आकर देखा कि कमल अभी तक बाहर नहीं निकला, बल्कि भीतर ही रह गया है। एक बार और मन ही मन हंसकर, मैंने दरवाज़ा खोला और भीतर हो लिया। बिजली जलाकर देखा कि मेरे खाट पर भी एक बिल्ली सोई हुई है।

कमला अपनी खाट पर बैठकर दादू से बोली, 'दरवाज़ा बन्द कर दे दादू ! इस समय कोई जाग गया, तो क्या कहेगा !'

दादू ने दरवाज़ा बन्द कर दिया।

कमला ने एक नज़र कमल पर डाली, और फिर दादू को सम्बोधित करके कहा :

'अब चाहे तो सोजा, पर ऐसा घोड़े बेचकर क्यों सोता है ?'

'नहीं बीबी जी, मैं तो ज़रा-सी आहट पाते ही जाग उठता हूं ?— और आज तो आपसे कहकर सोया था; आप खुद दरवाज़ा खोलने की बनिस्बत मुझे ही आवाज़ दे लेतीं !'

'बातें न बना ! जा !'

दादू बेचारा दूसरे दरवाज़े से होता हुआ पीछे बरामदे में अपनी कथरी पर पड़ रहा और सोचने लगा कि रात्रि की इस घटनावली में उसकी भूमिका में कहां दोष रहा, और यदि सचमुच ही उसका कोई अपराध न था, तो इन सब आरोपों का सूत्र किस तरह ये लोग लगा पाए हैं !

इधर कमल ने पूछा, 'अच्छा शकल से न सही, पर क्या आकृति, लम्बाई-चौड़ाई किसीसे कुछ अन्दाज़ नहीं लग सकता ? कपड़े कैसे पहने था ?'

'सुनो इसकी बात !—अरे जब उसकी शकल नहीं पहचान सकी, तो क्या कपड़े खाक पहचान लेती ?'

'फिर भी कुछ अनुमान तो लगाया ही जा सकता है ! है वह यहीं कहीं का आदमी, इसमें तो कोई शक हो नहीं सकता ! और वह ध्यान रख रहा था कि तुम कब मेरे घर से निकलती हो। तुम तो यहां सबको जानती ही हो !'

कमला बहुत ही चिन्तित हो उठी, उसकी विचारधारा को मानो एक दूसरा ही स्रोत मिल गया। बोली, 'तब तो उसे यह भी मालूम होगा कि मैं अपने घर से कब निकली ?'

'जरूर मालूम होगा !'

'और वह इस आधी रात को यहां पर आ खड़ा हुआ, तो हमारी बातचीत को वह इससे भी पहले से जानता होगा ?'

'मुमकिन है !'

'हमारे सभी रहस्यों को वह जानता होगा ?'

'सभी को जानता हो या न हो, पर इस रात्रि के रहस्य को तो जान ही गया है। इसीलिए तो पूछ रहा हूं कि कुछ अनुमान तो लगाया जाए ! —आखिर कुछ तो तुमने उसे देखा ही होगा !'

कमला कुछ देर तक कर्तव्यमूढ़-सी बैठी देखती रही। क्या अपना अनुमान वह उसे बता दे ? कमल से क्या छिपाया जाए !—यदि यह जान लेगा तो कुछ उपाय भी बन जाएगा ! आखिर एक से दो भले !

परन्तु—यदि वही हो ?—वह ! और कमला की ओर लोलुप हो !—इसमें आश्चर्य की तो कोई बात नहीं ! कमला क्या किसीसे कम सुन्दर है ?—उसकी पत्नी, नहीं-नहीं—

कमल ने फिर पूछा, 'और यह तुक्कड़ कहां से आ टपका ? दाल-भात में मसूरचन्द ?'

इशारा मेरी ओर था, पर मालूम देता है, कमला नहीं समझी; 'तुक्कड़ कौन ?'

'नहीं जानतीं ?—बड़ा कवि की दुम बना फिरता है न !'

कमला ने कहा, 'यदि यह सामने न आया होता, तो ख्याल होता कि वह आदमी यही है !'

'यानी, इतना ही लम्बा-चौड़ा, इसी तरह के कपड़े पहने था ?'

'दूसरों जैसा भी हो सकता है; उस वक्त क्या किसीको पहचानने के लिए किसीको होश-हवास रह सकते हैं ?'

'पर यह तुक्कड़ जी ही खिड़की पर खड़े क्या कर रहे थे ?'

'यदि इसने भी हमारी सारी हलचल न देखी हो, तो सचमुच आधी रात को कोई क्यों जागता ?'

'इसके जागने की तो कोई बात नहीं। तुक्कड़ जो होते हैं, वे नीम पागल होते हैं ! कोई है भी तो नहीं घर पर आजकल ! मुट्ठियां कस-कसकर छाती और माथे पर ठोकता होगा, और हाय पिंगला, हाय पिंगला गुनगुनाता हुआ मेघदूत लिख रहा होगा !'

'पर मैं अब क्या करूंगी ? अगर सब ओर बात फैल गई, तो मैं तो कहीं मुंह दिखाने लायक भी नहीं रहूंगी।' और उसकी आंखें कण्डील के धुंधले प्रकाश में उद्भासित हो उठीं।

कमल ने कहा, 'घबराने की कोई बात नहीं है भाभी ! अभी तो यही कैसे कहा जा सकता है कि वह आदमी यहीं का था ! यदि यहीं का था, तो भी उसकी क्या नीयत है, क्या वह सचमुच सारी बातें जानता है—या संयोग से ही वहां पहुंच गया था ? और कह भी दे तो आखिर उसके पास प्रमाण क्या है ?'

'लेकिन कमल, अगर तुम्हारे भाई को पता लग गया तो मुझे ज़हर ही खाना रह जाएगा !' और उसकी आंखों से मोती टपकने लगे।

कमल ने उठकर उन्हें अपने हाथों से पोंछ दिया, और कहा, 'पागल हो भाभी, तुम तो ! जहर खाना होगा, तो वह खाएंगे हमारे दुश्मन ! और अगर खाना ही हुआ, तो मैं भी तो तुम्हारे साथ हूं। इश्क के रास्ते में जो कदम रखता है, वह सर पर कफन बांधकर निकलता है ! तुम

यों घबराती हो ? मैं तुम्हारे साथ हूं। ना-ना, मेरी कसम है तुम्हें, अब और अगर यह मोतियों का खज़ाना बरबाद किया !—मुझे मरा देखोगी।' और उसने झुककर बैठी हुई कमला की अश्रुप्लावित आंखों पर अपने प्यासे अधर रख दिए।

कमरे में कोई न था, अतः श्री धर्मप्रकाश अपने छोटे-से कमरे में काफी मोटे होकर गोपनीय पत्रों पर विचार कर रहे थे। लम्बी-चौड़ी टेबल थी, कागज़ बिखरे हुए पड़े थे, और जिस कागज़ पर आंखें दौड़ाई जा रही थीं, वह भी कम छोटा न था। लाल-नीली पेंसिल से किसी स्थान पर इस सिरे से, किसी स्थान पर उस सिरे से एक-एक बिन्दु लगाया जा रहा था। कोई देख नहीं रहा था, इसलिए किसीको कुतूहल होने की बात ही नहीं थी।

तभी चिक को हटाकर कोई भीतर प्रविष्ट हुआ। धर्मप्रकाश ने दृष्टि उठाकर देखा कि चपरासी चाय की ट्रे लिए खड़ा हुआ है। पास की छोटी टेबल पर रखने का संकेत करते हुए उन्होंने कहा :

'देखो, जरा जोशी बाबू, जूनियर जोशी को भेज दो।' और उन्होंने पेंसिल के लाल सिरे को अपने दोनों ओठों में दबाकर फिर उस कागज़ को देखना शुरू कर दिया।

जोशी ने प्रवेश करके जब नमस्ते की तो धर्मप्रकाश ने बिना दृष्टि उठाए, सामने कुर्सी की ओर अंगुली उठाई, और कहा, 'बैठो !' और उसी तरह चपरासी को उद्देश्य करके कहा, 'चाय बनाओ···'

कमल ने चपरासी ही से कहा, 'मेरे लिए मत बनाना।'

'क्यों ?' दृष्टि उठाकर धर्मप्रकाश ने पूछा।

'मैं दुपहर में चाय नहीं पीता !'

'पर चाय पीने का समय तो यही है ! काम करते-करते जब थकावट आ जाए, तो एक कप चाय से बढ़कर कोई नियामत हो ही नहीं सकती !'

'लेकिन दुपहर में पीने से चाय गरमी भी तो पहुंचाती है।'

'अरे वाह कमल, तुम भी उन्हीं पोंगापन्थियों में हो क्या ? चाय गरमी पहुंचाती है ? अरे, वह ताज़गी देती है, ताज़गी ! बनाओ-बनाओ, कमल भी पिएगा; मेरी खातिर ही सही।'

दोनों के सामने चाय की प्यालियां रखकर चपरासी बाहर चला गया।

चम्मच से चाय को हिलाते हुए धर्मप्रकाश ने कहा :

'आर्थिक एकीकरण के साथ ही रेल-पथ की ये अलग-थलग व्यवस्थाएं भी एकत्रित की जा रही हैं। व्यवस्था-मण्डल ने सभी रेल-व्यवस्थाओं से कर्मचारियों के विवरण मांगे हैं।' और यह कहकर उन्होंने एक घूंट को उदरस्थ करने का उपक्रम किया।

कमल ने कहा, 'जी हां, अपने यहां की तालिका तो मैंने बना दी है।'

कुछ कागज़ उलटकर धर्मप्रकाश ने कहा, 'यह रही। तुमने बनाई है, पर किसीने जांच की है ?'

'एक तो जल्दी थी, दूसरे जांच करवाता ही किससे ?'

'किसीसे भी करवा लेते ! तुम्हारे नरवरोत्तम कब तक आ रहे हैं ?'

'सिक रिपोर्ट में हैं, उनका क्या ? किन्तु यह बनाई उनके निर्देश के अनुसार ही गई है।'

बात के उत्तरार्द्ध पर धर्मप्रकाश ने ध्यान नहीं दिया।

'क्या कोई खत-वत नहीं आया ?'

'आता तो है उनके घर पर !'

धर्मप्रकाश ने चाय पीते हुए एक वक्र दृष्टि कमल पर डाली। कमल ने देखकर भी नहीं देखा। वह चाय के प्याले में ही किसी दूर के काल्पनिक मिठास का स्वाद लेने लगा।

धर्मप्रकाश ठंडी करके पीने वाला था; चाय का प्याला नीचे रखकर बोला :

'पर तुम्हें निश्चय है कि यह विवरण प्रामाणिक है ?'

'अपने जानते तो मैंने ऐसा ही बनाया है।'

'फिर भी एक बार और देख लिया होता।'

'मैंने दो बार देखा है !'

'तो ठीक है।' चाय का एक और घूंट उदरस्थ हुआ; बात को मुड़ने की सुविधा हुई; धर्मप्रकाश ने कहा, 'तुम तो कमल, काफी नये—जूनियर हो !'

'नवीनतम, जूनियर मोस्ट, कहिए न !'

'सो तो देख रहा हूं !'—फिर कुछ देर रुककर बोले, 'मुझे तुमसे कुछ राग पैदा हो गया है ! चाहता हूं कि तुम उन्नत होओ।'

'मैं आपका कृतज्ञ हूं। पर···'

प्रश्नसूचक दृष्टि से देखने पर कमल ने वाक्य पूरा किया, 'पर पुरीणता कहां से लाऊं ?'

'पुरीणता ?'

'जी, सीनिओरिटी; अच्छा शब्द है; नवीन-पुरीण, सीनिअर-जूनिअर !'

'रीअली ! (सचमुच !)—पर 'पुरीण' तो तुम अवश्य हो !'

'आप भी खूब हैं ! नवीन-पुरीण और धुरीण यानी—'

'एक्स्पर्ट (कुशल)—या योग्य—सबमें पढ़े-लिखे भी तो तुम्हीं हो !'

'पर···'

'हां, तुम्हारी मजबूरी तो है; पर अटनागर होता तो किसी तरह तुम्हें पुरीण भी प्रमाणित कर देता।

'वह कैसे ?'

'बाय जूडीशियस ऐण्ड विशफुल अप्लीकेशन ऑफ रूल्स (नियमों के विचारपूर्ण स्वेच्छाकृत प्रयोग द्वारा !) यदि नियम दुधारी तलवार होते हैं तो नियामक उनका दुहरा प्रयोक्ता होता है। पर यह दुहरा प्रयोग अनुभव के बिना सिद्ध नहीं होता। अटनागर एक अनुभवी योद्धा है।'

'उनके गुरु भी तो आप ही हैं।' और यह कहकर उसने अपना कप समाप्त कर दिया।

धर्मप्रकाश ने एक छिपी दृष्टि कमलनयन पर डाली, और चाय गटकते हुए अवसर की खोज करने लगा। फिर कप में ही दृष्टि रखते हुए उसने मानो अपने आप से कहना शुरू किया :

'उस दिन वह अटनागर की श्रीमती जी को लेकर बड़ी ही अजीब बात हो गई ! रात को उसका बाहर निकलना, और किसी आदमी से मुठभेड़, किसी डाकू का किस्सा—अच्छा कमल, तुम तो इस लड़की को जानते मालूम देते हो ! तुम्हारी क्या राय है ?'

'मेरी क्या राय हो; जो किस्सा आपने सुना, वह मैंने भी सुना है ! और उससे अधिक गहरा उतरना मेरे लिए ज़रूरी ही क्यों हो ?'

मुस्कराकर धर्मप्रकाश ने कहा, 'अटनागर तुम्हें चार्ज जो दे गए हैं।'

'गुनाह और बेलज्जत समझिए !' हंसकर कमल ने जवाब दिया।

'क्या लड़की सचमुच चाहने लायक है ?'

'आपने भी तो उन्हें देखा है ! उस दिन चाय-पार्टी में तो आप भी सम्मिलित थे !'

'था तो; पर ऐसी बातों पर तब ध्यान देने की ज़रूरत ही न थी।'

'अब है क्या ?'

'रास्ते में पड़े हीरे को देखकर किसका लोभ रुका रहता है ?'

'क्या उसे आप रास्ते में पड़ा समझते हैं ?'

'नहीं तो तुम्हीं बेलज्जत गुनहगार कैसे होते ?'

कमल ने चुप रहने ही में कुशल समझी।

एक-एक प्याला चाय का और बनाते हुए धर्मप्रकाश कहने लगे, 'मुझसे छिपाना बेकार है कमल; और यही देखकर मैं भी सोचता हूं तुम से भी छिपाना बेकार है ! उस दिन रात को तुम्हारे किस्से के अनुसार जिस चोर ने श्रीमती अटनागर का दरवाज़ा खटखटाया था, वह मैं ही हूं। और अब तुम्हारे किस्से में कितना भाग सचमुच किस्सा है, यह मुझसे

कहने की ज़रूरत नहीं।'

कमल ने नीची दृष्टि किए ही कहा, 'मेरा अनुमान था कि वह व्यक्ति शायद आप ही हों।'

'जब वह बात अनुमान से आगे पहुंच गई है तो मैं समझता हूं, एक ही मंज़िल के राही के नाते हमें मिल जाना चाहिए और एक दूसरे की लब्धि का हमें लाभ उठाना चाहिए।'

'यानी ?'

धर्मप्रकाश ने मुस्कराकर कहा, 'तुम स्वीकार कर चुके हो एक दिशा में मैं तुम्हारे गुरु का गुरु हूं; दूसरी दिशा में तुम अपने गुरु के भी गुरु निकले। जिस दिशा में मैं गुरु हूं मैं तुम्हारी सहायता करूंगा, और जिस दिशा का गौरव तुम्हें है, तुम्हें मेरी सहायता करनी चाहिए।'

'पर उनसे पूछे बिना····'

'मैं वादा करने के लिए नहीं कहता, केवल सहायता के लिए कह रहा हूं।'

कमलनयन ने चाय का प्याला ओठों से लगाकर उत्तर देने का अवसर बचाया।

मुझे उनकी मुलाकात का नियाज कम ही हासिल हुआ करता है, परन्तु उस दिन संध्या को मुझे भी उनके यहां चाय का निमन्त्रण मिला —निमन्त्रण क्या, चपरासी आया और सलाम बोल गया। मैं जानता था, सलाम और चाय तो चपरासियों के औपचारिक सम्बोधन हैं, होगा कुछ सरकारी-गैर सरकारी काम ही; और सांध्य चाय जैसे किसी रईसी कार्यक्रम का न मुझे कोई आग्रह या सुविधा ही है; किन्तु सरकारी निमन्त्रण की उपेक्षा नहीं की जा सकती; इसलिए उनके घर तक, बेमन ही सही, जाना पड़ा।

सोच रहा था वे अकेले न होंगे—प्रायः वे अकेले नहीं रहते; भक्तजन, स्तुतिवाचक, अनुग्रहयाची और नौकरी के उम्मीदवार एक-दो, एक-दो बने

ही रहते हैं और सबको अपने-अपने प्रयत्न के अनुकूल परितोष भी मिलता ही है। वे समर्थ जो ठहरे! पर आज कोई न था, शायद किसीको रहने ही न दिया हो या कोई आया ही न हो। दफ्तर का काम छोड़कर कलम से यदि कथा-लेखन का काम करना चाह रहा हूं, तो मुझे चाहिए कि इम्पर्सनल (निर्वैयक्तिक) रह सकूं तो बहुत ही उत्तम है।

जिस कमरे में मिलते हैं, वह कमरा भी नहीं था; मुझसे मिले वे अपने ही कमरे में; और देखता हूं कि चाय, फल आदि का उपस्कर भी सामने एक छोटी टेबल पर प्रस्तुत है। मैंने सोचा चलो, अंग्रेजी पढ़े-लिखे शिखा-सूत्र हीन ब्राह्मणों को श्रद्धा भी यत्र-तत्र किसी भी व्याज से इस युग में भी मिल ही जाती है! जय हो श्रद्धालु यजमानों की!

चाय भी पी, मिठाई भी खाई, फल भी उड़ाए और उनकी रसभरी बातों का नीरस उपभोग भी किया। मुंशियाना ढंग से बोले। मुझसे बोलते समय वे भाषा का आग्रह नहीं रखते। यद्यपि वे जानते हैं कि यदि मुझसे भी वे, जैसा कि वे दूसरों के साथ प्रायः करते हैं, हिन्दी ही के शब्दों का प्रयोग करें तो अनायास ही एहसान कर सकते हैं! कहने लगे:

'रेलवेज-इंटिग्रेशन (रेलों के विलीनीकरण) को आप कैसा समझते हैं?'

केवल मेरा मत जानने के लिए चाय का व्यय उठाना बुद्धिमानी नहीं है, यह वे जानते थे, मैं भी जानता था। इसलिए मैंने कहा 'काम बहुत बड़ा है। योजनाबद्ध और धीरे-धीरे हो तो इसके लाभ स्पष्ट हैं, पर इसी भांति काता और ले दौड़े किया तो खतरे भी साफ ही हैं। मैंने तो इस योजना के प्रकाशित होने के पहले ही इसकी आवश्यकता की ओर 'पेपर्स' (पत्रिकाओं) में ध्यान आकर्षित किया था।'

'सचमुच किया था क्या? क्या रिएक्शन (प्रतिक्रिया) रहा उसका?'

मैं हंस दिया। पहले तो जैसा कि 'पेपर्स' के बहुवचनी प्रयोग से ध्वनित हो सकता है, मैंने कई पत्रों में नहीं बल्कि एक ही किसी सामान्य-से पत्र के 'युद्धोत्तर कालीन पुनर्निर्माण' सम्बन्धी विशेषांक के लिए यह

निबन्ध लिखा था और फिर रेल-पथ-समस्या पर नितान्त हिंदी में, जिसकी ७५ प्रतिशत चिकित्सा तो प्रेस के मुद्रकों ने कर दी थी और शेष २५ प्रतिशत को पढ़कर समझने वाला माई का लाल हिन्दी की क्षमता में विश्वास ही क्यों करने लगा ! फिर उसका एक्शन (क्रिया) क्या और रिएक्शन क्या ?

मैंने हंसकर कहा, 'पंसारियों की दूकान पर सौदे के लिए तो वे कागज जरूर सफल हुए होंगे।'

'आप तो मजाक करते हैं। आपके पास तो उसकी कॉपी होगी। देखिए न कोई चीज काम की ही निकल जाए। रेलवे बोर्ड को उसकी एक कॉपी भिजवानी चाहिए।'

मेरी कॉपी, रेलवे के एक अफसर-मित्र जो ऊपर कहे हुए २५ प्रतिशत में से हैं, कुतूहलवश हिन्दी शब्दों का लीला-विन्यास देखने के लिए ले गए थे। कुछ शब्दों की अभ्यर्थना के साथ-साथ वे कुछ विचारों की भर्त्सना भी शायद करना चाहते थे पर उसके पहले ही उन्होंने कहा कि वह प्रति ही कहीं नहीं मिल रही है। चलो छुट्टी हुई।

'स्टाफ-अरेंजमेंट (कर्मचारियों की व्यवस्था) के बारे में आपने क्या सुझाया था ?'

'वह कोई विस्तृत योजना नहीं थी। रेलवे की प्रस्तुत अर्थनीति, तथा दर-प्रणाली पर कुछ आलोचना थी और फिर युद्धोत्तरकालीन पुनर्योजना के लिए कुछ विचार !'

'कुछ तो आप वैसे भी सोचते होंगे ?'

'क्यों नहीं !—कुछ ही क्यों, बहुत कुछ। परन्तु आप तो जानते ही हैं, यह विचार कई दृष्टिकोणों से किया जा सकता है। और वे दृष्टि-कोण परस्पर विरोधी भी हो सकते हैं।'

'जैसे ?'

'योजना की दृष्टि ही से लीजिए, तो व्यय के विपुल और दुहरे भार को कम करना ही इस योजना का सबसे पहला दृष्टिकोण है। यदि यह

बात स्वीकार कर ली जाए तो इससे समस्त दुहरे कर्मचारियों को छुट्टी दे देना पहला आवश्यक और वांछनीय कदम होगा; पर कर्मचारियों की दृष्टि से कौन इस तरह सोचेगा ?'

'सो तो है ही; स्टाफ के इंटरेस्ट्स तो सेफगार्ड (कर्मचारियों के स्वार्थों की रक्षा) करने ही पड़ेंगे !'

'स्वार्थों की रक्षा ही तो समस्त झगड़ों का मूल है मित्र ! यही तो इम्पीरियलिज्म (साम्राज्य-लिप्सा) है ! स्वार्थ किसके ? व्यक्ति के या समाज के ?'

'पर वह व्यक्ति हमीं तो हैं !'

'यह 'हम' हैं क्या ?—'मैं' की भूख का बड़ा संस्करण मात्र। यह 'हम' 'सब' का पर्याय तो नहीं कहा जा सकता ?—क्या इस 'हम' के अतिरिक्त राष्ट्र में और कोई नहीं है ? तब उनका क्या होगा ?'

'उनके बारे में राष्ट्र सोचेगा !'

'और रेलवेज़ को भी राष्ट्र ही ले रहा है, रेलवे-कर्मचारी नहीं !'

हंसकर धर्मप्रकाश ने कहा, 'तो आप रेल-कर्मचारियों की बेहतरी के हिमायती नहीं ?'

'उनकी अनन्य (एक्सक्लूसिव) उन्नति का नहीं। और मैं आपको विश्वास दिला सकता हूं कि कर्मचारियों की उन्नति में किसी तरह का विघ्न कभी पैदा ही न होगा। इस लिफाफे में हमारे दर्देसर का मजमून बिल्कुल ही दूसरा है।'

'वह कौन-सा ?'

'यह चिन्ता है अधिकारी वर्ग की। इन बड़े-बड़े हाथियों का व्यय राष्ट्रीय सरकार वहन नहीं कर सकती। छोटे कर्मचारियों की हित-रक्षा की आड़ में वे अपनी ही हित-रक्षा करना चाहते हैं। यह आप खूब समझ रखिए।'

'यह आप कैसे कहते हैं कि कर्मचारियों के हित की रक्षा आप से आप हो जाएगी ?'

'इसलिए कि वे मुफ्त की तनखा नहीं लेते। छः घण्टे की जगह दस घण्टा प्रतिदिन काम करके भी उनके भार का कभी अन्त नहीं आता। और जब अन्त आता है तो उनके कार्य का नहीं, बल्कि उनके कार्यकाल का। उनको तो लाभ ही होगा महाशय, सचमुच का लाभ; किन्तु ये मुफ्त के खाने वाले हाथी यह होने दें तभी न !'

यह मैं जानता था कि मेरे कथन में व्यंग्य भी था; पर उन्होने कहा :

'पर अधिकारियों से आपको ऐसी आशंका होने का कोई पुष्ट प्रमाण है ?'

'पुष्ट प्रमाण अधिकारी कभी मिलने देंगे ?'

हंसकर धर्मप्रकाश ने कहा, 'आप इस वर्ग के प्रति प्रेज्यूडिस्ड (पक्षपाती) हैं !....'

मैंने भी हंसकर कहा, 'और इस मनोवृत्ति को अधिकारियों की भाषा में 'कम्यूनिज़्म' कहा जाता है।'

'तो यह कोई सच से दूर तो नहीं !'

'नहीं; बल्कि इसकी निकटता की प्रतीति भी अधिकारियों की कृपा से कर्मचारियों को प्रायः हो ही जाया करती है। एक क्लर्क कुतूहलवश एंजिन पर चढ़ गया, तो अधिकारियों को उसकी इस क्रिया में आतंक की गन्ध मिल गई—उनकी लम्बी नाक इसी गंध को पहचानती थी, स्थान-काल-पात्र मिल गए, सिद्ध योग का अवसर आते ही, बेचारे का मुक्ति-योग हो गया ! तब भी क्या इसे उनकी दूरंदेशी नहीं कहा जा सकता ?'

'किन्तु इन अधिकारियों के सहयोग के बिना भी क्या कर्मचारी उन्नति कर सकते हैं ?'

'यही तो अधिकारियों की दुर्गम व्यूह-रचना का प्रमाण है ! बेचारे कर्मचारी को अधिकारी की कृपा की भीख के सिवा चारा ही क्या है ? उसके प्रतिनिधियों तक को तो अधिकार खरीद लेता है !'

'पर यह क्या कर्मचारी का दोष नहीं ?'

'दोष तो सदैव ही उसका है ! राजा तो कभी गलती करता नहीं !

आपको भी तो अपनी स्थिति दृढ़ करने के लिए दो-दो कीमती बलिदानों की व्यवस्था करनी पड़ी थी ! बेचारे कर्मचारी नहीं जानते कि महात्मा गांधी द्वारा प्रचारित अनशन और सत्याग्रह के नुस्खे विदेशियों पर ही प्रभावशील होते हैं, स्वदेशियों पर नहीं !'

आघात कुछ तीव्र हो उठा था, और व्यक्तिगत भी। बात यह थी कि नये व्यवस्थापक के प्रति भी इन्होंने एक स्थिति में विद्रोह किया था। आंख की शर्म दोनों ही दलों को न थी, अतः बड़ी मछली छोटी मछली को निगल जाने की परिस्थिति में आ गई। तब इन्होंने अपने दल के अनुचरों का अपने ही हाथों गला काटकर अपनी स्थिति काबू में की थी। इस संकेत से उनको रोष हो आना स्वाभाविक था, अतः मैंने हंसकर कहा :

'देखिए विवाद में व्यक्ति कितनी जल्दी अपने को भूल जाता है। विचार की दुनियां, क्रिया की दुनियां से भिन्न होती ही है। लेकिन मेरा इरादा आपके प्रति आक्षेप का न था; आशा है कि आप बुरा न मानेंगे !'

'ना, ना, मैं पूरी तरह आपका मतलब समझता हूं। और मेरे इस समस्त विवाद का मूल भी आपके भविष्य के बारे में ही है ! आप अपने लिए क्या सोचते हैं ?'

मुस्कराकर मैंने कहा; 'आप लोगों के होते हुए अपने बारे में कुछ सोचने की मुझे आवश्यकता ही क्या है ?'

'समझ लीजिए, इसीलिए मैं आपसे पूछ रहा हूं।'

'पर इसकी आवश्यकता है क्या ?'

'सो क्या आप नहीं जानते ?'

जानता मैं क्यों न था !—एक दूसरे विभाग का निर्माण हो रहा था, जिसका कार्यक्षेत्र, मेरे कार्यक्षेत्र ही को अन्तर्भुक्त करता था। आवश्यकतानुसार धुरीण-पुरीण मैं था ही; उन्नति की जगह थी, और कोई कारण न था कि वह मुझे न मिलती। पर मैंने अनजान बनते हुए कहा, 'नहीं तो !'

'मैं समझता था आपको मालूम है ! आपके अधिकारी ने आपसे नहीं कहा ? चूंकि आपके वर्तमान विभाग को इस नये विभाग में अन्तर्भुक्त किया जा रहा है, कहीं आप सरप्लस (अनावश्यक) बता न दिए जाएं !'

'क्यों क्या ऐसी बातचीत चल रही है क्या ?'

'आप तो इन लोगों को जानते ही हैं; ये लोग कुछ भी कर सकते हैं।'

'पर मुझे ये विस्थापित तो नहीं कर सकते।'

'पुनर्वास की व्यवस्था भी तो की जा सकती है ?'

चिन्ता होना स्वाभाविक है। आशा थी उन्नति की, और लक्षण प्रकट होने लगे उल्टे ! लेकिन धर्मप्रकाश की नस पहचानता हूं; छिपे हुए ताशों से वह कई खेल खेला करता है। मैंने सफलतापूर्वक अपनी उदासीनता प्रकट होने दी।

कुछ देर के बाद वे ही बोले, 'यह कमलनयन कैसा लड़का है ?'

'कौन जोशी ?'

'हां, जूनियर जोशी ! आजकल नरवरोत्तम तो यहां है नहीं ! कर्मचारियों के परिचय-पत्र यही तैयार कर रहा है।'

'आपका मतलब है, हम लोगों का भाग्य उसीके हाथ है !' मुस्कराकर मैंने कहा।

'एक दर्जे तक !'

'तो मैं कहूंगा कि हमारे सर के ऊपर की तलवार गलत हाथों थमाकर आप निश्चिंत हो उठे हैं।'

'पर कमलनयन तो उतना बुरा नहीं मालूम देता !'

'वह तो दूसरे के हाथ में कलम मात्र है !'

'तो फिर उसे दोष क्यों दिया जाए ?'

'इसलिए कि यह कार्य किसी कलम मात्र के करने का नहीं, बल्कि दिमाग वाले हाथ का है।'

'पर कमलनयन क्या सचमुच एक कलम मात्र है ?'

'देखिए, आदमी की पहचान मेरी जरा कमजोर है; परन्तु अब तक

मेरी यही धारणा बनी है !'

'आपको तो मालूम होगा कि पर्दे के भीतर वह क्या खेल करता है ?'

मैंने हंसकर कहा, 'जो उस समय पर्दे में हो, उसे ही तो मालूम होगा !'

'सो तो है; पर पर्दे के भीतर जा सकना भी क्या कम है ?'

'बाहर रहने वाला उसे कैसे बता सकता है ?'

'उड़िए मत मिस्टर ! उस रात को तो आपने बेचारी को पकड़ा ही दिया था !'

'मैंने ? कहते क्या हैं आप ?' मैंने दृष्टि उठाई; शैतानी से भरी उसकी आंखों को पकड़कर मैंने भी कहा—'उड़े आप भी तो कम नहीं !'

जहां तीर जाकर बैठा, वहां का मुझे लक्ष्य न था। धर्मप्रकाश समझे कि उस रात को उनकी उपस्थिति के बारे में मुझे कोई शंका न थी, यद्यपि मेरा केवल अनुमान ही था।

धर्मप्रकाश ने कहा, 'न उड़ता तो क्या होता ?—वह चीख भी तो उठी थी !'

'आपने जल्दी की। कुछ धैर्य से काम लेना चाहिए था। जोशी तो आपके हाथ में है ही !'

'और आप ?'

हंसकर मैंने कहा, 'मैं इस भूमिका में हूं ही कहां ? आग जाने, लुहार जाने।'

'तो फिर आप उस खिड़की में इतनी रात गए क्या कर रहे थे ?'

'खटमल और मच्छरों के खिलाफ जिहाद बोलना चाहता था !'

'अंधेरे में ?'

'मेघदूत की कृपा का भरोसा करके ! और यदि आपको यकीन न हो तो आपकी इच्छा !'

'नहीं, नहीं; यकीन क्यों न होगा ! अच्छा, एक मदद तो आप कर सकेंगे ?'

'फरमाइए ।'

'जब कि आप सब बातें जानते ही हैं—देखिए यदि आप कुछ सहायता न कर सकें, तो कम से कम इसे जाहिर तो न होने दें; और मैं आपके केस को बनाने की कोशिश करूंगा !'

'यानी यदि मैंने यह न किया, तो मेरा केस बिगड़ जाएगा ?'

उठते हुए मैंने कहा, 'व्यर्थ की बातों में दिलचस्पी लेना न तो मेरा शौक है, न धन्धा ही ! आज के इस कष्ट के लिए धन्यवाद !'

और हाथ मिलाकर मैं बाहर हो लिया ।

५

शनिवार का दिन दफ्तरों में बड़े महत्व का होता है, इतने महत्व का कि रविवार का महत्व भी उसके सामने क्षीण है । इस दिन कार्य कहीं एक बजे, कहीं डेढ़ बजे और कहीं दो बजे, अपराह्न के लिए बन्द हो जाता है । मित्र लोग पूर्वाह्न में मिलते हैं, और सन्ध्या के लिए सामाजिक कार्यक्रमों की योजना बनाते हैं—दूसरे दिन रविवार का पूर्ण अवकाश होता है, अतः ऐसे कार्यक्रमों को गहरी रात्रि तक चलते रहने वाला बनाए रहने में कोई विशेष बाधा नहीं होती । और कुछ न हुआ तो किसी उपाहारगृह में अच्छी-खासी चाय-सभा और फिर चित्र-गृह का कोई फड़कता हुआ 'चित्र'—ये तो हो ही जाते हैं । इतवार के पूर्णावकाश में कोई सामाजिकता नहीं होती, रंगीनी तो हो ही कहां से ! यदि कभी इतवार की योजना उपस्थित की जाती है तो सभी अपनी गृहस्थी की आवश्यकताओं का राग छेड़ बैठते हैं । किन्तु शनिवार के संक्षिप्त सुन्दर कार्यक्रम में कोई बाधा उपस्थित नहीं होती । उत्साह के प्राचुर्य और समय की क्षीणता के बीच कार्यक्रम की मोहकता बढ़ ही नहीं

जाती, उसकी धारा भी बड़ी क्षिप्र हो उठती है।

शनिवार की ऐसी ही दुपहरी का प्रारम्भ था। यों सप्ताह के दिनों में मध्यान्तर एक बजे से डेढ़ बजे का रहता है; आज डेढ़ बजे छुट्टी हो जाती है, अतः मध्यान्तर नहीं होता; किन्तु मध्यान्तर की वृत्ति तो बन ही जाती है। एक बजते ही नियमानुसार दाल-सेव, चाट-दहीबड़े, आलू-कचौड़ी या फल-फूल आदि के कई सड़े-गले, भले-बुरे खोमचे इकट्ठे हो जाते हैं, और बाबुओं का भूखा समुदाय, कैद से छूटे कैदियों की भांति टूट पड़ता है उन खोमचों के ऊपर; और फिर सड़ा-गला खाद्य-अखाद्य पदार्थ खाकर कभी बवासीर, कभी कब्जी—ऐसे ही किसी रोग को पाल लेता है।

किन्तु यह बात है उन बाबुओं की, जो इस जमाने में पचपन रुपया मासिक वेतन और पैंतीस रुपया मासिक मंहगाई के सूत्र द्वारा अपनी गाड़ा भर गृहस्थी की समस्त टीका सम्पन्न करते हैं, फिर दस से एक बजे तक टेबल के कागजों में आंखें गड़ाते रहने के बाद भी जब कागजों के पहाड़ का अन्त नहीं दिखाई देता, तो हारकर वे आठ-दस पैसे के श्राद्ध पर थोड़ा-बहुत 'रिफ्रेशमेंट' (स्फूर्ति) प्राप्त करने की चेष्टा करते हैं; इस मृग-तृष्णा के पीछे यदि कहीं बवासीर की बीमारी ही छिपी हो, तो किसे दोष दिया जा सकता है ? —पर यह इतिहास सदैव से इसी तरह तो चला आ रहा है।

इनसे ऊंचा समुदाय, जिसे हम उच्च-मध्यवर्गीय कहा करते हैं, और जो स्वयं भी इसी नाम से अभिहित होना पसन्द करता है, पचपन-तीन-अस्सी की सतह से काफी ऊंचा है, वह डेढ़ सौ-ढाई सौ से लगाकर चार सौ तक के वेतन-स्तर का भाग्य और अभाग्य के बीच डूबता-उतराता रहता है। यह समूह एक प्रकार से सोशल-स्नॉब (सामाजिक बौड़म) है। सचमुच में जो इन व्यक्तियों को प्राप्त हो चुका है, उसके लिए ये अनुपयुक्त हैं, किन्तु जो इन्हें प्राप्त नहीं हो सका, उसके लिए अपने आपको सर्वथा उपयुक्त समझते हैं। ये सवेरे छः बजे ही

नींद से निवृत्त होने पर भी, बिस्तर से आठ बजे से पहले निवृत्त होना नहीं चाहते। शैया-पान—बेड-टी—के रूप में एक प्याला चाय, उसके बाद सिगरेट के धूम्र-शोधन के साथ शौच-निवृत्ति; नौ बजे तक सेवन-ओ-क्लोक की सहायता से श्मश्रु-निरसन फिर जुकाम के भय को दूर रखने के लिए ज्येष्ठ के दिनों में भी उबलते हुए जल से स्नान; और समय के अभाव की घोर शिकायत करते हुए चाय-पान और प्रातराश; जल्दी-जल्दी में सूट पहनकर टाई को बिना बांधे ही गले में लटकाकर भागते-भागते दफ्तर पहुंचना पड़ता है इन्हें; कभी-कभी दस-पन्द्रह मिनट की देरी के लिए, यदि कभी साहिब दफ्तर जल्दी आ गए तो, मृदु फटकार भी पचानी पड़ती है।

दुपहर में साहब के लंच पर जाते ही, आप भी घर पर 'लंच' के लिए जाते हैं, चेष्टा करते हैं कि भारतीय खाना भी पाश्चात्य ढंग ही से खाया जाए, चीनी की तश्तरियों में छुरी-कांटे की सहायता से। फिर कुछ थोड़ा विश्राम करके साहब के लौटने के पहले ही दफ्तर पहुंच जाते हैं। शाम को पांच बजे दफ्तर ही में घर से 'आफ्टरनून टी' आती है; चूंकि दफ्तर में आती है, इसलिए आवश्यक है कि साहबाना ढंग से हो, फिर दो-चार मनचले मातहत क्लर्क ज़रा लल्लो-चप्पो करके शरीक हो जाते हैं। बाबू साहब की जगह उन्हें 'साहब' शब्द से संबोधित करने मात्र से बहुतेरी बाधाएं नष्ट हो जाती हैं। अच्छी बढ़िया चाय, कभी-कभी काफी भी, और बढ़िया इंगलिश बिस्कुट, कभी सूखा मेवा आदि का प्रसाद अनायास ही प्राप्त हो जाता है। साढ़े छः बजे घर लौटने पर फिर एक प्याला चाय, यदि जल्दी आ गए तो टेनिस, और रात को नौ बजे 'डिनर' खा-कर बारह बजे तक गप्पें लड़ाकर पड़े रहना—कभी-कभी 'ड्रिंक्स' आदि भी। गृहस्थी के एक जीवन पर इतना भार! —पर यह तो चादर का एक ही कोना है।

दूसरे कोने पर आया-नौकर, घर में भर्ती का फर्नीचर, रेडियो, फूलदान, उगालदान, बे-शुमार कपड़े, कॉस्मेटिक्स—बाहर कहीं गए तो

टैक्सी या तांगा; सिनेमा गए तो दो-चार दोस्त पीछे लगे हुए, और फिर 'बॉक्स' से कम में कैसे बैठा जाए ?—यदि श्रीमती जी ने सहयोग दिया तो फिर क्या पूछिए ! —यह सारा खर्चा चलता है दो सौ-ढाई सौ मासिक पर ।

श्री अटनागर इसी वर्ग का प्राणी बनने का प्रयत्न कर रहे हैं । उनकी पत्नी श्रीमती कमला अटनागर भी इसी सांचे की हैं; हैं क्या, बल्कि अट-नागर ने उन्हें ऐसा ही बना लिया है । शनिवार को वे सिनेमा देखने जाया करते हैं, रात्रि का अन्तिम शो देखने, पर आज अटनागर बाहर हैं, अतः कमला 'मैटिनी' देखने गई है; और उनका नौकर दादू आज फुरसत से है ।

दुपहर में दफ्तर खाली होता जा रहा था; चपरासी गण खोमचे वालों से दाल-सेव, कचौड़ी आदि लेकर एक ओर दफ्तर के पीछे बगीचे में बैठे गप्पें हांकते हुए सह-भोज कर रहे थे, कि तभी एक ओर से कटे हाथ का दादू भी आ पहुंचा ।

चपरासियों की इस जमात में किशन विदूषक है । वह है भी सबसे बड़े साहब का मुंहलगा अर्दली । बोला—'आओ जी कबन्धराम ! —लहंगे की छाया से कैसे भाग आए ? कहीं चरने की छुट्टी तो नहीं है आज ?'

दादू बहुत कुछ नहीं समझ सका । पर जब अन्य चपरासी हंसने लगे तो उसने सोचा कि कदाचित् व्यंग्य उसके नाम को लेकर उसीके ऊपर है, तो बोला :

'मेरा नाम तो दादू है भाई !'

'उसके जादू से हम भी बेखबर नहीं है दादू ! —बैठो भी ! आज उस चमक चन्दा ने तुम्हें छुट्टी कैसे दे दी ?'

दादू भी उस गिरोह में एक ओर बैठा गया । उसके सामने लगते सब पिद्दी जैसे थे; जब बैठा तो सचमुच मानो किसी गुफा के मुंह पर एक बड़ा भारी पत्थर पटक दिया हो ।

रामू बड़े बाबू का नौकर था; स्वाभाविक था कि वह अपने आपको भी बड़ा चपरासी समझे। उसकी आव-भगत-सम्मान भी औरों की अपेक्षा अधिक थे। जैसा देवा वैसी पूजा, यह तो ठीक है; पर इससे भी आगे एक पाठ है, जो इस युग में तो माननीय है ही; यानी जैसा पुजारी—वैसी पूजा। ऐसा सिद्धि साधक योग कुछ कठिनाई से ही मिल पाता है। पर जब मिल जाता है तो पौ-बाहर ही समझिए।

रामू ने कहा—'दरवाज़े पर नई जूतियां देखकर तो नहीं लौट आए?'

हरपाल ने आधी कचौड़ी का टुकड़ा तथा कुछ आधी-पौन छंटाक दाल-सेव एक कागज के टुकड़े पर दादू के सामने सरका दिए।

रामू ने कहा, 'ऊंट के मुंह में जीरा। दाढ़ ही में अटक रहेगा कहीं।'

'नहीं, नहीं; दादू दादा ज़रा धीरे-धीरे; संगत में बैठकर संगत जैसा ही करना चाहिए।'

रामू ने कहा, 'अजी बनमानस, यह तो बताओ···'

दादू ने आंखें फिराईं, कहा—'क्या कहा?'

सम्हलकर रामू ने कहा, 'लो देखो, नाराज हो गए? 'भला मानस' भी न कहे?—अच्छा भाई! तुम कहो सो ठीक दादू दादा। पूछ यह रहा था कि आज तुम्हारी मालकिन से तुम्हें फुरसत कैसे मिल गई?'

कचौड़ी का पूरा आधा टुकड़ा जबड़ों में दबाकर वह बोला—इसी प्रयत्न में उसका कुछ मसाला उसके कुरते पर बिखर पड़ा, हाथ से बीनते हुए वह बोला, 'मेम साहब आज सलीमा देखने गई हैं!'

'सलीमा देखने?'

दादू ने हिलते हुए ओठों के साथ ही गर्दन भी हिलाकर कहा, 'हां भई, सलीमा देखने गई हैं।'

'और साथ में कौन, वही सामने का आशिक हुसैन कमल बाबू होगा!' हरपाल ने कहा।

'कमल बाबू है बड़ा खुशकिस्मत यार !' किशन ने कहा।

रामू ने बाईं आंख का कोना दबाकर कुछ रहस्य व्यक्त किया और बोला, 'हम और तुम एक जैसे है दद्दन !—हमारा साहब भी सलीमा देखने गया है।'

रूपसिंह ने कहा, 'मगर तेरे साहब कभी पैसा खर्च करके सलीमा देखते हैं ?'

'मौका मिलने पर अपना ही नहीं, दूसरों का टिकिट भी वे ही खरीदते हैं।'

'और मेम साहब ?' हरपाल ने पूछा।

'वे तो उनसे भी पहले अपनी सहेली के यहां गई है।'

'और बच्चे-कच्चे ?'

'वे यहीं खेल रहे हैं !—देखो न, वह लौंडा मिट्टी में लेट रहा है, बस इधर-उधर देखेगा और एक मुट्ठी मुंह में—बहुत मिट्टी खाता है।'

'तो तुम्हारा क्या लेता है ?'

किशन ने कहा, 'इनके ही लौंडे इनका नहीं लेते तो दूसरों के लौंडे इनका क्या ले लेंगे !—पर यार रामू ! यह तुम्हारी सफेद भैंस इन कलेण्डरों को अपने साथ क्यों नहीं रखती ?'

'अरे शरम जो लगती है !—क्या करें बेचारी, कुदरत पर बस नहीं चलता। वरना रोज भगवान को कोसा करती हैं कि अगर आया दूध पिला सकती है तो जन क्यों नहीं सकती।'

'जन भी सकती है, बशर्ते कि बगल खाली की जाए !'

रामू ने कहा, 'सो कैसे हो ? उनकी बगल खाली रह ले, पर अपनी कैसे रहे ?'

दादू कुछ समझता, कुछ न समझता, दाल-सेव के एक-एक दाने से बीतता हुआ समय गिन रहा था।

रामू ने कहा, 'मेम साहब एक रुपया उगल गई थी कि बच्चों को कुछ लेकर खिला देना। बच्चे मिट्टी खा ही रहे हैं—क्या हर्ज है, बड़े

आदमियों के बच्चे हम छोटे आदमियों की देख-रेख में थोड़ी धूल ही फांक लिया करें !—ले किशन, यह अठन्नी ले; दाल-सेव ले आ !'

'कितने रोज़ बना लेता है रामू इस तरह ?'

'अपने कौन लहंगा पसारे पीछे बैठी है कि इसकी फिकर करें—यहां तो मिला सो उड़ाया !'

किशन चला गया, तो हरपाल ने रामू से पूछा, 'तू तो जानता होगा रामू, सच बताएगा ?'

'झूठ बोले मेरी जूती ! किसीसे डरता हूं ?'

'तेरे सा'ब और दादू की बबुआइन में सांठ-गांठ की जो अफवाह है, वह सच है ?'

'इस कबन्धे से पूछ न ! यह जानता होगा, दरवाज़े पर पहरा तो यही देता है !'

पार्टी में बैठकर भी दादू पार्टी से अलग था। बहरा वह नहीं था, किन्तु जब तक कोई बात उसीको न कही जाए, उसे सुनने की गरज न होती; सुनकर समझना उसके लिए और भी दूर की बात थी। फिर, जो बात उसे सुना दी गई है, उसीसे उसे मतलब है, उसके पहले का पाठ साफ हो चुका होता है। उसका मन कागज का पुलिन्दा नहीं, कि एक के बाद एक लिखते चले जाइए, सब कुछ, साफ या धुंधला बना रहेगा; वह तो बच्चों की स्लेट है, दूसरा पाठ देने के लिए पहले पाठ को साफ कर लेना पड़ता है। और इन भिन्न-भिन्न सूत्रों को जोड़कर एक संगत-किस्सा बुन लेने की उसकी क्षमता भी सीमित है।

हरपाल ने कहा, 'किशन आ जाए तो वही पूछेगा। इस हब्शी से उलझे कौन ?'

किशन आया तो रामू ने कहा, 'अरे कुछ बीड़ी-वीड़ी भी ले आया है, या बुद्धू ही रहा ?'

'तेरे जैसे पराए-पाकिट पर नहीं रहते बेटा ! यह देख, पीते हैं तो पास रखते हैं। असली केसरी छाप है ! यही नहीं; पान तक खिलाऊंगा

तुम्हें जिगर !'

दाल-सेव फिर बांटी गई। इसी बीच हरपाल ने किशन से धीमे-धीमे दादू से क्या पूछना है, सो सारी बात बता दी।

किशन ने कहा, 'तुम्हें क्या मतलब है इन बातों से !—और रमुए ! तेरे ससुर का माल तो है नहीं ! जिसका माल है, उसकी खुशी है, चाहे जिसको दे, और चाहे मुफ्त दे !—क्यों भाई दादू ! सच कहता हूं न।'

दादू ने सिर हिलाकर कह दिया कि किशन की बात ही ठीक है।

रामू ने कहा, 'बेचना ही हो तो बाज़ार लगाकर क्यों न बैठे !—जिसकी कमर में ज़ोर होगा, वही खरीद लेगा। कीमत भी भरपूर मिलेगी !—क्या कहते हो जी दादू ?'

'ठीक कहते हो, कीमत भी पूरी मिलेगी !'

हरपाल ने कहा, 'बेचने न बेचने की तो बात ही कहां है !' हरपाल ने दादू की ओर देखा।

'नहीं है, कोई बात ही नहीं है !'

'तो तुम्हीं बताओ न दादू, बात क्या है ?'

दादू ने कहा, 'इस दाल में कुछ मिरची ज्यादा है !'

किशन ने कहा, 'खाक ज्यादा है !—अरे काला है, इसमें काला !'

'हां-हां, देखो यह है जला हुआ !'—कहकर जली दाल का काला टुकड़ा उसने सामने रख दिया।

'जला हुआ दाल का टुकड़ा नहीं, जला हुआ दिल, और उसका सौदा; सवाल है, वह किसको बेचा गया और क्यों ?' किशन ने कहा।

तब दादू ने समझा कि बात उसीसे कही जा रही है ! होंठों पर चिपक जाने वाली नमकीनता को जीभ से चाटकर वह बोला, 'किसका दिल ?'

'तेरी मालकिन का और किसका क्या ?'

'वो तो आज सलीमा देखने गई हैं।'

'जरूर दिल लेकर गई होंगी, लेकिन लेकर लौटेंगी भी ?'

'कहा है कि शाम को कुछ देर हो जाए तो घबराना मत ! वहीं से अपने रिश्तेदार के यहां शायद चली जाएं। रात को देर भी हो सकती है !'

'तुम साथ नहीं गए ?'

'उन्होंने कहा जरूरत नहीं है। घर पर भी कोई था नहीं !'

'हां ! हां ! सो तो ठीक है। घर पर तुम रह गए !'

किशन ने कहा, 'अकेली सिनेमा जाते उन्हें डर नहीं लगता ?'

'डर कैसा ? दिन का वक्त है ! कोई खाता थोड़े है !'

'सच कहते हो दादू, हमारे साहब भी तो अकेले ही देखने गए हैं। उन्हें भी कोई खा नहीं सकता !'

किशन ने कहा, 'तब तो पौ-बारह हैं रामू !—दो जब मिल गए है, तो उन्हें कोई खा नहीं सकता। और यही क्या ठीक है कि वे सिनेमा देखने ही गए हों। सिनेमा देखने की बनिस्बत अगर सिनेमा करने का मौका मिल जाए तो कौन छोड़ेगा ?'

दादू कुछ समझा नहीं; बोला, 'तुम तो पागल हो किशन !—सलीमा कहीं आदमी करते होंगे !—अरे वे तो सब तस्वीरें हैं तस्वीरें ! —मालकिन कहती थीं !'

'जरूर कहती होंगी ! तू भी तो एक तस्वीर है दादू !—अच्छा यह बता, तेरा दिमाग कितना बड़ा है ?'

हाथ लगाकर दादू ने बता दिया।

'यह तो खोपड़ा है, हड्डी; समझा न ? दिमाग कहां है, मालूम है ?'

रामू ने कहा, 'खोपड़ा हो तो भी क्या कम है ? अच्छा दादू, इस किशन की बात तो रहने दे, मेरी बात बता।'

'पूछो !'

'तेरी मालकिन तुझे अच्छी लगती है ?'

'बहुत अच्छी !'

'कुछ मिलता भी है ?'

'बहुत कुछ ! आज भी जब सलीमा देखने गई, तो मुझे अठन्नी दे गई ।'

'वह सामने वाला कमल बाबू भी तुझे कुछ देता है ?'

'वह भी बहुत अच्छा आदमी है । उसने भी मुझे होली का एक रुपया इनाम दिया था ।'

'और तेरी मालकिन के लिए चिट्ठी-विट्ठी भी दी थी या नहीं ?'

'मुझे क्यों देने लगे ?—वे खुद ही आकर नहीं दे सकते ?—आमने-सामने ही तो घर है । चिट्ठी वे तो नहीं देते ।'

'फिर कौन देता है ?'

'दफ्तर से बड़े बाबू देते हैं । कहते हैं, तुम्हारे बाबू की चिट्ठी आई है, मालकिन को दे देना !'

"अच्छा ।—क्या डाकघर की मुहर होती है उसपर ?—टिकस वगैरा रहता है उसपर ?'

'नहीं !—कहते हैं, वह उनके खत में ही आई है ।'

किशन ने कहा, 'तो दादू, एक बात कह ?'

'कहो न !'

'तेरी मालकिन में और बड़े बाबू में आशनाई है ?'

दादू ने आंखें ऊंची उठाईं, पहली बार; बोला, 'क्या कहा ?'

बैठे हुए सभी व्यक्ति डर गए । दादू का दैत्याकार शरीर, उसपर अग्नि-स्फुलिंग-सी चमकती हुई आंखें; यदि वह केवल एकाएक किसीपर गिर भी पड़े, तो सड़क पर पड़े हुए पत्थर को स्टीम के रोड-रॉलर का अनुभव दुहराना पड़े ।

रामू ने कहा, 'दद्दा, आशनाई का मतलब जानते हो ?'

हरपाल ने कहा, 'रईसपना कहते हैं उसे ! हमारे बड़े बाबू भी रईस-तबियत हैं, और तुम्हारी मालकिन भी रईस-तबियत । तुम्हें अठन्नी मिली है, तो रामू को एक रुपया मिला है आज !'

किशन ने कहा, 'और रईस-रईस में ही तो तबियत मिलती है ।'

'और तबियत मिली कि फिर पूछना ही क्या ! सिनेमा-होटल-पैसा-रुपया यहां तक कि जान तक कुर्बान !—इसका नाम है आशनाई मिस्टर दादू !समझ गया ?'

और रामू के कहने के ढंग से सभी हंस पड़े । न हंसा केवल दादू ।

किशन ने कहा, 'देख, बड़ों की बातों का क्या ?—हम तो अपनी बातें करें ! हमने सुना कि मालकिन को आदमी की ज़रा अच्छी पहचान है ! कहीं हमारी टिप्पस भी लड़ सकती है ?'

रामू ने कहा, 'दस रुपये अपनी तरफ से कुर्बान ।'

किशन ने कहा, 'पांच रुपये तुम्हारी फीस दादू ।'

हरपाल ने चुटकी काटी, 'तो क्या दादू को भड़ुवा समझ लिया है तुम लोगों ने ?'

—कि हरपाल के मुंह पर एकाएक बिजली गिर पड़ी, उसे काले-पीले दिखाई देने लगे । जिस शब्द का उच्चारण किया गया, वह इतना सामान्य था कि दादू के लिए समझने में कोई कठिनाई नहीं हुई । शब्द जहां से संकेत करता था वहां से उसे सरोकार न हो, पर जहां तक संकेत कर सकता था, वह बिन्दु उसके लिए असहनीय था, इसलिए हरपाल ने जब लाल कनपटियों के बीच झुलसा हुआ रुआसा मुंह ऊपर उठाया, तो गाल पर उंगलियों के नीचे निशान उभर कर मानो उसी शब्द का लिखित रूप प्रस्तुत करने लगे । सभी उपस्थित लोगों के मुंह पर हवाइयां तैरने लगीं ।

दादू का डरावना चेहरा और अधिक भयानक हो गया था । दोनों भवें, दो खांडों की तरह आपस में उलझकर टूट पड़ने के लिए बल खा रही थीं, नाक सिकुड़कर ऊपर खिच रहा था, जिससे फैले हुए नथुने और भी फैलकर गुफा के मुंह के समान कांप रहे थे, और काले पड़े हुए मोटे सूखे ओठ बाहर निकलकर और भी गहरे हो जाना चाहते थे । दृष्टि में उसकी घृणा छिपी हुई थी । उसके काले चेहरे से मानो आग के दो अंगारे झपक रहे हों ।

फुंकार-सी मारते हुए उसने कहा, 'मुझे चाहे जो कह लेना, मगर

मेरी मालकिन या मालिक को कुछ कहा—रोज़ी की कसम,—एक-एक को दफना दूंगा।'

हिम्मत करके रामू ने कहा, 'पर तुम कुछ समझे भी हो या यों ही····'

'भड़ुवा होगा यह हरपाल; और इसका बाप इसकी मां का।' और वह उठ खड़ा हुआ, क्रोध से उसका मुंह कांप रहा था, शब्द निकलना मुश्किल थे।

किशन ने कहा, 'दादू, कोई तुम्हारा राज है, सो चाहे जिसको···'

दादू ने आंखें फिराईं, तभी किशन सहम गया, और जब दादू ने कहा, 'टिकाऊं एक झापड़···'

रूपसिंह ने हाथ जोड़ते हुए का, 'दादू दादा, चलो, चलो; यह तो सब पागल हैं! चलो···' और करीब-करीब हाथ पकड़कर वह उसे दूर छोड़ आया। दादू घर चला गया।

हरपाल का हाथ पकड़कर रामू ने पूछा, 'क्या चोट ज़ोर से लगी है?'

'देखते नहीं?—नीली नसें उभर आई हैं।' किशन ने कहा।

'सारा गाल झनझना रहा है रमुए! यह सब तेरी वजह से हुआ। मौज तेरा बाप वहां सिनेमा में उड़ा रहा होगा, और चांद हम सहला रहे हैं यहां!' हरपाल ने कहा।

'तो बचुए, जब हम दस और पांच से दादू को पूजा करना चाह रहे थे, तो तुमने उसे खिताब कहां से दे डाला?' रामू ने कहा।

किशन ने कहा, 'पर खिताब रहा खूब!—यही रख दो उसका नाम!'

रामू ने कहा, 'मालूम पड़ता है तेरे गाल पर भी खुजली चल रही है!'

'चल तो रही है पर···'

रूपसिंह ने पूछा, 'पर?'

'उस खुजली को किसीके नरम-नरम ओठ···'

'वाह बेटे···' सभी हंस पड़े, हरपाल के मुंह पर भी मुस्कराहट

फैल गई। रामू ने कहा, 'पर इस कबन्धे की इतनी मजाल कि वह हाथ छोड़ बैठे ?—इसका बदला तो लेना ही होगा।'

हरपाल ने कहा, 'देखें तुम्हारी मर्दानगी, क्या बदला लोगे ?'

रूपसिंह ने कहा, 'किशन के गाल की खुजली मिट जाएगी ?'

रामू ने चुटकी बजाकर कहा, 'देखूंगा···नौकरी बड़े बाबू के पास करता हूं, भाड़ नहीं झोंकता। भाड़ भी झोंकता होता तो, इसके उसी हाथ को झुलस देता !'

किशन ने दूर देखकर कहा, 'अरे देखो तो, वह तो वापिस लौटता दिखाई देता है।'

रामू ने ही शेखी मारी थी, उसका दिल धड़कने लगा, पूछा, 'कहां ?'

'वह देखो···'

हरपाल सिंह अपनी पहले की वेदना भूल गया, बोला, 'उजड्ड है साला, फिर कहीं मार-पीट करने लग जाए। भैंसा है भैंसा, जंगली; दया-माया तो है नहीं। चलो भागो, यहां से, इधर से।'

और जैसे ही वह उठा, सब उसके पीछे, दूसरी ओर से झाड़ियों की ओट होते हुए बाहर निकल गए। दादू ने देखा कि कोई नहीं है, तो लंबी सांस लेकर बोला, 'भाग गए साले।'

—और फिर वहीं पहले वाली जगह पर बैठ गया—बैठ क्या गया लेट गया। शनिवार की सामजिक महत्ता में वह एकाकी, अपनी ही शक्ति के बोझ से व्याकुल, नरम दूर्वा को कुचलता हुआ, हांफता हुआ, पड़ रहा, एक जंगली भैंसे की तरह ही।

६

कहते हैं मरते समय रावण की दो कामनाएं शेष रह गई थीं। एक तो स्वर्ग तक सीढ़ी लगाने की, और दूसरे कल्पवृक्ष को पृथ्वी पर उतार लाने की ! उसके बाद फिर कोई रावण पैदा नहीं हुआ, यद्यपि बिना सीढ़ी के ही अनगिनत महापुरुष स्वर्गारोहण कर गए और बिना कल्प-वृक्ष के पृथ्वी पर अवतीर्ण हुए कई उतने ही महापुरुषों ने चाहा सो किया। यह कहना भी कठिन है कि समय और सुविधा होने पर कल्प-वृक्ष के नीचे बैठे-बैठे स्वर्गारोहण की इच्छा स्वाभाविक है, या स्वर्गारोहण कर लेने पर कल्पवृक्ष की छाया का लोभ ! पर जो हो, यह इस युग में तो सम्भव हो गया है, सिनेमा के द्वारा ! आप चाहें तो सिनेमा को रावण कह लीजिए—उसके बीस हाथ हैं, और दस सिर, उनके बीच में एक गधे का सिर भी ! टिकिट के दाम, सभी प्रकार के लोगों की जेबों के लिए मौजें, बेंचों पर बैठिए या बॉक्स में; सिर पर आपके कल्पवृक्ष की छाया और पैरों में स्वर्ग को ले जाने वाली सीढ़ी ! बीसवीं शताब्दि का अन्यतम वरदान; सभ्यता और संस्कृति का एकमात्र निःशेष सत्व। जिसने इस तीर्थ-स्थान में पैर नहीं रखा, उसके यौवन की तपस्या व्यर्थ हो गई। अगरु-विनिन्दित गन्ध से बोझिल ताम्रपर्णी की धूम्र-धारा से, जिस अभागे की घ्राण आपूरित न हुई, वह इस युग में तेज हीन है; 'जुबना के के उभार' पर, श्रवण और दर्शन का इन्द्रधनुषी-समन्वय जिसने परदे पर नहीं देखा—उसे क्या देखकर हम इन्सान कहें और क्या खाकर यह लेखनी उसको कह जाए ! तो, चलिए आप भी, सिनेमा घर में !

लम्बाई-चौड़ाई, ऊंचाई-निचाई, रंग-ढंग, साज-सज्जा, यानी भूगोल एक सिनेमा घर का दूसरे से जुदा हो सकता है; पर उसका इतिहास सब जगह एक जैसा है। और इतिहास-भूगोल की बाहरी रेखाओं के बीच में खोए जीवन की धारा को तो आप कहीं बदला नहीं पाएंगे !

परदे पर वही एक क्रिया, परदे के पीछे वही एक मनोवृत्ति ! प्रश्न केवल 'पांच आने जुर्माना और ढाई घंटे की कैद' पर ही समाप्त नहीं हो जाता। परदे पर चित्र नहीं पड़ते, किन्तु चित्रों पर परदा पड़ जाता है; और चलता रहता है शोषण का अरोक चक्र।

आप बॉक्स की ओर चलिए। नये आदमी हैं, यदि कहीं सिनेमा की घिसी-घिसाई क्लासिकल-टेकनीक से 'लड़का-लड़की से मिला' वाली विकसित कहानी आपकी रुचि को न छू सकी, तो बाक्स में आपकी रुचि ही कुछ और छू सकेगी ! यों तीसरा पहर है, पर यहां अंधेरा है; अंधेरा न हो तो तमाशा नहीं दिखाया जा सकता। बैठकें अच्छी हैं, नीचे छल्ले लगे हैं, ताकि बैठते ही दर्शक उछल जाए। इस उछल-शक्ति (स्प्रिंग ऐक्शन) का इस युग में बड़ा महत्व है, पर अभी तो चित्र देखिए !

ये जो सज्जन इधर बैठे है, चित्र देखने उतना नहीं आते, जितना समय बिताने के लिए। स्थान पहिले से ही सुरक्षित है। भीड़ बहुत होती है, और कोई 'योग्य' पात्र निराश लौटता है, तो ये उसकी संगति का लोभ रोक नहीं सकते। चाय आदि के प्रारंभिक आपानक के चीनी के प्याले से लगाकर यदि आवश्यकता हुई तो कांच के प्याले तक की रस्म-अदाई यहीं पर हो जाती है; और जब बीच ही में अकस्मात चित्र -प्रदर्शन समाप्त हो जाता है, तो ये लोग उठकर किसी रेस्टरां में देखे जा सकते हैं, रही-सही कोर-कसर वहां पूरी कर ली जाती है, और आधी रात के इधर-उधर ये बिछुड़ जाते हैं। कह नहीं सकता, घर पर बीवी-बच्चे हैं या नहीं। होने तो चाहिएं ! भारतवर्ष के रहने वाले पर यदि लक्ष्मी की कृपा हो तो बाल-बच्चे न सही, बीवी तो मिल ही जाती है ! वह आधी रात तक क्या करती है ? आप भी तो यहीं रहते हैं, यह मुझसे क्यों पूछते हैं ? लीजिए जनाब, ये एकाकी बॉक्स तो सब भरे पड़े हैं। अच्छा ही है, हम कोई प्रेमी-प्रेमिका तो हैं ही नहीं; चलिए इस खुली बालकनी में बैठें। तफरीह यहां भी रहेगी, विश्वास दिलाता हूं !

जरा धीरे, यह जो आपके सामने बैठे हैं—सपत्नीक नहीं मित्र,

स-प्रेमिका कहो ! इनका नाम है, हां-हां आप तो जानते हैं, और ये हमारी पड़ोसिन कमला नटनागर—भई मैं चला ! डरता हूं, इन्हींके दफ्तर का आदमी ठहरा, अगर पहचान में पड़ गया, तो दोनों तरफ बदरंग हो जाएगा। आपको मुबारक हो; सवेरे मिलेंगे, तब कहिएगा कैसी रही !

चित्र शुरू हुआ; सब देखने में व्यस्त थे। लड़का-लड़की से मिला और देखते ही दोनों की आंखों में विद्युत्संदेश प्रचारित हो गया। चार बाहें उठीं; दोनों के अधर-पल्लवों पर निमंत्रण नाच उठा। दर्शकों के हृदय धड़क उठे, आगे क्या होगा ? सेन्सर का नियम ? उधर तो ठीक है, पर दर्शकों में ?

कमला ने पास बैठे हुए धर्मप्रकाश की ओर अपनी आयत दृष्टि को आरोपित कर दिया। विद्युत्चित्र से प्रतिभासित प्रायान्धकार में भी धर्मप्रकाश ने उस दृष्टि को ताड़ लिया। दोनों के अधरों पर ललचाई हुई मुस्कान फैल गई। पुरुष का बायां हाथ नारी की पीठ को घेरकर उसके कन्धे पर आरोपित हो गया। उधर परदे पर खल नायक का प्रवेश हो गया था।

सांस रोके हुए सभी खेल देख रहे थे, केवल पांच आने की नीचे की बेंचों पर बैठे हुए कुछ दर्शकों ने खल नायक को गालियां देना शुरू कर दिया था। मानो वे गालियां अपने को ही दी जा रही हों, यह सोचकर उनके पड़ोसी प्रत्युत्तर देना चाह रहे थे। इस चिल्ल-पों से नाराज़ होकर उधर ही से कोई दर्शक अपनी तर्जनी और अंगूठे से जीभ को सिकोड़कर एक सीटी मार बैठा। पास वाले ने कहा 'सुनने क्यों नहीं देता !' पड़ोसी ने भी कुछ कहा—पीछे की सीट पर से किसीने बिना कुछ बोले, जिससे कि किसी भी दर्शक की दर्शन-क्रिया में किसी तरह का व्याघात न हो, उठकर उसके एक धौल जमा दी। बस, फिर क्या था; अंधकार, धर-पकड़, उछल-कूद, मार-पीट—सीटियों पर सीटियां ! सभी उत्कर्ण होकर खिलते हुए इस नये गुल को देखने लग गए ! पर वाह रे मशीन मैन,

फिल्म चलती रही !

कंधे से हाथ बढ़ना शुरू हुआ, तो कमला ने उसे अपने हाथों की सम्पुटि में बन्द कर लिया और कपोलों से सम्पुटि सटा दी; हाथ ने विद्रोह नहीं किया !

कमला ने कहा, 'ये लोग न तो देखने देंगे और न सुनने ही !'

'देखने-सुनने आता ही कौन है ?'

मुस्कराकर उसकी ओर देखते हुए कमला बोली, 'आप तो ज़रूर नहीं आए हैं ! पर ये लोग तो अकेले हैं !'

'कहां ? बचा हुआ खलनायक का काम नहीं कर रहे हैं क्या ?'

'लेकिन मैं तो देखने के लिए आई हूं !'

'तो देखो न ! और सबक भी सीखो ! सेन्सर है तो वह केवल पर्दे के चित्रों पर, हमारे ओठों पर नहीं ! अगर मैं अभी भी···'

'नहीं, नहीं; यहां नही; मैं हाथ जोड़ती हूं।' और उसने धर्मप्रकाश का हाथ छोड़ दिया।

मुस्कराकर धर्मप्रकाश ने कहा, 'पर तुमने तो जुड़े हुए हाथ को छोड़ दिया ?'

कमला ने कुछ न कहा, केवल उस हाथ को फिर हाथों में लेकर अपने अधरों से लगा दिया।

खेल चलता रहा। मध्यान्तर हुआ, चाय मंगवाई गई; नीचे पांच आने वाली गैलरी में अब झगड़ा न था। जब कि प्रकाश हो उठा था, खड़े होकर सभी दर्शक पीछे की ओर जीवित मूर्तियों को देखना चाह रहे थे। किसी-किसीको आश्चर्य हो रहा था कि उसके पास ही जो मूर्ति बैठी हुई है, उसकी उसे कल्पना भी न थी। उत्तरार्द्ध में वह ध्यान रखेगा; कम से कम उसके भावों का चढ़ाव-उतार तो जासूसी के योग्य होगा ही।

फिर अंधकार हुआ और खेल के चित्र परदे पर थिरकने लगे।

धर्मप्रकाश ने कहा, 'सीधे ही घर नहीं लौटना है ! मालूम है न ?'

'कहां चलिएगा ?'

'जहां मैं ले जाऊं !'

'बहुत देर तो नहीं लगेगी ?'

'जितनी लगना चाहिए, उतनी तो लगेगी ही ! रेस्टरां में सब प्रबन्ध है !'

परदे पर नायक मध्यरात्रि को वृक्ष के सहारे प्रेमिका की खिड़की में कूद रहा था ।

कमला ने कहा, 'खाना खाने के बाद मैं वहां नहीं ठहर सकूंगी !'

'क्यों ?'

'मुझे डर लगता है !'

'पगली !' धर्मप्रकाश ने उसके गालों पर चपत लगाते हुए कहा ।

'यह दृश्य देख रहे हैं ?'

'किन्तु तुम्हारे घर पर ऐसी खिड़की कहां है ?'

'ज़रूरत ही क्या है ? दरवाज़ा जो है !'

'पर खलनायक ?'

'कमल आपके रास्ते में नहीं आएगा ।'

'मैं कमल की नहीं कहता, पर मेरी श्रीमती जी का ध्यान नहीं है क्या तुम्हें ?'

'वह मुझे क्यों होने लगा ? पर अगर आप उनका उतना ख़्याल रखते हैं तो···'

'ख़्याल न रखूं तो खा न जाए !'

—पर मालूम दिया, कमला परदे के किसी चित्र में खो गई ! दफ्तर में बड़े बाबू के हाथ अवश्य लम्बे थे, इसलिए हथकण्डे भी उतने ही जानते थे, किन्तु प्रेम के राज्य में गड़बड़-घोटाला एक व्यवस्थित तरीके से चलता है । उस व्यवस्था को जानने वाले ही जानते हैं ! धर्मप्रकाश को जानना चाहिए था कि स्त्री कहीं पर भी किसी भी अवस्था में अपने किसी प्रतियोगी को सहन नहीं कर सकती ।

—और जब कि परदे पर किसी कोकिला का कामनृत्य धर्मप्रकाश को मुग्ध कर रहा था, तभी कमला ने पूछा, 'अच्छा, अगर आप अपनी 'वाइफ' से इतना डरते हैं तो बाहर की हवा क्यों खाते हैं ?'

'इसलिए कि घर में दम घुटता है।'

'तो अपने घर की खिड़की भी खुली छोड़ दीजिए न !'

धर्मप्रकाश एक क्षण के लिए निरुत्तर हो गया ! क्या यह मामूली पढ़ी-लिखी लड़की भी ऐसा व्यंग कस सकती है ?

कमला ने उत्तर न पाकर सोचा कि परदे पर और कुछ उलझाने वाला चल रहा है, नृत्य तब भी चल रहा था। पांच आने वाले सिसकारियां भर रहे थे।—आंखें नाच रही थीं, वक्षस्थल नाच रहा था, कूल्हे मटक रहे थे, पांच आने वसूल होने में शेष क्या रह गया था ?

कमला ने कहा, 'आदमी की प्यास कब बुझती है ?'

धर्मप्रकाश ने सुन लिया, कहा, 'जब तुम जैसी बगल में बैठ ले !'

'किन्तु आप तो इस परदे की खूबसूरती पर ही लुटे बैठे हैं।'

'असल जब तक नहीं मिले, तब तक छाया से मन भरमाना पड़ता है।'

'अगर यह सामने आ जाए तो मेरे लिए क्या आप इसे छोड़ देंगे ?'

'मैं छाया को नहीं चाहता, उसमें धोखा है। सामने आने पर भी रहती तो वह छाया ही है। मैं तुम्हें चाहता हूं कमला, छाया को नहीं।'

'और आपकी 'वाइफ' ?'

'उसकी बात छोड़ो ! वह गले-पड़ी घण्टी है। बजाना भी उसे पड़ता ही है।'

अपने हाथ को धर्मप्रकाश के कन्धे पर आवेष्टित कर कमला ने कहा, 'किसी दिन मैं भी तो गले-पड़ी हो सकती हूं।'

'हृदय का हार होकर; छाती का सांप होकर नहीं।'

रेस्टरां से जब दोनों बाहर निकले तो रात्रि के ग्यारह बज रहे थे।

सड़कों पर सन्नाटा छा रहा था, इक्का-दुक्का कोई व्यक्ति कभी इधर निकल जाता, कभी उधर। सवारी कोई उपलब्ध न थी, दोनों पैदल चले, पर किसीने लक्ष्य न किया। जिसने किया, उसने इन्हें पति-पत्नी ही समझा।

कालोनी के निकट आते ही धर्मप्रकाश ने कहा :

'कोई देख लेगा, अब हमें जुदा होना चाहिए। तुम इधर से चलो, मैं उधर से चलूंगा।'

'इतना डरते हैं ?—कल फिर शायद अपनी संतान को भी नहीं पहचानोगे ?'

'जब कोकिल अपनी सन्तान को कौओं से पलवाता है, तो कुछ समय के लिए तो उसे उसको भूलने ही में भलाई है।'

'काम बन जाने पर सन्तान ही को नहीं, उसकी मां को भी भूला जा सकता है। पर देखिए, मैं तो नहीं डरती। हालांकि डरना सबसे अधिक मुझे ही चाहिए। बल्कि अकेली पड़ जाऊंगी तो डरना पडेगा।'

'मैं तो कमला, तुम्हारे लिए ही डर रहा हूं।'

'सो तो मैं जानती हूं ! आपका उपकार यों ही कम नहीं है। मेरे ही लिए तो आज आप अपनी पत्नी तक को छोड़कर, इस गहरी रात में मुझे घर पहुंचाने के लिए तैयार हो उठे हैं। पर इतनी रात को अब मिलेगा ही कौन ?'

'अरे, ये नौकर लोग रात के दो-दो बजे तक गपशप लड़ाते रहते हैं, या ताश खेलते रहते हैं।'

'ओह, इन नौकरों से डरने की क्या ज़रूरत है ?—बल्कि हमें देखकर वे खुद ही डर जाएंगे, और इधर-उधर छिप जाएंगे।'

सचमुच इन्हें कोलोनी का मार्ग निर्जन ही मिला। कमला अपने घर के दरवाजे पर रुक गई, बाहर दादू बरामदे में लेटा हुआ था, और उसकी नाक उसका पहरा दे रही थी। जब धर्मप्रकाश आगे निकल गया तो कमला ने दादू को जगाया। इतने बड़े भरकम आदमी को

जगाना सरल काम न था। जब आंखें मसलता हुआ दादू जागा तो कमला ने कहा :

'घोड़े बेचकर सोते हो ?—कब से जगा रही हूं ?'

पर सामने अंधेरे क्वार्टर में बैठे हुए उन्निद्र कमलनयन के अधर आप ही आप फैल गए। बेचारा दादू आज तो एक ही स्पर्श में जाग उठा था। स्त्री-चरित्र की महिमा का कहीं अन्त नहीं है।

उस रात को फिर कमलनयन को नींद नहीं आई।

दूसरा दिन रविवार था। सवेरे सात-आठ बजते न बजते भाभी के दरवाजे कमलनयन की दस्तक लग जाती है, पूछने के लिए कि भाभी को किसी चीज़ की जरूरत तो नहीं है; या दिन में करने को कोई काम हो, आदि-आदि बातें पूछने के लिए। जब कि अटनागर अपनी गृहस्थी का समस्त चार्ज उसे दे गए हैं, तो यह उचित है कि वह मनोयोगपूर्वक अपना कर्तव्य निबाहता रहे ! बल्कि उनकी अनुपस्थिति में पहले कुछ दिनों तो सवेरे और शाम दोनों समय कमलनयन वहां पर चाय पीते थे। अब कुछ दिनों से रंग बदला दिखाई दे रहा है। कमलनयन सवेरे की चाय वहां पी लेते हैं। कभी-कभी रात्रि का कुशल-सम्वाद भी पूछ लेते हैं। इतवार होता है तो कभी-कभी खाना भी वहीं खा लेते हैं।

यद्यपि कमला आज देर से उठी, किन्तु घड़ी की ओर देखकर उसे आश्चर्य हुए बिना न रहा। साढ़े आठ बज रहे थे। यह नहीं कि वह जल्दी उठने की आदी है, पर सात बजे के बाद उसे कभी सोने नहीं दिया जाता। यदि आवाज़ देने मात्र से न उठती, तो कमलनयन उसे गुदगुदाने से भी बाज नहीं आता। और तब कहीं दादू सुन या देख न ले, इस भय से उसे शीघ्र ही उठ जाना पड़ता। आज वह साढ़े आठ बजे तक सोती रही। आश्चर्य है ! क्या कमल आया ही नहीं !

बिखरे कपड़ों को ठीक करती हुई, आंखें मलकर वह उठी। सूरज सिर पर चढ़ आया था। बैठक के कमरे में जाते ही देखा कि एक लिफाफा पड़ा हुआ है, मिसेज़ एन्-क्यूब अटनागर के नाम, केअर-ऑफ कमल-

नयन ! हस्ताक्षरों को देखकर ही वह पहचान गई कि पत्र श्री अटनागर महोदय का है। पत्र में क्या लिखा होगा, यह भी वह जानती थी ! फिर भी पत्र पढ़ने का सहज औत्सुक्य उसमें न हो, यह नहीं कहा जा सकता ! उसने पत्र की ओर हाथ बढ़ाया। पते पर लिखा था केयर ऑफ कमलनयन ! अमूमन ऐसे पत्र कमलनयन स्वयं लेकर आता है; और दोनों साथ बैठकर पढ़ते हैं। आज क्या बात हो गई ?—रात को, उसे ध्यान आया, जब वह लौटी तो पत्र वहां पर नहीं था। कमलनयन ने सवेरे ही उसे भिजवाया है। पर वह स्वयं क्या हो गया ?

उसने दादू को आवाज़ दी, 'यह पत्र कौन दे गया ?'

'सामने वाले बाबू ने भिजवाया है। बोला सा'ब का खत है।'

'सो तो है ! वे खुद आए थे ?'

'नहीं ! उन्होंने मुझे बुलाकर दिया था।'

'देखो, वे घर पर हैं, या बाहर गए हुए हैं ?'

वितृष्ण कमला अनमनी-सी वहीं कुर्सी पर बैठ गई। उसने पत्र को छुआ तक नहीं।

दादू ने आकर कहा, 'वे घर पर ही हैं। बुलवा दूं ?'

'तो बुला क्यों नहीं लाया ?—इतनी भी अकल नहीं है ? कमल बाबू क्या कोई प्रदर्शनी की चीज़ हैं कि खाली देखने के लिए भेजती !'—और वह उठकर बाथ-रूम की ओर चली गई। बेचारा दादू नहीं समझ सका कि उसका क्या कसूर था, और मालकिन उसपर क्यों बिगड़ी ?

सूखे बाल, भूखे नयन, और सूखा मुंह लिए कमलनयन आया, और बैठक में ही एक कुर्सी पर बैठ गया। हाथ में सवेरे का ताजा अखबार लेता आया था। जब उसे मालूम हुआ कि कमला बाथरूम में गई हुई है, तो उसे सन्तोष हुआ कि वह अखबार तो पढ़ सकेगा, किन्तु ऐसी कोई चेष्टा उसकी दिखाई न दी। अखबार हाथ में लिए वह शून्य दीवारों की ओर ताकता रहा। इसी बीच उसने देखा कि जो पत्र उसने सवेरे भिजवाया था, वह उसी तरह टेबल पर पड़ा हुआ है, खोलकर

देखा नहीं गया । यद्यपि अब कमला इतनी अंगरेज़ी पढ़-लिख गई थी, कि अटनागर के प्रेम-पत्रों को खूब अच्छी तरह पढ़-समझ ले, और अटनागर महोदय पत्र अंगरेज़ी ही में लिखते थे, और लिखते समय यह ध्यान रखना आवश्यक नहीं समझते थे कि जिसको पत्र लिखा जा रहा है, वह अभी विद्यार्थिनी ही है, और उनकी ऊंची प्रयत्न-साध्य अंग्रेज़ी को वह नहीं भी समझ सकती है—इतने भावुक हैं वे कि एक बार उन्होंने एक पत्र अपनी भावी सन्तान के लिए ऐसी ही अंग्रेज़ी में लिखकर भेजा था, ताकि वह सुरक्षित अमानत के रूप में उसकी माता के पास रहे, और जब वह पढ़ने लायक हो जाए तो उस पत्र को पढ़कर गर्व अनुभव करे कि उसका पिता इतनी बढ़िया 'कुसुमित' अंग्रेज़ी भाषा लिख लेता था—किन्तु कमला ये प्रेम-पत्र स्वयं नहीं पढ़ती थी। उसका व्रत था कि वह कमलनयन ही पढ़कर उसे सुनाए। उसकी प्यास को तृप्ति मिलती थी कि कमलनयन प्रेम के उसी आवेश को अनुभव करके उसे पत्र सुनाता था! देखकर कमल के अधरों पर एक कुटिल मुस्कान भी फैल गई।

कमला जब स्नानघर से बाहर निकली, तब भी कमल की दृष्टि अखबार की ओट ही में थी। उसने कमला के प्रवेश को अनुभव भी किया किन्तु उसने अनजान बने रहना ही उचित समझा। पहल कमला ही को करनी पड़ी :

'ओह कमल बाबू ! खैर आए तो।'

कमल ने अखबार हटाया, देखकर स्तब्ध हो गया ! सद्यःस्नाता, भीगी-बिखरी पीठ पर फैली चिक्कण-घन केश-राशि, अत्यन्त सावधानी के साथ उठाई हुई स्खलनप्रायः लपेटी हुई साड़ी, सारा परिवेश बड़े यत्न से प्रयत्न-सज्जित बनाया हुआ, क्षीण-सी कसी हुई अंगिया से निकल भागने को उद्यत कठोर वर्तुल उरोज, गर्दन और स्कन्ध का प्रायः समस्त भाग खुला हुआ—जैसे दोनों की दृष्टियां मिलीं, मुस्कराकर कमला ने कहा :

'क्या देख रहे हो मेरी ओर घूर-घूरकर ? शर्म नहीं आती।'

'घूंघट डाल लूं ? यह लीजिए।' कमल ने फिर अखबार ओट में कर लिया।

'नाटक करना भी सीख गए ? खैर नाटक ही सही; सभ्य तो बनते जा रहे हो ! मैं सोच रही थी कहीं····'

जब कमला रुक गई तो कमल ने कहा, 'क्या चीर-हरण कर लेता ? वह द्वापर युग था, गोपियां दिन-दहाड़े जमुना में वस्त्र किनारे पटककर नहा सकती थीं, और कृष्ण को उनकी प्रीति पर भरोसा था !—आज कैसे याद किया ? बाज़ार से कुछ मंगवाना है ?'

'जल्दी में हो क्या ? मैं जरा कपड़े पहन लूं ! दादू भी आ गया, तो क्या समझेगा ? नाराज़ मालूम देते हो कुछ; पर आदमी का रूठना रूठना ही क्या है ?'

उसकी स्निग्ध दृष्टि में फिर कुटिल उल्लास की एक चमक पुलकित हो उठी, और वह बड़े हलके पदों से दूसरे कमरे में फुदकती हुई चली गई।

सचमुच आदमी का रूठना भी कोई रूठना है ! अभी-अभी वह कमला के प्रति विश्व की समस्त तिक्तता से भरा हुआ था, और अभी मालूम दिया कि उसकी गहरी आयत आंखों से बढ़कर कामना की विश्व में अन्य कोई वस्तु हो ही नहीं सकती। वे आंखें नहीं, वे तो शीतल-स्वच्छ-मधुर सलिल से भरी हुई दो झीलें हैं, जिनमें स्नान करके अंजलि-बद्ध जल पीकर उत्तप्त अन्तर की प्यास बुझाने का लोभ रोका नहीं जा सकता। यदि कोई सर्वस्व भी मांगे, तो उस आनन्द के सामने वह है क्या ? उस अनन्त जलराशि में कहीं गन्दगी फैल सकती है ? उसकी पवित्रता, उसकी शीतलता, उसकी स्वच्छता क्या इसीलिए सीमाबद्ध हो जाएगी कि उससे किसी और की प्यास भी बुझ सकती है ? वह प्रकृति का एक अद्भुत लीला-विलास है। मरुस्थल तो सारा विश्व है, प्यास उससे भी अधिक अनन्त है। कहां है ऐसी शीतल आकुल तृप्ति ? कहां है ऐसी उज्ज्वल दृष्टि का उत्सुक आलोक ? कहां है ऐसी मुक्ति का अनियंत्रित

उन्मुक्त बन्धन ? फिर जो प्राप्य है उसको छोड़कर अप्राप्तव्य की आशा करना क्या दुराशा न होगी ?

अतः जब कमला लौटी तो कमल अपना प्रकृत स्वास्थ्य प्राप्त कर चुका था। देखकर बोला :

'बिना बादलों के आज यह बिजली कैसी ? कहीं गिरेगी ?'

'जी हां, अगर तुम बादल नहीं हो, तो समझो तुम्हीं पर गिरेगी।'

'क्या अभी तक मुझपर बीती नहीं ? मन का पहचानने लायक कोई अंश भी साबित बचने दिया है तुमने ?'

'ज़रूरत है क्या तुम्हारे पहचाने जाने की।' और मुस्कराकर उसने कमल के गालों को छूते हुए कहा, 'चाय की कहकर आती हूं !' और वह नाचती-सी हुई बाहर बरामदे में चली गई।

इतनी उत्फुल्ल ? रात्रि का वह वरदान क्या इतना अनुपमेय था ? इतनी सम्पूर्ण तो कमला कभी दिखाई नहीं दी थी। तो क्या वह स्वयं इतना अपदार्थ है ? कल से शायद बाज़ार से सौदा लाने जितनी पात्रता भी उसमें न रह जाएगी।

कमला लौटी तो उसने कहा, 'यह पत्र नहीं पढ़ा अभी तक ?'

'मैंने कभी पढ़ा है ? यह अधिकार तो तुम्हारा ही है।'

'क्यों मज़ाक उड़ाती हो कमला ! मैं अब वह पत्र नहीं पढ़ सकूंगा !'

'सौतिया-डाह पैदा हो गया ?—तुम समझते हो, मैं उस पत्र के लिए मर रही हूं !—लो यह लो—' और उसने पत्र उठाकर बिना पढ़े ही चीर-चीर कर डाला, और रद्दी की टोकरी में डाल दिया। 'लिखा होगा, माइ व्हेरी व्हेरी डीयर कमला, मैं तुम्हारी जुदाई को नहीं सह सकता ! मेरी तबियत ठीक हो रही है, सिर्फ तुम्हारे प्रेम में घुल रहा हूं !—सिली ! यह कभी नहीं लिखेंगे कि वह बुढ़िया डायन कब मरेगी ! उससे कब पीछा छूटेगा। ज़रा राहत तो मिले।'

'उस बेचारी बुढ़िया ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है ?'

'वह मरती जो नहीं। ससुर का सब पैसा और जेवर पेट के नीचे

बांधकर सोती है। मरने के बाद नागिन होगी या नहीं, कह नहीं सकती, पर ज़िन्दा तो सांपिन से किसी तरह कम नहीं है! कान तो नहीं ही हैं, दिखाई भी कुछ खास नहीं देता। और चलना-फिरना तो मुहाल है ही! और ये हैं कि उस चुड़ैल के इकलौते साहबज़ादे बनकर, उसकी गुलामी से बाज नहीं आते। उसके आगे दुनियां को कुछ समझते ही नहीं। अगर मां कहीं लक्ष्मी होती, तो सच कहती हूं सिर पर लादकर दूसरे श्रवणकुमार बन जाते। कहती हूं, बड़े हुए ही क्यों? मां की गोद में लेटे रहकर दूध पीते-पीते जिन्दगी गुजार देने में क्या बुराई थी? सच कहती हूं, बीमारी-वीमारी सब बहाना है! मुझसे तंग आकर मां की गोद में मुंह छिपाए पड़े हैं। पर उनकी परवाह करे मेरी जूती!' और कमला ने जोर से अपना पैर जमीन पर दे मारा।

कमल ने आंख उठाकर कहा, 'तुम्हें परवाह करने की जरूरत ही क्या है?'

'क्यों नहीं है? तुम भी तो तोता-चश्म हो! बाज़ार का ज़रा काम कर दिया, कि समझ लिया तीर मार लिया।—रोज-रोज के इस एहसान के बोझ को मैं लादे कैसे फिरती रहूं?'

'किसने कहा तुमसे कि तुम्हारे ऊपर यह एहसान है?'

'जीभ से कही जाने पर ही वह बात मैं समझूंगी, क्या मैं इतनी मूर्ख हूं? आज सवेरे से तुम्हीं कौन-से सीधे मुंह मुझसे बात कर रहे हो?'

लेने के देने पड़ गए। कमल एकाएक समझ नहीं सका कि परिस्थिति को किस तरह सम्हाले, कि नौकरानी चाय का सामान लेकर उपस्थित हो गई। कमल को अनुभव हुआ कि मुक्ति मिली। पर कमला नौकरानी पर ही उबल पड़ी।

'इतनी देर से अगर तुम्हें काम पर आना है, तो कल से तुम्हारी छुट्टी! यहां पर नौकरानियों की कमी नहीं है।'

नौकरानी घबरा गई। बेचारी बड़ी सीधी औरत थी। डरते-डरते बोली, 'आप ही ने तो कहा था मेम साहब, कि जब तक साहब न आएं,

आठ बजे से पहले न आया कर, नींद में खलल पड़ता है।'

मध्यवित्त समाज में नौकरों के द्वारा दिया हुआ 'साहब' और 'मेम साहब' सम्बोधन गौरव का चिह्न समझा जाता है। श्री अटनागर-दम्पति मध्यवित्त समाज के आदर्श है।

कमला ने कहा, 'पर इतवार को इतना काम करने को पड़ा रहता है। इतवार को सात बजे आ जाया करो। देखो नौ बज गए, और अब चाय दे रही हो।'

कमल एकाएक फिर भी नहीं समझ सका कि उस उबाल का कारण क्या है? नौकरानी जब बाहर चली गई तो कमल ने पूछा, 'अच्छा यह कहो, सदा की भांति आज बिना बुलाए क्यों न आए तुम?'

'मैंने सोचा शायद तुम्हें मेरी ज़रूरत न हो।'

'पहले भी कभी तुम्हारी ज़रूरत होने की खबर मैंने तुम्हें दी थी?'

'दी नहीं थी, पर आंखों से समझा था।'

'और आज?'

'समझता हूं आज नहीं है!'

'आज नहीं है! कैसे? क्या आंखों की भाषा तुम्हीं समझते हो?'

'तुम्हारी आंखों की भाषा न भी समझूं। पर अपनी का तो अविश्वास नहीं किया जा सकता!'

कमला आशंकित हो गई। चाय का प्याला सामने ठेलकर उसने कहा, 'देखो कमल, बात साफ-साफ करना अधिक अच्छा है, ताकि कोई गलत-फहमी न हो! हम कोई बंधे हुए पति-पत्नी तो हैं नहीं कि बिना लुका-छिपी के काम नहीं चलेगा! सच कहना, क्या तुम्हें अटनागर के लिए ईर्ष्या होती है?—सच कहती हूं, तुम्हारे लिए मैं उसकी राई भर चिन्ता नहीं करती। पर अगर वह मुझे चिट्ठी लिखे तो तुम्हीं कहो मैं क्या कर सकती हूं। आखिर शादी की है, तो इतना अधिकार तो उसका है ही। और यह कोई बहुत बड़ा अधिकार भी नहीं है कमल! इसकी कीमत है

सिर्फ पोस्ट आफिस के दो आने का टिकिट ! फिर भी तुम मुझसे नाराज़ हो गए ?'

जानकर कमला अनजान बन रही है। वह शायद सोचती है कि रात को उसका देर से आना किसीको मालूमन हीं है। ज़रूरत क्या है कि वह अपने विश्वास में खो जाए। तो भी कमल ने अंधेरे में तीर मारा :

'रात को आप कहां थीं ?'

कमला एक क्षण के लिए घबरा गई। तो क्या रात की कथा कमल को मालूम हो गई ? पर एक ही क्षण के लिए ! कमला कच्ची गोली न खेली थी। बछड़ा जब कुदान भरने लग जाता है, तो वह चौंकड़ियां भर कर भी सन्तुष्ट नहीं होता, उसे खेलने के लिए मैदान चाहिए। उसने कहा, और उसने भी अन्धेरे में जवाब दिया, 'तुम कल शाम से ही कहां थे ?'

'यहीं था।'

'झूठ ! दरवाज़ा तो बिलकुल ही बन्द था।'

'दफ्तर में ही तो था ! ज़रा दादू को इशारा कर दिया होता।'

'मुझे क्या मालूम कि शनिवार को भी शाम तक तुम्हें दफ्तर ही की मोहब्बत घेरे रहती है। जब कुछ सूझा नहीं, तो सिनेमा चली गई थी, इसीमें तुम नाराज़ हो गए ?'

कमल ने देखा कि बात को तूल देने से कोई लाभ नहीं, है, किन्तु ईर्ष्या की अग्नि इतनी सरलता से बुझ भी नहीं सकती। स्त्री का दाक्षिण्य पुरुष के बुभुक्षित अहम् की तृप्ति जो है !

उसने व्यंग्य किया, 'तुम्हें तो अकेले फिल्म देखने की कभी इच्छा ही नहीं होती थी न ! कोई पार्टनर मिल गया था क्या ?'

'जी उकता जाए तो अकेले भी देखना पड़ सकता है !'

कमल ने दूसरा तीर फेंका, 'कल शाम को दफ्तर में बड़े बाबू ने तुम्हारे बारे में पूछ-ताछ की थी !'

'बड़े बाबू ने ?'

'हां धर्मप्रकाश ने। कल शाम को हमें देर तक दफ्तर में जो बैठे रहना पड़ा था !'

कमला ने भी दांव पहचान लिया। बोली, 'क्या बोले ?'

'पूछ रहे थे कि कोई तकलीफ तो नहीं है, तुम्हें। यदि किसी बात की ज़रूरत हो तो उन्हें बता दिया जाए।'

'फिर तुमने क्या कहा ?'

'क्या कहता ! यही की पूछकर बताऊंगा !'

'यदि बता सको और उनके पास इलाज हो तो कह देना, मुझे सिर्फ तुम्हारी जरूरत है !'

'यानी धर्मप्रकाश की ?' हंसी को दबाकर उसने पूछा।

'चाहो तो यही कह देना ! कम से कम तुम्हारी बे-मुरव्वती का नाज़ तो न पालना पड़ेगा !'

कमल अप्रतिभ हो गया। चाय का प्याला टेबल पर रखकर बोला, 'बेमुरव्वती का नाज़ तुम्हें पालना पड़ता है या मुझे, तुम इसे नहीं समझ सकोगी···'

'इसीलिए समझाने के लिए ही क्या यह नाटक खेल रहे हो ?'—और वह कमल के कप में चाय उंड़ेलने लगी।

'नहीं, अब अधिक नहीं पी सकूंगा।'

'नाराज़ हो गए ? राजी और नाराजी में फर्क तो सिर्फ 'ना' का है न ?—अच्छा, अगर अपनी यह 'ना' निकाल दो तो फिर राजी ही राजी है। है न ?—लो, तंग न करो। बल्कि इन नखरों से तो, सचमुच की नाराजी ही भली होती है !' और उठकर उसने स्वयं ही कप को कमल के ओठों से छुआ दिया।

७

अपने आप के बारे में तो मैं भूल ही चला हूं। चाहता भी यही हूं कि प्रत्यक्ष में मेरा नाम लिखने की अपेक्षा यह लेखनी अपने कजरारे नयनों ही में मुझे छिपा ले, और अलग न करे। झर पड़ने की इच्छा न रखते हुए भी मैं आंसू से नहीं डरता। किन्तु आंख की किरकिरी बनने का जब अवसर आ जाए तो मैं अलग बैठकर प्यासे नैनों उस ओर देखते रहना गवारा कर लूंगा। इस समय इसी परिस्थिति में हूं, इसलिए अनायास ही अपनी याद पड़ गई है।

१५ अगस्त, १९४७ से ही भारतवर्ष का प्रत्येक जीवित नागरिक स्वतंत्र है, और वह स्वतंत्र हुआ है वर्षों की परतंत्रता के बाद, अतः सचमुच ही उस दिन के बाद मैं बहुत डर गया था, जब कि धर्मप्रकाश की वह स्मरणीय चाय मेरे भविष्य के अन्धकार का आभास दे गई थी। व्यर्थ की बातों में दिलचस्पी लेना वस्तुतः मेरा शौक नहीं था, न धन्धा ही। इसलिए जब कमल-कमला-धर्मप्रकाश के तीन बिन्दुओं को मिलाकर एक त्रिभुज बन रहा था तो मैं अनायास ही अनासक्त भाव से अलग हो गया था। धर्मप्रकाश को मुझसे आशंका का कोई कारण न था, इसलिए उन्होंने कोशिश तो की ही मेरे केस के सम्बन्ध में, पर वह बनाने के लिए नहीं, बल्कि बिगाड़ने के लिए। शायद उन्हें दोष न भी दिया जाए तो भी काम बन जाएगा, और वह इसलिए कि १५ अगस्त, १९४७ से हम सभी आज़ाद जो हैं!

उस दिन व्यवस्थापक महोदय ने मुझे अपने कक्ष में बुला भेजा।

व्यवस्थापक महोदय का प्रकोष्ठ मेरा अनजाना नहीं। मेरे ही कार्यकाल में ये तीसरे व्यवस्थापक थे; किन्तु वर्तमान व्यवस्था में मैं इस प्रकोष्ठ में यदा-कदा ही जा पाता हूं। कई दिनों के बाद जाकर आज जो देखा, तो पाया कि यह कमरा तो मेरा अनदेखा ही है। पहले वाला

कमरा तो जैसे पहले वाले मालिक के साथ ही चला गया। साज-सज्जा ही नहीं, खिड़की-दरवाज़े तक बदल गए थे। कमरे की एक विशेषता थी, उसमें एतद्पूर्व सभी व्यवस्थापकों के आ-वक्ष चित्र सजे हुए थे। पूर्व व्यवस्थापक तक तो यह क्रम चलता रहा, किन्तु अब कोई चित्र कक्ष में न था। वर्तमान व्यवस्थापक को कदाचित् यह आभास हो गया था कि विलीनीकरण के पश्चात् जब उनका कोई चित्र वहां पर प्रतिस्थापित न हो सकेगा, तो वर्तमान चित्रों को तो वे सहज ही उत्थापित या विस्थापित कर सकते हैं। स्वतंत्रता के फलस्वरूप शासन बदलते ही बहुतेरी आबादी विस्थापित हुई है, यहां भी यदि शासन के बदलने से कुछ चित्र ही विस्थापित हों, तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं।

और भी कुर्सी-टेबल आदि के अनेक परिवर्तनों के बीच बैठे थे परिवर्तित महा व्यवस्थापक महोदय। उमर पचास के लगभग, आकृति लम्बी, चेहरा भरा हुआ। मूंछ और सिर के बाल भरे हुए किन्तु खिचड़ी। छोटी-सरल-कोमल नाक के ठीक नीचे आयताकार कटी हुई मूंछें, जिनके बाल घने होने पर भी सींक जैसे एक-एक कर गिने जा सकते थे। सिर के बाल ठीक बीच में से विभाजित, घुंघराले किन्तु वैसे ही सींक जैसे, और कपाल पर इस तरह छाए हुए कि उसका कुछ ही हिस्सा आंखों के ऊपर दृश्यमान था। वास्तव में उनका कपाल कुछ संकुचित ही था। आंखों पर मोटी फ्रेम का चश्मा, जिसके भीतर से कोटरों में छिपी आंखें इस तरह देखती थीं मानो आड़ में छिपी कोई बिल्ली अपने शिकार को ताक रही हो। गाल उभरे हुए, जो चश्मे के उभार से दब गए थे। मूंछों के आवरण के नीचे उनका मुख, कोणों से झुका हुआ सदैव ही गम्भीर कुटिलता की प्रतीति देता था। उन निर्मांस सूखे पर्पट अधरों पर मुसकान देखी, कभी याद नहीं पड़ती।

घूर्णमान (रिवोल्विंग) चौड़ी कुर्सी पर एक उच्छलनशील (स्प्रिंग) बैठक पर बैठे हुए व्यवस्थापक महोदय सहज ही आकर्षण का केन्द्र हो उठते थे। सफेद कमीज़ के आवेष्टन में घिरा हुआ मशकाकार

उनका वर्तुल उदर यद्यपि सामने पड़ी हुई टेबल की सतह से छिप जाता था, किन्तु ज़रा पास आने पर यदि आपके सामने कुर्सी पर बैठकर आंखों की सीमा को उसी टेबल की सतह से प्रतिबंधित करने का सौभाग्य प्राप्त न हो, तो अनायास ही आप अपने को उस वर्तुल उदर को देखने से रोक नहीं सकते। और मैं, भला एक कर्मचारी, वहां खड़ा रहने दिया जा सकूं, यही कम सौभाग्य नहीं है।

लेकिन यह तो उनका ऊपरी परिचयमात्र है, जिसे गणित के अंकों या भूमिति के औज़ारों द्वारा अधिक से अधिक स्पष्ट किया जा सकता है। इस परिचय में किसीके व्यक्तित्व की कोई विशेषता परिलक्षित नहीं हो सकती; किसीकी नाक दो इंच हुई तो क्या और ढाई इंच हुई तो क्या! नाक के छोर पर आंखें समकोण बनाती हैं, या न्यून कोण, यह भी चश्मे से छिपाया-सुझाया जा सकता है, इसलिए इनके भीतरी परिचय का आभास भी मैं दे देना चाहता हूं ताकि भविष्य की घटनाओं को इस घटक के चरित्र के तारतम्य से देखा जा सके।

व्यवस्थापक महोदय अपने समुदाय के एक बड़े मौजूं प्रतिनिधि थे। अपने कुटुम्ब के तीन-चार भाइयों में उन्हें सरलता से पृथक् करके देखा जा सकता था; उनकी ऊंचाई के कारण भी, और उनके विशिष्ट रहन-सहन, चाल-ढाल और आचार-व्यवहार के कारण भी। सनक, दम्भ, कंजूसी और अपने अभावों को छिपाने के लिए आयास-कृत श्रेष्ठ भावना का आच्छादन, इन विशेषताओं को वहन करने के लिए उन्हें अपने ही आदमियों से कतराकर चलना पड़ता था, किन्तु अपने विशेष क्षेत्र में, जो इनके घरेलू और व्यक्तिगत सम्बन्धों से अपरिचित था, ये विशेष रूप से खुलकर आत्मीयता लाभ करते थे। अपने मातहतों से बात प्रारम्भ करते थे 'यू सी' (देखो) शब्दों के साथ, बराबरी वालों से 'जस्ट इमैजिन' (ज़रा कल्पना करो) के साथ। यानी न तो इनके मातहत मानो कुछ देख पाते थे, और न बराबरी वाले कुछ कल्पना ही कर पाते थे! देख-कर आश्चर्य होता कि ये इतने बड़े कैसे बन गए। बड़प्पन कभी-कभी

संयोग से और कभी-कभी दुर्घटना से भी प्राप्त हो जाता है, इसका ये अच्छा उदाहरण हैं।

जब भारतीय रेलें कम्पनी के शासनाधिकार में थीं, तब इनकी नियुक्ति एक सहायक इंजिनियर के तौर पर हुई थी, और तब से ये बराबर इस पद के आसपास ही चक्कर काटते रहे। अंग्रेज अधिकारियों के सामने या उनके कारण ये तरक्की न कर सके, किन्तु १९४७ में पासा पलट गया, और अंग्रेजों को भारत छोड़ देना पड़ा। इन महापुरुषों की अंग्रेज-भक्ति की सराहना करनी पड़ेगी। उनकी लात खाकर भी उनके ज़माने में औंधे मुंह पड़े रहने वाले इन अफसरों को अंग्रेजों के सिवा आज भी कोई नहीं दिखाई देता। ये उनकी तारीफों के पुल बांधकर ही शायद इंजिनियर हो गए हों, किन्तु उनके जाते ही इनका सितारा चमका। असिस्टैण्ट से डिप्टी, डिप्टी से डिस्ट्रिक्ट और डिस्ट्रिक्ट से एग्ज़ीक्यूटिव इंजिनियर रातों-रात होने लग गए। परन्तु इधर दूसरी मुसीबत सामने आई। भारतवर्ष में अब केवल तारीफों के पुल की नहीं, बल्कि सच्चे पुलों की जरूरत महसूस हुई। साफ था कि इनकी कलई खुल जाती, और अधिक वेतन का अवसर ताककर ये इस रियासत के रेलवे-विभाग की व्यवस्था के लिए तशरीफ ले आए। पुल यहां भी बनाने थे, किन्तु किसीकी निगाह के नीचे पुल बनाने की अपेक्षा अपनी निगाह के नीचे पुल बनते देखना अधिक सुविधाजनक, सरल और लाभदायक है।—अतः एकाध और इंजिनियरों को अपने मातहत बुला लिया गया। पुल बनाने की चिन्ता इन्हें नहीं थी। वह तो मिस्त्री और ओवरसीयर कर ही सकते हैं। इन्होंने अपने शासन को मज़बूत बनाने और आमदनी के रास्ते को प्रशस्त बनाने में अपने शिल्प का प्रयोग किया। लेकिन यह तो राहे-गुज़र की बात है। सवाल सिर्फ इतना ही था कि इनके बड़प्पन का कारण क्या था।

भले तो थे किन्तु कल्पनाशक्ति से नितान्त कोरे, बिलकुल वस्तुतत्व के जीव जिसे जैसा देखा, वैसा समझा। छोटा आदमी वह जो

उनसे कम वेतन पाता हो, बड़ा वह जो उनसे अधिक । छोटे आदमियों पर शासन करना ही चाहिए । उनका भरोसा भी नहीं किया जा सकता । आज़ादी के बाद से इसी तबके के लोगों का सबसे अधिक पतन समझते थे । क्लर्क लोग पहले जैसा काम नहीं करते । कांग्रेस ने उनको असहयोग तथा हड़ताल के शस्त्र भी तो पकड़ा दिए थे । पर ये अंग्रेजों से शासनविद्या सीख चुके थे । अतः जब एक क्लर्क ने अपने विरुद्ध की हुई अनुचित कार्यवाही के विरोध में, रेलवे के क्षेत्र में ही अनशन प्रारम्भ कर दिया, तो उसे छः रोज़ की फाकाकशी से प्राप्त दुर्बलता, डिसमिसल और अविलम्ब मकान छोड़ देने की आज्ञा का प्रसाद मिला । अपील करने की अवधि में ही पुलिस ने उसकी कमज़ोरी का लाभ उठाकर उसे गर्दनिया देकर निकाल दिया । साथ में एक-दो और क्लर्कों की कुशाओं को उखाड़कर जमीन साफ कर ली गई । हमारे पूर्व परिचित धर्मप्रकाश भी जो तब तक एक बड़े बाबू थे, प्रसाद स्वरूप छोटे अफसर बन गए, सो आप सब जानते ही हैं ।

इंजिनियर हैं, इसलिए साहित्य-संगीत-कला से क्या वास्ता ? लेकिन ज़माना जो बदलता चला जा रहा है ! आज पूछ उसकी होती है, जो नेता हो, और नेता होने के लिए साहित्य-संगीत-कला न सही, उनके तमाशे की ज़रूरत तो है ही । साहित्य यानी छापे के अक्षरों में लिखा हुआ कुछ, संगीत यानी सितार या तानपूरे के साथ आलाप, और कला यानी रेखाओं का आड़ा-तिरछा झुण्ड । एक कल्पना से शून्य व्यक्ति के लिए इससे अधिक इनका अर्थ ही क्या हो सकता है ।

यदि ए॰ दरवाज़ा है तो स्पष्ट रूप में दरवाज़े के सिवा उन्हें वहां कुछ दिखाई नहीं देता । बहुत हुआ, तो दरवाज़े की लकड़ी या चौखट की मज़बूती या कमज़ोरी के बारे में उनसे आप टिप्पणी सुन सकते हैं । किन्तु उस दरवाज़े के आगे कुछ देखने योग्य अदृष्ट भी हो सकता है, इसकी वे कल्पना नहीं कर सकते । एक क्लर्क को यदि उसका प्राप्य स्थान नहीं मिला, तो क्या हुआ ? किसी दूसरे क्लर्क को तो मिला !—इसमें पहले

क्लर्क के नाराज़ होने का प्रश्न ही कहां है ? शतरंज पर एक प्यादे को न बढ़ाकर यदि दूसरे प्यादे को आगे बढ़ा दिया, तो यह तो खिलाड़ी के देखने की बात है। यदि प्यादा इसके लिए उज्र करने लग जाए, तो हो चुका खेल !—हुकूमत का खेल शतरंज की चाल के सिवा और भी कुछ है, और वे प्यादे लकड़ी के मुहरे न होकर हाड़-मांस—चैतन्यमय प्राणी हैं इसकी उन्हें विशेष खबर न थी।

सो मैं पहुंचा उनके सामने—सलाम की—अनल्प अनुग्रह के साथ उन्होंने सामने की कुर्सी का इशारा किया। धन्यवाद कहकर मैं सामने बैठ गया।

अधिक भूमिका की आवश्यकता न थी। सीधे उन्होंने कहना शुरू किया :

'यू सी, तुम्हें इसलिए बुलाया है कि मैं तुम्हें एक खास काम सौंपना चाहता हूं।'

'फरमाइए।'

'सोचता हूं कि वह तुम्हारे लिए तरक्की का कारण भी होगा। मुझे कोई दूसरा आदमी भी इस समय ऐसा दिखाई नहीं देता, जिसपर भरोसा कर सकूं।'

'आपकी कृपा है, जो आप मुझे इस योग्य समझते हैं।'

'यू सी, स्टोर्स विभाग में मुझे एक अच्छे व्यक्ति की आवश्यकता है....'

'शायद उसके लिए तो चुनाव हो गया है।'

'हां, चुनाव तो हो गया किन्तु यू सी, उससे मुझे संतोष नहीं है।'

'तो क्या दूसरा चुनाव होगा ?'

'नहीं; मैं उसकी ज़रूरत नहीं समझता। मैंने सोचा है कि मैं तुम्हें उस स्थान पर बदल दूं !'

'मैं ? किन्तु....'

'मैं जानता हूं कि तुम उस लाइन के आदमी नहीं हो, किन्तु यू सी, तुम्हारे लिए—सच तो तुम जैसे शिक्षित व्यक्ति के लिए कोई भी काम

कठिन नहीं होगा। तुम्हें हिम्मत नहीं खोना चाहिए।'

'जी नहीं, हिम्मत तो मैं नहीं खोता, न ही मैं आत्मविश्वास ही खो रहा हूं, किन्तु....'

'किन्तु क्या ?'

'यही कि इस पोस्ट का वेतन-स्तर तो मेरे वर्तमान वेतन-स्तर के अनुकूल नहीं।'

'उसकी तुम्हें चिन्ता नहीं करनी होगी। तुम्हारे वेतन में कोई अन्तर नहीं होगा....'

'किन्तु—आप जानते ही हैं मेरे ही विभाग में एक स्थान निर्माण हुआ है, वह मेरी वेतन-शृंखला से ऊपर है, और उसपर मेरा दावा भी है !'

दावे की बात सुनकर महा व्यवस्थापक महोदय एक क्षणभर के लिए मानो चौंके। बट यू सी, उस पोस्ट के लिए तो तुम ट्रेण्ड (प्रशिक्षित) नहीं हो।'

अब मेरे चौंकने की बारी थी। प्रशिक्षण का प्रश्न कभी उठ सकता है, यह तो मैंने सोचा ही न था। तब भी मैंने कहा, 'किन्तु और तो कोई प्रशिक्षित है नहीं।'

'है क्यों नहीं ?—तीन आदमियों का जो बैच (समूह) अभी ट्रेनिंग से लौटा है ?'

'किन्तु वे तो सभी असिस्टैण्ट (सहायक) का प्रशिक्षण लेकर आए हैं। उनका वेतन-स्तर तो मेरे वेतन-स्तर से भी नीचे है।'

'किन्तु वे तुमसे तो अधिक अच्छे हैं। यू सी, सम ट्रेनिंग इज़ बेटर दैन नथिंग !'

'उनके लिए तो ट्रेनिंग की ज़रूरत थी, क्योंकि वे एकदम दूसरे विभाग से लिए गए हैं। मेरे लिए तो इस ट्रेनिंग की आवश्यकता ही न थी। आप जानते ही हैं, इस विभाग को विकसित करने का सारा श्रेय मुझे ही है। मैं बराबर मनोयोगपूर्वक इसका विकास करता रहता हूं।

शायद मेरे निकट के अफसर भी इस बात को स्वीकार करते हैं। इसके अलावा प्रायोगिक प्रशिक्षण प्राप्त न करके भी मुझे इस विभाग की पूरी जानकारी और अनुभव है। आप मेरी चाहे जिस तरह परीक्षा ले सकते हैं। यही क्यों, अभी भी मैं इन तीनों प्रशिक्षित व्यक्तियों का बराबर मार्ग-दर्शन करता रहा हूं, इनको आधे से अधिक प्रशिक्षण मैंने दिया है।'

'यू सी आ' एम सॉरी, आइ केनॉट डू एनीथिंग इन दिस मैटर !—चूंकि यह ऊपर का स्थान भरा जा रहा है, इसलिए तुम्हारा स्थान अनावश्यक हो गया है। तुम्हारे ही हित के लिए मैंने तुम्हें स्टोर्स का विकल्प दिया था, सो अब तुम्हारे चुनने का सवाल है।'

'चुनने का सवाल ही कहां है ?'

'एक तरह से नहीं ही है !'

'क्या मैं पूछ सकता हूं कि इन तीनों में से इस ऊंची जगह के लिए आप किसे चुन रहे हैं ?'

'यू सी, मैं यह पोस्ट मोहनलाल को देना चाहता हूं।'

'मोहनलाल ?—किन्तु वे ही तो स्टोर्स के चुनाव में लिए जाने वाले थे ?'

'थे; किन्तु उसे इस लाइन का कोई अनुभव नहीं है।'

'सो तो मुझे भी नहीं है।'

'तुम काम कर सकोगे।'

मोहनलाल का नाम सुनकर मुझे कुछ क्रोध हो आया। क्रोध हो आना स्वाभाविक था। मोहनलाल एक बार पहले रिश्वत के अपराध में बरतरफ कर दिया गया था। पहले के महा व्यवस्थापक ने लड़का समझकर बिना चार्ज लगाए ही अलग कर दिया था। शासन बदलते ही उसने अपील की। वर्तमान महा व्यवस्थापक से कुछ दूर-पास का रिश्ता भी था। फिर कर्मचारियों के संघ का सचिव भी था। सरलता से पुनः बहाल हो गया, और अब तिकड़म लगाकर काफी अच्छी पोस्ट पाने का हकदार भी हो गया।

मैंने कहा, 'जी, मुझे माफ किया जाए, मैं स्टोर्स विभाग में नहीं जाना चाहता।'

'क्यों ?'

'इसलिए कि उस शाखा में मुझे दिलचस्पी नहीं, दूसरे मैं अपनी उन्नति का कोई अवसर वहां नहीं देखता।'

'भूलते हो तुम। उन्नति के अवसर तो वहां बहुत हैं। उस डिपार्टमेंट में पढ़े-लिखे लोग तो बहुत हैं नहीं। जाते ही तुम चमक जाओगे।'

'जाहिलों में मैं नहीं चमकना चाहता।'

'मगर उस हालत में तुम्हें सरप्लस (अनावश्यक) स्टाफ घोषित करने के सिवा मैं कुछ नहीं कर सकूंगा।'

मैं उठ खड़ा हुआ, बोला, 'वही कर दीजिए।' और मैं बाहर निकलने के लिए उद्यत हो गया।

उन्होंने कहा, 'बचपना मत करो ओझा ! देखो, यह मेरे पास एक और प्रधान कार्यालय से पत्र आया है। जूनियर आफिसर्स की जगह के लिए अपने स्टाफ में से कुछ व्यक्तियों के नाम मांगे हैं। मैं चाहता था, कि तुम्हारा नाम भी भेज दूं।'

'कृपा के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद ! किन्तु मुझे मेरा प्राप्य तो दिलवा दीजिए।'

'बैठो, बैठो। ज़रा ठण्डे दिमाग से बात सोचो। तुम एक समझदार व्यक्ति हो। शासन ने सदैव ही तुम जैसे जहीन पढ़े-लिखे लोगों से काफी उम्मीद रखी है। मैंने सुना है कि मेरे भूतपूर्व व्यवस्थापक तुम्हें बहुत अधिक मानते थे।'

'मानने को तो मैं नहीं कह सकता; किन्तु मेरी राय की वे बड़ी कद्र करते थे। जिस विभाग में मैं काम करता हूं उसका विकास मेरी सलाह के अनुसार ही हुआ है।'

'यह मैं जानता हूं। मैं भी चाहता हूं कि तुम्हारे ऊपर मैं अपना विश्वास स्थापित कर सकूं।'

'क्या मैंने कोई ऐसा अवसर आपको दिया कि आप मुझसे इस बारे में शिकायत कर सकें ?'

'नहीं। किन्तु, इसी नाते क्या मैं तुमसे कोई आशा नहीं कर सकता ?' मैंने उत्तर में उनकी आंखों में अपनी आंखें डाल दीं।

उन्होंने कहा, 'तुम जानते ही हो, यह कर्मचारी संघ मुझे किस तरह परेशान कर रहा है।'

'जी हां, किन्तु मैं तो उसका सदस्य भी नहीं हूं।'

'नहीं हो ? ठीक ही है। अपने उच्च कर्मचारियों से मुझे यही उम्मीद है, ऐसे संघों का उद्देश्य होता ही प्रशासन को परेशान करने का है। क्यों ठीक कहता हूं न ?'

मैंने एक क्षण के लिए सोचकर कहा, 'जी, मुझे इनका कोई खास अनुभव तो नहीं; किन्तु मैं समझता हूं कि दोनों के उद्देश्यों में तो आखिर अन्तर नहीं; और कोई कारण नहीं कि दोनों ही मिल-जुलकर काम न करें।'

'यानी ?'

'साफ कहने के लिए आज्ञा दें, तो कहना चाहूंगा कि जिस काण्ड को लेकर दोनों दलों में कटुता बढ़ी है, उसको आगे न बढ़ने दिया जा सकता था।'

'आगे किसने बढ़ने दिया ?'

'उस कर्मचारी का इतना बड़ा अपराध तो नहीं था कि उसे एकदम बरखास्त कर दिया जाता।'

'यू सी, वह कम्युनिस्ट है।'

'आपकी बात सच भी हो, तो भी जो दण्ड उसे दिया गया है, वह तो उसके अपराध की तुलना में बहुत भारी है।'

'वेल, वी मे डिफर टु एग्री।—जो भी हो चुका है, उसे वापिस नहीं किया जा सकता।'

'मेरा ख्याल है कि यदि हम अपनी गलती को समझ जाएं, तो उसे

खदेव ही ठीक किया जा सकता है।'

'नहीं ओझा, यू डोण्ट सी, एडमिनिस्ट्रेशन इज ए व्हैरी डेलीकेट बिजनेस ! मैं डिसिप्लीन को बनाए रखना चाहता हूं। उस क्लर्क को पुनः बहाल करने से मेरा डिसिप्लीन खराब हो जाएगा।'

'एडमिनिस्ट्रेशन ने ऐसा पहले भी किया है, और समझता हूं डिसिप्लीन में भी ऐसी कोई खराबी उससे पैदा नहीं हुई है ! आप जानते ही हैं, यही श्री मोहनलाल पहले भी डिस्चार्ज्ड हैण्ड है।'

आघात सीधा बैठा। किन्तु व्यवस्थापक महोदय ने स्वीकार किया, 'यह अन्याय मेरे प्रेडीसेसर (भूतपूर्व अधिकारी) से हुआ था। मैंन तो उसका परिष्कार ही किया है।'

'दूसरों की गलती का परिष्कार करने की अपेक्षा अपनी ही गलती का परिष्कार कर सकना और भी अधिक ऊंचे दर्जे की बात है....' उसी समय किसी कार्य से श्री धर्मप्रकाश भी भीतर आए।

मैं शायद उपदेश देने की सीमा को बढ़ाता ही जा रहा था। मैं भला एक मातहत आदमी ! एकाएक ही व्यवस्थापक महोदय गरज उठे—शायद दूसरे व्यक्ति के सामने वे मुझे महत्व नहीं देना चाहते थे।

'मैंने तुम्हें उपदेश देने के लिए नहीं बुलाया है। मैंने फैसला कर लिया है। तुम्हें स्टोर्स में जाना पड़ेगा। मि० धर्मप्रकाश, यू इशू द ऑर्डर्स एज़ डिस्कस्ड लास्ट इवनिंग ! (जैसा कि कल शाम को निश्चय किया है वैसी आज्ञा प्रचारित कर दो।)

धर्मप्रकाश ने कहा, 'व्हेरी वेल सर !'

उठकर मैंने कहा, 'तो मुझे जाने की इजाजत है ?'

'यस, यू कैन गो।'

मैं बाहर चला आया। चाहता था कि अपने निकटस्थ अधिकारी के पास जाकर सारी रिपोर्ट बयान कर दूं; किन्तु तभी उन्हें भी व्यवस्थापक महोदय ने बुला भेजा।

सीनियर जोशी अपनी कुर्सी पर शांत नहीं बैठ सकता था। यदि

कागज़ पर उसकी दृष्टि पांच मिनट रहती थी, तो पचीस मिनट उसे अपने आसपास देखना पड़ता था। किसी साथी को कोई अफसर कब बुलाता है, कब वह लौटता है, उसे क्या कहा गया है, आदि सब बातें जब तक वह जान न ले, तब तक उसे रोटी नहीं पचती। उसके पैरों में ही स्प्रिंग नहीं, बल्कि उसके मन में भी वैसी ही स्प्रिंग लगी हुई है। फिर शायद मेरे चेहरे पर भी कुछ लिखा हुआ हो। वह अपनी कुर्सी पर से उठा, और मेरी टेबल पर कुहनियां टेककर झुक गया, और बोला, 'कहां, रेगिस्तान की हवा खाने गए थे क्या ?'

प्रत्येक दफ्तर में देश-काल-पात्र के अनुसार एक अप्रस्तुत रूपक चल पड़ता है। महा व्यवस्थापक महोदय लम्बाई में औसत से अधिक थे; उनकी अकल की जैसी कुछ धारणा लेखक-समुदाय में फैल गई थी, उससे उनके लिए एक रूपक तलाश करने में कोई कठिनाई नहीं हुई। अतः जहां वे मालिक होकर तशरीफ रखते हैं, उस दफ्तर को रेगिस्तान से बढ़कर और कहां का उपमान स्थिर किया जाता ?

मैंने कहा, 'रेगिस्तान में हवा के साथ रेत भी तो खानी पड़ती है।'

'सो तो तुम्हारा चेहरा ही कह रहा है।'

'चेहरा ?' मैंने हंसते हुए कहा।

'बनो मत मिस्टर !—दाल में काला ज़रूर है ! यह कमल है न। यह भी आज तुम्हारे बारे में सवेरे से कुछ फुसफुसाहट कर रहा था।'

'सो करने दो जोशी !—आखिर जो काबिल हैं, उन्हींके बारे में तो चर्चा होती है।'

'कहता था कि तुम्हारी जगह पर कोई दूसरा ही आ रहा है।'

'अपनी जगह ही कौन-सी है भाई ?—अपने को मतलब है पैसे से, सो पहली तारीख को कहीं पर भी मिल जाएं। फिर क्या जगह, और क्या पोस्ट ?—अच्छा यह बताओ, तुम्हारे लड़के का एडमिशन हुआ या नहीं ?'

'थैंक्यू ओझा, व्हेरी मच फॉर योर लेटर !—हेडमास्टर ने एक भी

सवाल नहीं किया और झट से एडमिशन दे दिया। और लड़कों की इतनी भीड़, इट वाज शीयर लक ऐण्ड योर लेटर ! पर दोस्त....'वह टेबल पर और अधिक झुक गया।

क्या ?'

'एक मदद करनी पड़ेगी।'

'बताओ भी तो ?'

'इन चोरों ने मेरे साथ चाल खेली है।'

'किन चोरों ने ?'

'यही कमल-एन्-क्यूब ऐण्ड डी० पी० कंपनी ने !'

डी० पी० का मतलब धर्मप्रकाश से था।

'चाल क्या है ?'

'इन्होंने जो लिस्ट भेजी है, उसमें हमारे नामों के प्रथमाक्षरों की आड़ लेकर मुझे कमल से जूनियर बना दिया है।'

'तुम्हें निश्चय रूप से विदित हुआ है ?'

'निश्चित तो मैं नहीं कह सकता, किन्तु मुझे इसका आभास हुआ है। मेरे असिस्टैण्ट ने एक झलक वह लिस्ट देखी थी।'

'निश्चित ऐसा हो, तब तो तुम आगे बढ़कर रिपोर्ट कर दो। पर यदि केवल अनुमान मात्र निकला, तो मुफ्त में दुश्मनी गले पड़ जाएगी।'

'यही तो मैं डरता हूं। समझ नहीं पड़ता कि क्या करूं।'

'फिर प्रतीक्षा करो, जब आउट हो जाए तो अपील कर सकते हो।'

'तुम्हारे बारे में भी वही कह रहा था कि ट्राफिक की लिस्ट में तुम्हारा नाम नहीं है।'

मैंने जैसे कुछ न हुआ हो, इस भाव से कहा, 'मैं स्टोर्स विभाग में जा रहा हूं।'

'स्टोर्स विभाग में ! —क्यों ?'

'नौकरी जो ठहरी ! इसमें 'क्यों और क्या' की कोई गुंजाइश है ?'

'किन्तु—वहां उस कमरे में।'

'नौकरी तो कचरा ही है भाई, साहिबी नहीं। अफसोस केवल इतना है कि नौकर होते हुए भी एक क्यों अपने को दूसरे का मालिक समझने लगता है।'

'तुम्हारी जगह पर कौन आएगा ?'

'मेरी जगह अतिरिक्त घोषित कर दी जाएगी।'

'और उस नियंत्रक की जगह पर जो तुम जाने वाले थे ?'

'वहां का टिकट मिल गया मोहनलाल बाबू को।'

'मोहनलाल बाबू को ? —ऊंट-ऊंट मौसेरे भाई। उसका जमाई भी तो होता है वह !'

'अच्छा, जमाई है ? तुम्हें कैसे मालूम ?'

'अरे मियां —सात परदों के भीतर की खबर रखते हैं। तुम्हारे जैसे बुद्धू नहीं, जो सभी को दूध का धोया समझते हों। —पर यार, तुम अगर स्टोर्स में चले जाओगे, तो हमारी तो लुटिया ही डूब गई समझो। सब इन चोरों का राज्य हो जाएगा।'

'नहीं, नहीं; घबराने की क्या बात है। —यह अवस्था तो थोड़े ही दिन चलेगी। फिर तो बड़ी रेलवे, बड़ा कारोबार, बड़ी जिम्मेदारी, बड़ी तनख्वाह, बड़ा सम्मान—स्वतन्त्र भारत के स्वतन्त्र नागरिक की हैसियत होगी हमारी ! हमारी सरकार, हमारा देश···'

'बड़ी बातें रहने दे भाई। बड़ी बातों से बड़ों ही का लाभ होता है। छोटों के ऊपर तो हमेशा ही जीन कसी जाती है।'

इतने में चपरासी ने आकर कहा कि मुझे धर्मप्रकाश बाबू सलाम दे रहे हैं।

मैंने जोशी से कहा,'लो,बड़े आदमियों की सलाम भी दुखदाई होती है। चला मैं, लौटकर बात करेंगे। तेरे दोस्त और दोस्ती का क्या हाल हैं ?'

बनकर जोशी ने कहा, 'मेरा दोस्त ? मेरे दोस्त तो तुम्हीं हो।'

'मैं ? —बनता है—' मैंने खड़े होकर कहा।

सारे खोपड़े को गोलचक्कर देकर खिलखिलाते हुए मस्ती के साथ

जोशी बोला, 'सिन्धी माल के बारे में ?'

'हां, हां, वही तो।'

'यार, उसके बारे में तो तुमसे बात करना ही है। एक बड़ी मुसीबत गले पड़ गई है।'

'अच्छा, अभी तो सलाम का जवाब दे आऊं ! फिर बात करेंगे। पर यह मेरे स्टोर्स जाने की बात किसीको बताने की ज़रूरत नहीं है।' —मैं जानता हूं, ऐसा कहने का अर्थ और फल क्या होता है।

धर्मप्रकाश जी के उसी कमरे में चिक उठाकर प्रविष्ट हुआ। अकेले ही थे। मुस्कराकर स्वागत किया। सामने बैठने का इशारा किया। धन्यवाद कहकर मैं बैठ गया।

कागजों को इधर-उधर सम्हालकर रखने में मानो उन्होंने भूमिका के लिए अपने आपको तैयार किया। बोले—'मैं कहता था न ? याद है आपको ?'

'जी हां ? —मुझे सब बातें याद हैं। किन्तु, शायद आप स्वीकार करेंगे, मैंने तो अपनी बात रखने में कुछ नहीं उठा रखा !'

'हां, आपने अपनी बात रखी है।'

'फिर मेरे इस दुर्दैव का कारण ?'

उन्होंने थोड़ा मुस्कराकर कहा, 'दुर्दैव ! दुर्दैव क्यों कहते हैं ?'

'मेरी पोस्ट को सरप्लस जो बनाया जा रहा है।'

'किन्तु आपको तो सरप्लस नहीं बनाया जा रहा है। आप स्टोर्स डिपार्टमेंट में जो जा रहे हैं।'

'लेकिन जिस पोस्ट के लिए मैं कमर बांधे था, और जिसके लिए आपने आशा दिलाई थी ?'

'वह अवश्य घपले में पड़ गई ! मैंने प्रयत्न तो बहुत किया था, कि आप ही को वह जगह मिले, यकीन दिलाता हूं कि मैंने प्रयत्न किया था, चाहे आप इसे मानें या न मानें !'

'मानूंगा क्यों नहीं, जब आप कहते हैं तो।'

'किन्तु एक तो आपके इमीजिएट बॉस (निकटस्थ अधिकारी) में कुछ दम नहीं; दूसरे इन दूसरे अफसरों में आपके प्रति एक बुरी धारणा बनी हुई है। क्यों है, यह तो मैं नहीं कह सकता।'

'अपने इमीजिएट बॉस के बारे में तो मैं जानता हूं, वे स्वयं बड़े परेशान हैं। और दूसरे, अफसरों के कहना चाहिए आंखें तो होती नहीं, होते हैं केवल कान। इसीके बल पर बना लेते हैं अपनी धारणाएं वे !'

'कौन है ऐसा दुश्मन आपका जो व्यवस्थापक के कान आपके विरुद्ध भरे ?'

'मैं व्यर्थ किसीको दोष नहीं देना चाहता। किन्तु एक बात समझ में नहीं आती।'

'क्या ?

'व्यवस्थापक महोदय का स्टाफ के साथ सम्बन्ध तो सब आपके ही द्वारा है।'

'क्या आपका ख्याल है कि मैंने उनके कान भरे हैं ?'

'उनके कानों में सही बात तो आप भर ही सकते थे।'

हंसकर उन्होंने कहा, 'आप उन्हें पूरी तरह नहीं जानते। उनके हथकण्डे भी शायद आपको मालूम नहीं।'

'मैं अपने काम से सरोकार रखता हूं।'

'जमाना तो चाहता है कि आदमी काफी चौकन्ना रहे। —मैं स्वयं चाहता हूं कि सब काम नियमानुसार हो, और सबके साथ न्याय हो। किन्तु आजकल तो मोहनलाल ही प्रशासन की आंख-कान और मस्तिष्क तक बना हुआ है। मैं भी उनके हाथ का खिलौना बनने पर विवश हुआ हूं।'

'आपकी आत्मा गवाही दे देती है ?'

'क्या करूं ? —मेरा कोई साथी भी तो नहीं। मुझे अपनी स्थिति की भी तो चिन्ता रखनी पड़ती है। आप ही मुझे सहायता दें···'

'आपका कोई साथी नहीं ?—यह तो आप ताज्जुब की बात कह

रहे हैं। सुना तो यह जाता है कि आपका एक बड़ा भारी मजबूत गढ़ है। निर्माण-विभाग, नियुक्ति-विभाग, लेखा-विभाग, पड़ताल-विभाग···'

'क्या कर्मचारी ऐसा कहते हैं ?—कौन कहता है ऐसा ?'

'जी, नाम तो मैं बतलाना नहीं चाहता !—यों सभी जो बात जानते हैं, उसे कहने वाले एकाध व्यक्ति का नाम बताने से क्या होता है ?'

'अच्छा; मेरे गुट में किन-किन व्यक्तियों को गिना जाता है ?'

'इन विभागों के सभी कर्मचारी ! यों अटनागर, जूनियर जोशी,—और यह मोहनलाल भी आप ही के दल का गिना जाता है।'

'अच्छा ! —खैर, मैं यह तो नहीं जानता कि कौन मेरे साथ है, किन्तु यह ज़रूर जानता हूं कि कौन-कौन मेरे साथ नहीं हैं।'

'उन्हें अगर आप छोड़ दें तो शेष सभी आपके हाथ हैं।'

'आप तो मेरे साथ नहीं हैं।' —आखिर धर्मप्रकाश को स्पष्ट रूप से कहना ही पड़ा।

'मैं एक क्षुद्र व्यक्ति हूं। मेरे होने न होने का कोई महत्व ही नहीं है। आप तो जानते ही हैं मैं सभी दलों से अलग हूं।'

'आप जिस दल में भी होंगे, वह शक्तिशाली होगा ! —यदि आप मुझे सहायता दें, तो मैं आप ही का केस लेकर एडमिनिस्ट्रेशन से लड़ सकता हूं।'

'किन्तु एडमिनिस्ट्रेशन का एक खासा अंग आप भी तो हैं।'

'हूं; किन्तु सैद्धान्तिक दृष्टि से मैं इनके साथ नहीं हूं। मैं इन लोगों को नीचा दिखाना चाहता हूं, परन्तु आपके विभाग में मेरा प्रवेश नहीं है। नीचा मैं इन्हें आपके विभाग के द्वारा ही दिखा सकता हूं। आप यदि सहायता दें तो आपके केस में काफी दम है। मैं प्रॉमिस करता हूं···'

'धन्यवाद; मैं दुहरी चाल चलने का अभ्यस्त नहीं, न ही इसमें मेरी इच्छा होती है।'

'फिर क्या करेंगे आप ?'

'करूंगा क्या ?—स्टोर्स विभाग में ही जाना पड़ा तो जाऊंगा। नौकरी में इच्छा का सवाल ही क्या है बेगर्स आर नॉट चूजर्स।'

'और अपना अधिकार छोड़ देंगे ?'

'नौकरी—गुलामी का अधिकार ?—अगर अधिकार कहते हैं इसे, तो वहीं से दावा करूंगा—और यदि न हो पाया कुछ—तो त्यागपत्र दे दूंगा।'

'वैसे ही ?—यदि त्यागपत्र ही देना हो, तो इन लोगों को एक बार तो मज़ा चखा दीजिए। आपके साथ जो-जो ज़्यादतियां हुई हैं, किसी दूसरे के साथ होतीं···'

'आपकी सहानुभूति के लिए कृतज्ञ हूं, किन्तु किसीको मज़ा चखाने जितनी भी मुझे फुर्सत नहीं है। दूसरे यदि एक आदमी नीचता पर तुल जाए तो मैं भी उससे नीचे उतरने की चेष्टा करूं यह मैं नहीं चाहता। एक दिन उन्हें जब अपनी भूल मालूम होगी, तो आप ही उन्हें अपने किए पर ग्लानि होगी।'

'पर तब तो आपका कुछ बन नहीं सकेगा ?'

'जब वे देखेंगे कि उस भूल का प्रतिविधान नहीं हो सकता तो उनकी ग्लानि की मात्रा और भी बढ़ सकती है। रहा सवाल मेरा, सो दूसरे की बला यदि मेरे ही सिर पर गिरे तो गिर लेगी।'

'देखता हूं मैंने अपने मन की बात आपसे कहकर धोखा ही खाया।'

मैंने उठकर कहा, 'मि० धर्मप्रकाश ! धोखा चाहे आपने खाया हो पर मैंने नहीं दिया ! मैं वैसे भी एक क्षुद्र व्यक्ति हूं। ट्रान्स्फर हो जाने पर आपके मार्ग से एकदम ही चला जाऊंगा। मुझसे डरने की आपको ज़रूरत ही क्या है ? और आज की बात को अवश्य ही आप न भूलेंगे; किन्तु मेरे लिए इसका कोई महत्व नहीं है। मैं इसे याद भी नहीं रखूंगा। धन्यवाद !' और मैं दरवाजे की ओर मुड़ा।

जाते-जाते उन्होंने कहा ही, 'नहीं, मैं आपसे नहीं डरता। आप चाहें

तो व्यवस्थापक महोदय से सारी बातें कह सकते हैं।'

'मैं सच बोलकर भी ये बातें नहीं कह सकता। यह जानता हूं कि आप स्वयं इस योग्य हैं कि नई कहानी गढ़कर मेरे विरुद्ध व्यवस्थापक महोदय को और अधिक भड़का दें। उनके कान कौन हैं और कितने कच्चे हैं; यह तो मैं जानता ही हूं! नमस्कार!'—और मैं अपने कमरे में चला आया।

८

अटनागर से आप मिल चुके हैं। आशा है आप उन्हें भूले नहीं हैं। उनको और भी नज़दीक से पहचानने के लिए उनके व्यक्तित्व के एक और कोने को भी आपको समझना होगा। इस कोने को पहचाने बिना उनके चरित्र की प्रशस्ति को आप नहीं अनुभव कर सकेंगे। चरित्र का यह कोना है उनकी मां!

मां का नाम जो भी हो, उससे आपका-मेरा कोई सरोकार नहीं। 'मां' शब्द ही स्वयं एक संस्था है जिसका अपना निज का व्यक्तित्व है; उसे और व्यक्तिवाचक शब्द की सहायता से अलग-थलग करके देखने की आवश्यकता ही नहीं है। अमुक की मां कह देने भर से मां का सारा ही व्यक्तित्व निखर उठता है, इसलिए यहां पर भी अटनागर की मां कह देने से काम चल जाना चाहिए।

मां नाम के व्यक्ति की ऊमर जानने का भी कोई प्रयोजन नहीं है, यद्यपि नारी के लिए वर्ष-मान द्वारा उसके व्यक्तित्व की नवीनता को परखने का ही पाठक का आग्रह रहता है। मां बन जाना अपने आप में नारी की ऊमर का एक प्रतिमान है, चाहे वर्ष-मान द्वारा वह लड़की ही प्रमाणित हो! जब अटनागर केवल नन्नू ही थे और मां-बाप की गोद से

उतर ही नहीं सकते थे, तब भी जो मां थी, वह आज भी नन्नू के अटनागर साहब हो जाने पर भी मां ही है, यद्यपि तब की २५ वर्ष की ऊमर का आज की साठ वर्ष की उमर से कोई सामंजस्य नहीं है।

फिर भी शरीर को जितना साठ वर्ष चर जाते हैं, उतना तीस वर्ष नहीं। और जब कि पूर्व के तीस वर्ष जीवन को उधार देते ही रहते हैं, उत्तरार्द्ध के तीस वर्षों को ब्याज सहित उस ऋण का परिशोध करना पड़ता है अतः तीस वर्ष पूर्व के रंग, कद, कांति और स्वभाव के बने रहने के बावजूद अटनागर की मां का इन्द्रिय धर्म शिथिल होता जा रहा था। अटनागर साहब निम्न मध्यवर्ग के प्राणी होने के बावजूद उच्च मध्य वर्ग की आदतें ग्रहण करना चाह रहे थे, किन्तु अटनागर की मां की गृहस्थी सामाजिक दृष्टि से निम्न मध्यवर्ग की होने पर भी आर्थिक स्थिति में निम्न वर्ग की ही थी। वह युग ही ऐसा था कि जीवन की आवश्यकताएं तो सुलभ थीं, किन्तु पैसे को परमात्मा समझकर दांत से पकड़े रहना ही पड़ता था। अतः अटनागर की मां ने गृहस्थी के सभी काम अपने हाथों ही किए थे। इसके बाद भरी जवानी में विधवा होकर एक पुत्र का हाथ पकड़े जब वह इस दुखी संसार-सागर के किनारे खड़ी हुई तो स्वभावतः ही लोगों ने कहा कि 'चलो, बेचारी को एक सहारा तो है ! किन्तु पांच-सात वर्ष के बाद ही जब वह 'सहारा' स्कूल जाकर अपने हठ और इच्छाओं को मां पर डालने लगा, तो सभी को लगना स्वाभाविक था कि यह लड़का उस बेचारी के लिए संसार-सागर की नाव तो न हुआ, हां उस निरवलम्ब डूबती दुखिया का बोझ अवश्य बन गया। दुखिया ने इसे क्या समझा, यह कोई भी मां बता सकती है, समझ सकती है। जो हो, अटनागर पढ़-लिखकर बड़ा हुआ, नौकरी की, और विवाह भी किया—इस सबका कर्ता वह स्वयं है, यह आप जानते ही हैं। यदि मां थी, तो वह पर्दे के पीछे ! उसे केवल मां जानती है या बेटा और जो सब कुछ जानता है, वह आपको जनाने के लिए व्यग्र नहीं है।

मां को सुनाई कम पड़ता है; इससे विशेष कुछ असुविधा नहीं है,

यदि कुछ है तो उन लोगों को जो मां को कुछ सुनाना चाहते हैं, उन्हें कुछ बल लगाकर बोलना पड़ता है। मां को जिससे असुविधा है, वह है आंखों की ज्योति की क्षीणता ! इससे भी किसी तरह काम तो चला ही रही थी कि एकाएक अटनागर शरीर से अधिक मन की बीमारी लिए बम्बई होते हुए घर लौटे। अटनागर शारीरिक रूप से कितने दुबले हो गए हैं, मां के लिए आंखों से देखकर विश्वास करने का मूल्य न था, किन्तु अटनागर ने ज़रा बल लगाकर, कानों द्वारा मां को अपनी अस्वस्थता की प्रतीति करा दी। बुढ़िया की नाव किनारे आकर डगमगाने लग गई।

मां ने कहा 'बहू को क्यों नहीं ले आया नन्नू ?'

'मां, उसकी पढ़ाई चल रही है।'

कमला को दोष देने के कोई मानी नहीं है, सास-बहू में न बनना गृहस्थी का सामान्य-सा नियम ही है, कमला अपवाद क्यों बनने लगी ? मां ने भी समझ-बूझकर अपने पैतृक घर में ही रहना मंजूर किया था, चाहे बेमन से ही सही। फिर भी मां-बेटे की पारस्परिक आसक्ति की सीमा न थी। मां की तरफ से हो, उसमें तो कोई आश्चर्य है ही नहीं, किन्तु इस बीसवीं सदी में पुत्र की तरफ से भी वही बात हो, यह ज़रा आश्चर्य की बात हो सकती है, खासकर तब जब कि सास-बहू में इस आसक्ति को लेकर भी (ही !) दुरासक्ति की सीमा नहीं है।

क्षीण आंखों से दृश्य को स्पष्ट करने के लिए मां ने पुत्र के मुंह को बिलकुल आंखों के सामने कर लिया। आंखों से तब भी कुछ साफ नहीं दिखाई दिया तो मां ने आंखें बन्द कर लीं और बेटे के गालों पर अपने अधर रख दिए। बन्द आंखों से ही उसे सब कुछ दिखाई दे गया। उसने उसके सिर को अपनी धड़कती हुई छाती में छिपा लिया, आंखों में आंसू भर आए और कांपते अधरों से वह केवल बोल सकी :

'नन्नू, मेरे लाल, कितना दुबला हो गया है !—कैसा सफेद फक चेहरा पड़ गया है मेरे बाच्छा !'

'चिन्ता करने की कोई बात नहीं है मां !—मैं जल्दी ही अच्छा भी हो जाऊंगा।'

यद्यपि बेटे ने ज़रा ऊंची आवाज़ ही में कहा था, फिर भी मां के कानों में शब्द और स्वर कुछ टेढ़े-मेढ़े ढंग से ही प्रवेश पा सके, स्वाभाविक था कि उनका मूल अर्थ भी गड़बड़ा जाए। मां ने समझा 'चिन्ता करने की बात तो है मां, मैं जल्दी अच्छा भी हो पाऊंगा ?'

भरे हुए आंसू झरने की तरह टपकने लगे। चेष्टा करके बोली, 'तो इतने दिन तक मुझे खबर क्यों नहीं दी नन्नू !—बहू की नाक बड़ी है, तो मैं तो मां हूं। अपनी नाक रखने के लिए वह सिन्दूर की परवाह न करे पर अपनी नाक के लिए मैं तो अपना पेट नहीं काट लूंगी !' एक क्षण चुप रहकर बोली, 'खैर, तू चिन्ता मत कर ! मैं जब तक ज़िन्दा हूं, क्या तुझे डर है ? आजकल अर्जुनदास जी वैद तो नज़र नहीं आते, लेकिन उनका लड़का मथुरादास भी कम होशियार नहीं है। और अभी मैं रामद्वारे वाले बाबाजी से कहकर ताबीज बनवा देती हूं। कलियुग है तो क्या हुआ ? मां के रहते बेटे को क्या हो सकता है ?—सारा मुंह सूख गया है, कुछ नाश्ता कर ले तो रास्ते की थकावट मिट जाएगी।'

बेटे को कुछ भी बोलने का अवसर न देकर मां लौटी, पास ही दरबाज़े की ओर नन्नू का भारी सूटकेस रखा हुआ था। भावाविष्ट नन्नू बाबू ने देखा कि मां उसी ओर बढ़ रही हैं, शायद उसे उठाकर एक ओर रखना चाहती हैं, किन्तु तभी मां उससे टकराकर, नन्नू बाबू आगे बढ़े-बढ़े, तब तक सूटकेस पर उलटकर फर्श पर गिर पड़ी; मुंह से निकला—'हाय राम, दीखा ही नहीं कि क्या पड़ा है !'

लपककर नन्नू ने मां को उठाया, चोट विशेष नहीं लगी थी। संभलकर मां ने हाथों से नन्नू के चेहरे को टटोलकर कहा—'घबरा मत बेटा, कोई ज्यादा लगी नहीं। दिखाई ज़रा कम देता है न ! और इधर अंधेरा भी तो है न।'

नन्नू बाबू को खयाल तो था कि मां को कुछ कम दिखाई देता है

किन्तु इतना कम, इसकी उन्हें कल्पना नहीं थी। मां को देखे ही दो साल हो गए थे। मां की यह हालत हो गई थी और उन्होंने उसकी सुधि ही न ली ?—आंखों में उनकी भी आंसू तैरने लगे पर वह जान गए थे, मां उन्हें नहीं देख सकती थी। बोले, 'मां, तुमने तो कभी अपनी आंखों के बारे में लिखा नहीं। तुम्हारा पहले वाला चश्मा क्या हुआ ?'

हंसकर मां ने कहा 'चश्मे को ढूंढने के लिए भी तो आंखें चाहिएं न !—और ढूंढकर भी क्या करती, जब कि दिखाई देना उससे भी बन्द हो गया ! तू फिकर न कर, सब ठीक हो जाएगा बेटा।'

यदि मां ने लिखा होता, तो आगे के नम्बर का चश्मा अटनागर ज़रूर भिजवा देते। खैर, अब भी बम्बई वे एक्स्प्रेस लेटर लिखकर चश्मा तो मंगवा लेंगे, पर मां ने उन्हें लिखा क्यों नहीं ?

उठने का उपक्रम करती हुई मां ने कहा, और कहते-कहते ही फिर उनकी आंखें भर आईं, यद्यपि अधरों पर उनके मुस्कान थी, 'आज तो यह गिरना भी बड़ा सुख का कारण हुआ है बेटा !'—और मन में कहा, 'आंखों के अभाव में कितनी बार इस मकान में गिरकर मैंने सिर फोड़ा है, यह अब तक किसीने देखा है ? यदि इस तरह गोद में उठाने वाला कोई हो और खासकर पेट का बेटा ही हो, तो कितनी बार मैं गिरना नहीं चाहूंगी ?'

बम्बई के डाक्टरों का उपचार तो चलता रहा और यद्यपि गण्डे, ताबीज तथा वैद्य-हकीमों की दवाओं पर विश्वास करना अटनागर साहब बिलकुल मूर्खता और फूहड़पन समझते थे, किन्तु अब उनके गले और बांह में कितने धागे उलझकर एकाकार हो गए थे, इसकी गणना खुद वे नहीं कर सकते थे, और कितनी तरह के पाक-भस्म, याकुति आदि खा चुके थे, इसका कोई लेखा न था। मां के प्रति अदम्य भक्ति, या बीमारी के कारण उत्पन्न आत्मविश्वास का अभाव, इन दोनों में कौन उनके इस परिवर्तन का कारण है, यह अटनागर तो बड़ी सरलता से

बता देते थे, किन्तु उसपर विश्वास करना शायद औरों के लिए सम्भव न हो।

जो हो, गाड़ी इसी तरह चलती रही। मां को ऊंचे नम्बर के चश्मे से भी विशेष लाभ नहीं दिखाई दिया, यद्यपि मां कहती रही कि चश्मा उनको ठीक लग गया है। और यद्यपि चक्षु-कर्णहीन मां की दृष्टि और श्रवण में अटनागर बाबू स्वस्थ होते गए, अपनी और दूसरों की दृष्टि में क्षय की उनकी बीमारी बढ़ती गई, बढ़ती गई और वे अनुदिन क्षय से क्षीण होने लगे।

कमला को वे पत्र बराबर लिखते रहते हैं। कमला का उत्तर भी यदा-कदा आ ही जाता है, पढ़ने में बहुत व्यस्त है वह; फिर भी समय निकालकर कुछ पंक्तियां लिख ही देती है। परीक्षा सिर पर है। लेकिन कुछ दिनों से उसके पत्र की भाषा कुछ अजीब-सी लगती है। जो बात वे पूछते हैं उसका जवाब नहीं। वैसे कमल उसका खयाल रखता ही है, दादू वहां पर है ही, चिन्ता करने की कोई बात नहीं है। फिर भी मानो अटनागर की प्यास कमला के दो-चार पंक्तियों के औपचारिक पत्र से तृप्त होती दिखाई नहीं देती। वह नये युग के रोमान्सवादी युवक हैं, टी०-बी० के पेशेन्ट हैं तो क्या हुआ? दुनियां में हर तीन मिनट में एक आदमी इस रोग से मरता है, तो हर मिनट में एक आदमी बीमार जरूर ही पड़ता होगा—सच तो, यदि नन्नू बाबू जैसा स्वास्थ्य-परीक्षण हो तो कौन माई का लाल इस रोग से मुक्त प्रमाणित होगा! और जब टी०-बी० ही के नहीं, बीवी-रोग के भी वे बरखुरदार वैसे ही रोगी हैं तो कोई कारण नहीं कि कमला उन्हें ऐसा लव लेटर न लिखे कि मित्रों को तो दिखाया जा सके। प्रभाकर की परीक्षा वे दे ही चुके हैं, पास भी हो ही जाएंगे! 'कमलाज़ लव लेटर्स' नाम से एक पुस्तक छपवाई जाए तो कैसा हो?—वह ओझा का बच्चा ही बड़ा साहित्यिक की दुम बन रहा है। यह पुस्तक फिर अंग्रेज़ी में निकले तो मजा आ जाए!

उधर का हाल जो हो, इधर के हालचाल दिन-ब-दिन बदलते जा

रहे हैं। घर में दो नौकरानियां हो गई हैं; एक खाना बनाती है, दूसरी बरतन-चौका। बाज़ार से सौदा-सुलुफ के लिए एक लड़का अलग काम करता है। इनका खर्चा कुछ विशेष नहीं। मंवई-गांव में ऐसे काम करने वाले सरलता से मिल जाते हैं। यद्यपि मां नौकर रखने के पक्ष में बिलकुल न थी, किन्तु नन्नू बाबू को मां की असुविधा की अपेक्षा अपनी प्रतिष्ठा का अधिक ख्याल था, और मां यह सोचकर गद्‌गद् हो गई कि बेटे को मां की सुविधा और सुख का कितना अधिक ख्याल है। बेटा मां की परवाह करता है, इससे बढ़कर सुख मां को किस बात से मिल सकता है।

किन्तु तब भी मां की व्यस्तता की सीमा नहीं है। वे पुराने ज़माने की गृहस्थिन हैं। आंखों से उन्हें चाहे नौकरानी न दिखाई दे, पर उसके निकाले हुए झाड़ू में उन्हें कोने में बचा हुआ कचरा सरलता से दिखाई दे जाता है, बरतनों की चमक के बारे में भी वे शिकायत करने से चूकती नहीं, और तब तक उन्हें संतोष नहीं होता, जब कि वे खुद ही एक बार और अपने ही हाथों वही काम पूरा नहीं कर लेतीं, और महरी के होते हुए भी नन्नू के लिए स्वयं खाना बनाना उनकी जीवन की आकांक्षा का एक भाग ही है।

कहा जा चुका है कि उनके पिता स्वर्गीय नन्दलाल जी भटनागर कस्बे के गिरदावर थे। सरकारी तनख्वाह तो कोई वैसी न थी, किन्तु फिर भी आमदनी का अभाव न था। लगभग डेढ़ दर्जन पटवारी उनके मातहत थे। मालगुजारी की वसूली, पट्टों की अदला-बदली, दखल-बेदखल आदि-आदि कई नुसखे उनके पास थे। इसके अलावा हर मौसम पर मौसमी जिन्सों की आमद से घर के बखार भरे रहते थे। कस्बे के सुनार-लुहार सब घरू नौकर थे, जब जिससे जो चाहा वसूल किया। उन दिनों भी गांवों में इसी तरह श्रमदान, धनदान, भक्तिदान, आदि दानों का रिवाज था, और पटवारी-गिरदावर-अमले भूमिदान करते थे। मतलब यह कि नन्नूबाबू के पैतृक घर में किसी चीज़ की कमी तो थी

ही नहीं, बल्कि बहुतेरी अनावश्यक वस्तुओं का अम्बार भी लगा हुआ था। किसी पेटी में लोहे के कीले-नकूचे, किसी गांठ में पुराने सरकारी कागज़ों का ढेर, किसी पेटी में बरसों से जमा की हुई स्टेशनरी, दवात-कलम, पेंसिल—नन्नू बाबू ने अपने स्कूल के दिनों में स्टेशनरी के नाम एक पैसा भी खर्च नहीं किया था, और अब उन्हें स्वयं भी उससे बढ़िया स्टेशनरी मिल जाती है—कुछ पेटियों में पिता जी के कपड़े, एक पेटी में खेत नापने की जरीब, सर्वे करने के गुनिया, थियोडोलाइट, ग्लास, जाने क्या-क्या औज़ार-अपरेटस पड़े हुए थे। एक दूसरे कमरे में बरतनों के बोरे, पीतल की दो कोठियां, बच्चों के खेलने की गाड़ी, घोड़े आदि खिलौने, और कुछ एक पुराना फर्नीचर जिनमें तीन-चार धूल जमी कुर्सियां, दो-एक टूटी टांग के स्टूल, दो-तीन चीड़ के बक्से, तथा एक भारी गोल टेबल। अपनी सूनी गृहस्थी में मां हमेशा इन्हीं चीज़ों में व्यस्त रहती थीं। वे अंधी होती जा रही थीं, किन्तु उन्हें स्पर्श ही से प्रत्येक वस्तु का बोध हो जाता था, प्रत्येक छोटी से छोटी, अजीब से अजीब वस्तु को वे केवल स्पर्श से पहचानकर उसके रूप-रंग-आकृति सबका ऐसा वर्णन कर सकती थीं कि देखने-सुनने वाले को उनकी चक्षु-हीनता का विश्वास ही नहीं होता था। और वे दिनभर इधर की वस्तुएं उधर, और उधर की इधर रखने ही में दिन, माह, वर्ष बिता रही थीं। उनका यह कार्यक्रम अब भी अव्यवस्थित नहीं हुआ था। यह किए बिना उन्हें चैन नहीं पड़ती थी। मानो इस स्पर्श के प्रभाव से ही वे अपने वर्तमान जीवन की शून्यता को अतीत के वैभव से भरकर मगन थीं। यह उनके जीवन का एक अंग हो गया था।

नन्नू के घर आने पर इस स्पर्श-सुख में एक और वृद्धि हो गई थी। कुछ दिन तो हर वस्तु से नन्नू का परिचय कराने में बिताए। नन्नू को अनुभव हुआ कि मां को प्राचीन वस्तुओं की इस धर-पटक में एक अव्यक्त परितृप्ति अनुभव होती है, तो वे भी मां के इस कार्य में योग देने लग गए। और भूत से उनका सम्बन्ध इतना गाढ़तर होने लगा कि मां

की कल्पना में वे एक छोटे शिशु-सा व्यवहार करने लगे। इसी तरह मगन रहकर मां-बेटे दोनों ही नन्नू के गिरते हुए स्वास्थ्य को ठेंगा बताने में व्यस्त थे, और पल-पल की बूंदों से समय का तालाब भर-भरकर सप्ताह और सप्ताह से महीना बनता जा रहा था।

उस दिन पलंग पर लेटे हुए नन्नू बाबू डाक पढ़ रहे थे। दो पत्र थे, यद्यपि एक ही लिफाफे में थे। एक था मिसेज़ अटनागर का, दूसरा कमलनयन का। इस बार तो मिसेज़ अटनागर का पत्र भी काफी लम्बा था, और कमलनयन का पत्र भी महत्वपूर्ण था। रेलवे के विलीनीकरण से उत्पन्न कर्मचारियों की, विभिन्न वेतन-स्तरों में नई प्रस्थापनाओं (फिक्शेसन) का वर्णन था, काफी महत्वपूर्ण सूचना थी। इसीको पहले पढ़ना चाहिए, जाने कैसी प्रिय-अप्रिय सूचना उनके स्वयं के बारे में हो। कमला का पत्र बाद में पढ़ने से अच्छा रहेगा। यदि कमल का पत्र अच्छी सूचना लिए होगा तो कमला का पत्र उसमें मिठास की वृद्धि करेगा, यदि कमल का पत्र कड़ुवा हुआ, तो कमला के पत्र से वह कड़ुवाहट कम ही होगी।

कमल ने लिखा था कि प्रस्थापनाएं प्रायः उसी रूप में स्वीकृत हो गई हैं, जिस रूप में यहां से उनको प्रस्तावित किया था, कम से कम वर्तमान के प्राप्तव्य वेतन में किसी भांति का तूल-अरज नहीं किया गया था। जिस वेतन-स्तर में किसीको प्रस्थापित किया गया है, यदि उसका प्राप्तव्य वेतन उससे अधिक है, तो अतिरिक्त वेतन को उसके व्यक्तिगत वेतन के रूप में स्वीकार कर लिया गया है। यही नहीं, प्रकारान्तर में दोनों प्रकार के वेतन-स्तरों को स्वीकार करके यह विकल्प स्वीकार कर लिया गया है कि कोई कर्मचारी चाहे तो अपने पुराने वेतन-स्तर को कायम रख सकता है, किन्तु उस अवस्था में नियुक्ति की पुरानी शर्तें ही उसके लिए लागू होंगी। उन्नति के अवसर पर उसे नये वेतन-स्तर को ही स्वीकार करना पड़ेगा। यदि नये वेतन-स्तर को वह स्वीकार न करे, तो उसे तरक्की नहीं मिलेगी, और दो बार इस प्रकार इनकार कर देने पर

भविष्य में उसकी तरक्की के सब अवसर रुद्ध हो जाएंगे।

अटनागर को प्रधान लेखक के वेतन-स्तर में स्वीकार कर लिया गया है। सहज ही वे अपने कई धुरीणों से और प्रतिद्वंद्वियों से धुरीण बन गए हैं। कमलनयन को तृतीय श्रेणी से उबारकर द्वितीय श्रेणी में ला बिठाया गया है, जो मि० अटनागर तथा मि० धर्मप्रकाश की कृपा के कारण ही संभव हुआ है, इसके लिए कमल ने अनेक प्रकार से अपना आभार भी प्रदर्शित किया है। नन्नू के अधरों पर अनजाने ही चाटुकारिता का सहज संतोष व्याप्त हो गया। अकेले थे, फिर भी उनके अधर १८०° के कोण पर फैल ही गए।

अटनागर आगे पढ़ने लगे। समाचार अवश्य ही आनन्द देने वाले थे। राधावल्लभ ५६ वर्ष के हो चुके थे। रियासत की नौकरी में साठ साल तक काम करने का रिवाज था। ५६वां वर्ष पूरे करने को उन्हें सात महीने शेष थे। उन्हें एक वर्ष का विस्तार स्वीकृत किया गया, जिसका तात्पर्य यह है कि सात महीने के बाद वे अवकाशस्थ हो जाएंगे। ऐसे व्यक्ति की प्रस्थापना का कोई महत्व नहीं है।

कृपानारायण जोशी—के० एन० जोशी ने कैलेण्डर का दसवां पत्ता भी तोड़ लिया है। उसकी बीवी पीहर है, डिलीवरी वहीं हुई है, सिन्धी लड़की से उसकी दोस्ती का गुल भी खिलने वाला है। यह परेशानी तो है ही, उधर प्रस्थापना की परेशानी भी उसपर सवार हो गई है, उसे तृतीय श्रेणी के स्तर में प्रस्थापित किया गया है। उसकी शिकायत है कि उसके और मेरे (कमल के) नामों के प्रथमाक्षरों की समता के कारण दोनों में फेर-बदल हो गया है।—पढ़कर नन्नू बाबू को काफी रस प्राप्त हुआ, यही सोचकर तो उन्होंने कमलनयन जोशी के नाम को भी के० एन० जोशी ही लिखा था।

व्यवसाय-विभाग से नानकचन्द को स्टेशन पर माल बाबू की जगह बदल दिया गया है। धर्मप्रकाश बाबू की स्थायी प्रस्थापना तो हुई है कार्यालय-संवीक्षक (आफिस-सुपरिन्टेन्डेन्ट) के पद पर, किन्तु अस्थायी रूप

से उन्हें अधिकारी के पद पर कार्य करने का अधिकार दे दिया गया है।—पढ़कर नन्नू बाबू विचारमग्न हो गए। मिस्टर धर्मप्रकाश को अवश्य अपना केस रिप्रेजेण्ट करना चाहिए। और भी अन्य लेखकों की प्रस्थापनाओं के बारे में पढ़कर नन्नू ने पत्र रख दिया। शायद दूसरे विभागों की प्रस्थापनाएं अलग से आई होंगी। कुछ क्षणों तक सारी परिस्थिति का चित्र कल्पना की आंखों में उतारकर वे फिर मुस्कराए, राधावल्लभ, कृपानारायण आदि की मुखमुद्राओं की कल्पना करके। कंधे उछालता हुआ, कूल्हे मटकाता हुआ वह कृपानारायण, मुंह में तम्बाकू का थूक भरे हुए वह भंगेड़ी, जोरू का गुलाम कहने वाला राधावल्लभ, अच्छा हुआ! नन्नू को इतना शीघ्र उनके किए का फल पाने की आशा नहीं थी।

उसने कमला का पत्र उठाया।

दुपहर हो चुकी थी। चौका-बरतन करने वाली महरी से कुछ झड़प कर लेने के बाद मां एक ट्रंक लिए बैठी थी। धूप निकल जाने से उन्होंने सोचा कि ट्रंक के कपड़ों को यदि धूप दिखा दी जाए तो कैसा हो? नन्नू को आवाज़ दी, 'बेटा?'

नन्नू ने उत्तर दिया, 'क्या है मां?—खाना निबट गया?'

'खाना तो क्या निबटेगा। तूने यह महरी लाकर मेरी तो मुश्किल कर दी। इससे कोई काम भी होता है?—या तो दिनभर बैठे रहना या कोई काम हो तो चींटी की चाल से करना। इस महीने के कितने दिन और बाकी हैं?—अगले महीने से इसे छुट्टी दे दे।'

हंसकर नन्नू बाबू ने कहा, 'ठीक है मां!—पहली तारीख को अब भी २६ दिन हैं। तब तक तो काम चलाओ। न होगा, तब तक दूसरी महरी तलाश कर लूंगा।'

'नहीं, नहीं; महरी की ज़रूरत क्या है? महरी से कोई गृहस्थी का काम चलता है बेटा! क्या कह रहा है तू?—ज़रा धूप निकल गई है। ये कपड़े धूप में फैला दूं, अगर तू ज़रा इधर आ जाए।'

'मां, दो-चार चिट्ठियां देख लूं—और एकाध का जवाब भी देना है।

न हो तो आज रहने दो मां !—कुछ-कुछ बादल भी दिखाई दे रहे हैं, अगर कहीं बरसात हो गई।'

'सुनो इसकी बात !—बरसात हो जाएगी। अरे पगले, बरसात यों ही थोड़े हो जाती है। पर रह तू !—मैं खुद ही कर लूंगी।' और मां ने ट्रंक को खींचना शुरू किया।

नन्नू के हाथ में कमला का पत्र, कानों में ट्रंक के घसीटने की आवाज़, आंखें दरवाज़े की ओर—कमला ने लिखा है, 'माइ डियर लव—' ज़रूर आज वह अच्छे मूड में होगी—किन्तु मां यह क्या कर रही है ? कहीं ठोकर लग गई तो ? कमला के पत्र को हाथ में रखे हुए ही नन्नू अपने आपको रोक न सके, उठ बैठे और चाहा कि मां को मदद करने के लिए जाएं। सामने से घूमर काकी ने प्रवेश कर पूछा, 'जीजी ! जीजी कहां है ?'

नन्नू बाबू पुनः पलंग पर बैठ गए और उन्होंने पीछे चौक की ओर इशारा कर दिया। घूमर काकी चौक में चली गई।

कमला का पत्र यद्यपि बड़े उत्साह के साथ प्रारम्भ हुआ प्रतीत होता था किन्तु बाद में उसमें कोई विशेष बात न आ सकी। यदि इस पत्र को प्रस्तावित 'कमलाज़ लव लेटर्स' में सम्मिलित किया जाए तो अटनागर को काफी परिश्रम करना पड़ेगा। सम्भव है खत का मजमून ही एकदम बदल जाए। कमला मजे में है सो तो ठीक है किन्तु यदि बीमार होती —कम से कम बीमार होने का बहाना तो करना ही चाहिए था—आखिर प्रेम की परीक्षा के लिए और रोमान्स को दोबाला करने के लिए उसे यह तो लिखना ही चाहिए था कि जब से आप गए हैं मेरा मन नहीं लगता, जी बेचैन-सा रहता है, खाना नहीं रुचता, रात को नींद नहीं आती—तो और अधिक ठीक होता !

पगली कहीं की ! धर्मप्रकाश और कमल के बारे में लिखा सो तो खैर माफ किया जा सकता है किन्तु प्रेम-पत्र में दादू के उल्लेख की क्या आवश्यकता है। ठीक है, नौकर है तो काम तो करना ही चाहिए; और

अच्छा काम करता है तो उसमें आश्चर्य क्या है ? हर नौकर को काम तो अच्छा ही करना चाहिए। जो नहीं करता वह नमकहराम है।—कमल के द्वारा उसने धर्मप्रकाश से कहलवाया है कि उसे एक पेशगी तरक्की दी जाए। खूब कमला ! तुम तो सचमुच एक कारबरदार अमला हो गई हो ! सिफारिश करना भी सीख गई। यों मैं खुद भी आकर सिफारिश कर सकता था। और कमल ? उसे द्वितीय श्रेणी में बैठाने का श्रेय किसे है ? यदि वह कमला के सुख का ध्यान न रखेगा तो रखेगा कौन ? इसे कहते हैं एडमिनिस्ट्रेशन—शासन, क्या खाकर कोई जानेगा इन हथकंडों को ? उनकी तो यह पैतृक विशेषता है। कायस्थ, चित्रगुप्त की सन्तान के अतिरिक्त यह श्रेय किसीको कभी मिला है क्या ? धर्मप्रकाश भी मेरी मुट्ठी में आ गया ! जादू वह जो सिर पर चढ़कर बोले।—मिस्टर अटनागर ही नहीं, मिसेज़ अटनागर को भी खुश रखना होगा मिस्टर धर्मप्रकाश, यदि यह चाहो कि तुम्हारे काले कारनामों को समुचित सहारा मिल जाए !—और तुम इसे खूब समझते हो, इसकी मुझे खुशी है। मुझे काम पर आ जाने दो, तुम्हें आफिसर ग्रेड में यदि कन्फर्म न करवा दूं तो मेरा नाम ! ये जो तीन-चार आफिसर हैं, वे तो नये भरती हुए हैं, उन्हें क्या मालूम उनकी सर्विस-फाइलों में क्या लिखा है।

और मैं ?—देखते जाओ। तेल देखो तेल की धार देखो ! कई धुरीण लेखकों को लांघकर जब अनायास ही प्रधान लेखक बन सका हूं, अपने बूते पर—तो भविष्य तो मेरा है ही। कुछ अच्छी बैक ग्राउण्ड नहीं थी वरना इस धर्मप्रकाश ही में क्या योग्यता है ? बी० ए० का सर्टीफिकेट ही तो है। पाकिस्तान से लौटे हुए कई साक्षरों के डिग्री-सर्टिफिकेट पाकिस्तान में ही रह गए। यूनिवर्सिटियों का रेकार्ड नष्ट हो गया। वे क्या करें बेचारे ? तो क्या उनकी डिग्रियों को कोई इनकार करता है ?—और मैं तो पढ़ा-लिखा—चाहे टेस्ट ले लो और अनुभव ? दिन आने दो—देखता हूं—और वह भी देखे कि कितनी जल्दी मैं गजेटेड रैंक में प्रविष्ट करता हूं।

उधर मां घूमर काकी से कह रही थीं, 'क्या बताऊं बहू ! नन्नू के बिना उसके दफ्तर का काम कहां चलता है ?—देखो न, तबियत खराब है, छुट्टी लेकर बैठा है पर रोज सरकारी कागज वहां से डाक से आ जाते है। कहता है, बड़े साहब तब तक कागज पर दस्तखत नहीं करते जब तक नन्नू अपने दस्तखत न कर दे। साहब का ही तो काम करता है।'

'और क्यों जीजी, नन्नू बाबू को तो रेल में बैठने का टिकट नहीं लगता होगा ?'

'उसका क्या, मेरा भी नहीं लगता। और सजन किलास में बैठते हैं हम लोग !'

'सजन किलास क्या और लोगों से जल्दी पहुंचता है जीजी ?'

मालूम पड़ा मां घूमर काकी के अज्ञान पर हंस दी और बोली, 'सजन किलास आगे कैसे जा सकता है, वह तो उसी रेलगाड़ी का ही एक हिस्सा होता है !'

'अच्छा !—तो उसमें क्या बड़ी बात होती है ?'

'उसमें किराया ज्यादा लगता है !···'

'पर तुम्हें तो देना ही नहीं पड़ता न !'

'सो तो इसलिए कि नन्नू रेल में बड़ा बाबू है, साहब है। उसमें बिछौना बिछा रहता है, कांच लगा रहता, पंखे होते हैं। तीसरे दर्जे में यह थोड़े ही होता है !'

'नन्नू बाबू की तब तो बहुत बड़ी नौकरी है जीजी ! तुम तीरथ जात्रा कर आओ न ! तुम्हें तो रेल का किराया कुछ लगेगा नहीं।'

'क्या कहूं बहू ! फुरसत ही नहीं मिलती। मैं चली जाऊं तो बाप-दादों के इस झोंपड़े की देख-रेख कौन करे। चोर-उचक्के कल यह सामान यहां से गायब कर दें। नन्नू को तो इसकी कोई परवा ही नहीं है। उसे तो जानती हो, वहां सरकारी बंगला मिला हुआ है, बंगला। चार-चार कुर्सियां हैं, टेबल हैं, जाजमें हैं, परदे हैं और मकान में बिजली जलती है, बिजली। पास में दो नौकर हैं जो घर का काम करते हैं। राजा है मेरा

बेटा राजा !—अपने हुकम से चलती रेलगाड़ी को रोक सकता है।'

अपनी मां के मुंह से अपनी तारीफ सुनकर नन्नू बाबू पलंग पर लेटे-लेटे ही गद्‌गद हो गए। भूल गया कमला का पत्र, भूल गया दफ्तर का कमरा और उसके कर्मचारी तथा अपने भविष्य का सुनहरा प्रकाश। रह गई केवल मां की ममताभरी वह स्वर्ग-सृष्टि, जिसमें बेटा राजा होकर मानो अनन्त ऐश्वर्य का उपभोग कर रहा है।

नन्नू बाबू मानो तन्द्रा से जागकर इधर-उधर देखने लगे। हाथ में तब भी कमला का पत्र था। शेष में लिखा था कि पांच दिन बाद उसकी परीक्षा प्रारम्भ हो रही है। परीक्षा २१ दिन चलेगी। बीच में अवश्य कई गैप्स हैं, किन्तु वह चाहती है कि मनोयोगपूर्वक अध्ययन करे। इस लिए अब शायद एक माह तक वह पत्र नहीं लिख सकेगी। नन्नू बाबू उसके लिए चिन्ता न करें। कमल है ही, यदि किसी बात की आवश्यकता हुई। घर पर दादू मुस्तैद है। और इतने पर भी कोई बात हुई ही तो वह जरूर नन्नू बाबू को खत लिखेगी।

घूमर काकी को घर लौटना था। राजा जैसे नन्नू का वैभव वह सुन चुकी थी, इस पृष्ठ-भूमि में नन्नू बाबू को एक बार और देख लेना उसके लिए आवश्यक हो गया। लौटने से पहले वह नन्नू के कमरे में आकर बोली, 'नन्नू बाबू, मजे में तो हो ?'

नन्नू बाबू कल्पना की आंखों से कमला की छवि को निरख रहे थे। मैट्रिक का रिजल्ट आउट होने पर उसके चेहरे पर जैसा उल्लास होगा, वह तो ठीक है, पर उनके स्वयं के चेहरे पर कितनी दीप्ति होगी, वह बिना कांच के ही स्पष्ट देख रहे थे।

चौंककर उन्होंने कहा, 'अं ! कौन ? ओ : घूमर काकी ! —मेरा ध्यान कहीं दूसरी तरफ था....'

न देखकर भी सब कुछ देखते हुए पीछे से मां बोली, 'कहा न था मैंने बहू ! —उसे सरकारी काम से फुरसत ही नहीं मिलती। बिल्कुल अपने बाप को गया है। देखती थी न, आधी-आधी रात तक किसान-

पटेलों के साथ कागज काले करते रहते थे। दिन भर खाने को फुरसत नहीं मिलती थी, और न रात को सोने की। —मेहनत ने ही तो उनको इतनी जल्दी आधी उमर में ही भगवान के घर भेज दिया! और यह भी, मेरी कोई सुनता थोड़े है। कहती हूं, राज का काम है तो क्या हुआ। जान है तो जहान है, कोई सोने के कड़े तो नहीं पहना देगा। —कैसा मुंह सूख गया है। ....'

और मां ने आगे बढ़कर इशारे ही इशारे से नन्नू का मुंह अपनी बाहों में भर लेना चाहा। नन्नू का कमरा कुछ अन्धेरे में था, और फिर मां बाहर प्रकाश से आई हुई थी, अपनी कच्ची आंखों से शायद कुछ देख न सकी, और आगे बढ़ने के प्रयास में पलंग के पास से ठोकर खा गई।

नन्नू ने मां को गलत दिशा में बढ़ते हुए देख लिया था, अतः उसे निवारण करने के लिए खुद भी शीघ्रता में उठे। पलंग से नीचे पैर दिया, पैर में एकाएक झुनझुनी-सी अनुभव हुई। रक्त-प्रवाह के बन्द हो जाने से पैर सो गया था, अतः जागे हुए और शीघ्रता में लपककर मां को बचाने वाले बेटे का वजन न सह सका। इधर मां पलंग से भिड़ी, और उधर नन्नू बाबू जमीन पर लुढ़क गए। कुछ सम्हल गए, इसलिए सिर को अधिक चोट न लगी, किन्तु पसलियों में गहरा आघात लगा। घूमर काकी एकाएक घबरा उठीं। —पहले किधर सम्हालें—मां मच्छर-दानी के डण्डे से सिर टकरा बैठीं, उनके कान पर टिका हुआ दलदार कांच का चश्मा, टुकड़े-टुकड़े होकर कुछ फर्श पर और कुछ पलंग पर बिखर गया था। गिरते-गिरते भी नन्नू बाबू यह देख चुके थे। अतः घूमर काकी को परेशान होते देखकर बोले—'काकी, मां को सम्हालो पहले—कहीं कांच आंख-वांख में तो नहीं लग गया।'

मां ने आवाज से अनुभव किया कि नन्नू गिर पड़ा है, बोली, 'नहीं-नहीं, मुझे कोई चोट नहीं लगी। पर नन्नू को क्या हुआ? —कैसे गिर पड़ा वह बहू! चोट कहा लगी नन्नू?'

कोशिश करके नन्नू बाबू उठे, किन्तु इसके साथ ही उन्हें एकाएक खांसी का दौरा पड़ गया। छाती को दबाकर खांसते-खांसते जब कुछ गले में बलगम-सा अटका मालूम दिया, तो पलंग के नीचे पड़ी पीकदानी उठाकर उसमें थूक दिया। यद्यपि और किसीने नहीं देखा, किन्तु नन्नू की आंखों से छिपा न रहा कि उनके बलगम में लाल रंग का चिकना पदार्थ कम मात्रा में नहीं था।

नन्नू को मालूम न हुआ कि कब से मां उनकी पीठ पर हाथ रखे बैठी हुई है। जब उनका हांफना कुछ मन्द हुआ तो मुड़कर उन्होंने मां के चेहरे पर दृष्टि डाली। पुत्र के कष्ट की सीमाहीन दुश्चिन्ता से उनका सुन्दर चेहरा एकदम से रक्त-शून्य और विश्री हो उठा था। चेहरे पर सदैव बना रहने वाला चश्मा भी अब गायब हो चुका था। नन्नू के हृदय को बड़ी पीड़ा पहुंची। मुस्कराने की चेष्टा करते हुए बोले, 'मां, तुम इतनी व्याकुल क्यों हो गईं? —अरे, एकदम जो उठा, तो ध्यान ही नहीं था कि पैर सोया हुआ है। इसलिए गिर पड़ा—पर गिरते ही उठ भी तो गया।'

'और यह खांसी?'

'खांसी तो—खैर शरीर है मां—हो ही जाती है। इसमें फिकर क्या करना है?'

'पर, जैसे कुछ कफ भी गिरा हो?'

'हां—हां, कफ तो था मां! —रात को ज़रा जुकाम हो गया था। सो ठीक हो जाएगा मां—इसमें इतना फिकर करने की क्या बात है। रात को सोने से पहले जरा गरम दूध पी लूंगा, एक बार पसीना आया कि बस—देख, कुछ भी तो नहीं हुआ मुझे! अरे तू ऐसे मुंह बनाए जा रही है, जैसे मुझे कुछ···'

मां ने शब्द पूरे न होने दिए, बेटे के मुंह पर हाथ रखकर बोली, 'कुछ हो तेरे दुश्मन को मेरे लाल···' और दोनों हाथों से उसके सिर को पकड़कर अपने वक्ष में छिपा लिया। आंखों में आंसू भरकर बोली,

'इन जली आंखों को अब ही मुझसे बैर करना था। देख भी नहीं सकती कि तुझे कहां चोट लगी है···'

नन्नू ने कहा, 'चिन्ता न करो मां ! आज ही तार देकर तुम्हारे लिए दूसरा चश्मा मंगवाए देता हूं। बस तीन-चार दिन में आया समझो। बल्कि दो मंगवाए देता हूं, ताकि कभी ऐसी मुसीबत न हो पाए···'

सिर को पाश से मुक्त कर मां ने कहा—'ना ना ना बेटा ! चश्मा-वश्मा मत मंगा। चश्मा होने पर भी मुझे उतना ही दिखाई देता है, जितना चश्मा न होने पर। तू तो देख रहा था जब तेरे पास आ रही थी तो चश्मा तो लगा ही हुआ था। ना ना, चश्मा क्या करेगा मेरे लाल। तू ही तो मेरी आंखों का सबसे बड़ा चश्मा है !' और फिर मां ने बेटे को वक्ष से लगा लिया।

सामने देखकर लजाते हुऐ नन्नू ने कहा, 'अरे मां ! तुम घूमर काकी को तो भूल ही गईं। यह जो सामने खड़ी हैं। बैठो न काकी ! तुम तो मेरी मां को जानती ही हो। इनकी जैसे सारी दुनिया ही मैं हूं। मैं कहता हूं काकी, क्या बूढ़े बेटे से इतनी माया रखना अच्छा है ? कल से कुछ न भी हो, तो भी कमाने के लिए तो मुझे फिर शहर लौटना ही होगा, तब !'

काकी ने कहा, 'बेटा ! बेटा चाहे बूढ़ा हो या बच्चा, मां-बाप के लिए तो वह सदैव ही बच्चा रहता है।'

मां ने हुलसकर कहा, 'और लो। बड़ा हुआ ही कहां ? कल तक तो मैं हाथ से खिलाती थी, तब तो खाता था—मालूम नहीं बहू तुम्हें ?···· कितनी रातें जाग-जामकर बिताई तेरे लिए नन्नू। अब तो भगवान ! मुझे उठा ले तो समझूं कि जन्म सफल हुआ। आंखों से अन्धा बना ही दिया। कान दिन-दिन ऊंचे होते जा ही रहे हैं। अब क्या और दुःख देखना बाकी है ?' मां की आंखें आर्द्र हो उठीं।

नन्नू ने दोनों हाथों को मां के गले में डालकर कहा, 'अच्छा मां ! दुःख की बात क्यों करती हो ? सुख की करो न ! भगवान ने तुम्हें दुःख

दिया था, तो क्या सुख नहीं दिया ?'

'क्यों नहीं बेटा, जिस दिन तुमने कन्हैया बनकर मेरी कोख में अवतार लिया तब से यह कैदखाना, क्या कैदखाना रह गया ? सब दुःख क्या मेरे सुख नहीं हो गए ?'

काकी ने देखा कि मां–बेटे मगन हैं, तो उठकर बोली, 'जीजी, अबेर हो रही है, मैं चलूं । फिर आऊंगी । लो देखो, महरी भी आ गई।'

'महरी आ गई ? अच्छा बहू, मैं भी उठूं, महरी से कपड़े उठवा दूं ।'

अतः दोनों ही जब नन्नू के कमरे से बाहर हो गईं, तो नन्नू का चेहरा एक बार और राख में पुत गया । उन्होंने पलंग के नीचे से पीकदानी निकाली, और उसकी गहराई में अपने जीवन का भविष्य देखने लगे, किन्तु अन्धकार के सिवा उन्हें कुछ भी स्पष्ट नहीं दिखाई दिया ।

९

वर्षाकाल की निविड़ संध्या को सघन होते देर नहीं लगती । नीचे कर्दम-भूमि, ऊपर सघन मेघमण्डल की स्तूपमान छाया और चारों ओर हरित वृक्ष-राशि का श्यामल परिच्छद सूर्यास्त के पहले ही अन्धकार कर देता है । ऐसी ही घनी संध्या की बात है । ऊपर नीड़ को लौटते हुए पक्षियों का आकुल कोलाहल, नीचे सिक्त मिट्टी के क्रोड़ को फोड़कर क्रीड़ाकुल दादुरों की टर्र-टर्र सारे वातावरण को मुखर कर रही थी ।

भीतर कमरे में बिजली का प्रकाश था । सामने दरवाज़े के पट बन्द थे, अतः बाहर का शोर भीतर सुनाई नहीं देता था । एक पलंग पर अधलेटी कमला, पास ही कुर्सी पर कमल आराम की मुद्रा में, दोनों

हथेलियां सिर के नीचे कुर्सी की पीठ पर टिकी हुई, पैर फैले हुए पलंग पर आधारित !

कमल ने कहा, 'रिज़ल्ट इसी सप्ताह आउट समझो ! पास तुम हो ही जाओगी। क्या इनाम दोगी ?'

'रिज़ल्ट तो आउट होने दो। अगर पास हो गई, तो कहोगे तुमने मेहनत करके पढ़ाया है और फेल हो गई तो कह दोगे अभ्यास नहीं किया। —तब इनाम मैं क्यों दूं ?'

'तो क्या चाहती हो, मैं दूं ?'

'न्याय तो यही होगा !'

'और जिस पुरस्कार को पाने की मैंने कामना की थी वही तुम्हें दूं ?'

'यह भी उचित ही है। क्या पाने की कामना थी ?'

'एक चुम्बन !—मेरी ओर से तुम अभी ले सकती हो।'

'बड़े धूर्त हो। यह तो दोनों ही तरह तुम्हारा ही इनाम हुआ।'

'यह तुम्हारी ज़्यादती है कमला। यदि लेना नहीं चाहती तो देना पड़ेगा और दूना।'

'रहो अभी, फिर ले लेना; दूना वसूल कर लेना। परन्तु कमल···' और छत की ओर देखते-देखते कमला चुप हो गई।

'कहो न···'

'कमला ने कोई जवाब नहीं दिया। वह उसी तरह छत की ओर देखती रही।

कमल सीधा होकर बैठ गया और कमला के हाथ को अपने दोनों हाथों में बन्द करके बोला :

'कहो कमला, रुक क्यों गई ? क्या कहना चाहती हो ?'

कमला ने दृष्टि को कमल की ओर फिराया। मानो उसकी अर्थभरी आंखों ने कमल को अनेक कथाएं सुना दीं, फिर भी कमल समझ न सका कि वे क्या कह रही हैं।

कुछ देर दोनों एक दूसरे की ओर भावभरी दृष्टि से देखते रहे। कमल ने कहा—'कहो न ?'

'इस एकाध सप्ताह से मेरा जी जाने कैसा हो रहा है।'

'कैसा हो रहा है ?'

'कुछ समझ में नहीं आता। जिस चीज़ को देखती हूं, मानो वह मेरी आंखों से भागी जा रही है। दृष्टि किसी पर ठहरती नहीं। मन में कुछ का कुछ होने लगता है। कोई बात सोच नहीं सकती। मानो किसी घोड़े पर बैठकर भागी जा रही होऊं और मानो इतनी अवश होकर मैं उसपर बैठी हूं कि वह कहीं किसी खड्ड में न मुझे गिरा दे। ऐसा क्यों होता है ?'

कमल ने हंसकर कहा, 'मालूम देता है तुम्हें इम्तिहान की चिन्ता है। तुम बिल्कुल चिन्ता न करो। जैसा तुम कहती हो यदि अपने परचे तुमने वैसे ही किए हैं तो तुम जरूर पास हो जाओगी।'

'नहीं-नहीं, यह परीक्षा की चिन्ता नहीं है कमल ! मेरा जी जैसे रेत में धंसता जा रहा है। कभी-कभी खाते-खाते मैं एकाएक विस्मृत हो उठती हूं। मुंह का कौर मुंह में ही फिरता रहता है, उसे गले में उतारने की भी मुझे सुध नहीं रहती। एकाएक ही सारे बदन में पसीना हो उठता है, जी मचलाने लगता है।'

'यह सब मानसिक रोग के लक्षण हैं कमला !'

'नहीं कमल ! मेरी कभी तो ऐसी दशा नहीं हुई।'

'तो कल डॉक्टर को बुलवा दूं ?'

'डॉक्टर आ जाएगा ?'

'क्यों नहीं आएगा।'

'किन्तु···'

'किन्तु क्या ?'

'अभी रहने दो कमल। क्या मालूम, मन का वहम ही हो···'

'वहम क्या ?'

कमला मुस्कराकर बोली, 'वहम, कहा क्या मैंने ?—यही लो—तुमने कहा न कि मानसिक रोग के लक्षण हैं। सचमुच यदि वही हो तो डॉक्टर को बुलाने से मज़ाक ही तो होगा। नहीं, अभी डॉक्टर को दिखाने की ज़रूरत नहीं है।....'

'हां !—मेरा तो यही कहना है कि सदैव प्रसन्न रहो ! चिन्ता ही क्या है तुम्हें ?'

'चिन्ता नहीं मुझे ?—लो, सुने कोई तुम्हारी बात ! जिसका स्वामी बीमार हो, उसे वैसे ही क्या कम चिन्ता है ? फिर परीक्षा....' और वह कुछ मुस्करा दी। फिर बोली 'सच कमल, आज भी सिर इतना दर्द कर रहा है कि घर-दरवाज़े बन्द करके एकदम सो जाऊं ! और अभी शायद आठ भी नहीं बजे होंगे।'—और उसने एक जमुहाई भी ले डाली।

कमल ने हाथ पर बंधी घड़ी को देखकर कहा, 'आठ तो बज गए हैं, दस मिनट ऊपर हो गए। वर्षा शुरू हो गई तो क्या हुआ। इन दिनों सूर्य भी तो काफी देर से अस्त होता है। तो फिर तुम सोओ।'—और कमल ने उठने का उपक्रम किया।

'मन तो करता है कि तुम्हें जाने ही न दूं।'

'तो रोक लो।'

'देखती हूं, कब तक रुके रहते हो। जहां घर पहुंचे कि...अच्छा कमल, यह बताओ शादी कब कर रहे हो ?'

कमल उठ खड़ा हुआ, 'यह खबर पाकर खुश होओगी ?'

'खबर मेरी खुशी-नाखुशी की परवाह करेगी क्या ?'

'अगर करे तो क्या मेरे साथ अन्याय न होगा ?'

'क्यों ?'

'तुम क्या किसी दूसरे की नहीं हो ?'

'पर इसमें मेरा क्या दोष ?—मेरे जीवन में तुम आए ही कब ?—और तब तुम्हें आना ही क्यों चाहिए था ?'

'तुम्हारी आंखों की पुकार को अनसुना कैसे कर देता ?'

'लेकिन अब कर दोगे क्यों ? आंखों को कसूरवार बनाकर।'

कमल ने लम्बी सांस ली। कहा, 'तुम्हारी आंखें छुट्टी देंगी तो शादी करूंगा—वरना मेरी कामना शेष ही क्या है ?—लो चला मैं—तुम्हें सोने में, देखता हूं, देर हो रही है।'—कमला एक बार और जमुहाई ले चुकी थी।

कमला ने कहा, 'चले जा रहे हो ?—अपना पुरस्कार लिए बिना ही ?' और वह शरारत से मुस्करा दी।

कमल ने कहा, 'यदि दाता कृपणता न करे, तो भिखारी के भाग्य ही जग गए।' और उसने अधलेटी कमला के अधरों पर अपने अधर रख दिए।

कमल के जाते ही कमला ने दरवाज़ा भीतर से बन्द कर लिया और फिर अपने ब्लाउज़ में से एक कागज का टुकड़ा निकालकर पढ़ा, 'आज रात को ९ बजे—डी.।' तीसरे पहर चार बजे बड़े बाबू उर्फ छोटे साहब का चपरासी रामू जब डाक देने आया था, तो यह स्लिप पकड़ा गया था। अभी साढ़े आठ बजे हैं। आध घण्टे तक प्रतीक्षा करनी है। इसी बीच यदि कमल अपने कमरे में जागता रहे तो उसे प्रतीति करानी है कि वह सो गई। दादू सात बजे ही छुट्टी लेकर चला गया है। रामू ही आकर कह गया था कि आज सभी चपरासी सेकण्ड शो देखने जा रहे हैं, इसलिए देर से लौटेंगे। सिनेमा दिखाने का आयोजन रामू ही ने किया था। सबके पैसे वही देगा। रामू बड़ा समझदार है, बड़े बाबू का अपना आदमी जो ठहरा। बड़े बाबू की इच्छा के बिना कोई काम नहीं करता।

'अच्छा तो कमल, मेरे कमरे की ओर देखो···' यह कहकर उसने सामने वाली खिड़की खोल दी। गीली हवा का एक मादक झोका उसके बदन को झकझोरता हुआ निकल गया। मिट्टी की भीनी महक, मेढ़कों का समवेत स्वर, झिल्ली की झंकार और बाहर रात्रि का सन्नाटा एक विचित्र प्रभाव पैदा कर रहे थे। खिड़की में से कमला ने देखा, कमल

अपने कपड़े बदल रहा है, और रह-रहकर इस ओर देख लेता है। उसने हाथ हिलाया, कमला ने उत्तर दिया, फिर अपनी ही हथेली को अधरों से चूमकर अपने चुम्बन को कमल तक पहुंचाने के लिए हवा में उड़ा दिया।

प्रकाश बन्द करते हुए उसने फिर कहा, 'लो कमल, तुम्हारे लिए तो मैं सो ही जाती हूं। मेरे बारे में कुछ उल्टा-सीधा सोचकर दुःख न पाना।'

धर्मप्रकाश के प्रस्ताव के अनुसार रेलवे डॉक्टर की अपेक्षा कमला ने अपने आपकी एक लेडी डॉक्टर से परीक्षा कराना ही उचित समझा। लेडी डॉक्टर को घर पर बुलाने की भी धर्मप्रकाश की राय न थी। कोलोनी में कोई बात छिपी तो रहती नहीं फिर लोग-बाग जाने क्या अन्दाज़ लगाएं। धर्मप्रकाश ने एक लेडी डॉक्टर का पता भी दे दिया। यही नहीं, लेडी डॉक्टर शायद उनकी जान-पहचान की थी, अतः एक व्यक्तिगत पत्र भी उन्होंने लिखकर कमला को दे दिया था, ताकि उसे सब तरह की सहूलियत हो। इस बात का पता कमल को भी नहीं था।

जब से वह हॉस्पीटल से लौटी, तब से बड़ी बेचैन हो गई है। समझ में नहीं आता क्या करे? अभी तो बारह ही बजे हैं। कमल पांच से पहले आ नहीं सकता, और धर्मप्रकाश? सलाह उनसे भी लेना उचित है, किन्तु उनसे भेंट किस तरह हो? दादू को स्लिप देकर भेज दूं?—नहीं, पहले कमल से सलाह मिला लेना अच्छा होगा। धर्मप्रकाश चालाक चाहे जितना हो, विश्वास तो वह कमल ही का कर सकती है। धर्मप्रकाश एक छाता है, जो वर्षा में भीगने से बचाने की चेष्टा करता है, उसकी छाया में वर्षा की क्रीड़ा से एक दुस्साहसपूर्ण सम्पर्क स्थापित करने का आनन्द भी प्राप्त किया जा सकता है, किन्तु सर्वथा निर्भर रहकर, सारी बरसात तो उसके नीचे काटी नहीं जा सकती। कमल है दृढ़ छत और दीवारों से घिरा एक कक्ष, जो न केवल वर्षा से प्रत्युत् जीवन के अन्य गम्भीर खतरों और संकटों से भी रक्षा करता है।

दादू ने आकर कहा, 'बीबीजी, खाना बन गया है।'

'मिसरानी से कह दे, रखकर चली जाए। अभी मुझे भूख नहीं है।'
—और फिर वह अपनी चिन्ता में खो गई।

हॉस्पीटल दादू भी साथ गया था। वह बाहर ही राह देखता रहा। भीतर क्या हुआ, डॉक्टरनी बाई ने कैसे जांच की, क्या पाया, यह वह कुछ नहीं जानता। ऊपर से देखने में बीबी जी को कुछ खास बीमारी भी नहीं मालूम देती। फिर एकाएक ही इतनी अन्यमनस्क कैसे हो गई?—खाना भी नहीं खाना चाहती। कुछ देर सोचते रहने के बाद उसने फिर पुकारा, 'बीबीजी!'

चौंककर कमला ने कहा, 'अरे! अभी तक तू खड़ा है?—कह न दिया मैंने कि भूख नहीं है। मिसरानी से कह दे कि चौका उठाकर चल दे। जब भूख लगेगी तो खा लूंगी।'

'मगर···'

'सिर मत चाट! कह दिया न तुझसे। जो कहती हूं, सो किया कर! जा···'

दादू बाहर चला गया, किन्तु थोड़ी ही देर बाद फिर लौट आया, और अपनी पहली जगह पर खड़ा हो गया। कमला खिड़की के बाहर कुछ देखती रही····

दादू ने कहा, 'डॉक्टरनी बाई ने कुछ बताया···'

बीच ही में टोककर कमला ने कहा, 'फिर तू परेशान करने के लिए आ मरा?—वैसे ही मेरा सिर कम नहीं दुख रहा है···'

'बाम लगाकर दबा दूं···'

'दादू, तेरे हाथ जोड़ती हूं। तू जा—सिर मत खा मेरा!—मैं भली-चंगी हू। मुझे कुछ नहीं हुआ है····'

'फिर आप खाना क्यों नहीं खातीं?—थोड़ा-बहुत, जो कुछ भाए···'

'मगर कुछ भाए तब न?'

'बाज़ार से कुछ फल-फूल ला दूं—अगर हुकुम दें।'

'फल-फूल ला दूं!—रुपये-पैसे का जैसे बाग ही तो लगा हुआ है, कि

जब चाहे, जितना चाहे तोड़ ला। जा भाग जा, मेरे पास पैसे-वैसे नहीं फल-फूल लाने के लिए।'

कमला ने समझा था कि इसी बहाने इस आफत से पीछा छूट जाएगा। कमला उसे झिड़क भी सकती थी, किन्तु दादू उसकी इतनी परवाह करता है, इतनी सेवा करता है, दिन को दिन और रात को रात नहीं समझता कि नाराज़ होना चाहकर भी कमला उसपर नाराज़ नहीं हो सकती। हां, उसकी बेवकूफी पर गाहे-ब-गाहे झल्ला अवश्य उठती है।

किन्तु दादू ने ज़रा चमककर कहा, 'पैसे की आप चिन्ता न करें बीबी जी, अभी मेरी तनख्वाह के सभी पैसे तो बचे हुए हैं।'—और कहता-कहता वह बाहर हो लिया।

संध्या को लगभग साढ़े पांच बजे कमल ने दरवाजे पर आकर दादू को आवाज दी। कमला कान बिछाए हुए ही बैठी थी। उठकर दरवाज़ा खोलते हुए उसने कहा :

'ओह ! याद पड़ गई मेरी ?—मैं तो समझी थी कि दफ्तर का सारा काम आज ही शेष कर दोगे।

'काम तो कुछ अधिक था ही। अभी भी शेष है, बहुत कुछ करने को। साहब तो अभी तक बैठे हैं। कर्मचारियों की स्थापना के सम्बन्ध में बड़ा असन्तोष फैला हुआ है। कई अपीलें आई हैं और कई कर्मचारी स्वयं ही अपनी शिकायतें लेकर आ जमे थे। तुम तो जानती ही हो मि० अटनागर की अनुपस्थिति में मुझे ही तो सबके कागज निकालकर खड़े रहना पड़ता है।'

'तो तुम सबके भाग्य की डोर पकड़े हुए हो ?'—और उसने पुनः दरवाजा बन्द कर दिया।

एक कुर्सी खींचकर बैठते हुए कमल ने कहा, 'थक गया भाभी ! चाय के लिए पानी चढ़ाने को कह दो न !—और लो—यह भाई साहब का प्रेम-पत्र !'

'मैं चाय की कहकर आई।—तुम जितने पत्र खोलो।'

कमल ने चारों ओर दृष्टि दौड़ाई।—कोई खास बात नहीं दिखाई दी। पैर फैलाकर आंखें बन्द करके वह बैठा रहा, तब तक कमला भी लौट आई। पास ही कोच पर बैठते हुए बोली :

'क्या लिखा है पत्र में ?'

'तुम्हीं पढ़ो भाभी ! मैं तो थक गया हूं। बहुत फाइलें पढ़ी हैं आज ! —आज तो भैया के पत्र पर अपनी ही नज़रों का सौभाग्य होने दो।— न हो एक कप चाय ज्यादा पी लेना।'

कमला ने कमल की ओर देखा, वह उसी तरह आंखें बन्द किए हुए पड़ा था। थकावट उसके सारे चेहरे पर पुती हुई थी। हाथ में उसके वह पत्र तब भी उसी तरह झूल रहा था।

कमला ने पत्र ले लिया और लिफाफा फाड़ उसमें से पत्र निकालकर वह पढ़ने लगी—'माइ डियर कमला···' शुरू तो उसने जोर से पढ़कर ही किया किन्तु सम्बोधन के बाद ही वह मन ही मन पढ़ने लगी। कमल उसी तरह आंखें बन्द किए पड़ा रहा।

पत्र समाप्त कर जब कमला ने पुकारा 'कमल !' तब कमल ने आंखें खोलीं; कहा 'क्या लिखते हैं तुम्हारे नागर ?—रात को नींद आती है या नहीं ?···'

कमला के चेहरे की ओर जैसे ही उसकी दृष्टि गई, उसने पूछा, 'क्या हुआ ? कुशल तो है ?'

'नहीं कमल ! लिखा है, तबियत अधिक खराब हो गई !···' और उसने पत्र कमल की ओर बढ़ा दिया। कमल एक ही सांस में पत्र पढ़ गया।

'हूं ! पर इसमें तो मैं एकदम तुम्हारे इतना चिन्तित होने की बात नहीं देखता !—यदि कोई टी० बी० का बीमार भारी काम करने उठे तो उसका गिर पड़ना बिल्कुल स्वाभाविक है और गिर पड़ने पर चोट लगना भी कोई अस्वाभाविक बात नहीं। फिर उन्होंने लिखा भी है कि चोट

ठीक होते ही वे बम्बई जाने का इरादा कर रहे हैं। वे अवश्य अच्छे हो जाएंगे कमला। तुम्हें इतना अधिक अधीर होने की मैं तो कोई जरूरत नहीं देखता।'

'नहीं कमल, मेरी अधीरता को तुम नहीं समझ सकते।' और कमल ने देखा कि उसकी आंखें डबडबा आई हैं।

कमल ने कहा—'छिः यह क्या ?—यदि अटनागर बाबू को कुछ हुआ···'

कमला ने बिना पूरी बात सुने कहा, 'मैं कहीं की नहीं रहूंगी कमल, कहीं की नहीं !'

'उस बुढ़िया से डर रही हो···?'

'नहीं कमल—तुम नहीं जानते।'

'कुछ कहोगी तभी तो जानूंगा।'

'आज सवेरे मैं हास्पिटल गई थी।'

'हास्पिटल ! कब ?—शायद दस के बाद गई होगी ! क्या बात थी ? मुझे क्यों नहीं कहला भेजा। मैं डॉक्टर को बुलवा देता।'

'मैं लेडी डॉक्टर से मिलना चाहती थी।'

'फिर क्या कहा उसने ?'

'उसने बताया कि मुझे गर्भ है।'—और उसने अपने दोनों हाथों से मुंह छिपा लिया।

यह अप्रत्याशित सम्वाद सुनकर कमल भी कुछ सोचने लग गया।

जब काफी समय बीत गया तो कमल ने मुस्कराकर कहा, 'कहो तो अटनागर साहब को अभिनन्दन का तार भेज दूं ?—सुनकर खुशी ही होगी उन्हें। वे स्वयं ही इस अवस्था में लिख देंगे कि तुम्हारा यहीं रहना ठीक होगा !···न होगा तो बम्बई में एक नर्स का प्रबन्ध कर लेंगे।—मेरा ख्याल है कि सरकार उनकी बीमारी का सब खर्चा अपने ऊपर ले लेगी।'

'तुम नहीं समझे कमल !'

'क्या नहीं समझा ?'

'कुछ नहीं समझे। जानते हो अटनागर को यहां से गए चार माह हो गए हैं।'

'तो फिर ?'

'और इस हालत में मुझे बस यह दूसरा महीना है।'

तभी मिसरानी भीतर से चाय का सामान रख गई। साथ में एक तश्तरी में फल-फूल भी। देखकर कमल ने कहा, 'यह फल-फूल···'

'हां, दुपहर को दादू नहीं माना—वही ले आया। पैसे भी नहीं लिए।'

'क्यों ?'

'माना ही नहीं। हास्पिटल से जब लौटी तो इसी चिन्ता से खाने को कुछ मन नहीं कर रहा था। वह समझा कि बीमारी की वजह से खाना नहीं चाहती। बोला कि कुछ फल ही ले आऊं। मैंने कहा कि पैसे कहां हैं इतने कि रोज-रोज फल खाऊं! बस फिर क्या मानता है वह ?—कहता है कि नौकरी भी तो आप ही की दी हुई है।'

'आदमी बड़ा भला है। एक और तरक्की इसे अगले माह से मिल जाएगी। खैर महीने के आखिर में कुछ दे देना बेचारे को!'

कमल के चाय पीते-पीते ही बातचीत चलने लगी।

कमला बोली, 'मुझे तो जीवन में बस अब अंधेरा ही अंधेरा नज़र आ रहा है कमल! क्या करूं मैं ?'

'घबराने से तो काम नहीं चलेगा भाभी!—अटनागर बाबू का कुछ बीमा तो है न ?'

'हां, पांच हजार का है।'

'पांचेक हज़ार उनके प्रोविडेण्ट फण्ड (निर्वाह-निधि) के हो जाएंगे।'

कमला मानो सुनकर भी न सुन रही थी।

कमल ने कहा, 'अच्छा, यह तो बताओ, उन्होंने अपनी पॉलिसी वगैरा सब कुछ तुम्हारे नाम तो कर दिया है न ?'

'कहते तो थे।'

'लो, तुम तो चाय भी नहीं पीतीं ?—मेरी कसम तुम्हें !'—और उठकर उसने स्वयं ही कमला के लिए कप में चाय उंडेली।

कमला ने कहा, 'नहीं रहने दो कमल ! मुझे कुछ अच्छा नहीं लग रहा है।'

'अरे ! इस तरह तुम्हारे चिन्ता करने से क्या भविष्य टल जाएगा —लो, नहीं पियोगी तो मुझे मरा देखोगी। क्या पढ़ी-लिखी होकर तुम भी···।'

कमला ने कप अपने हाथ में ले लिया, बोली, 'मैं अगर जल्दी ही उनके पास चली जाऊं, तो ?'

'लेकिन वे तो शीघ्र ही बम्बई जाने की सोच रहे हैं। क्या तुम भी उनके साथ बम्बई जाओगी ?—मेरी राय नहीं है कि तुम अपना भी जीवन खतरे में डालो !—जमाना आगे बढ़ चुका है भाभी ! तुम खुद इतना तो पढ़-लिख गई हो कि अपना जीवन स्वतंत्र रूप से निर्वाह कर सको ! और जहां तक भावना का सम्बन्ध है—खैर इस बारे में कह ही क्या सकता हूं।—किन्तु इतना जरूर कहूंगा कि डूबते हुए को बचाना अवश्य हमारा कर्तव्य है, पर डूबते हुए के साथ डूब जाना कभी व्यावहारिक नहीं।'

'मैं सब समझती हूं कमल ! यह भी सही है कि विवाह होने पर भी और चाह कर भी मैं इस व्यक्ति को हृदय से प्यार नहीं कर सकी। फिर भी इसके ऊपर दया तो मुझे आती ही है। कितने आदर के साथ, कितने साध के साथ इसने मुझको अपना बनाने की चेष्टा की है। क्या उसका कोई मूल्य नहीं ?'

'क्यों नहीं ?—मैंने यह तो नहीं कहा कि तुम उन्हें किसी तरह दुःख पहुंचाओ। स्वयं ही उन्होंने पत्र में लिखा है कि तुम्हें मेरे पास नहीं आना चाहिए। बीमारी के संक्रमण का भय है। मैं तुम्हारी भावना को यों पड़े-पड़े भी समझ सकता हूं। मेरा ख्याल है उनका उपदेश ठीक ही

और तुम्हें मानना चाहिए। कम से कम जिस अवस्था में तुम हो, उसमें तो....'

'इसी अवस्था के कारण भी मुझे वहां जाना ही चाहिए। उन्हें यदि कुछ भी सन्देह हो गया तो उनके हृदय को बहुत बड़ी ठेस लगेगी कमल ! और फिर, यह भी तो सोचो, दुनियां क्या कहेगी ?'

कमल ने मुस्कराकर कहा, 'दुनियां गणित का हिसाब लगाने नहीं बैठती कमला !—किन्तु एक बात बताओगी ?'

'क्या ?'

'जब से यह खबर सुनी है, मेरे हृदय में बड़ी उथल-पुथल मच गई है। सच-सच कहोगी ?'

'उथल-पुथल तो मचना ही चाहिए ! बिना विवाह किए ही बाप जो बनने जा रहे हो। पर सच-सच क्या कहना होगा ?—तुमसे क्या कभी मैंने झूठ कहा है ?'

कमल को अपने प्रश्न का उत्तर मिल गया, किन्तु वह निर्भ्रान्त होना चाहता था। प्रश्न पूछे किन्तु कैसे ?—धर्मप्रकाश की बात कमल जानता है, यह तो कमला को विदित नहीं।

'क्या सोच रहे हो ?—क्या पूछना चाहते थे, पूछो !'

बात बदलकर कमल ने कहा, 'यही कि मां बनने जा रही हो, इसकी तुम्हें प्रसन्नता नहीं है ?'

'प्रसन्नता तो है, किन्तु जब प्रसन्नता को मिल बांटने वाला कोई न हो, तो वह प्रसन्नता, बड़ी दुःखदाई भी ता हो जाती है।—तुम्हारा क्या ?—भुगतना तो मुझ ही को पड़ेगा। बदनामी जो होगी सो मेरी। सोचती हूं, क्या कोई उपाय नहीं किया जा सकता ?'

'क्या कहती हो कमला ?'

कमला की आंखों में आंसू आ गए, 'क्या करूं, मैं कुछ समझ ही नहीं पाती।'

कमल ने कुछ सोचकर कहा, 'अच्छा तो कुछ दिन के लिए वहां चली जाओ।'

'और सब कुछ जानकर यदि उन्होंने दुत्कार दिया तो ? नहीं-नहीं, कमल, यह मैं कैसे सह सकूंगी ?—मेरी क्या गति होगी !'—और उसने फिर दोनों हाथों से अपना मुंह छिपा लिया।

कमल ने कहा, 'कमला ! मेरे ऊपर निर्भर कर सकती हो ?'

'क्या करने को कहते हो।'

'चलो, हम दोनों किसी दूर बस्ती में जा बसें, जहां हमें कोई नहीं जानता हो।'

कमला ने कमल की ओर देखा और बोली, 'और तुम्हारा घर-द्वार, माता-पिता, यह नौकरी ?—प्रतिष्ठा ?'

'तुम्हारे त्याग से कुछ भी बड़ा नहीं है कमला !—तुम यह भी परीक्षा करके देख लो !'

तभी मिसरानी चाय के बर्तन उठाने आई। कमला ने कहा, 'खाना ढंककर चौका उठा देना। मैं देर से खाऊंगी। और जाओ तब दादू से कह देना, कि पीछे का दरवाजा बन्द कर ले।'

वर्षा काल की संध्या, और बस्ती से दूर इस अंचल में और भी जल्दी घनी हो जाती है। किन्तु कमरे के भीतर विद्युत के प्रकाश में घहराती हुई सांझ कब निविड़ रात्रि हो उठती है, यह जानने का कोई उपाय नहीं है।

लम्बी सांस लेकर कमला ने कहा, 'परीक्षा का अवसर आएगा तो परीक्षा भी देनी होगी, किन्तु अभी नहीं ! मैं तुम्हारा जीवन नष्ट नहीं करूंगी कमल। इतनी ओछी मैं नहीं हूं। मुसीबत जो होगी, सहूंगी। मेरी भूल का प्रायश्चित तुम क्यों करोगे ? तुम मुझपर दया करते हो, यही क्या कम है, अपनी जवानी का दण्ड तो सभी को सहन करना पड़ता है ! तुम मेरे वहां जाने का प्रबन्ध कर दो। उन्हें किसी तरह अभी पता

न होने दूंगी। देखूं जहां तक छल का प्रयोजन सफल हो सकता है, उसका प्रयोग करूंगी !'

'तो क्या उनके साथ बम्बई भी जाओगी ?'

'यह तो वहां जाने पर ही निश्चय कर सकूंगी, अभी नहीं ! पर उनपर यह भेद खुले उसके पहले ही मैं उनसे दूर भी हट जाना चाहती हूं ताकि पत्र के द्वारा ही एक शुभ समाचार के रूप में उन्हें यह संदेश दे सकूं।'

'आइडिया तो ठीक है !···'

तभी बाहर दरवाज़े पर थपथपाहट हुई।

कमल ने कमला की ओर देखा। कमला का हृदय धड़कने लगा, किन्तु तभी उसने कमल को कहा, इस तरह कि बाहर वाला भी सुन ले—'देखिए कमल बाबू, बाहर कोई दरवाजा खटखटा रहा है क्या ?' और वह मुस्कराकर उठ खड़ी हुई।

कमल कुछ न समझा, किन्तु कमला ने आंख के इशारे से कमल को दरवाज़े की ओर जाने के लिए कहा, और वह स्वयं भीतर के दरवाज़े की देहली पर खड़ी हो गई।

कमल ने दरवाज़ा खोला, देखा तो सामने धर्मप्रकाश खड़े हैं।

कमला आड़ में हो गई।

'ओह, आप !'

धर्मप्रकाश को आशा न थी कि कमल यहां पर अब तक भी मौजूद होगा। बाहर कृष्ण पक्ष की रात्रि का घनान्धकार छाया हुआ था। बिजली की बत्ती दूर हट कर थी। घर पर ही एक इमली का पेड़ सघन छाया किए हुए था।

किन्तु जब सामना पड़ ही गया, तो धर्मप्रकाश ने मुस्कराकर कमल की ओर देखा। आखिर एक दूसरे का रहस्य तो किसीसे छिपा नहीं है। आज सामना ही हो गया। फिर भी चोरी खुलकर नहीं की जा सकती।

कमल ने कहा, 'बैठिए। मैं पूछने आया था कि किसी बात की तकलीफ तो नहीं है। अच्छा मैं चला, अभी तो।'

धर्मप्रकाश ने कहा, 'वह तो मैं देख ही रहा हूं। आफिस से सीधे···'

'जी नहीं, ज़रा बाज़ार चला गया था, लौटा तो सोचा घर चलने के पहले पूछ ही लूं।'

'दैट्स गुड—मुझे आज मिस्टर अटनागर का पत्र मिला था। उन्होंने लिखा है कि आपके कुशल-क्षेम का समाचार लेता रहूं—सोचा कि····' कमल बाहर जाने को दरवाज़े पर पहुंच गया।

दरवाजे की आड़ से कमला ने कहा, 'कमल बाबू, कह दीजिए कि कृपा के लिए मैं कृतज्ञ हूं। मेहरबानी करके खुद तकलीफ न करते और नौकर के हाथ पुछवा लेते तो मेरा और भी हित करते। मैं स्त्री जाति ठहरी, अकेली! मुझे दुनिया देखकर चलना पड़ता है।'

धर्मप्रकाश ने मुस्कराकर कहा, 'मैं भी चल ही रहा हूं कमल! ठहरो न!—अरे, चले गए?'

और दरवाजा बन्द होने की आवाज़ के बाद ही उन्होंने कहा, 'बाहर निकलो डियर, कमल तो चला गया।'

बाहर निकलकर कमला ने कहा, 'क्या तुम मुझे मुंह दिखाने लायक भी नहीं रखोगे?'

'ओह हो! इतना गुस्सा?—मुझे क्या मालूम था कि ये हजरत यहां डटे मिलेंगे।'

'पर पहले तो सूचना दिए बिना तुम कभी आए ही नहीं!'

'तुम्हारी बीमारी की बात थी न! पूछ न लूं तब तक चैन कैसे हो! —क्या कहा लेडी डॉक्टर ने?'

'पर ज़रा किसीके हाथ इशारा ही करवा दिया होता?'

'दफ्तर से लौटकर देखा कि देवी जी रामू को लेकर गई हैं बच्चों को घुमा लाने!—दिल परेशान था ही; सोचा, अंधेरा तो खूब है, कौन देखता है?—यह भी सोचा कि तुम भी आशा तो कर ही रही होगी!

अच्छा लो, अपराध हुआ हो तो माफी मांगता हूं।' और उसने हाथ जोड़ लिए।

कमला ने ध्यान नहीं दिया। बोली, 'कमल बाबू अपने मन में क्या समझेंगे। और उन्हें चला क्यों जाने दिया ?'

'चला तो वह खुद ही गया। मैं क्या करता। रहा सवाल सोचने का, सो—तुमपर केवल उसीका अधिकार क्यों हो ?' और वह मुस्करा उठा।

'यानी ?' कमला ने सरोष पूछा।

'यानी यही कि जो अपने बारे में नहीं सोच सकता, उसे दूसरों के बारे में सोचने का क्या हक है ? अच्छा डीयर, गुस्सा तो बहुत कर चुकी हो। यह बताओ, हास्पिटल से क्या खबर लाईं ?'

कमला को विश्वास न था कि यह व्यक्ति इतना मुंहफट भी होगा, उसे एकदम विरक्ति हो गई। वह बोली, 'डाक्टरनी ने कहा है कि मुझे मर जाना चाहिए।'

'मतलब ?'

'मतलब पत्थर !—करो तुम और भरूं मैं ! हे भगवान, तूने इस स्त्री-जाति को बनाया ही क्यों ?' और वह भीतर जाने के लिए दरवाजे की ओर मुड़ी।

'कमला !—यदि तुम चाहती हो, तो मैं चला जाता हूं ! किन्तु कमल से यदि तुम डरती हो तो यह तुम्हारी भूल है। वह हमारी बात कहीं भी नहीं कहेगा। उसकी चोटी जो मेरी चुटकी में है। उसको मैंने बनाया है, चाहूं तो उसे अभी मसल सकता हूं, यह बात वह जानता है।'

कमला ठिठकी ! यदि कमल का अहित हुआ तो ? मुड़कर उसने कहा :

'कमल को यदि तुमने बनाया है तो मेरे कारण तो नहीं, फिर उसे मेरे कारण मसलोगे क्यों ?—उस बेचारे का क्या दोष है ?—आकर दो बात सुख-दुःख की कर जाता है···'

धर्मप्रकाश ने दरवाजे पर जाकर कहा, 'मैं चला। कमल की ओर से तुम्हें चिन्ता नहीं करनी होगी। और डॉक्टरनी की रिपोर्ट, मुझे भी उसने पत्र लिखकर सब हाल बता दिया है। मैं कहने आया था कि यदि किसी तरह की मेरी सहायता की आवश्यकता हो, तो संकोच न करना। मैं उसीसे कहकर यदि चाहो तो अबोर्शन का प्रबन्ध भी करवा दूंगा, और खर्चे वगैरा के लिए तुम्हें कोई चिन्ता नहीं करनी पड़ेगी।'

'क्या कहा, अबोर्शन ?'

'हां, यदि छुटकारा पाना चाहो !'

'पर तुम्हें क्या···' वह आगे नहीं कह सकी।

धर्मप्रकाश ने मुस्कराकर कहा, 'मैं पहले ही चार बच्चों का बाप हूं ! इस बेगार को अच्छी तरह समझता हूं।'

कमला ने कोई उत्तर नहीं दिया। दरवाजे पर खड़े धर्मप्रकाश ने सोचा कि कमला शायद वापस बुला ले पर कुछ क्षण के पश्चात् जब कमला ने देखा कि वे खड़े ही हैं, तो बोली, 'बाहर से दरवाजा भिड़ा दीजिएगा !'—और वह आड़ में हो गई।

धर्मप्रकाश के जाते ही कमला को ध्यान आया पहली बार कि कहीं वह धर्मप्रकाश की सन्तान की मां तो नहीं बनने जा रही है ?

१०

माल खरीदने के सम्बन्ध में महा व्यवस्थापक महोदय की स्वीकृति की आवश्यकता थी, कारखाने में माल के लिए कार्य रुका पड़ा था। लाल फीताशाही का जमाना ठहरा, लिखा-पढ़ी से देर होने की आशंका थी, अतः खुद ही प्रधान कार्यालय पहुंच गया। भांडार-विभाग में काम करते-करते मुझे छः महीने होने आए थे।

पैरगाड़ी पर चढ़कर चला था, दुपहर हो गई थी। रास्ते में एक रेस्टरां में बैठकर सुस्ताया, चाय पी, और जब दफ्तर पहुंचा तो साढ़े बारह बज गए। साढ़े बारह बजे महा व्यवस्थापक महोदय लंच पर चले जाते हैं। अतः दफ्तर में अपने पुराने कमरे में चला गया।

कमरे में घुसते ही सभी लोग बोल उठे, 'माइ लॉर्ड, माई लॉर्ड !'. (यह मेरा आफिस के बाबुओं द्वारा दिया हुआ नाम था) बहुत दिनों बाद आए। भई कैसे हो ?—यार खबर ही नहीं लेते। इधर आओ, इधर—अरे भाई किशन—जरा गद्दीदार कुर्सी लाना—' सबसे पहले आकर कृपानारायण जोशी ने हाथ पकड़ लिया, और साफा बंधे हुए मस्तक को पूरा घुमाकर बोला, 'यार माइ लॉर्ड ! हमारी तो मिट्टी पलीद हो गई। चल-चल, यहां बैठ।'

मैंने पूछा, 'क्यों ? क्या बात है ?'

'प्रस्थापना की रिपोर्ट नहीं पढ़ी क्या ?'

एक बार चारों और नज़र डाली। सब लोगों ने काम छोड़ दिया है, मानो आफिस में कोई बन्दर नचाने वाला मदारी आ गया था।

नटनागर की कुर्सी खाली थी। पास ही कमलनयन जोशी हाथ में कलम लिए अभी-अभी कागजों के पहाड़ को खोदकर इस तरह देख रहा था जैसे चूहा निकाला हो। आंखें चार होते ही उसने मुस्कराकर तथा हाथ उठाकर नमस्कार किया।

मैंने कहा, 'कहो जोशी ! कुशलपूर्वक तो हो ?'

जोशी अपनी बैठक पर से उठकर स्वयं ही मानो अपने कुशल का उत्तर देने के लिए मेरे पास आकर खड़ा हो गया। बोला, 'मैं तो आपकी दया से अच्छी तरह हूं। आप अच्छे तो हैं ?—भाई साहब, आप तो कभी दर्शन ही नहीं देते।'

'अरे भाई, दर्शन क्या दें !—अटाले से फुर्सत मिले तब न !—सेकण्ड ग्रेड में कन्फर्म हो गए इसके लिए बधाई !'

'धन्यवाद, यह सब आप ही की कृपा और आशीर्वाद का फल है !'

कृपानारायण सहन करने वाला जीव नहीं है, तपाक से बोला, 'इनकी कृपा और आशीर्वाद क्या, अपनी चोट्टेबाजी क्यों नहीं कहते ?'

जूनियर जोशी ने कहा, 'यार जोशी, तू बेकार हमें दोष देता है ! विश्वास कर, सबसे ज्यादा यदि किसीको अफसोस है तो वह मुझे है कि तुझे थर्ड ग्रेड में उन लोगों ने स्थापित किया।'

'वे लोग क्या करें ?—करने वाले तो तुम लोग हो, यहां जो यमराज की तरह डटे हुए हो।'

'अच्छा जोशी, तुम साबित कर सकते हो कि यह काम मैंने किया है ?'

'साबित क्या करना है ?—जो आइने की तरह साफ है !'

'मैं साहब के सामने चलकर सब कागज पटक देता हूं—चल तू भी—और सीना ठोककर खड़ा हो जा। देखें ···'

कृपानारायण में बात करने की शक्ति खूब है, पर यहीं तक—वह यह भी शायद जानता है कि साहब-सलामत तक पहुंच उसकी नहीं है। बिल्कुल उदासीनता का भाव दिखाकर बोला, 'देखना क्या है। चोर-चोर मौसेरे भाई !—तुम लोगों का राज जो ठहरा।'

मैंने देखा कि बात बढ़ने से मन-मुटाव की नौबत आ सकती है तो बोला, 'अरे यह फ्रंट चला गया तो क्या हुआ ?—मैंने सुना है कि कैलेण्डर का दसवां पत्ता भी तूने फाड़ दिया है ! सच ?'

एक ही सेकण्ड में उसके मुंह पर रंगीनी छा गई। स्वीकृति-सूचक सिर हिलाते हुए मस्ती के साथ बोला, 'और इसके एन्-क्यूब साहब बीवी की लपेट में कहां हैं, ज़रा पूछो न ?'

'बीवी की लपेट क्या ?' मैंने पूछा।

'बीवी की लपेट ही तो ! टी० बी० का तो नाम है, नाम !'

कमल ने कहा, 'अरे, बेचारा अधिक बीमार हो गया दीखता है, बम्बई गया है।'

'अच्छा ?—क्या वास्तव में टी० बी० ही थी ?' मैंने पूछा।

'मालूम तो ऐसा ही देता है।'

कृपानारायण ने कहा, 'और, ये लोग यहां गुलछर्रे उड़ा रहे हैं बेटे! उस बेचारे की बीवी, मेरा मतलब है टी० बी०, इन लोगों के भाग से मानो छींका टूट गया!—और क्यों···' उधर से नानकचन्द आ टपका, बोलता हुआ, 'कहो जोशी! क्या घुप-चुप बातें हो रही हैं?' और फिर मुझे देखकर बोला, 'अरे यार माई लॉर्ड! आप हैं।—बहुत दिनों के बाद दिखाई दिए।'

मैंने हंसकर कहा, 'जानते तो हो। गेंती-फावड़ों से बचकर निकलूं तो जान बचे!—अच्छे तो हो?'

'अच्छे क्या हों?—यह कृपानारायण जोरू का ज़मादार चैन लेने दे तब न!—सुना है आपने? कैलेण्डर का दसवां पत्ता फाड़कर भी पैदा की छोकरी! और देखो उधर राधावल्लभ बाबू को। छप्पन बरस की धूप-बरसात खाकर भी बसन्ती जवान बने हुए हैं! बुढ़ापे में और एक बेटे के बाप बन गए हैं।'

उस कोने में बैठे राधावल्लभ बाबू की ओर जैसे ही नज़र उठाई तो उन्होंने मुंह ऊंचा करके तमाकू के थूक को जीभ के नीचे दबाते हुए कहा, 'नमस्ते माई लार्ड!' और आगे के सम्भाषण के लिए उठकर बाहर चले गए ताकि वाक्यंत्र को पीक-मुक्त कर सकें।

उनके लौटते ही मैंने खड़े होकर कहा, 'मुजरा अर्ज हो बाबू साहब, कहिए कृपा तो है न?'—बाबू राधावल्लभ एक तो बुजुर्ग, दूसरे स्थानीय सभ्यता में रंगे हुए, अतः उनके साथ 'नमस्ते'-'नमस्कार' चलाना मुझे छिछोरापन मालूम देता था।

राधावल्लभ बाबू ने मुझे कंधे से पकड़कर पुनः अपनी कुर्सी पर बिठाते हुए कहा, 'अरे माई लार्ड, आप तो नम्रता की हद कर रहे हैं! उमर में छोटे हो तो क्या हुआ, पद में तो ऊपर हो!—हमें आप शर्माते हैं।'

'यह कैसे हो सकता है बाबू साहिब, पद का सम्बन्ध तो घट-बढ़

सकता है, पर उमर का सम्बन्ध तो शाश्वत है, बल्कि आपका आशीर्वाद हो तो पद तो और भी बढ़ सकता है।'

'जीते रहो माई लार्ड ! और खूब फलो-फूलो !—' फिर कमल की ओर देखकर कहा, 'देखा छोकरे ! बड़प्पन इसे कहते हैं ! पढ़े-लिखे तो कौड़ी के तीन क्लॉक टॉवर के नीचे मिल जाते हैं, मगर असलियत तो तलाश करने पर ही मिलती है !'

'और क्या हाल-चाल हैं बाबू साहिब ?'

'हाल-चाल क्या हैं भाई !—राज है इन उठाइगीरों का, अंधेरगर्दी है। सैंया भए कोतवाल, अब डर काहे का। कोई पूछने वाला नहीं। अपना क्या ? एकाध साल का एक्स्टेन्शन (विस्तार) मिल जाता, वह नहीं मिलेगा। हर-भजन करेंगे। पर इन लोगों ने कुछ करने में कसर नहीं रखी।'

नानकचन्द ने चुटकी ली, 'बाबूजी, आपका गुस्सा जिसपर है, वह तो बेचारा यहां था भी नहीं।'

'कौन वह जोरू का गुलाम ?—अरे वह नहीं तो क्या हुआ—उनकी जोरू के गुलाम भी तो हैं न !'

इशारा किधर था यह छिपा न रहा।

नानक ने कहा, 'कमल ?'

'क्या ?'

'जवाब क्यों नहीं देता ?'

'मैं क्यों दूं ?'

'चोर की दाढ़ी में तिनका !—देखना है, अमानत में खयानत करके कब तक बचे रहता है ?—कब तक आ रहे हैं तेरे आका ?'

'क्या पता ? अभी तो बेचारा बम्बई गया हुआ है।"

राधावल्लभ ने कहा, 'बम्बई क्यों ?'

'तबियत अधिक खराब हो गई बताते हैं।'

'तो तुम्हारे तो पौ बारह हैं !' नानकचन्द ने उसकी पीठ ठोंकी।

'देखो नानकचन्द, तुम बेकार बातें मत करो ! जानते भी हो कुछ, या यों ही बेलगाम हांके जा रहे हो ?'

'जानना क्या है, बता क्यों नहीं देते ?'

'उनकी बीवी भी यहां नहीं है ।...'

'कहां चली गई ?' नानक ने पूछा ।

'अरे यार, जोशी तभी आजकल खोया-खोया-सा दिखाई देता है ।' कृपानारायण बोला ।

'जाएगी कहां ?—अपने पति के पास ।' कमल ने उत्तर दिया ।

'तोड़ दिया न दिल तुम लोगों ने ?' राधावल्लभ बाबू बोले 'बड़े बाबू ने कुछ सहारा नहीं दिया ?—अरे हमीं से कहा होता !' और उन्होंने गढ़ों में धंसे गालों पर से दाढ़ी तक हाथ फिराकर ताम्र-रस-रंजित पीले दांतों को फैला दिया ।

नानक ने कहा, 'और यह भी तो बेचारा के० एन० जोशी है !—रस्सा तुड़ा रहा है, इसीकी थोड़ी पैरवी कर दी होती तो एक पन्थ दो काज होते ! उस सिन्धी लड़की की खैर रह जाती !'

मैंने कृपानारायण से मुस्कराकर पूछा, 'हा रे जोशी, तू कुछ इस बारे में कहना चाहता था न ।'

राधावल्लभ ने कहा, 'कहे क्या ?—मुर्गी कुड़क हो गई बेचारी की । सिन्धियों ने वह ताव दिखाया कि सिट्टी गुम हो गई मियां की । कितने खर्च हुए रे ?'

कृपानारायण ने कहा, 'यार बाबूजी, पूछो मत कुछ । उसमें तो बुरी तरह फंसा था । सालभर का किराया तो खोया ही, ऊपर से पांच सौ के नीचे आ गया, तब जाकर पीछा छोड़ा ।'

मैंने पूछा, 'बात क्या हो गई थी ?'

कृपानारायण एकदम मानो अपने भूत में खो गया, 'बस माई लार्ड !—जान बची लाखों पाए, यही समझो !'

'पहेलियां ही बुझाता रहेगा या कुछ कहेगा भी ?'

नानकचन्द ने जवाब दिया, 'होगा क्या, हज़रत की इश्कबाज़ी का पता लग गया उस लड़की की मां को। बस, सारे मुहल्ले के सिन्धी उबल पड़े। यह तो खैर हुई कि रुपयों ने बात पर पानी डाल दिया! क्यों, अब कहां रहते हैं वे ?'

कृपानारायण ने मानो प्रश्न नहीं सुना, उसने नानकचन्द से कहा, 'गए हफ्ते उस लड़की से शाम को मुलाकात हुई थी।'

'अच्छा ?—मुलाकात कैसे हुई ?'

'दफ्तर में उस दिन सात बज गए थे। थक इतना गया था कि साइकल पर चढ़ने की बनिस्बत पैदल जाना ही भला मालूम दे रहा था। देखता क्या हूं कि नारी-शाला से आप चली आ रही हैं।'

'नारी-शाला ?'

'वही है न, जहां शरणार्थी महिलाओं को कताई, बुनाई, कशीदाकारी आदि के कार्य जुटाए जाते हैं, ताकि उनका भरण-पोषण हो सके।—वह भी वहां जाने लग गई है।'

'अच्छा फिर ?'

'बोली कि उसे बड़ा अफसोस है। बेचारी कुछ कर नहीं सकी। उसने मां को बहुत समझाया पर वह एक ही खब्बीस है, क्यों मानने लगी ?'

मैंने घड़ी की तरफ देखा। दो बज रहे थे, साहब लोगों के लंच से लौटने का समय हो रहा था। मैंने कहा, 'बड़े बाबू शायद आने वाले होंगे।'

राधावल्लभ ने अपनी बैठक की ओर पैर बढ़ाते हुए कहा, 'बड़े बाबू नहीं भाई, छोटे साहब कहो उन्हें! आजकल पारा ज़रा चढ़ाव पर है! खिसियानी बिल्ली चूहे पर जो रौब गांठती है न! काम अपने से होता नहीं, मुश्किल में जान दूसरों की।'

मैंने नानकचन्द से पूछा, 'क्या मतलब है इसका ?'

'मतलब क्या है, एकीकरण की वजह से दफ्तर को समेटने का आदेश

जो मिला है, सो सब काम क्लर्कों पर ! बेचारे पहले ही तो बोझ से लदे हैं, और ऊपर से यह और बोझ । आदमी बढ़ा नहीं सकते । अब तो हर काम के लिए स्वीकृति प्रेसिडेण्ट की लेनी पड़ती है । और काम है कि द्रौपदी का चीर बना हुआ है !'

मैंने हंसकर कहा, 'अफसर बन गए हैं कृष्ण !—क्लर्क बेचारे दुःशासन होकर भी कहां तक मदद कर सकते हैं !'

कृपानारायण ने कहा, 'बिल्कुल ठीक कह रहे हो माइ लार्ड ! अफसरों को तो सिर्फ हुकुम देना आता है ! और समझता कौन है यहां ?—रेलवे बोर्ड से नित्य नये-नये आर्डर्स आते हैं, ये अंक मांगते हैं, वह सूचना मांगते हैं, डेली रिपोर्ट अलग भेजनी पड़ती है । और वे मांगते क्या हैं हम भेजते क्या हैं; लताड़ जब आती है ऊपर से तो गुस्सा निकलता है निरीह क्लर्कों पर !'

नानकचन्द ने कहा, 'बस हुकुम मिल जाता है, सब काम छोड़ दो, यह स्टेटमेंट बनाओ । किसी तरह स्टेटमेंट बना, तो पूछा, अपना औसत काम क्यों नहीं हुआ ?'

कमल ने कहा, 'और स्टेटमेंट भी पूरा कहां होता है ?—इस तरह नहीं जमा, उस तरह करो । बस उनको कहने में दो मिनट नहीं लगते, यहां दो दिन तक खाना-पीना-नींद हराम !'

नानक ने कहा, 'और क्यों (सीनियर) जोशी, तू कैसे चरका देता है ?'

कृपानारायण ने उसी तरह साफा-मण्डित सारे चेहरे को गोल चक्कर में घुमाते हुए कहा, 'बस यार, पूछे मत ! वह राज है, सबको बता दिया जाए तो मजा ही क्या रह जाए ?'

कमल ने कहा, 'रहने दे, रहने दे । राज-वाज हम भी जानते हैं ।'

मैंने पूछा, 'क्या करते हो जोशी ?'

कृपानारायण बोला, 'करता क्या हूं माई लार्ड ! बस इन बेवकूफों की बेवकूफी का फायदा उठाता हूं । काम में तो हैं सब गोल । भगवान जाने ये

तमाम के तमाम अफसर बन कैसे गए ? साहब ने कहा, स्टेटमेंट बनाओ, बस पांच मिनट में स्टेटमेंट तैयार है।—अगर कहीं पूछ लें यह अंक कहां से आए, तो बस, ले जाकर पटक दो एक दर्जन ये मोटे-मोटे रजिस्टर। बस फिर उनकी शकल देखकर ही उन्हें कहना पड़ता है—एक बार और जांच लेना जोशी, भेजने के पहले यू एपीअर टु बी क्वाइट स्मार्ट—तुम काफी चतुर हो।—और बस, एक सेकण्ड में दस्तखत हो जाते हैं।'

नानकचन्द ने कहा, 'और कभी अगर ऊपर वाले ने पूछ लिया ?'

'अरे वहां कौन पूछता है ? जो तुमने कह दिया सो लकीर ! जहां सौ दफ्तरों से बड़ी-बड़ी अंकों की तालिकाएं आती हैं, वहां एक तुम्हारे छोटे-से दफ्तर के फिगर्स की जांच होगी।'

एक बात याद पड़ गई। दक्षिण अफ्रीका के प्रमुख को संसद में किसी सूचना के सम्बन्ध में कुछ फिगर्स देने थे। अपने सेक्रेटरी को बुलाकर हुकम दिया कि कल की बैठक के लिए मुझे अमुक सूचना तमाम अंकों सहित आज शाम के पहले ही मिल जानी चाहिए। घबराया सेक्रेटरी, बोला, 'सर, यह तमाम सूचना संग्रह करने में तो १० माह लग जाएंगे। प्रमुख ने क्रुद्ध होकर सेक्रेटरी को लौटा दिया। दूसरे दिन प्रमुख ने सभा में आवश्यक सूचना समस्त अंकों के साथ उपस्थित कर दी। सेक्रेटरी भी मौजूद था। बड़ा डरा, सचमुच ही उसे उस समस्त सूचना को संग्रह करने में दस माह से कम न लगते। डरते-डरते पहुंचा प्रमुख महोदय के पास, और बोला, 'सर, आपने यह सारी सूचना इतनी शीघ्र कैसे संग्रह कर ली ? सचमुच मुझे दस माह से कम न लगते। देखता हूं कि मैं एकदम से इस पोस्ट के लिए अयोग्य हूं।'

प्रमुख ने हंसकर कहा, 'डरो मत। मैं तुम्हारी बात का विश्वास करता हूं। मैंने जो रुपये, आने, पाई तक सूचना दी है वह एकदम अलल-टप्पू है।'

'लेकिन अगर वे इस सूचना को चुनौती दें।'

'देने दो ! यदि सच्ची सूचना संग्रह करने में दस माह लगते हैं, तो

अन्य किसी सूचना को असत्य साबित करने में पन्द्रह मास से कम नहीं लगेंगे।' और तब तक कौन प्रमुख रहता है, और कौन सेक्रेटरी? दफ्तर तो समेटने के आदेश मिल ही गए हैं।'

ढाई बजने आ रहे थे। मैंने कहा, 'ढाई बज गए। आज क्या बात है? कोई अफसर ही नहीं टपक रहा?'

नानक ने कहा, 'टपककर भी अफसर करेंगे क्या? उनके कमरे में तो मारने को मक्खियां भी नहीं हैं। एक मजमा तो जूनियर अफसरों का आजकल लगता है सहायक इंजीनियर के कमरे में। उनको अपनी ही प्रस्थापना की फिकर जो पड़ी हुई है।'

'असिस्टैण्ट इंजीनियर के कमरे में! अरे वह मूंजी चाय तक के लिए तो दूसरों के कमरे में लपक जाता था।' मैंने कहा।

'आजकल बाज़ार ज़रा मन्दा है! नया काम तो कोई शुरू हो नहीं सकता। ठेकेदार अब पीछे नहीं लगे रहते। और नियुक्ति बेचारे की थी अस्थायी। अब तो, सुनते हैं, वह अपना शिल्प जूनियर अफसरों का एक संघ बनाने में खर्च कर रहा है।'

कृपानारायण ने कहा, 'चाय तब भी वह अपने पैसों की नहीं पिलाता होगा।'

'क्यों? इस समय तो गरज ही उसकी है।'

'हो ले, पर वह इंजीनियर ही क्या, जो चाय अपने घर की पिए।'

जूनियर जोशी ने कहा, 'चाय तो आती है सहायक ट्राफिक अफसर के यहां से! किन्तु कमरा तो उसीका बड़ा है न?'

असिस्टैण्ट इंजीनियर से, आशा है, आप पहले मिल चुके हैं। इन्हें काम तो कभी अधिक न था। काम के पीछे वे थे भी नहीं पर फुरसत उन्हें सचमुच ही बिलकुल न थी। काम कराने वाले ठेकेदार सदैव ही उनके पीछे लगे रहते थे। इसके अलावा अस्थायी होते हुए भी, सभी को खयाल था कि उनके श्रीचरण काफी दृढ़ हैं। उन्होंने पैर रखे भी ठोस जमीन पर ही थे। महा व्यवस्थापक का जब निज का बंगला बना था,

तब इनकी देख-रेख ही नहीं, सूझ-बूझ का भी पर्याप्त लाभ उसे मिला था।

सहायक ट्राफिक अफसर एक भला नवयुवक था। अपना शिक्षण अभी ही समाप्त कर नियुक्त हुआ था। कागजों का ढेर इसकी टेबल पर भी लग जाता था, किन्तु विलक्षण फुर्ती से काम को निपटा देना उसका एक सहज गुण था। हां, सिगरेट तथा चाय उसके कमरे में सदैव ही धुआं छोड़ती देखी जा सकती थीं। उनके आसन के बारे में लोगों को शंका थी। नये अफसर और सभी कोई देखता था कि उन्हें फुरसत का अभाव नहीं है। ऐसे अफसरों को लम्बी फुरसत मिलते देर नहीं लगती। पर यह हजरत किसीकी मानो चिन्ता ही नहीं करते थे। अपने छोटे-से कमरे में, जो आता उसे चाय और सिगरेट पिलाकर मीठी बातों से मोह लेते थे। लोकप्रिय हो चले थे, इसलिए कुछ लोगों का उनपर जलन होना स्वाभाविक ही था। वे लंच खाने अपने बंगले ही जाते थे। कुछ समय तक मेरे सहयोगी भी रह चुके थे, किन्तु अभी तक लौटे न थे।

मैंने कहा, 'तो जोशी, जरा सहायक इंजीनियर साहब से ही मिल आऊं। देखूं कुछ काम की बात ही मिल जाए।'

तभी नानकचन्द ने मेरे हाथ पर हाथ रखा, उसकी दृष्टि का अनुसरण करके देखा कि राधावल्लभ की टेबल के पास एक बाहर के सज्जन खड़े हुए हैं। उसने फिर आंख का इशारा किया और अपनी सीट पर जा बैठा! तब तक कमलनयन भी अपनी सीट पर जा चुका था।

मैंने जोशी से कहा, 'मैं नानकचन्द के इशारे का मतलब नहीं समझा!'

'अरे यार माई लार्ड, नहीं समझे, तभी तक भला है! अब पुराने जमाने क्या लद गए, लोगों का पुराना दिल भी लद गया। यह कोई रिजर्वेशन का उम्मीदवार दीखता है। यह फाइल लो, और इसमें आंखें गड़ाकर कान उस ओर खड़े कर दो। सब कुछ यहां से सुनाई देगा।'

कुतूहल बढ़ा। सहायक इंजीनियर को भूलकर जोशी की आज्ञाओं का पालन किया।

ग्राहक कह रहा था, 'बाबू साहब, बाल-बच्चे साथ हैं, पूरे कम्पार्टमेंट के बिना काम नहीं चलेगा।'

राधावल्लभ, 'नीचे के दो बर्थ (शायिकाएं) तो रिजर्व हो चुके हैं। ऊपर के दो बर्थ ले लीजिए, वे भी यों तो प्रोवीजनली रिजर्व हो चुके हैं, परन्तु....'

'बाबू साहब, आप निश्चित रहिए, आपको खुश रखा जाएगा।'

'सो तो ठीक है सेठ साहब, इसलिए तो ये दो ऊपर की बर्थ मैं आपके नाम किए देता हूं। शेष को आप गाड़ी के दूसरे सामान्य डिब्बे में बिठा दीजिए।'

'किन्तु, देखिए, मैं तो खैर ऊपर की बर्थ पर चढ़ लूंगा, किन्तु मेरे बूढ़े पिता और महिलाएं तो ऊपर नहीं चढ़ सकतीं। फिर सामान्य डिब्बे में तो आधी रात को गाड़ी बदलना पड़ेगा।'

'यदि सीधे डिब्बे में जगह न हो तो क्या किया जाए? दस रोज तक और कोई खाली जगह ही नहीं है। दस दिन के बाद का आरक्षण करा लीजिए।'

'लेकिन मुझे तो परसों बम्बई पहुंचना आवश्यक है।'

'तो क्या करें? बताइए! मेरे कन्धे पर चढ़कर तो जा नहीं सकते। यों भी चार कन्धों की जरूरत होती है।' मुझे हंसी आ गई।

ग्राहक ने गिड़गिड़ाकर कहा, 'क्या किसी भी तरह कोई काम नहीं हो सकता? यदि आप कहें तो मैं बड़े ऊपरी अधिकारी से मिलूं।'

'यदि आप समझते हों कि बड़े अफसर के कन्धे इतने मजबूत हैं तो ज़रूर जाइए! पर यह ध्यान रखिएगा कि इस रजिस्टर के लिखे को तो वे भी नहीं काट सकते। और फिर उनके सामने जाने पर ये जो दो ऊपर के बर्थ आपको दे रहा हूं, इन्हें भी रद्द समझिए। शौक से आप जा सकते हैं।'

कनखियों से देखा कि इसके बाद ही उन्होंने नाक पर अपने चश्मे को ठीक किया तथा, जेब से डिबिया निकालकर हथेली पर तम्बाकू उंड़ेल ली। सेठ साहब क्या करें, क्या न करें की हालत में मायूसी भरा चेहरा लिए इधर-उधर ताक रहे थे।

बाबू राधावल्लभ ने अपने सहायक से कहा, 'वह वेटिंग लिस्ट देना तो ?'

सहायक ने जब वह कागज पकड़ा दिया, तो ग्राहक से बोले, 'देखते हैं यह लिस्ट ? इतने व्यक्ति उम्मीदवारों की कतार में खड़े हैं।' फिर एक व्यक्ति के नाम के स्थान पर अंगुली रखकर कहा, 'यह आदमी एक बर्थ के दस रुपये दे रहा है ! समझे आप ?' फिर सहायक की ओर मुख फेरकर बोले, 'इस व्यक्ति के नाम ये दोनों ऊपर के बर्थ लिख दो !'

और इसके बाद ही जूते निकालकर अपने दोनों पैरों को उठा उन्होंने कुर्सी पर ही रख लिया, तथा निहायत इतमीनान से तम्बाकू और चूना, एक प्राण करने लगे। बेचारा उम्मीदवार देखने लगा कि हथेली पर तम्बाकू की जगह सरसों किस तरह जम सकती है।

आखिर जब सहायक ये रजिस्टर उठा लिया, तो मुंह तक जाती हुई हथेली को रोककर उन्होंने कहा, 'देख लीजिए, एक दफा इस रजिस्टर पर नाम लिखा गया, कि फिर ब्रह्मा भी इसमें हेर-फेर नहीं कर सकेगा। आखिरी बार···, और फिर उन्होंने तम्बाकू मुख-निगर्त्त में निपतित करके समाधि साध ली।

'जरा ठहरिए !' सहायक को यह आदेश देकर ग्राहक ने राधावल्लभ बाबू से कहा, 'देखिए, अगर चार बर्थ का पूना कम्पार्टमेंट मुझे दे दें तो····' और मैंने कनखियों से देखा कि उसने कुछ नोट बाबू साहिब के सामने टेबल पर कुछ इस तरह दिखाए कि उनके सिवा कोई देख न सके।

'कितने हैं ?'—राधावल्लभ थूथनी को ऊपर उठाकर कहा, पीक के कुछ बारीक कण हवा में उड़े, यह सामने खड़े अतिथि की भाव-भंगी से प्रकट हो गया ! पर गरज बड़ी शैतान है, सब कुछ करा लेती है !

उसने कहा, 'चार'

'अच्छा, क्या करें ?—आप लोग तो इस तरह रस्सी तुड़ाकर पीछे पड़ जाते हैं।' फिर सहायक की ओर मुड़कर बोले—'दे दो चारों बर्थ इनको, और स्टेशन मास्टर को तार लिख दो।'

मैंने जोशी से कहा, 'यह इस दफ्तर में कब से चलने लगा ?'

'कब से ?—अरे रोज़ की बात है ! मोहनलाल तो दिन-दहाड़े डाका डालता है, जैसे डॉक्टरों की फीस बंधी हुई है न, उसी तरह !'

'और ये अधिकारी गण ?'

'पुराने तो, मेरा ख्याल है, अभी पाक-साफ हैं, लेकिन इन बाहर से आए हुओं की बात मत पूछो माई लार्ड ! वह जो नया स्टेशनों का लेखा-निरीक्षक आया है न—हां, माथुर—सुनते हैं, स्टेशन-मास्टरों से उसने महीना बांध लिया है। यही नहीं, घी-तेल, लकड़ी सब वहीं से आते हैं। बेचारे फिर स्टेशन वाले क्या करें। तेल तो तिलों से ही निकलता है।'

'क्या गुप-चुप चल रही है माई लार्ड !' कहते हुए पुनः राधावल्लभ ने मेरे कन्धे पर हाथ रखा। मैं चौक उठा ! बोले, 'घबराओ नहीं।—तुम्हारे लिए बनी हुई तम्बाकू की कुर्बानी कर दी है। फिर बना लूंगा, तुम क्या रोज-रोज आते हो भाई ?'

मैं आश्वस्त हुआ। उनकी जबान की छींटाकशी से अधिक डरना चाहिए, या मुंह की छींटाकशी से, यह कोई नहीं कह सकता। पर जब दोनों ही का भय उपस्थित हो जाए तो भगवान ही रक्षक होता है। इस समय अब केवल जबान की छींटाकशी ही का डर रह गया था।

जोशी ने कहा, 'बाबू जी, मुर्गी कुड़क तो नहीं हो गई ?'

'कुड़क हो तेरी। चालीस लिए हैं।'

'चालीस ?—खूब मोटा हाथ मारा यार !'

'मोटा क्या जोशी ! दो-चार महीने रह गए हैं। वह भी कोई काम करने दे या नहीं, कह नहीं सकता। माई लार्ड का जमाना तो कड़की का था। भला हो बेवकूफों का, कि कुछ सांस तो ले लेते हैं। उधर मोहन-

लाल को देखा नहीं ?—मालगाड़ी के डिब्बों में माल के बोरे भरकर ही लोग सौ-पचास बिना मुश्किल के दे जाते हैं, जैसे उनका बाप ही लगता हो। मैं सेकण्ड क्लास में गद्देदार बैठकों पर इन लोगों को ऐसे आराम से बिठाता हूं, कि जिसे अनिद्रा का रोग हो, वह भी मीठी नींद सो जाए।'

'पर चालीस तो काफी मोटी रकम है। हमारी ग्रेड वालों की १५ दिन की तनख्वाह—रोज आठ घंटे कलम-घिसाई करें तब।'

'चालीस तो क्या मुझे अकेले ही को मिलेंगे ?—मेरा बाबू, स्टेशन-मास्टर, वहां का टिकट-कलेक्टर, रिजर्वेशन-क्लर्क—सभी तो हैं!—और कभी-कदाक फंसती है ऐसी मुर्गी तो।' फिर मेरी पीठ पर हाथ रख-कर बोले, 'माई लार्ड ! आपको तो बुरा लगा ही होगा। आप पढ़े-लिखे धर्मात्मा जीव ठहरे। आपको तो बहुत कुछ करने का हौसला है। मगर हमारी तो नाव किनारे लग गई। तीन धींगरी छोकरियों के हाथ पीले करने हैं। एक लड़का इस साल फिर मैट्रिक में फेल हो गया। और बाल सफेद हो गए, सरकारी तौर पर बूढ़े करार दे दिए गए, लेकिन परमात्मा है कि मज़ाक करना नहीं छोड़ता। भला बताओ, इस उमर में अब संतान पाकर कोई क्या करेगा ?—ज़माने को अभी तक देखा नहीं था, किस्मत ने यह मर्जर (विलयन) का मर्ज लगाकर वह भी दिखा दिया। गई बार छुट्टियों में नियुक्ति-विभाग के हेड क्लर्क से मिला था, बोला कि सेवा में एक साल का विस्तार पाना हो तो दो सौ रुपये खर्च करने पड़ेंगे। डॉक्टर का प्रमाण-पत्र लाना हो तो दस रुपये, झूठा प्रमाण-पत्र पचीस रुपये, और यदि सेवा-काल में विस्तार के लिए उमर का झूठा प्रमाण-पत्र लेना हो तो सौ रुपये। लड़का यदि मैट्रिक पास हो गया तो नई नियुक्ति के लिए ढाई सौ रुपये !—अब भला बताओ माई लार्ड !—इस धकम-पेल में यदि तुम भी धक्का-मुक्की न करो तो क्या भीड़ तुम्हें अपने पैरों पर खड़े रहने देगी, कुचले नहीं जाओगे तुम ?'

जोशी ने मुस्कराकर कहा, 'इसलिए हम भी धक्का देकर आगे बढ़ते जाएं ?'

'और नहीं तो क्या ?'

—और मैं सोचने लगा कि इस बेचारे निरीह क्लर्क ही को क्या दोष दिया जाए, यह तो सम्पूर्णतः विषचक्र की एक चापमात्र है ! सचमुच यह एक धकम-पेल है, पीछे से धक्का आता है, इच्छा न रहने पर भी आगे धक्का दिए बिना निस्तार नहीं है !

जोशी कहने लगा, 'अच्छा बाबू जी, जिस आदमी की जगह इसे आपने रिजर्वेशन दिया है, उसका क्या होगा ?'

'वह आदमी तो बना लिया गया था छाया के रूप में, खाली रजिस्टर में नाम लिखने के लिए ! अंग्रेजी में कहते हो न घोस्ट—राशनिंग की दुनियां में घोस्ट कार्ड नाम नहीं सुना ?'

'और अगर वह अफसर के पास पहुंच जाता ?'

'तो रजिस्टर तो खाली था नहीं। उसमें किसीका नाम तो दर्ज था ही ! अफसर क्या करता ? यह कहने से तो रहा कि उसका नाम काटकर इनको दे दो।'

तीन बजकर बीस मिनट हो चुके थे। तभी महा व्यवस्थापक का चपरासी दिखाई दिया। मैंने उठकर कहा :

'ज़रा रेगिस्तान की हवा खा आऊं। यदि तब भी सांस चलती रही तो मिलूंगा।'

और मैं बाहर हो लिया।

११

बम्बई नगर के टी० बी० अस्पताल के एक जनरल वार्ड में श्री नटनागर को एक पलंग पर लेटे हुए देखकर सहानुभूति तो होती ही है, दया भी कम नहीं आती। लगभग दो माह होने को आए, अभी तक उनकी अवस्था में इतना सुधार नहीं हुआ कि ऑपरेशन किया जा सके। उनके फेफड़ों में पानी भर गया था। फेफड़े दोनों ही काफी खराब हो गए थे। एक फेफड़े की अवस्था अधिक खराब थी। ख्याल था कि पानी निकाल देने के बाद भी शायद इस फेफड़े को निकाल डालना पड़ेगा। दूसरे फेफड़े में भी कुछ छेद होने का अनुमान था। विशेषज्ञ डॉक्टर की राय थी कि चांदी की चन्द गोलियां डालकर उसे उपयोग योग्य बनाया जा सकेगा। सचमुच क्या करना होगा, यह तो ऑपरेशन के बाद ही निर्धारित किया जाएगा। ऑपरेशन काफी गम्भीर है। इसके लिए साधारण स्वास्थ्य को एक स्तर पर पहुंचने के लिए उपचार चालू था। शरीर का भार ९० पौण्ड से भी नीचे पहुंच गया था, तापमान लगभग सदैव ही १०० और ९९ के बीच में रहता था, अब वह ९९ से ऊपर नहीं जाता, पर ९८ पर भी स्थिर नहीं रहता। वजन यदि आठ-दस पौण्ड बढ़ जाए, और तापमान ९८ पर भी स्थिर हो जाए, तो ऑपरेशन किया जा सकेगा। चिकित्सा चालू है। स्ट्रेप्टोमाइसिन के इंजेक्शन लग रहे हैं। यीस्ट पाउडर, विटेमिन्स, फल-फूल, दूध-अण्डा आदि डॉक्टरों की राय के अनुसार अनुपान भी चल रहा है। आशा है, अधिक से अधिक एक माह के भीतर ऑपरेशन की अवस्था के अनुकूल स्वास्थ्य हो जाएगा।

चिन्ता के अन्य कारण भी कम महत्व के नहीं। सबसे अधिक महत्व का है आर्थिक। नटनागर बाबू के सम्मान का एक स्टैण्डर्ड है। उस स्टैण्डर्ड के मुताबिक उन्हें अस्पताल के इस वार्ड में भी अपनी पोजीशन बनाए रखने का खयाल है। बम्बई जैसे शहर में और अस्पताल की चार दीवारी के लिए

नौकर मिलना सहज नहीं। किन्तु वार्ड-बॉय को वे इतनी रकम देना अपना कर्तव्य समझते थे, जितना कि बम्बई के इस वातावरण में अपने स्टैण्डर्ड के अनुकूल देना उनके लिए उचित था। अतः वार्ड-बॉय उनसे खुश ही था; वह उन्हें साहब कहकर सम्बोधन करता था, जिससे नटनागर साहब की आत्मा को गहरा सन्तोष और परितृप्ति अनुभव होती थी। साहब लोगों की आदत के समान ही उनकी चाय, दूध, नाश्ता, फल-फूल आदि में बैरा का ही हिस्सा अधिक रहता। तात्पर्य यह कि नौकर न होने पर भी नौकर का पूरा खर्चा उनको था ही। इधर उनका आधिकारिक अवकाश कभी का समाप्त हो चुका था, गत तीन माह से वे अर्द्ध वेतन पर रुग्णावकाश में थे। अस्पताल रेलवे का न था, किन्तु रेलवे की सिफारिश से दाखिल हो गए थे, अतः जनरल वार्ड में एक बिस्तर पा लेने का तो कोई किराया न था, किन्तु ओषधि, इंजेक्शन आदि का पैसा तो पास से देना ही पड़ता था। सम्भव है रेलवे ओषधियों की कीमत तथा ऑपरेशन के खर्चे की व्यवस्था कर दे, पर अभी तो पैसा चुकाना ही पड़ रहा है। और फिर नटनागर की साहिबी आदत ठहरी, डॉक्टर, कम्पाउण्डर, नर्स सभी को यदि विशेष रूप से खुश रखना हो तो विशेष रूप से उन सबकी पूजा भी करनी पड़ती है।

अस्त्रोपचार के बाद भी, कम से कम छः मास तक नटनागर बाबू को एक सेनेटोरियम में रहना आवश्यक था। इसी बीच में अर्द्ध वेतन की सुविधा भी कदाचित् न रहे, और सेनेटोरियम का व्यय साधारण व्यय से अधिक होगा ही, तब खर्चे की व्यवस्था कहां से होगी।

किन्तु इन सब चिन्ताओं के ऊपर जो सन्तोष है, वह है कमला का वह पत्र, जो इन्होंने तकिए के नीचे छिपा रखा है, और जिसे वे दिन में कम से कम एक बार अवश्य पढ़ लिया करते हैं। दिन भर में तीन बार ली जाने वाली ओषधि की मात्रा उतना प्रभाव नहीं उत्पन्न करती, जितना वह पत्र करता है। यों, प्रेरणा पाने पर एक बार से अधिक भी उस पत्र का वे पारायण कर लेते हैं। यहां इस अस्पताल में आने के बाद ही उन्हें

वह पत्र घर से रि-डाइरेक्ट होकर मिला था। अपनी बीमारी का संकेत देकर बम्बई आने की सम्भावना पर जो पत्र घर से उन्होंने कमला को लिखा था, उसीका यह उत्तर है। प्रेम, स्फूर्ति और आशा से भरा हुआ यह पत्र निश्चय ही उनकी प्रस्तावित पुस्तक 'कमलाज़ लव लेटर्स' में स्थान पाने योग्य है।

पति की बीमारी का सम्वाद पाकर कमला इतनी उद्विग्न हो उठी है कि संक्रमण की आशंका से अपने स्वास्थ्य को खतरे में न डालने के पति के समस्त उपदेशों की तनिक भी चिन्ता न करके, वह इसी सप्ताह नटनागर की सेवा के लिए अपनी ससुराल पहुंच रही है। यद्यपि इस पत्र के बाद उन्हें दूसरा कोई पत्र कमला से नहीं मिला, किन्तु कोई पत्र न मिलना ही इस बात का प्रमाण है, कि कमला नटनागर को घर पर ही समझकर वहां पहुंच गई है। कमला और सास में अधिक बनती नहीं, यह नटनागर जानते हैं, तभी तो कमला के त्याग की महिमा उनकी दृष्टि में इतनी ऊंची उठ सकी है। अवश्य ही घर से पत्र लिखने का सुयोग कमला को एकाएक नहीं मिल सकता। पति के लिए कमला की कल्याण-कामना नटनागर की संतोष और सुख की थाती है।

पर, यह है केवल आत्मप्रसाद की भावना! गर्व की भावना को दृढ़तर करने के जो सम्वाद हैं, वे ये हैं कि कमला प्रथम श्रेणी में मैट्रिक में उत्तीर्ण हो गई हैं। प्राइवेट कैण्डिडेट, और प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होने का सौभाग्य और किसीको नहीं केवल उन्हींकी पत्नी को मिला है, क्या यह गर्व करने की बात नहीं? और इस सम्वाद को वार्ड की जितनी भी नर्सें हैं, सब एकाधिक बार कई रूप से नटनागर से सुन चुकी हैं और जानती हैं कि कई बार उन्हें और भी इस सम्बाद को सुनना होगा। किन्तु नटनागर को खुश रखने में उनका लाभ है, इसलिए हर बार वे मि० नटनागर को कांग्रेचुलेशन देने से थकतीं नहीं। यद्यपि अपने पत्र में कमला ने अपनी उपलब्धि का पर्याप्त श्रेय कमल की शिक्षा-पद्धति को दिया है, किन्बु नटनागर कमल को विशेष महत्व नहीं देते। पहले

तो यों कि कमल के निर्माण में वे अपना भी हाथ समझते हैं, अतः कमला के लिए कमल का परिश्रम उनका प्राप्य ही है; दूसरे जब तक शिक्षार्थी का मन ग्रहणशील न हो तो अध्यापक, उसका परिश्रम और उसकी पद्धति कर ही क्या सकती है ?

इसके अलावा कमला ने लिखा है कि उसकी इच्छा रेलवे की कन्या-पाठशाला में ही अध्यापिका बनने की है। इससे जहां आर्थिक सुविधा होगी, वहां उसका मानसिक धरातल भी ऊंचा उठ सकेगा। श्री धर्मप्रकाश ने कमल बाबू के द्वारा संकेत दिया था कि यदि वह अध्यापिका बनना चाहे तो वहां से उनके स्थानान्तर के पूर्व वे इसकी व्यवस्था कर देंगे। नटनागर की स्वीकृति की आशा में कमला ने प्रार्थनापत्र भी दे दिया है।—सो अच्छा ही है; पगली ! नटनागर स्वीकृति न देंगे ?—इससे बढ़कर खुशी की बात उनके लिए हो ही क्या सकती है ?—सरलता से वह आगे भी पढ़ सकती है, एफ० ए०, बी० ए०, क्या हुआ स्वयं यदि नटनागर बी० ए० न हों। उनका अंग्रेज़ी का नौलेज, अच्छे-अच्छे बी० ए० पास लिख तो लें उनके बराबर अंग्रेज़ी ! और फिर आर्थिक सुविधा ! —जो तनख्वाह नटनागर को मिलती थी, उसमें गृहस्थी का गुजारा कहां ठीक तरह चल पाता था। यद्यपि आगे उन्हें तरक्की की काफी आशा है, एक न एक दिन वे छोटे-मोटे अफसर बनकर ही रहेंगे—अभी तो उनके कार्यकाल का प्रारम्भ ही है—किन्तु फिर भी कमला का इण्डिपेण्डेण्ट स्टेटस (स्वतंत्र-सम्मान) उनके स्वयं के स्टेटस को अवश्य ऊंचा उठाएगा।

आफिस के भी वहां से उठ जाने के निश्चय की खबर कमला ने दी थी। कुछ अफसर चले गए थे, स्टोर्स भी शायद अब तक चला गया होगा। धर्मप्रकाश के किसी डिविजन आफिस में जाने की बात थी, पता नहीं, अभी तक वहीं है या चला गया। उसके वहां रहने से कमला की सर्विस सम्बन्धी कार्यवाही में सहायता मिलती। यों नटनागर ने धर्मप्रकाश के लिए भी कुछ कम नहीं किया है। किस प्रकार कागजों को रातों रात बदल कर उन्होंने धर्मप्रकाश को महा व्यवस्थापक के कोप से बचाया था।

उनकी सहायता के बिना शायद धर्मप्रकाश रास्ते की धूल फांकते होते। अब ज़रूर उनका सितारा बुलन्द हो गया है, तो क्या वे प्रकाश पाने के हकदार भी नहीं ? कितना अच्छा होता यदि वे इस समय वहां होते !— इस भाग-दौड़ में खुद अपने लिए कुछ छीन-झपट लेना उनके लिए असंभव नहीं होता। कम से कम अपनी सर्विस फाइल में अपनी शिक्षा के विषय में तो वे पुराने इन्द्राज बदलकर ग्रेजुएट लिख ही सकते थे, ताकि भविष्य में उन्नति के रास्ते में उपाधि का रोड़ा तो न रहता। और सच-झूठ का पता लगाने ही कौन बैठता है ! किन्तु, भाग्य की मार को कोई क्या करे।

इस प्रकार कई दिन पूर्व आए कमला के पत्र का मानसिक पारायण कर चुकने के बाद नटनागर ने अनजाने ही तकिए के नीचे हाथ सरकाया और हल्के नीले रंग का लिफाफा बाहर खींच निकाला। लिफाफे पर कमला के हाथों उनका लिखा हुआ नाम वे गौर से पढ़ने लगे। अंग्रेज़ी में लिखा था 'श्री एन्० एन्० एन्० अटनागर'—ना, यह उपयुक्त नहीं है। 'श्री' की प्रशस्ति अत्यन्त सामान्य प्रशस्ति है, इससे किसीकी शिक्षा, संस्कृति और अवस्था पर पर्याप्त प्रकाश नहीं पड़ता। कमला को समझाना होगा कि वह भविष्य में लिखा करे 'एन्० एन्० एन्० अटनागर एस्क्वायर' यदि 'मिस्टर एन्० एन्० एन्० अटनागर' लिखा होता तो भी इतना अधिक असंगत न होता। अक्षरों की बनावट निस्सन्देह अच्छी है, यद्यपि उनके हस्ताक्षरों के समान गोल-गोल तथा बांकी नहीं ! गोलाई और बांकापन यदि किसीके हस्ताक्षरों में हो तो इससे उसके चरित्र के बांकेपन का प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता।

नीचे का लिखा हुआ पता गांव के पोस्ट-मास्टर ने काटकर पास ही लाल स्याही में बम्बई का पता लिखा था। पोस्ट-मास्टर के हस्ताक्षर भी क्या अजीब हैं। सीधी रेखा में कुछ मोड़ और एकाध जगह गांठ, हां पहले का अक्षर पढ़ा जा सकता है। बम्बई शब्द का केवल बी, उसके बाद एक वक्र रेखा, फिर एक खड़ी रेखा, एक गांठ, और दूसरी खड़ी रेखा सतह से नीचे लटकती हुई ! क्या खूब—नटनागर को सदैव ही पोस्ट-मास्टर

के हस्ताक्षर तथा डाक्टर के किसी नुस्खे पर प्रयुक्त हस्ताक्षरों को देखकर अपार कुतूहल हुआ करता था। उनके ओठ अनायास ही १८०° की सीधा रेखा पर फैल गए।

लेटे-लेटे ही उन्होंने पत्र को अनावृत किया। दो शीटों में लिखा हुआ था। प्रारम्भ से लगाकर अन्त तक वे समग्र चित्त और ध्यान से उसे पढ़ गए। मन्द हास्य उनके चेहरे पर बराबर बना रहा। तभी सुनाई दिया :

'गुड आफ्टर नून मि० नटनागर।'

दृष्टि उठाकर नटनागर ने देखा कि आंग्ल-भारतीय नर्स मिस पेट्रीशिया ओषधि का ग्लास लिए मुस्करा रही है। उन्होंने उत्तर दिया, 'गुड आफ्टर नून सिस्टर' और मुस्कराकर बोले, 'सिस्टर, अगर तुम्हारी मुस्कान का मीठापन न हो तो इस कड़वी दवा को कोई पीना नहीं चाहेगा।'—बैठकर उन्होंने दवा का पात्र हाथ में ले लिया।

पेट्रीशिया ने हंसकर कहा, 'अनादर स्वीट लेटर फ्रॉम मिसेज अटनागर ?' (क्या श्रीमती अटनागर का दूसरा मधुर पत्र ?') और उसने शरारत भरी आंखों से नटनागर के हाथ वाली चिट्ठी की ओर देखा। —नटनागर कुछ लजा गए। एक ही पत्र को बार-बार पढ़ते रहने की चोरी उनकी कई बार पकड़ी गई है, लज्जा की बात यह है कि वह पत्र नवीन संस्करण बनकर प्रतिदिन डाक के द्वारा उन्हें क्यों नहीं मिलता ? ये लोग क्या सोचते होंगे ! क्या एक पत्र लिखकर ही जवान कमला बूढ़ी हो गई ?—उन्होंने मानो उत्तर को ओषधि के पान द्वारा पेट की गहराई में उतार दिया।

जब तक नटनागर ओषधि पीते रहे तब तक पेट्रीशिया ने उनके पलंग पर लगे हुए चार्ट को देखा, और बोली, 'आज तो आपका टेम्परेचर नार्मल हो गया दीखता है—कांग्रेचुलेशन्स।'

'थैंक्यू सिस्टर ! यह आपकी ही मेहरबानी का फल है।'

'प्रे यू रिकवर सून ! (प्रार्थना है कि आप शीघ्र स्वस्थ हो जाएं।)

—और देखिए, अब अधिक न पढ़िए। लेटकर डे-ड्रीम (दिवा-स्वप्न) में मिसेस नटनागर से बातें करने में कोई खास आवजेक्शन (आपत्ति) नहीं है।'—और वह हाथ हिलाकर आगे वाले बिस्तर पर पहुंच गई।

ब्यूटीफुल—नटनागर ने सोचा, और एक लम्बी सांस के साथ पेट्रीशिया के ऊपर से नज़रें हटा लीं। जीवन इसे कहते हैं; इस अहेतुक-मुस्कान की विश्व में क्या कोई कीमत है ?—एक छोटे सरल शिशु के अधरों पर अनायास ही फूट उठने वाली मधुर-पोपली हंसी का मूल्य क्या कोई आंक सकता है ? और फिर गुलाब की पंखुड़ियों से फूटी हुई पेट्रीशिया की मुस्कान तो बीमार व्यक्तियों के मानस पर मरहम लगाने के निमित्त है, इसकी तुलना कहां मिल सकेगी ?—नटनागर ने एक बार और आंखें चुराकर उस ओर देख लिया, फिर कमला की छवि को छत पर आंकने लगे।

तभी वार्ड के बॉय ने आकर डाक से आया हुआ एक पोस्टकार्ड उनके हाथ में थमा दिया। जिस स्वप्न को नटनागर देख रहे थे, उसे वे मिटाना नहीं चाहते थे। अतः पोस्टकार्ड को कुछ क्षणों तक उनके हाथ में अटके रहना पड़ा।

अजीब अक्षरों में किसी नौसिखिए के हाथ का लिखा हुआ पोस्टकार्ड। पोस्ट आफिस वाले भी लिखे हुए पते तक का पूरा उद्धार न कर सके, जिसका नतीजा यह हुआ कि तीन पैसे की लागत में ही कई तीर्थों की यात्रा और प्रमाणस्वरूप पोस्टल डिपार्टमेंट की तिलक-छापों से समस्त शरीर की चर्चा। लड़खड़ाते हुए अक्षर तिलक-छापों के इस जाल में और भी निर्जीव हो उठे थे। सब कुछ होने पर भी नटनागर ने देखा कि पता उन्हींके नाम का है, और अक्षरों के इस दुश्छेद्य व्यूह में उन्हें घुसने के सिवा कोई चारा नहीं है। जो कुछ नटनागर पढ़ सके, वह कुछ इस प्रकार है :

जोग पत्री लिखी शुभसुथानेक ओपमालायक श्री नन्नू बाबू को तुम्हारी मातोश्री का आसरीबाद घणे मान से। अपरंच यहां सब भला, आपकी

खुसी का समीचार श्री जी महाराज से सदा नैक चाहिजै। चिट्ठी आपकी इन दिनों नहीं सो दिरावसी। बहू यहां पर दो महीना से आई है, पग भारी है। सास बहू में एक छिन भी नहीं बनै। सारा गांव में बदनामी फैल गई है दाई का मुंह कौन पकड़े। सो इसका कुछ इन्तजाम करो। थोड़ी लिखी बहुत समझो। सोना की छुरी पेट में नहीं भोंकी जाए। पत्री का जवाब जल्दी देवो। इन्तिजार।—आदि-आदि आगे कुछ समझ में नहीं आया। छापों के पेट में समा गया।—एक जगह अस्पष्ट रूप में घूमर काकी का नाम भी पढ़ा जा सका।

पर जो कुछ पढ़ा, वह भी विशेष रूप से नटनागर की समझ में आ सका हो, सो दिखाई नहीं देता। जो कुछ स्पष्ट हो सका वह इतना ही है, जैसा कि कमला ने लिखा था—नटनागर की खोज में वह अपनी गांव की सुसराल में पहुंच गई है। सास-बहू में पहले भी कभी नहीं बनी, यह नटनागर जानते थे, इसमें भी विशेष कुछ नहीं है। सारे गांव में बदनामी किस बात की फैल गई?—समझ नहीं पड़ता। सास-बहू में लड़ाई तो हिन्दू गृहस्थी में बहुत सामान्य बात है। किस गृहस्थी में यह नहीं होता?—फिर भी बदनामी जैसा इसमें कुछ हो सो तो दिखाई नहीं देता। पर दाई का मुंह कौन पकड़े और पग भारी है का क्या मतलब?—क्या कमला का घर में पैर नहीं टिकता?—यह तो उसकी आदत नहीं:—फिर घूमर काकी के नाम का इस पत्र में उल्लेख क्यों?—यह ठीक है कि पत्र मां ने किसी अध-पढ़े देहाती से लिखाया है, किन्तु घूमर काकी कोई इनकी आत्मीय तो नहीं कि ऐसे पत्र में भी उनका उल्लेख हो ही। हो सकता है, पड़ोसिन है, शायद पत्र लिखवाते समय पास मौजूद हो! किन्तु, फिर भी जैसे मां का लिखाया यह पत्र नहीं मालूम पड़ता।

मां पुराने जमाने की ठहरी, लिखना-पढ़ना नहीं जानती। इसके ऊपर इस समय एक तरह से अंधी ही समझो। पत्र अवश्य ही बहू से छिपाकर लिखाया गया है। घर की बात ठहरी, इसलिए किसी बालक ही से लिखाया है। मां के लिखाए हुए पत्र और भी पहले नटनागर को मिले

हैं। उन्हें भी कोई बहुत अच्छी साहित्यिक भाषा में लिखा नहीं कहा जा सकता। लिखने वाले अन्य पुरुष को लिखाने वाले प्रथम पुरुष से अलग करके देखा जा सकता था, फिर भी आवरण बाहर का होते हुए भी पत्र के भीतर से मां के वात्सल्य की धारा उमड़ ही पड़ती थी। भाषा का बन्धन उसे कभी मान्य नहीं था। इस थोड़े-से लिखे को बहुत समझना तो दरकिनार रहा, इस इतने बड़े लिखे का कण भर भी उनकी समझ में नहीं आया।

पुत्र को पत्र लिखाते समय मां अपने आपको सदैव ही भूल जाती है। फिर नटनागर की मां, जिसकी दुनियां में अब 'नन्नू' के सिवा और कोई है ही नहीं। और इस समय वही नन्नू प्राणान्तक बीमारी की डोली पर सवार, उसको पत्र लिखाते समय मां को यह पूछना भी ध्यान न रहे कि वह किस तरह है ? उसकी चिकित्सा मृत्यु के द्वार से उसे कहां तक बचा पाई है ?—और बहू से लड़ाई के सामान्य कांड ही में समस्त पत्र का प्रयोजन नष्ट कर दे ? क्या सास-बहू का युद्ध इस सीमा को पहुंच गया कि मां की सामान्य मर्यादा भी उसके सामने क्षुण्ण हो उठी।

जो हो, कमला का वहां अधिक रहना अच्छा नहीं है—मां के लिए भी और स्वयं उसके लिए भी। उसे अवश्य लौट जाना चाहिए। यहां तो वह क्यों आए ? मैं ऐसी बीमारी में किसी अपने को पास बुलाकर उसके स्वास्थ्य को जोखिम में डालना क्यों चाहूंगा !—उधर यद्यपि ग्रीष्मावकाश अभी समाप्त नहीं हुआ है, फिर भी वहां पहुंचकर कमला स्कूल में सर्विस के सम्बन्ध में कुछ अधिक जागरूक हो जकेगी। नटनागर को अपने अर्थाभाव की भी अलक्ष्य में चिन्ता है। तार दे दिया जाए ? नहीं, नहीं—इस समय तार नहीं। तार का नाम सुनते ही उन लोगों की परेशानी का अनुमान किया जा सकता है; फिर इससे सारी परिस्थिति बड़ी विद्रूप हो उठेगी। तार की बात देहात में छिपी नहीं रहती, तार की जल्दी को भी मात करके वह हवा के साथ सारे गांव में फैल जाती है। यदि पहले ही सास-बहू की बात को लेकर गांव में बदनामी फैली

हुई है, तो तार उसमें चार चांद लगा देगा। इससे तो बेहतर है कमला के नाम एक पत्र लिख दिया जाए, हां, उन्हें पढ़ने-लिखने की मनाई है, किन्तु छोटा-सा पत्र लिखने में कोई खास आपत्ति न होगी। आज की डाक से चला जाए तो परसों तक वह कमला के हाथ में होगा। एकाध दिन ठहरे भी, तो भी वह इस सप्ताह के अन्त तक वह वहां पहुंच जाएगी। वहां पहुंचते ही वह पत्र लिखेगी—उसका पत्र नटनागर के लिए एक टॉनिक के समान है, यह भी उसे लिखकर बता देना होगा; और तब यह पोस्टकार्ड उसके पास भेज देना होगा, ताकि वह इसकी समस्त बातों पर प्रकाश डाल सके। इसके सिवा पत्र के समस्त मर्म को समझने का नटनागर के पास और कोई उपाय नहीं है।

संध्या के पहले-पहले नटनागर बाबू ने कमला को पत्र पोस्ट करवा दिया!—उसके बाद उन्होंने शांति की सांस ली, किन्तु पत्र का भार उनकी चेतना पर से उठा नहीं। कमला के पत्र के पास तकिए के नीचे ही वह पोस्टकार्ड भी आसीन हो गया, और अन्य रोगियों के साथ अस्पताल के स्टाफ ने भी देखा कि इस पोस्टकार्ड का पारायण भी उनके लिए एक नियमित कार्य हो गया है।

दो-एक दिन के बाद अनायास ही स्त्रियों के पैर भारी होने का तात्पर्य नटनागर को हृदयंगम हो गया, जबकि उनके पलंग के पास वाले रोगी के सम्बन्धियों में बातचीत के दौरान में उनकी गर्भवती कन्या की चर्चा चल रही थी? और एक ही क्षण में उनका हृदय बांसों उछलकर मिट्टी में गिर पड़ा जब उन्हें उसके साथ ही सारे गांव में बदनामी की बात लिखी हुई ध्यान हुई। वे पिता बनने जा रहे हैं! इस मनुष्य जीवन में पुरुष के भाग्य में जब पहले पहल पिता बनने का अवसर उपस्थित होता है, तो ज़मीन पर उसके पैर नहीं रहते, मस्तक आकाश को भेदकर कहां उठ जाना चाहता है सो समझाया नहीं जा सकता। मन नाम का पदार्थ इतना हलका होकर उड़ने लग जाता है कि शरीर की सीमाएं टुकर-टुकर देखती ही रह जाती हैं। नटनागर इसको अनुभव न करें, यह हो नहीं

सकता; बिस्तर पर पड़े-पड़े ही मन के पंखों पर सवार होकर वे जाने कहां-कहां की सैर कर आना चाहते हैं, परन्तु मानो बदनामी की वह कथा पंखों को खोलने नहीं देती। बदनामी—बदनामी किस बात की ?—और वह भी एक कमला जैसी सुशिक्षिता महिला के लिए एक फूहड़ गांव में ?

मां बनने में क्या बदनामी है ?—बाप बीमार हो तो क्या हुआ, और अस्पताल में हो तो क्या हुआ ?—मर जाने पर भी बाप तो बाप रहता ही है, अधिक से अधिक सन्तान को 'पोस्थमस' का विशेषण लग सकता है; इसमें दैव के आगे मनुष्य की विवशता हो सकती है दुर्भाग्य ही कहा जाना चाहिए इसे, पर लज्जा का इसमें ऐसा क्या है ?—और यदि लज्जा नहीं है तो बदनामी का प्रश्न कैसा ?

तो यह बदनामी इस बात की है। नटनागर ने अच्छा ही किया कि कमला को शीघ्रातिशीघ्र घर लौटे जाने की सलाह दे दी। कितनी कठिनाइयों में पड़ गई होगी बेचारी ! ऊपर से सास से अनबन। जहां उसे लाड़-प्यार और सम्मान मिलना चाहिए था, वहां उसे मिली लांछना, भर्त्सना और अपमान ! और यह सब हुआ नटनागर के लिए ! यदि नटनागर के अस्वास्थ्य के सम्वाद उसे न मिले होते, और नटनागर के लिए उसके हृदय में इतना प्यार और चिन्ता न होती, तो क्या वह गांव जाना चाहती ? नटनागर के हृदय में अपने लिए ग्लानि और कमला के लिए कृतज्ञता का भाव छा गया। उन्हें प्रसन्नता थी तो इस बात की, कि उनके पत्र के आदेशानुसार कमला अवश्य लौट गई होगी। अब यदि उनका सम्वाद आ जाए तो नटनागर को कमला के प्रति अपना समस्त प्यार, समस्त श्रद्धा, सब खुशी और उनके लिए उठाए हुए इतने दुःख के लिए उनकी कृतज्ञता अपने पत्र में वे उडेल सकें।

१२

प्रथम श्रेणी के सभी अधिकारी यहां से स्थानान्तरित हो गए थे। वास्तव में विलीनीकरण का उद्देश्य ही यह था कि छोटे-छोटे टुकड़ों के स्वतन्त्र प्रशासन का जो अत्यन्त भार है, उसे कम किया जाए। पांच रेलवे प्रणालियों को एक में मिला देने का तात्पर्य था, पांच महा व्यवस्थापकों की जगह केवल एक महा व्यवस्थापक रहे। अधिकारियों के स्थानान्तरण के पूर्व ही उनकी प्रस्थापनाएं घोषित कर दी गई थीं। सन्तोष किसीको न था। महा व्यवस्थापक को नव निर्मित रेलवे में विभागीय अध्यक्ष भी नहीं बनाया गया; विभागीय अध्यक्षों को जूनियर अधिकारी का पद प्राप्त हुआ। केवल दो विभागीय अध्यक्ष सीनियर स्केल में नियुक्त किए गए। एक तीसरे ऐसे हीं दावेदार को विशेष कार्य का अधिकारी बनाकर भेज दिया गया! जो जूनियर अधिकारी थे उनको तीसरी श्रेणी में ला पटका गया! जो अस्थायी अधिकारी थे, उनकी लुटिया डूबने-उतराने के बीच ढुलमुल होने लगी। और इसी मनःस्थिति में आज्ञा आ गई उनके स्थान-परिवर्तन की!

जहां महा व्यवस्थापक के बिना काम नहीं चला करता था, वहां जवाबदार बने द्वितीय श्रेणी के वे जूनियर अफसर जो अब तीसरी श्रेणी में प्रतिष्ठित किए गए थे। अधिकारी लोग जाने लगे। विदाई-समारोहों का तांता लग गया! जाने वाले सब अधिकारी थे, अतः विदाई-समारोह का आयोजन निश्चय ही कर्मचारियों के सिर पड़ा। सौभाग्य या दुर्भाग्य से मैं कई विभागों में काम कर चुका था, कम-अधिक रूप में अधिकारियों की दृष्टि का लक्ष्य भी रह ही चुका था, अतः समारोहों में मेरे पाकेट और पेट दोनों ही की पूजा होने लगी। इधर एक और घटना हो गई जिससे मेरा महत्व कुछ बढ़ता ही दिखाई देने लग गया।

जिस विभाग में मैं काम करता था, वह विभाग कुली-मजदूरों का

विभाग है। रेलवे द्वारा प्रयोग की हुई सब ऐसी वस्तुएं, जो अब बेकाम हो चुकी हैं, इसी विभाग में आती थीं। कुलियों को छोड़कर शेष दूसरे कर्मचारी-अधिकारी भी जो यहां आते थे, वे ऐसे ही, जिनके बारे में प्रशासन की धारणा थी कि वे और अन्य किसी काम के नहीं हैं, तथा जिनको इच्छा होने पर भी छुटकारा नहीं दिया जा सकता था। दूसरे कचरे के साथ ये अफसर भी एक कोने में पड़े रहने के लिए फेंक दिए जाते थे, ऐसी ही सबकी धारणा थी। मैं तो ऐसा ही गलगुट्ट था यह सब जानते ही हैं; जिस अधिकारी के नीचे मैं कार्य करता था, उसके लिए भी लोगों का ऐसा ही अनुमान था।

खैर, अधिकारियों के स्थानान्तरण की आज्ञा के साथ ही, एक बात तो यह हुई कि हमारा विभाग, जो अब तक यहां के महा व्यवस्थापक के अधिकार में था, अब नई रेलवे के महा भंडारक (कंट्रोलर ऑफ स्टोर्स) के अधिकार में चला गया, एक तरह से सर्वतंत्र स्वतंत्र। मेरे अधिकारी के भी स्थानांतरण की घोषणा होने वाली थी, अतः सम्भवतः यहां का चार्ज मेरे ही सुपुर्द हो जाए। दूसरे यह भी संभावना थी कि मैं भी कहीं तबदील हो जाऊं। सचमुच तो मेरे नये अधिकारी ने एकदम से मुझे अपने पास बुला लेने की संभावना का संकेत भी कर दिया था। लगे हाथ लोगों में मेरे बाहर चले जाने का प्रवाद फैल गया।

स्वाभाविक था कि इस परिस्थिति में मैं व्यग्र हो उठूं। सचमुच इस जगह मेरा मन रम गया था। जीवन कुछ-कुछ आलस्यमय तो हो गया था, किन्तु जीवन में आराम कौन नहीं चाहता ?—काम करने वाले मजदूरों में मैं काफी लोकप्रिय साबित हुआ; अतः मेरे न चाहने पर भी मेरे लिए काम करने वाले अनायास ही कई व्यक्ति जुट गए। मेरे मातहत लेखकों की भी यही अवस्था थी। दूसरे, रहने के मकान का भी मेरे लिए बड़ा अच्छा प्रबन्ध था। एक अनिश्चित स्थान और नये वातावरण की आशा में इस प्राप्त सुख को छोड़ना चाहता न था। किन्तु तब भी विदाई-समारोहों के उत्तरार्द्ध में मेरे बारे में यह आशंका उग्रतर होती गई, और

उसी अनुपात में उग्रतर होता गया साथियों का मेरे प्रति आदर-सत्कार।

इसके पश्चात् फोटोबाजी, और फिर प्रतिदिन ही संध्या को स्टेशन पर अधिकारियों की विदाई। पुष्प-वर्षण से लगाकर अश्रु-वर्षण तक का दृश्य; कर्मचारी और अधिकारियों के जीवन का मानो एक नया मोड़ ही था। जाने के दिनों के साथ ही अधिकारियों में से कुछ ने छुट्टियां लीं; और छोटे पद पर उपस्थित होने के अवसर को बचाया। इसी बीच अपीलें भी शुरू हुईं। नये-नये गुल खिलने लगे!

महा व्यवस्थापक महोदय ने चार मास का साधिकार अवकाश प्राप्त किया, किन्तु तब भी उनकी अपील का फैसला नहीं हुआ था। तब उन्होंने रुग्णावकाश की शरण ली। किन्तु वे जानते थे बकरी की मां के लिए कितने शनिवार टालना संभव था!—अपनी प्रापर्टी की व्यवस्था, अपने घर की व्यवस्था, अपने रिश्तेदारों की व्यवस्था, अपने कारिन्दों की व्यवस्था—और छुट्टी के बढ़ाते रहने पर भी, सरकारी आवास में बने रहने के लिए तिकड़म की व्यवस्था—सचमुच तो महा व्यवस्थापक पद की सार्थकता उनके जीवन में यदि कभी हुई तो वह तब, जब कि और महा व्यवस्थापक वे न रह सके।

सवेतन, अर्द्धवेतन और अवेतन की जितनी भी छुट्टियां ले सकते थे, ले चुके। किन्तु न तो उनकी अपील की सुनवाई हुई और न इस बीच उनके ऊपर का कोई अधिकारी अवकाश या महावकाश को प्राप्त हुआ कि उनकी अवस्थिति में किसी तरह का चढ़ाव-उतार सम्भव होता। इधर अब तक तो वे अपने उसी सरकारी मकान में निवास कर सके थे क्योंकि यहां का इंचार्ज अधिकारी इनके मातहत कार्य कर चुका था, किन्तु अब उनका भी स्थानान्तर हो चुका था और वे भी प्रयाण करने वाले थे। जो इनकी जगह आ रहा था वह इन भूतपूर्व महा व्यवस्थापक के लिए क्यों किसी प्रकार की भक्ति प्रदर्शित करने लगा? अपने नव-निर्मित निजीभवन को महा व्यवस्थापक महोदय किसी स्कूल के लिए

किराए दे चुके थे जिससे काफी अच्छी आय हो जाती थी। उधर प्रधान कार्यालय में उनके पूर्व के मातहत अधिकारी उनके विरुद्ध प्रचार करने लग गए थे। जब जाकर ड्यूटी पर उपस्थित होने के सिवा उनके पास कोई चारा नहीं रहा तो उन्होंने भी ड्यूटी पर उपस्थित हो जाना ही उचित समझा।

विदाई के समारोहों की उज्ज्वलता किसी अधिकारी की लोकप्रियता का एक पैमाना मानी जाती रही है। जाने वाले सभी अधिकारी जा चुके थे; जिन कर्मचारियों का यहां इस 'छोटे' आफिस में प्रयोजन न था, वे भी चले गए थे। इन्हींके ऊपर व्यवस्थापक महोदय को अपनी लोकप्रियता का भरोसा था। इन्हींकी कृपा से उनके वेतनों का विकास हुआ था। जो लोग रह गए थे वे इनके प्रायः विरोधी ही थे। तो क्या उनका विदाई-समारोह फीका ही रह जाना था ?—प्रधान कार्यालय से प्रति सप्ताह अब तक एक गजट भी निकलता है, जिसमें ऐसे समारोहों में लिए गए चित्र भी प्रकाशित होते हैं।

धर्मप्रकाश अब भी कहीं तबदील नहीं हुए थे। यों उन्हें एक दूसरे मण्डल में नियुक्त कर दिया गया था, किन्तु इस क्षेत्र के नियुक्तियों के सभी खाते जब तक पूर्ण नहीं हो जाते उन्हें यहीं रहने का आदेश मिला था। सो एक ओर से तो इस समारोह की व्यवस्था करने का भार उनके ऊपर दिया गया, दूसरा पार्श्व स्वयं उन्होंने अपने हाथ में लिया।

सभी अधिकारी प्रायः संध्या की गाड़ी से रवाना होते थे। इससे न केवल दिन का सफर बच जाता था बल्कि एक पूरे दिन की उपलब्धि हो जाती थी, जिसमें वे अन्य कार्य निपटा लेते थे। भूतपूर्व महा व्यवस्थापक महोदय को ऐसे दिनों का अभाव नहीं था, अतः उन्होंने प्रातःकाल साढ़े नौ बजे की ट्रेन से प्रस्थान करना उचित समझा। एक सुविधा यह थी कि तब पहुंचाने के लिए अनेक बन्धु-बान्धवों को आने में सुविधा रहती है, फोटो के लिए भी काफी प्रकाश रहता है, सैलून से, बाहर से, गरज यह कि हर कोण से फोटो लिया जा सकता है।

ज्योतिषी से मुहूर्त्त निकलवाया गया। वह बेचारा समारोह की सुविधा क्या समझे ? प्रातःकाल प्रथम मुहूर्त्त था, सूर्योदय के पूर्व ब्राह्म-मुहूर्त्त, उसके बाद साढ़े दस बजे, फिर तीन बजे, फिर—पर और मुहूर्त्तों से क्या ब्राह्ममुहूर्त्त के बाद लगभग नौ बजे से पहले और कोई मुहूर्त हो सकता था क्या ? बेचारा ब्राह्मण—उसे आधी ही दक्षिणा मिली।

जिन रिश्तेदारों को तैयार किया गया, वे बेचारे चार बजे ही बंगले पर पहुंचाए गए। स्टेशन पर भी उनको बाकायदा लॉरी से पहुंचा दिया गया। पर वहां नौ बजे तक बैठकर सब करें क्या ?—महिलाओं को घर का सारा काम पड़ा था। छोटे बच्चे चाय पीकर ही सबर करना नहीं चाहते थे। पुरुषों को अपने काम-धन्धे पर जाना था। अतः चाय पी-पीकर एक-एक कर सभी खिसकने लगे, अपनी गिरह से सवारी का दाम चुकाते हुए। जाते समय उन्होंने आंख मिलाने तक में खतरा समझा।

आठ बजे कारखाना खुल जाता है, अतः मेरा विभाग भी आठ बजे ही खुल जाता है। मैं यदि आठ बजे न जाऊं, तो क्लर्कों-मजदूरों का आलस ही दूर न हो। आदमी मूलतः भला और ईमानदार तो होता है, किन्तु समाज का गठन कुछ ऐसा विचित्र और विरोधाभासों से पूर्ण है कि इस भलाई और ईमानदारी को बनाए रखने के लिए चौकीदार की आवश्यकता है। सो मैं आठ बजे ही नहीं, आठ से भी जल्दी पहुंच जाता हूं। सब लोगों को काम पर लगाकर नौ बजे तक पुनः घर लौट जाता हूं। तब चाय-जलपान, स्नान-संध्या से निबटकर ग्यारह के पहले-पहले पुनः दफ्तर पहुंच जाता हूं।—और घर से दफ्तर जाने के लिए मुझे स्टेशन होकर जाना पड़ता है। तब साढ़े सात बजकर दस मिनट हुए थे। तब तक मेहमान विदा नहीं हुए थे। चाय का दौर चल रहा था। पर बच्चों की चिल्ल-पों से प्रतीक्षालय मुखरित था। उधर सामने यार्ड में पड़े सैलून (अधिकारी के विशेष डिब्बे) पर आम्रपल्लवों की बन्दनवारें सज रही थीं। बीच-बीच में पुष्प-स्तवकों के संभार से डिब्बे के पृष्ठ का खुला द्वार बड़ा जगमगा रहा था। स्टेशन

के सभी कर्मचारी व्यस्त दिखाई पड़ रहे थे। गाड़ियों के विभाग (कैरेज डिपार्टमेंट) के एक कर्मी से पूछने पर पता लगा कि इस आयोजन का निमित्त क्या है ?

दफ्तर में पहुंचा तो आठ बज रहे थे। उपस्थिति-पत्रक भर कर तथा सब क्लर्कों को अपने-अपने कार्य पर जाने का आदेश देकर मैं बाहर मजदूर वर्ग को आवश्यक हिदायतें देने के लिए यार्ड में चला गया। मेट से मैं बात कर ही रहा था कि चपरासी ने दौड़े हुए आकर कहा कि दफ्तर में बड़े साहब आए हैं और मुझे सलाम बोल रहे हैं।

मुस्कराता हुआ जैसे ही मैं दफ्तर की ओर मुड़ा कि देखता क्या हूं कि बड़े साहब यानी भूतपूर्व महा व्यवस्थापक महोदय मेरी ही ओर चले आ रहे हैं।

हाथ जोड़कर मैंने कहा, 'आपने क्यों कष्ट किया ?—मैं स्वयं ही उपस्थित हो रहा था।'

'नहीं, कोई बात नहीं ! मैंने सोचा कि आज जब जा रहा हूं, सबसे मिलता चलूं ! आइ ऐम ग्लैड, दैट यू आर ऑन ड्यूटी सो अर्ली ! शायद तुम जानते थे कि मैं इसी मौर्निंग ट्रेन से जा रहा हूं।'

यानी, इसलिए मैं यहां आज जल्दी आया हूं कि हुजूर तशरीफ ले जाने वाले हैं और कहीं ड्यूटी पर से मुझे अनुपस्थित न पाएं। मेरे स्वाभिमान को चोट लगी। बोला मैं, 'आप जा रहे हैं, यह तो मुझे अभी ही मालूम हुआ है, सैलून की सजधज देखकर। किन्तु आठ बजे से पहले यहां आने की तो मेरी नित्य की आदत है। यों शायद आपको विदित नहीं है, स्टोर्स विभाग के दफ्तर का आफिशियल कार्य-समय दस से पांच तक का है। यह नये प्रशासन का नियम है, किन्तु मैंने अपने दफ्तर का कार्यक्रम वही रखा है। स्थानीय अवस्थाओं के अनुकूल अपना कार्यक्रम निश्चित करने की स्वतंत्रता मुझे सम्बन्धित अधिकारियों ने दे रखी है।'

'आई सी ! दैट्स गुड ! इसी तरह काम करते रहोगे तो एक दिन अफसरों की निगाह में आ जाओगे।—अब तो इस आरगनाइजेशन में

काम के सिवा और कुछ 'पे' नहीं करता।'

मैंने कहा, 'जी हां, यही तो हम लोगों की आशा है, वरना पहले के आरगनाइजेशन में बुराई ही क्या थी !'

आघात को साहब समझ गए। माथे पर बल पड़ गए, बोले—'क्या मतलब ?'

मैंने मुस्कराकर उत्तर दिया, 'आपकी नजर थी न यहां पर अब तक ! जिन लोगों का उद्धार हो गया, वे ज़िन्दगी भर आपको नहीं भूलेंगे !'

'मैंने हमेशा काम को ही····'

'जी हां, हमें स्वीकार करना चाहिए, आदमी से ऊपर नहीं माना। काम से सहानुभूति रखने के लिए तो सभी अफसर हैं, आदमी से सहानुभूति रखने वाला अफसर आप जैसा कोई-कोई ही मिलता है। व्यक्ति के इण्डिविजुअल राइट्स को स्वीकार करने वाले निश्चय ही सबकी श्रद्धा के पात्र हैं।'

जिस बात को महा व्यवस्थापक महोदय अपना अपमान मानने को तैयार हो रहे थे, वही हो गई उनकी स्तुति ! किन्तु वे जानते थे मुझे शब्दों के साथ खिलवाड़ करने का अभ्यास है ! मेरी निन्दा और स्तुति को वे सन्देह के सिवा और किसी नज़र देख नहीं सकते थे।

हाथ की घड़ी की ओर देखकर बोले, 'ज़रा कारखाने में भी सबको गुडबाई कह आऊं ! चाहता तो था कि यहां पर भी आप सब लोगों को जाते समय कुछ दो शब्द कह जाऊं, लेकिन स्टेशन पर बहुत व्यक्ति इकट्ठे हो गए हैं। मैकेनिकल डिपार्टमेंट के सभी आदमी वहां इकट्ठे होने को कह रहे हैं। मैं कहता हूं इस दिखावे की ज़रूरत क्या है !—यहीं से क्यों न विदा ले लूं ! पर वे मानते ही नहीं। आफिस से भी सभी व्यक्ति आ रहे हैं। इसलिए जो कुछ कहना होगा, वहीं स्टेशन पर ही कहूंगा। वैसे काम में कोई खास हर्ज न हो—बात सिर्फ पांच ही मिनट की है। सब लोगों को साथ लेकर अगर स्टेशन आ जाओ !—बात यह है कि इतने

दिन साथ रहे—जाते समय एक बार सबको एक नज़र देख तो लूं···'

मैंने झुककर कहा, 'विद प्लेज़र ! पांच-दस मिनट का कुछ खास नुकसान नहीं होता। न हुआ प्रधान कार्यालय को एक सूचना भेजने से कार्य चल जाएगा···'

'ना-ना—वहां सूचना भेजने की क्या ज़रूरत है। यों तो, मैं खुद अभी ऐसा आर्डर दे सकता हूं—मगर···'

मैंने हंसकर कहा, 'जी हां ! आपकी आज्ञा का मैंने कभी उल्लंघन किया है, कि आज शासन बदल जाने मात्र से करूंगा ! आपकी आज्ञा का हवाला देने से मेरा दायित्व और भी कम हो जाएगा।'

महा व्यवस्थापक महोदय घबराकर बोले—जाते-जाते—'नो-नो—डोण्ट बॉदर—वर्क फॉर ह्विच वी आर पेड, इज़ ग्रेटर दैन एनीथिंग एल्स—' और वे कारखाने में चले गए।

अपने सब साथियों को लिए सवा नौ बजे ही हम स्टेशन पर पहुंच गए। कमलनयन जोशी से भेंट हुई; अन्य कोई क्लर्क उपस्थित न था, यद्यपि उस दिन महाव्यवस्थापक की विदाई के उपलक्ष्य में छुट्टी कर दी गई थी। धर्मप्रकाश साहब से भी सलाम-दुआ हुई। कारखाने से कोई भी नहीं आया। फोटोग्राफर ने सजे हुए खाली सैलून के दो फोटो लिए। एक फोटो व्यवस्थापक महोदय का। मेरे विभाग के बीसों आदमियों को सैलून के पास खड़ा करके, दो-चार फोटो और लिए गए, जिसमें गाड़ी के यात्रियों का एक समूह भी आ जाता था।

इतने ही में किसीने खबर दी कि एक दल काले झण्डे लिए चला आ रहा है। प्लेटफार्म पर कोलाहल सुनाई देने लगा। महा व्यवस्थापक महोदय जो सैलून में घुसकर बन्द हुए, सो तब भी बाहर नहीं हुए जब कि गाड़ी चलने लग गई। उनके शेष दर्शन का लाभ या शेष उपदेश का लाभ उपस्थित समुदाय में किसीको नहीं हो सका।

गाड़ी जाने के बाद भी फोटोग्राफरों को अवकाश नहीं मिला। काले झण्डे वालों की पार्टी को बीच में करके एक और फोटो लिया गया। एक

ओर दिखाया गया कि एक व्यक्ति एक डण्डे पर करीने से एक माला सजाए हुए स्वागत के लिए खड़ा है, उसमें फूलों के गुच्छों के बीच जगह-जगह पर फटे-पुराने जूते भी शोभा पा रहे हैं। और फोटोग्राफी की कला को दाद देनी पड़ेगी कि वाम पार्टी के एक साप्ताहिक में जो इस अवसर का चित्र प्रकाशित हुआ, उसमें न केवल काले झण्डों का दल और जूतों की माला का दृश्य था, बल्कि सैलून सहित उस गाड़ी का दृश्य था जिसमें महा व्यवस्थापक महोदय बरामदे में खड़े सभी से नमस्कार करते हुए दिखाई दे रहे थे। देखकर, जो जानते थे, उनमें से कुछ को क्रोध, कुछ को हंसी आई, हंसी अधिक को आई, प्रतिवाद किसीने नहीं किया।

कमलनयन जोशी स्टेशन पर महा व्यवस्थापक महोदय को विदा देने उपस्थित हुआ था। देखकर मेरे साथ हो लिया। दफ्तर की तो उस दिन छुट्टी थी ही।

मेरी चाय तब भी बाकी थी, लोगों को काम पर जाने का आदेश देकर मैं अपने दफ्तर में चला गया। चाय वहीं पर मंगा ली। रह गए दफ्तर में कमल और मैं!

भूतपूर्व प्रधान कार्यालय के हालचाल मालूम किए। बाबू राधावल्लभ रिटायर हो गए, और सुना है कि रिटायर होने के तीसरे दिन ही बीमार पड़ गए। पहले तो कभी उन्हें दिल का दौरा हुआ सुना नहीं किन्तु इस बार तो हालत एकदम चिन्ताजनक हो उठी थी, शायद अब कुछ ठीक हैं, पर हैं अभी अस्पताल में ही। छोटे-छोटे बच्चे हैं; लड़की की शादी सिर पर है, बच्चों की पढ़ाई का भी प्रश्न है। एक बच्चा तो अभी-अभी कुछ ही माह पहले हुआ है। बेचारा बच्चों के भाग्य ही से बच जाए तो अच्छा हो।

नानकचन्द की प्रस्थापना हुई थी स्टेशन पर माल बाबू की जगह। दफ्तर में व्यापारियों के दावे सम्बन्धी कागज़-पत्रों की देखभाल करता था। स्थानीय व्यापारियों के दावे जब तक शेष न हो जाएं तब तक उसे यही काम करना था, परन्तु उसकी बैठक कागजों के साथ स्टेशन आजाने

वाली थी। वह खुश है, माल बाबू बनकर स्टेशन पर कुछ अतिरिक्त आय की जुगत जमा सकेगा !—तनख्वाह में क्या रखा है !—और ग्रेड की उसे क्या परवाह है ?

कृपानारायण की खबर जरूर भली नहीं है। वह खाद्यान्न-नियंत्रण (ग्रेन-कट्रोल) के विभाग में चलता कर दिया गया है। दो-एक क्लर्क और आ रहे हैं उसके पास बाहर से काम करने के लिए। एक क्लर्क तो आ चुका है। दोनों में काफी झड़प भी होने लग गई है। कारण यह है कि कृपानारायण जैसा भी हो, पर बेईमान नहीं तथा केवल बातूनी ही अधिक है। इस विभाग में चोरी बहुत चलती है। बेचारा जोशी चोरी के हथकण्डे तो जानता नहीं,अतः क्लर्क को भाया नहीं। आशंका है कि चोरी और सीना-जोरी में दक्ष बाहर के इन तत्वों के चंगुल में बेचारा कहीं फंस नहीं जाए !

कमलनयन रह गया है श्री धर्मप्रकाश की सहायता के लिए। धर्मप्रकाश अभी स्वयं बाहर जाना नहीं चाहते। बाहर कहां यहां जैसा आराम पड़ा है ?—इतना बढ़िया बंगला, मुफ्त के नौकर, अनियंत्रित हुकूमत, और अब तो एक तरह से सर्वतंत्र स्वतन्त्रता।—बाहर गए कि सबसे पहले तो गजेटेड पोस्ट से छुट्टी, फिर मकान का सवाल,—यानी वे स्वयं काम को शेष करने की अपेक्षा खीचे ले जाना चाहते हैं, और जब तक वे नहीं जाते, कमल के जाने का सवाल भी नहीं उठता।

बड़े मजे की अवस्था हुई बेचारे संकेत-लेखक मजलिस राय श्रीवास्तव की ! वही महा व्यस्थापक का स्टेनोग्राफर था। छोटा-मोटा साहब ही बन गया था। सूटेड-बूटेड, टाई आदि के सिवा तो बात ही नहीं करता था। चूंक सिवा महा व्यवस्थापक के और किसीके निकट उसे जवाब-देही नहीं करनी होती थी, अतः दूसरों को वह समझता ही नहीं था। प्रस्था-पना हुई बेचारे की तीसरी श्रेणी के क्लर्कों में; और जब उसने अपील की तो आदेश मिला कि संकेत-लेखन की प्रवणता-परीक्षा (प्रोफीशिएन्सी-टेस्ट) में सम्मिलित हो। बस मुंह की खाकर रह गया, यहां तक कि संकेत-लेखन के पद से हटकर यंत्र-लेखक (टाइपिस्ट) ही रह गया। टाई

के भाव मालूम होने लग गए बेचारे को !

हां, नटनागर की प्रस्थापना तो प्रथम ग्रेड के क्लर्कों में हुई है, किन्तु उनकी नियुक्ति का कोई आदेश नहीं है। क्षेत्रीय कार्यालय के सिवा और कहीं तो यह पोस्ट रहती नहीं। अभी बीमार हैं ! उपस्थित तो नियम से उन्हें यहीं होना चाहिए, पर प्रधान कार्यालय में भी हो सकते हैं; वहीं से उन्हें पोस्टिंग के आदेश मिल जाएंगे। सचमुच इस छीना-झपटी में यदि किसीको प्राप्त हुआ है तो उन्हींको, लकी चैप रीयली—लेकिन—क्या पता इस सौभाग्य का उपभोग करने के लिए बेचारा स्वस्थ कब तक होगा। उनकी पत्नी पहले तो सुसराल ही पहुंची पर तब तक नटनागर उपचार के लिए बम्बई पहुंच गए थे। अभी उस दिन कमल को वहां से पत्र मिला था, जिसमें उनके उपयोग के लिए पास की मांग की गई थी। उनका अपने रोगी पति के पास सेवा के लिए बम्बई जाना स्वाभाविक ही है। पास कमल ने कल ही भिजवा दिए हैं। शायद इसी सप्ताह चली जाएं। और नटनागर के स्वास्थ्य के नये सम्वाद तो कमल को इधर कोई मिले नहीं।

बहुत कुछ दूसरी बातों के बाद जोशी ने कहा, 'भाई साहिब, आप भी एक अपील क्यों नहीं कर देते ! मैंने सुना है कि हेड आफिस से उप-महा व्यवस्थापक सभी अपीलों की जांच करने के लिए यहां आने वाले हैं। आपका केस तो बड़ा स्ट्रांग है।'

'अपील किसके खिलाफ करूं ? इस वर्तमान पद के खिलाफ ? अरे भाई, ऐसी जगह है किसके भाग्य में ! देखते नहीं, राज्य कर रहा हूं, कोई सिर पर कहने वाला नहीं। अच्छा-खासा मकान मिला हुआ है, काम विशेष कुछ है नहीं, खाली आदमियों पर निगरानी रखना, और उन आदमियों पर जो केवल विश्वास चाहते हैं, और विश्वास पाने पर अपने आप आवश्यकता से अधिक काम करते चले जाते हैं ! इनकी महत्वाकांक्षा ही क्या है ? केवल यह कह दो कि वह काम तुम्हीं कर सकते हो, और बस काम हो गया।'

'पर पहले तो आपके स्टोर्स के आदमियों की बहुत ही शिकायतें थीं !'

'थीं, पर अब नहीं हैं। पहले अफसर उनके साथ कुलियों जैसा व्यवहार करते थे। मैं तो अफसर हूं नहीं; उन्हींमें का एक कुली हूं। और मजे की बात यह है कि उन्होंने मुझे अफसर से अधिक सम्मान दे रखा है। यदि उनसे पूछो कि मेरा यहां से तबादला हो गया है, तो जानते हो इसकी क्या प्रतिक्रिया होगी ?'

'क्या ?'

'वे कहेंगे कि यदि मैं स्वेच्छा से यहां से जाना नहीं चाहता, तो मुझे कोई यहां से तबदील नहीं कर सकेगा। इसके लिए वे सत्याग्रह तक करने को तैयार हो जाएंगे।'

जोशी ने हंसकर कहा, 'हां, सत्याग्रह वे अवश्य कर सकते हैं। उस साल जो उन्होंने सारे प्रशासन को आतंकित और आशंकित कर दिया था।'

'पर इस बार वे आतंकित नहीं करेंगे। वे अब शांति और सौहार्द्र के पाठ को सीख चुके हैं।'

'कुछ भी हो भाई साहिब, यह पोस्ट आपके योग्य नहीं है। आपके क्वालिफिकेशन्स····'

'वे मेरे पास ही हैं। उन्हें कोई छीनता नहीं, छीन ही नहीं सकता।'

'लेकिन आपका भविष्य ?'

'भविष्य !' मैंने हंसकर कहा, 'सो तो है ही ! यहां हूं तब भी, और दूसरी जगह चला गया तब भी ! वह मिटाया तो जा सकता नहीं।'

'पर बनाया तो जा सकता है। आदमी अवसर की तलाश में रहता ही है, और उसका लाभ भी उसे उठाना चाहिए।'

मैंने हंसकर उठते हुए कहा, 'कमल ! मैं निश्चय कर चुका हूं कि कि जैसे ही यह स्टोर्स यहां से चला जाए, मैं त्यागपत्र दे दूं। सच तो, मैं अपना मंतव्य प्रशासन को प्रकट भी कर चुका हूं। पर यह बात तुम्हीं

तक रहे।'

जोशी ने उठकर कहा, 'क्या सचमुच माइ लार्ड !'

'हां भाई, प्रशासन के हथकंडों से जी भर गया है। जब इन अनपढ़ मजदूरों को देखता हूं तो समझता हूं, अगर भागती-भागती मनुष्यता कहीं रह गई है, तो वह इन्हीं पसीना बहाकर दो मुट्ठी अन्न जुटाने वाले लोगों में ! अब तक खुशामद, झूठ, जाल, फरेब का छोटा चक्कर था—किसी तरह दिन काट लिए। अब देखता हूं तो बड़ा चक्कर सामने है। इसमें बचकर कौन माई का लाल रह सकता है ? क्लर्क का संसार ही क्या ? कागज और कलम, पर उसी पर तो आज की सारी सभ्यता का लेखा-जोखा अंकित है। कागज की इन नावों को चलाते-चलाते आदमी कितना कागजी होता जा रहा है। पर फिर कभी—अभी तो मेरा नहाना भी बाकी है। फिर मिलोगे तो ?'

और शेष नमस्कार के बाद आफिस से बाहर आकर हमने हाथ मिलाए।

१३

नटनागर के आश्चर्य और हर्ष की सीमा न रही, जब उनकी समस्त आशाओं के विपरीत एक सुनहरे प्रभात में कमला ने वार्ड के भीतर प्रवेश किया ! कमला की कांति पहले से अनेक गुनी बढ़ गई थी। मैट्रिक पास करने का उल्लास ही कम न था, फिर मातृत्व के संभार ने जो एक अभूतपूर्व गरिमा उसके चेहरे पर छा दी थी, वह तज्जनित उद्वेग तथा मार्ग की क्लांति से भी किसी तरह पदस्थ नहीं हो पाई थी। फिर स्वयं नटनागर का बीसवीं शताब्दी के स्वप्न-लोक-वासी विरही यक्ष का आतुर-आकुल मन ! किन्तु नटनागर के स्वास्थ्य तथा उनके चारों ओर का

वातावरण शीघ्र ही कमला के उफनते हुए उत्साह पर पानी के छींटे मारने लगा।

जनरल वार्ड का यह विभाग एक बहुत लम्बे-चौड़े हाल में स्थापित है, जिसमें आमने-सामने दो कतारों में ४० बिस्तर लगे हुए हैं। लोहे की नलियों का छल्लों वाला पलंग, जिसके पैताने स्टैंड पर चार-पांच तख्तियां लगी हुई हैं; इनमें रोगी की बीमारी का चढ़ाव-उतार उसकी निज की अवस्था आदि का दैनिक ब्यौरा लिखा जाता या अंकित किया जाता था; एक जाली के पल्ले वाली छोटी-सी आलमारी जिसमें रोगी के लिए फल-फूल, खाद्य-सामग्री या छोटे-बड़े कुछ कपड़े रखे जा सकते थे, ऊपर औषधियों की कुछ शीशियां; एक स्टूल जिसपर कभी डॉक्टर, कभी नर्स और कभी कोई अतिथि बैठकर रोगी का परीक्षण, परिचर्या या परिचर्चा किया करते हैं; और इन समस्त उपस्करों की परिसीमा के बाद ही दूसरे बीमार का यही संसार, फिर तीसरे का, फिर चौथे का—२० एक के बाद एक, और इतने ही सामने की दीवार से सटे हुए संसार, बीच में आवश्यकतानुसार रोगियों, उपचारकों तथा अभ्यागतों के आवागमन के लिए पर्याप्त जगह छूटी हुई।

हर दो रोगियों के बीच में एक खिड़की, हर चार रोगियों—दो इधर, दो उधर—के बीच छत से लटकता हुआ एक पंखा, और एक लाइट, अतिथियों के लिए कुछ अतिरिक्त स्टूल और कुर्सियां इधर से उधर और उधर से इधर घिसटती-फिरती हुईं। जब डॉक्टर नर्स का प्रवेश हो, तो शांतिमय उत्सुकता और उनके चले जाने पर उत्सुकतामय अशांति, कोलाहल। अतिथियों के मिलने का समय होते ही फिर दौड़-धूप, चिल्ल-पों, बच्चों की भगदड़ और लोगों की ताक-झांक। पुराने बीमार इस अवसर की आशा से प्रतीक्षा करते हैं, नये बीमार इससे कतराते हैं। और एक रोगी जाता है, दूसरा उसकी जगह आ जाता है। इस जगह पर आकर मालूम देता है, मानो जीवन का अर्थ ही बीमार होना है, और जनरल वार्ड में आए बिना उसकी सार्थकता नहीं होगी।

सो, स्टूल पर बैठे-बैठे कुशल-मंगल के औपचारिक प्रारम्भिक संभाषण ही में कमला के मन पर विचारों का एक तूफान खेल गया। नटनागर ने सभी नर्सों से और डाक्टरों से हंसकर कमला का परिचय कराया। अन्य बीमार पास में बिस्तर पर पड़े हुए टुकर-टुकर देखते भर रहे। उनका सामाजिक स्तर तो नटनागर को मालूम नहीं कि उनसे भी कमला का परिचय कराया जाता। पर कमला इस जनरल वार्ड में आखिर दिन यदि बिता भी लेगी, तो रात कैसे बिताएगी ?

नटनागर ने बताया कि एक तो प्राइवेट रूम कोई खाली नहीं, दूसरे उसमें जाने के लिए व्यर्थ में किराए का भार क्यों उठाया जाए ? आखिर कई दिन से वे अर्द्ध वेतन पर ही तो बसर कर रहे हैं। कमला ने नटनागर की दलील नहीं मानी। उसने कहा कि प्राइवेट रूम तो खाली रहते हैं, बल्कि एक नर्स से बात करके उसने मालूम कर लिया था, कि एक अच्छा कमरा तो तब भी खाली था ही, और उसने सुपरिंटेन्डेन्ड से बात करने के लिए कह भी दिया था। रहा सवाल किराए के भार का, सो रेलवे-प्रशासन का यह दायित्व होना चाहिए कि अपने कर्मचारियों के लिए यदि उचित व्यवस्था न कर सके तो व्यवस्था के व्यय का भार वहन करे। वह नटनागर की ओर से इसके लिए उचित प्रार्थना पत्र प्रेषित करेगी। इसके बावजूद यदि प्रशासन इस भार को स्वीकार न करे, तो भी प्रशासन के ऊपर तो किसीके जीवन की जोखिम को छोड़ा नहीं जा सकता। अब तो कमला स्वयं कहीं पर नौकरी करके खर्चे के लायक कमा सकती है, वह इसके लिए प्रयत्न तो करेगी ही।—और कुछ भी हो, इस जनरल वार्ड में वह स्वयं कैसे रह सकती है ?—क्या रात्रि को बाहर बरामदे में इन गंवार बीमारों के रिश्तेदारों के बीच वह करवट बदलती रह सकती है ? और फिर दादू जो उसके साथ ही छुट्टी लेकर आया है।

'पर तुम्हें यहां रहने के लिए तो मैं नहीं कहता !'

'तुम नहीं कहते, क्या इसीलिए मैं चली जाऊंगी ?'

'किन्तु डीयर, यह तो तुम जानती ही हो, मैं कैसी छुतैली बीमारी में फंसा हुआ हूं।'

'सो क्या इसीलिए हिन्दू पत्नी पति को छोड़कर आराम से रहने के लिए घर चली जाती है ?'

नटनागर के मन में गर्व की एक लहर दौड़ गई। ऐसी पतिव्रता पत्नी को पाकर उन्हें निश्चय ही अपने आप को धन्य समझना चाहिए। वे बोले, 'मैं तुम्हारी भावना को समझता हूं, कमला ! किन्तु भावुकता से तो काम नहीं लेना चाहिए; तुम तो पढ़ी-लिखी हो; फिर जिस कोमल अवस्था में तुम हो, उसमें जब तक तुम अपनी ओर विशेष ध्यान नहीं देती···'

'नहीं-नहीं, यह मैं कुछ नहीं सुनूंगी। पति की सेवा ही नारी का धर्म है !—मेरी मूर्खता थी कि तुम्हारे स्वास्थ्य का कुछ भी ख्याल न करके अपने ही स्वार्थ में परीक्षा को लेकर व्यस्त रही; मुझे इसका प्रायश्चित करना ही पड़ेगा।'

मुस्कराकर नटनागर ने कहा, 'परीक्षा पास करना तुम्हारा स्वार्थ कैसे हो गया ?—क्या तुम्हारी सफलता या उपलब्धि में मेरा हिस्सा नहीं है ?'

'इसीलिए तुम्हारी बीमारी में भी मेरा हिस्सा होना चाहिए !—ईश्वर ने वह सुविधा तो व्यक्ति के हाथ में रखी नहीं, इसलिए तुम्हारे दुःख का भाग तो मुझे कम करना चाहिए। मैं तुम्हारी बहुत कुछ सुन चुकी हूं, उसीका यह परिणाम है कि तुम्हारी सोने की देह मिट्टी में मिलती चली जा रही है। अगर अपने धन की रक्षा करने के लिए मैं कटिबद्ध हो उठूं तो मुझे रोकने का तुम्हें कोई हक नहीं।'

सचमुच नटनागर को कोई हक नहीं ! और कमला के प्रयत्न को क्या कहा जाए, उसी संध्या को नटनागर को पास ही में एक प्रायवेट रूम मिल गया; यही नही, नटनागर और कमला की पोजीशन के अनुरूप

अतिरिक्त फर्नीचर, बेड आदि की व्यवस्था होने में भी विलम्ब नहीं लगा।

उस दिन रात्रि को विशेष बात नहीं हुई, किन्तु कमला यह लक्ष्य किए बिना नहीं रह सकी कि उसकी उपस्थिति से नटनागर की हार्दिक प्रसन्नता हुई है, जिसके फलस्वरूप उनके स्वास्थ्य में आश्चर्यजनक सुधार दिखाई दिया है। दूसरे दिन प्रातःकाल ही यह सूचना नर्स ने दी कि उनका तापमान एकदम नार्मल हो गया है, और वजन में दो पौण्ड की वृद्धि हुई है। यदि कम से कम एक सप्ताह तक इसी तरह उनका स्वास्थ्य रहा तो अधिक राह देखने की आवश्यकता न होगी, अगले सप्ताह ही किसी दिन उनका ऑपरेशन हो सकेगा।

कमला के हृदय पर एक मीठा आघात-सा लगा। इस निरीह व्यक्ति को सचमुच उससे प्रेम है! कमला के सुख में ही वह अपना सुख मानता है! क्या ऐसे व्यक्ति को धोखा देना उसके लिए उपयुक्त है? पर इसके सिवा चारा ही क्या है? कमला नटनागर को प्यार करना तो चाहती है, पर इस मन को क्या कहा जाए? मन क्या उसके वश में है?—उसके ही क्या, मन क्या कभी किसी के वश में रहा है?—

वह हिन्दू स्त्री है। दुर्भाग्य ने प्रारंभ ही से ऐसी परिस्थितियों में डाल दिया उसे, कि वह समझ पाए, सम्भल पाए इसके पहले ही बह गई। नटनागर की जिम्मेदारी कम तो अवश्य नहीं। उन्हें भी तो नये फैशन का भूत सता रहा था, वह क्या करती?—अनुभव उसे था नहीं, समझ उसकी सच्ची थी। फिसलती नहीं, तो बढ़ ही कहां सकती थी?—क्या उसका बीता हुआ जीवन वापिस नहीं हो सकता? यदि उसे फिर से प्रारम्भ करने का अवसर मिले!—नटनागर को समझ तो वह अब पाई है!

नटनागर प्रसन्न हैं कि कमला उन्हींकी सन्तान की माता होने वाली है!—यदि नटनागर जरा भी सोचें, तो कमला की पोल सरलता से खुल जाएगी!—तब क्या नटनागर उसे माफ कर सकेंगे? यदि माफ न करें

तो ?—घर से त्याग देंगे—कमला का क्या होगा !—क्या होगा, वह मुक्त स्वतन्त्र हो जाएगी ! वह चाहे तो दूसरा विवाह कर सकती है ! पेट भरने का ही तो सवाल नारी को नर से बांधे रखता है। यदि नारी आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बिनी हो, तो नैतिकता का मापदण्ड ही दूसरा होगा।—तो क्या नटनागर केवल इसलिए कमला को माफ नहीं करेंगे कि वह इस समय भी अपने भरण-पोषण के लिए नटनागर पर निर्भर करती है ?—यदि किसीके प्रेम का आधार इतना कच्चा हो, तो वह जितना शीघ्र टूट जाए अच्छा है। वह बता देगी कि वह परमुखापेक्षी नहीं है !

देखना है, नटनागर कमला को चाहते हैं या कमला के शरीर की पवित्रता को ही। जो उसे क्षण भर का मोह हो गया है, वह कहां तक खरा है, यह अनायास ही कमला को मालूम हो सकता है। यह नटनागर के प्रेम की परीक्षा है, और परीक्षा लेगी उनकी पत्नी स्वयं कमला !

रात्रि को कमला ने पूछा, 'तुमने मुझे सुसराल से घर लौट जाने को क्यों लिखा ?'

'इसलिए कि मां के साथ तुम्हारी कभी बनती नहीं।'

'सो तो कोई नई बात नहीं। हमेशा ही तो नहीं बनती !'

किन्तु तुम जिस कोमल अवस्था में हो···'

'मेरी इस कोमल अवस्था का पता तुम्हें कैसे लगा ?—पहले तो मैंने कभी कहा नहीं !'

हंसकर नटनागर ने कहा, 'समझ लो, जादू जानता हूं।'

'जादू जानते हो, तो फिर क्या यह नहीं जानते थे कि घर न लौटकर मैं यहां दौड़ी चली आऊंगी ?'

'समझ लो, यह भी जानता था।'

'ओह, तो फिर मुझे बुलाने का ही तुम्हारा यह छल था। किन्तु क्या यदि तुम सहज ही मुझे बुलाने के लिए ही लिख देते, तो क्या मैं न आती ?—जानते तो हो, मैं खुद आने के लिए कितनी व्यग्र थी ?'

'अब इसका उत्तर क्या दूं ?—तुम्हीं कहो ।'

'यह कहो कि तुम मुझे परास्त करना चाहते थे ।'

'किन्तु सचमुच परास्त क्या तुम हुई हो ?—परास्त तो मैं हुआ हूं । मेरे न बुलाने पर भी जो तुम आ गई हो, वह क्या तुम्हारा मुझपर अनुग्रह नहीं प्रकट होता ?'

'बात तो अनुग्रह की नहीं, हार-जीत की है ! पर सच कहो, मेरी इस अवस्था का ज्ञान तुम्हें कैसे हुआ ?—मेरी सौगन्ध, सच कहो ।'

'सच कहूं ?—तो लो, यह पोस्टकार्ड पढ़ लो !'—यह कहकर तकिए के नीचे से उन्होंने वह पुराना अनबूझ पोस्टकार्ड निकालकर कमला के हाथों में थमा दिया, कहते-कहते—'चाहता था कि इसे तुम्हारे पास भेज दूं, किन्तु तब जब तुम घर लौट जाओ । इसे पढ़कर मैं विशेष कुछ समझ नहीं सका, पर जितना समझ सका, वह तो ठीक ही समझा !'

कमला पोस्टकार्ड को पढ़ती रही । कितना वह समझी, कितना समझना शेष रहा, यह तो वही जाने, किन्तु यदि नटनागर सीधे छत की ओर न देखते रहकर कमला के मुखमण्डल के चढ़ाव-उतार को देखते, तो उन्हें आश्चर्य हुए बिना न रहता । पत्र को पूरा पढ़कर कमला ने नट-नागर की ओर देखा, देखा कि छत की ओर देख रहे हैं, तो एक बार और उसने उस पत्र पर अपनी आंखें गड़ा दीं ।

नटनागर ही ने पुकारा, 'पढ़ लिया ?···'

कमला ने केवल नटनागर की ओर मुंह उठाकर देख लिया ।

'क्या यह पत्र मां ने लिखवाया था ?'

'सो मैं क्या जानूं !—पर तुम तो जानते हो, मां को विशेष कुछ तो दिखाई नहीं देता !'

'तो क्या मां को अभी तक तुम्हारी इस अवस्था का पता नहीं है ?'

'होगा क्यों नहीं ?—जबकि इस पत्र में उन्होंने उल्लेख भी किया है ।'

'फिर भी मुझे विश्वास नहीं होता कि यह मां का लिखाया हुआ है ।'

'क्यों विश्वास नहीं होता सो तुम्हीं जानो !—पर मेरे बारे में इतना

विष तुम्हारी मां को छोड़कर और कौन उगलेगा ?'

'पर कमला, यह पत्र तुम्हें तो नहीं लिखा गया, लिखा गया मुझे है !'

'सो ही तो, विष का प्याला यदि तुम्हारे हाथों मुझे दिया जाए, तो देखने वाले के हाड़ जुड़ाने को और भी अच्छा अवसर होता है, यह क्या तुम नहीं समझ सकते ?—खैर तुम्हारी मां हैं, उनकी भक्ति करके अच्छा पुण्य कमाओगे। मैं ज़हर का प्याला भी पी लूंगी !'—और एक ऐसी गहरी सांस कमला के मुंह से निकली कि उसकी लीक नटनागर के हृदय पर खिंच गई।

कुछ देर दोनों ही चुप रहे—नटनागर छत की ओर देखते हुए, कमला फर्श की ओर !

नटनागर ने कहा, 'अच्छा, यह बदनामी वाली बात क्या है ?—बता सकती हो ?'

कमला का हृदय धड़क ही रहा था, वह उछलने लगा, किन्तु उसी नतदृष्टि से उसने कहा :

'मैं मां जो बनने वाली हूं।'

'किन्तु इसमें बदनामी की क्या बात है ?'

'शायद तुम्हारी मां, कभी मां नहीं बनी हो !' कमला ने व्यंग्य कसा।

नटनागर को आगे कोई प्रश्न नहीं सूझा।—कुछ देर तक दांतों से ओठों को काटने के बाद बोले—'तुमने शायद पत्र में देखा होगा कमला, एक स्थान पर घूमर काकी का उल्लेख आया है।'

'कहां ?—मैंने तो नहीं देखा ?'

'पत्र में है। पूरा वाक्य मैं पढ़ नहीं पाया। दो पत्र, मैं बतलाता हूं।'

कमला पत्र लेकर उठी और उसने पत्र नटनागर के हाथ में थमा दिया। नटनागर ने पत्र पर एक जगह अंगुली रखकर बताया, 'देखो—पढ़ो यह क्या है ?'

कमला पढ़ने के लिए नटनागर के वक्ष पर झुकी, बोली, 'साफ तो मालूम नहीं पड़ता किन्तु....'

'कोई चिन्ता नहीं—' कहकर नटनागर ने पीछे से कमला की पीठ पर हाथ बढ़ाकर उसके मस्तक को अपने वक्ष से सटा दिया, फिर बोले, 'घूमर काकी को मरने दो डीयर, पर यह कहो तुमने यह कैसे कह दिया कि मेरे हाथों तुम्हें विष दिया जाएगा ?'

'तुम्हारा यह पत्र क्या कहता है ?'

कमला के बालों में अपनी अंगुलियां चलाते हुए नटनागर ने कहा, 'यह पत्र मेरा नहीं है !'

'तुम्हें जन्म देने वाली का तो है। और मैं जानती हूं तुम्हारे लिए उस अंधी मां का देखा हुआ वह भी अधिक सच्चा है, जो दूसरों को शायद दिखाई ही न दे।'—और यह कहकर कमला उनके वक्ष पर से उठ खड़ी हुई !

कुछ सोचकर नटनागर ने कहा, 'क्या यह सम्भव नहीं है कि यह पत्र किसी दुरभिसन्धि से घूमर काकी ने किसीसे लिखाया हो, और मां को इसका पता ही न हो ?'

'घूमर काकी ने लिखाया हो, तो भी तुम्हारी मां कोई दूध की धोई हुई नहीं है कि मुझे बख्श देंगी।'

जिस ढंग से कमला बात कर रही थी, उससे नटनागर को विश्वास होता जा रहा था कि कोई ऐसी बात है अवश्य, जिसने कमला को बड़ा आघात पहुंचाया है, और फिर भी वह प्रकट नहीं कर पा रही है। अवश्य ही वह उनकी मां से भी सम्बन्ध रखती है किन्तु—क्या इस तथा-कथित बदनामी से तो उसका कोई सम्बन्ध नहीं ?—और बदनामी ! कुछ समझ में नहीं आता; कमला कहती है कि बदनामी की बात है उसकी मां बनने की सम्भावना होना—किन्तु प्रत्येक स्त्री ही तो मां बनती है ! इसमें बदनामी क्या है ? कमला साफ-साफ क्यों नहीं कहती ? और नटनागर किस तरह से इसका उत्तर प्राप्त करें ?

कुछ देर तक नटनागर सोचते रहे। कमला ने टेबल के लाइट को जलाकर उसका मुंह दीवार की ओर कर दिया ताकि उसका प्रकाश सीधे न तो बीमार की शैया पर, न फर्श पर और न उसके स्वयं के बिस्तर पर पड़े फिर छत के प्रकाश को बुझाकर वह अपने बिस्तर पर लेट गई।

नटनागर ने कहा, 'नींद तो नहीं आ रही कमला ?'

'नहीं !'

फिर चुप ! कमला ने कहा, 'कहो क्या कहना चाहते हो ?'

'कह नहीं सकता कि मुझे जन्म देने की तैयारी में मेरी मां को किन-किन दशाओं में गुजरना पड़ा ! किन्तु घूमर काकी या मां—या और कोई तुम्हारा दुश्मन, किसीको भी इसमे बदनाम करने को क्या मसाला मिला, मैं नहीं समझ पाया। मां बनना यदि किसीके लिए शर्म की बात हो, तो सृष्टि का अन्त ही समझो !'

कमला उठ बैठी, यह दूसरी ओर दृष्टि करके लेटे हुए नटनागर उस प्रायांधकार में भी जान गए। कमला ने कहा 'वे कहते हैं कि मैं समय से पहले मां बन जाऊंगी !'

नटनागर कुछ नहीं समझ सके, बोले, 'यानी ?'

कमला ने नटनागर की ओर देखा, एक क्षण के लिए रुकी, बोली, 'मुझे यह सातवां महीना है !'

'तो ?'

झल्ल कर कमला ने कहा, 'यही कि मेरे गर्भ की संतान तुम्हारी संतान नहीं है !'

'कमला !'—और नटनागर आवेश में अपने पलंग पर बैठ गए ! उस अंधकार में भी दोनों की दृष्टियां चार हो गईं।

सिर नीचा करके कमला ने कहा, 'वे कहते हैं कि गत दस माह से तुम बाहर हो !'

नटनागर का हृदय उछलने लगा, सांस की गति क्षिप्र हो गई; वे कभी इधर कभी उधर देखने लगे। हृदय पर दबाव बढ़ा, उन्हें खांसी

का दौर होने लगा; सामने अंधकार में उन्हें काले-पीले दिखाई देने लगे, सारा कमरा मानो घूमने लगा, वे फिर बिस्तर पर लुढ़क गए। कमला बैठी रही, उसी तरह नीची दृष्टि किए हुए।

नटनागर को शायद अव्यक्त में ऐसी ही कुछ आशंका थी। बड़ी अप्रिय बात है इसलिए उनके मन का चोर उसे अचेतन में दबाए बैठा था; कमला ने साहूकार को जगा दिया, चोर को भागना पड़ा। चैतन्य में उस बात के आते ही नटनागर चौंक ज़रूर गए, किन्तु दबे हुए मन पर से मानो एक शिला भी हट गई ! एक लंबी सांस लेकर बोले :

'तो क्या यह सब सच है कमला ?'

कमला ने कहा, 'तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक नहीं है। इस अप्रिय चर्चा को अब न बढ़ने दो। सो जाओ ! मुझे भी नींद आ रही है।'—और वह लेट गई।

'कह नहीं सकता, तुम्हें नींद आ जाएगी या नहीं !—पर क्या सोचती हो, मुझे भी नींद आ जाएगी ?'

'पर तुम्हारा स्वास्थ्य जो खराब है !'

'सो अच्छा ही है कमला, जीने के लिए जब कोई आश्वासन न हो, तो तिनके का सहारा जितनी जल्दी छूट जाए उतना ही अच्छा !'

'परन्तु यदि अपराध मैंने किया है, तो उसका दण्ड तुम क्यों भोगोगे ?'

नटनागर चुप हो गए। उत्तर दे सकते थे कि तुम जो मेरी हो।—किन्तु मानो इस वाक्य का स्पष्ट अर्थ आज के पहले उन्हें कभी हृदयंगम नहीं हुआ। सच ही तो है ! अपराध कमला ने किया है उसका दण्ड नटनागर क्यों भोगे ?

नटनागर ने कहा, 'सामाजिक दृष्टि से मैं तुम्हारा पति हूं, क्या तुम समझती हो अपमान का बोध मुझमें नहीं है ?'

'सामाजिक दृष्टि से !—और वैयक्तिक दृष्टि से ?'—दीर्घ आंखों को कमला ने नटनागर की दृष्टि में गड़ाकर कहा। सामने की दीवार से

टकराए हुए प्रकाश की नील तारिका उसकी आंखों में झलक उठी।

नटनागर ने क्षीण हंसी हंसकर कहा, 'कोयल के बच्चों को पालने की मूर्खता कौआ ही करता है कमला, मनुष्य उससे ऊपर का प्राणी है।'

कमला ने कहा, 'तब भी कौआ कोयल के बच्चों को अपनी ही संतान समझकर पोषण करता है; यह प्रवंचना और आत्मसंतोष मनुष्य ही को मुबारक हो कि अपनी शक्ति पर जब विश्वास न रहे, तब भी वह दूसरों के बच्चों को गोद लेकर बाप का नाटक खेल ले।'

'तुम्हारा मतलब ?'

'कुछ नहीं।'

'कमला, तुम मेरी पत्नी हो····'

बीच ही में कमला ने कहा, 'सामाजिक दृष्टि से ही तो !—इस दावे को समाज के सामने ही पेश करना, अभी तो हम दोनों ही अकेले हैं।'

नटनागर क्या उत्तर देते ?—किन्तु उनकी आत्मा उत्तरोत्तर अधिक कष्ट पाती रही, जैसे-जैसे वे अधिक सोचते रहे।

कुछ देर के बाद नटनागर ने कहा, 'मैं शरीर से क्षीण होता जा रहा हूं। यह मेरा दुर्भाग्य हो सकता है कमला, पर मेरा अपराध तो नहीं।'

अन्धकार में भी कमला मुस्करा उठी, किन्तु लेटे ही लेटे बोली, 'दुर्भाग्य और अपराध में कितना अन्तर है, यह मैं नहीं जानती। एक कारण है और दूसरा कार्य, यह भी नहीं कहा जा सकता। किन्तु शरीर के क्षीण होने ही की कथा हो, तो मेरा ही पलड़ा क्यों भारी मान लिया जाएगा ?—इसीलिए न कि मैं स्त्री हूं !—पुरुष उच्छृंखल हो तो वह बहादुर है, स्त्री यदि कभी विवशता से हो जाए तो वह बेहया है।'

'नहीं-नहीं कमला, मुझे इतनी कठोरता से मत परखो।'

कमला पुनः अपने बिस्तर पर बैठ गई। बोली, 'मैं ? मैं परखूंगी तुम्हें ? किसलिए ?'

'तुमने कहा न कि मनुष्य को जब अपनी शक्ति पर विश्वास न रहे···'

लम्बी सांस लेकर कमला उठ खड़ी हुई। उठकर धीर पदों से वह सामने की दीवार तक गई जहां से प्रकाश की किरणें टकराकर परावर्तित हो रही थीं। नटनागर को केवल कमला छाया-मूर्ति ही प्रतीत हो रही थी।

हाथ के नाखूनों से कुछ देर तक खेलकर उसी मुद्रा में खड़ी हुई कमला ने पूछा :

'मुझे क्या करने को कहते हो ?'

सारा कमरा अवरुद्ध प्रकाश के गर्भ में मायामुग्ध-सा दिखाई दे रहा था। कहीं कोई शब्द नहीं था, केवल टेबल पर रखी हुई घड़ी टिक-टिक शब्द करके सारे वातावरण को बोझिल बना रही थी। पास की अर्द्धनिमीलित खिड़की से मन्द पवन के झोंके कभी-कभी अवश्य सारे कमरे की स्तब्धता को भंग कर देते थे। नटनागर मानो स्वप्नराज्य में किसी विभीषिका से जूझ रहे थे। स्वयं कमला भी अपने आपको किसी नई दुनिया में अनुभव कर रही थी। हृदय दोनों के मानो बहुत देर तक धड़क-धड़ककर अब थक चुके थे, उनकी सांस भी शिथिल हो गई थी।

बहुत सोच-विचार के बाद मानो अपने आपको तैयार करके नटनागर ने कहा :

'क्या इसे अभी गिराया नहीं जा सकता ?'

कमला ने मुड़कर पलंग की ओर दृष्टि डाली। नटनागर को तब भी कुछ स्पष्ट दिखाई नहीं दिया, किन्तु कमला को मानो भविष्य की समस्त सीमा दिखाई दे गई। उसने हाथ बढ़ाकर दीपक के स्विच पर रखा। एक निमिष में निविड़ अन्धकार में दोनों की समस्त अनुभूति खो गई।

कुछ देर के बाद कमला के बिस्तर पर से आवाज आई। 'गिराया तो क्यों नहीं जा सकता ! किन्तु इतने दिन बाद—क्या तुम सोचते हो इसमें

प्राणों का कोई खतरा नहीं है ?'

'कोई चतुर डॉक्टर हो, तो नहीं है ।'

'चतुर डॉक्टर ऐसा काम करने के लिए मिल जाएगा शायद !— किन्तु सात माह में और नौ-साढ़े नौ माह में ऐसा क्या अन्तर पड़ जाता है कि इस छोटी-सी जान पर संकट का पहाड़ डाल दिया जाए ?'

'ओह ! तुम गर्भ की बात कह रही हो । मैं तुम्हारी स्वयं की बात सोच रहा था ।'

'तो दो हत्याओं का खतरा लेने के लिए मुझे कह रहे हो ?'

'आने वाले को तो न आने देने के लिए ही यह सब कुछ है, परन्तु तुम्हें क्या भय होगा ? किसी अच्छे डॉक्टर से बात करने से ही काम चल जाएगा ।'

कुछ सोचकर कमला ने कहा, 'मैं मरने से नहीं डरती, पर मारने से तो इस युग में सभी को डरना चाहिए, चाहे वह अपनी स्त्री ही हो ! मैं अपनी सन्तान को नहीं मारना चाहती । मुझसे यह नहीं होगा ।'

'किन्तु इस तीसरे बाहरी उपद्रव के हमारे बीच में रहने से हमारा संसार कैसे चलेगा ?'

'जैसे अब तक चलता आया है ।'

'नहीं, यह नहीं हो सकता । मैं उस पिल्ले का मुंह कैसे देख सकूंगा, जो मेरा नहीं है और जिसकी कल्पनामात्र मेरे पौरुष की सदैव लांछना करती रहेगी ।'

'वह मेरी सन्तान तो होगा, तुम्हारी न सही ! मेरी साड़ी तो तुम्हारे किसी उपयोग की नहीं । उसे मैंने खरीदा है, अपनी पसन्द के अनुसार, इसे तुम कैसे सहन कर लेते हो ?'

'साड़ी और पुत्र एक बात नहीं है, यह तुम खूब अच्छी तरह समझती हो कमला !'

'किन्तु ममत्व की भावना तो वही है, अन्तर उसमें अंशों का हो सकता है, प्रकार का नहीं !'

फिर अनेक क्षणों तक चुप्पी ! दोनों मानो अपने शस्त्रास्त्र तौल रहे थे।

नटनागर ने थूक निगलकर पूछा, 'अच्छा कमला, एक बात बता सकती हो ?'

'पूछो !'

'यह सन्तान किसकी है ?'

कुछ देर चुप रहकर कमला ने उत्तर दिया, 'मेरी।'

'उसके पिता का नाम नहीं बताओगी ?'

फिर कुछ देर चुप रहकर कमला ने कहा, 'क्या प्रयोजन है ?'

'प्रयोजन है कमला ! क्या तुम समझती हो कि तुम मेरी पत्नी होकर अपनी इच्छानुसार अपने चरित्र के साथ खिलवाड़ करो और मैं उस छली का नाम भी न जान सकूं जिसने मेरे सोने के संसार को राख कर देना चाहा है ?'

'धीरे बोलो ! पास भी कोई रोगी रहते हैं, और बहुत सम्भव है कि कोई नर्स आकर तुम्हें सो जाने के लिए बाध्य करे !'

'तुम्हें मेरी बात का उत्तर देना होगा।'

'ज़रूर दूंगी, पूछो !'

'इस गर्भस्थ शिशु का बाप कौन है ?'

'कोई नहीं; यदि तुम बनना चाहो तो ठीक है, नहीं तो जो भी बनना चाहे !'

'कौन बनना चाहेगा ऐसी जारज संतान का बाप ?'

'बाप कोई न बने। किन्तु मां तो बनाई नहीं जाती।'

निष्फल क्रोध में अपने ओठों को काटकर नटनागर ने जब कमला की ओर अपनी दृष्टि फिराई तो उसमें आंसू भरे हुए थे किन्तु अंधकार में उन्हें देखता ही कौन ?

नटनागर ने कहा, 'कमला, तुम मेरा दुःख नहीं समझ सकतीं; मुझे अपने ऊपर आज कितनी ग्लानि हो रही है, इसकी कोई कल्पना नहीं

कर सकता। अब तक मैं अपनी बीमारी से लड़ता आ रहा था, जीवित रहने की मुझे बड़ी साध थी, किन्तु अब ?—समझ नहीं पड़ता क्या करूं मैं ?'

कमला ने कहा, 'मैं देखती हूं कि तुममें पिता बनने की योग्यता नहीं है, कम से कम मेरी संतान के तो अवश्य नहीं, तुम मुझसे घृणा जो करने लग गए हो। मैं नहीं जानती कि माता होना क्या चीज़ है। स्त्रीत्व के लिए उसकी क्या सार्थकता है यह मैंने कभी सोच नहीं देखा, और पढ़ा चाहे जितना हो, उससे समझा तो कुछ जा नहीं सकता। यदि इस लांछना का पता होता, और मां बनने की संभावना को टाल सकती, तो इसके लिए मैं कभी आग्रह न करती। फिर भी अनचाहे और अनजाने ही जब मां बनने की संभावना का अभिशाप मुझे मिल गया है, तो अचानक ही मां के संस्कार मुझमें जाग गए हैं; भावना इसमें बिल्कुल नहीं है, यह मैं जानती हूं, फिर भी अपने ही अंश को मैं नष्ट कैसे होता देख सकती हूं ? —स्त्री आश्रय चाहती है, वह तुमने नहीं दिया, न सही; किन्तु वह मेरा दुःख है, तुम्हारा क्या ?'

कई क्षण चुप्पी और अंधकार में कट गए।

कमला ने कहा, लम्बी सांस लेकर, 'सचमुच तुम्हारे पौरुष के लिए संकट उपस्थित हो गया है। एक काम तो कर सकते हो ?'

'क्या ?'

'मुझे तलाक दे दो। चरित्र-हीनता का अपराध मैं स्वीकार कर लूंगी।'

अपने आपको संयत करने में नटनागर को काफी समय लग गया, और जब वे बोलने लगे तो उनका स्वर रोरुद्यमान था यह छिपा न रह सका···

'कमला····'

उत्तर में कमला केवल उद्ग्रीव हो गई।

'क्या सचमुच ही तुमने कभी एक क्षण के लिए भी मुझे प्यार नहीं

किया ? जिस मोह के साथ मैं उलझा रहा, मैंने अपने जीवन के ताने-बाने जिस सुनहरे प्रकाश में बुनने चाहे, क्या वास्तव में उसमें कोई सचाई न थी ?—क्या आज तक का हमारे-तुम्हारे बीच का यह सब आदान-प्रदान एक मिथ्या के सिवा कुछ न था ? जिस नींव पर हमने गृहस्थी का यह भव्य प्रासाद खड़ा करना चाहा, क्या वह रेत ही की बनी हुई है कि एक झटके के साथ ही उसे ढह जाना पड़ेगा ?—कमला, कमला—कितनी कठोर हो तुम, कैसे सहज भाव से तुम उस प्रस्ताव को रख सकी हो !'

'नींव यदि रेती की हो, तो प्रासाद जितनी जल्दी ढह जाए, उतना ही अच्छा है। रहा सवाल मेरी कठोरता का, सो क्या तुम सोचते हो मेरा कुछ नष्ट न होगा ?—तुम पुरुष हो, समाज में तुम्हारा कुछ बिगड़ेगा नहीं। बल्कि कुमारी कन्याओं में तुम्हारी साख बढ़ ही जाएगी, मुझसे भी किसी अच्छी, सुन्दर, पढ़ी-लिखी लड़की का तुम वरण कर सकोगे, और दो दिन बाद ही जीवन की रंगीनी में तुम्हारा यह सारा पुराना अंधकार धुल-पुंछ जाएगा; कमला नाम की किसी हत-भागिनी की तुम्हें स्मृति भी नहीं रहेगी। किन्तु मैं ?—मैं स्त्री-जाति की हूं, जिसको भगवान ने दण्ड ग्रहण करने ही के लिए बनाया है। यदि वह कभी दण्ड देने की स्पर्द्धा करे, तो भी वह उसीकी पीठ पर पड़ता है, और फिर भी समाज यही समझता है कि दण्ड देने वाली वही है। स्त्री का अतीत उसकी स्मृति में नहीं, उसकी प्रकृति में, उसके शरीर में भिद जाता है, वह यदि उसे भुलाना चाहे, तो उसके शरीर की कोटि-कोटि शिराएं रक्त के प्रबल उच्छ्वास से फटकर, रोम-कूपों से अगणित हाथ उठाकर उसे कचोट-कचोटकर याद दिलाती रहती है; और यदि चरित्र-हीनता का भार उसके मस्तक पर लाद दिया जाए, तो जानते हो, दुनियां की गन्दगी में से वह ऊपर उठ ही नहीं सकती, वह गले में पत्थर बांधकर तैरने की चेष्टा होगी, पर उसे डूबने के सिवा और कोई गति नहीं है। मुझ अभागिनी को तो एक जारज संतान का हाथ भी पकड़कर अपने ही को नहीं, दुनियां को भी हर क्षण जताते रहना है कि मैं कौन हूं, कहां से आई हूं,

और किस दिशा में मेरा मार्ग है ! फिर भी सोचते हो, इस सौदे में तुम्हीं ठगे गए हो ?'

लेटे हुए नटनागर उठकर कब अपने पलंग पर बैठ गए थे, यह कमला को मालूम न था। कमरे में इस समय प्रकाश न था, किन्तु सामने की खिड़की से बाहर निरभ्र आकाश की तारिकाएं अपनी झलक से कमरे को एकदम अछूता भी नहीं रख सकी थीं।

नटनागर ने कहा, 'नहीं कमला, मैं तुम्हें तलाक नहीं दे सकता !—तुम्हारे बिना मैं जीवित नहीं रह सकता !—इतनी कठोर तुम मत बनो।' और सचमुच ही नटनागर का कण्ठ गद्‌गद हो उठा, आगे वे बोल नहीं सके।

'कठोर तो मैं ही कहलाऊंगी। समाज का यही तो नियम है, जो सबसे अधिक निर्बल है, उसके ऊपर बल-प्रयोग के समान निरापद और वस्तु ही क्या है। रहा सवाल जीवित रहने का, सो यह बात तो कोई भी नहीं मानेगा कि जिससे घृणा की जाती है, वही जीवन का अवलंबन कैसे हो सकता है। खैर, तुम्हारे पौरुष को आंच न आने पाए इसका एक और उपाय है।'

'क्या ?'

'अस्पताल में किसी नर्स से कहकर कुछ संखिया की व्यवस्था कर सकते हो ?—मुझसे और मेरी होने वाली संतान दोनों से ही तुम्हें मुक्ति मिल जाएगी, तुम्हारे ऊपर कोई अंगुली भी न उठाएगा।'

'कमला !....'

'पर और उपाय ही क्या है ?'

'तुम मुझे गलत समझ रही हो कमला, मैं इसके सिवा और कुछ नहीं कह सकता !—यदि हृदय चीरकर दिखाना सम्भव होता, तो मैं तुम्हें बतलाता कि उसमें रक्त के बदले केवल तुम्हारी अनुभूति का प्रवाह बह रहा है !—' और यह कहते-कहते मानो वे बहुत अधिक थककर, पुनः अपने बिस्तर पर लेट गए, और धीरे-धीरे तौल-तौलकर कहने लगे,

'गलत समझ रही हो !—मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, व्यक्तिगत जीवन तो है, उसकी आशा-निराशा, हर्ष-अमर्ष, सुख-दुःख, हानि-लाभ—यह सब तो हैं ही; किन्तु समाज की मान्यता भी उसके लिए उतनी ही आवश्यक है। वह अपने चरित्र से, आचरण से समाज की धाराओं को भी आलोड़ित करता रहता है, इसीलिए समाज के विधि-निषेध उसे मानने ही पड़ते हैं। मेरे आज ही के व्यवहार को ध्रुव समझकर तुम मुझपर क्रोध कर सकती हो, मुझे मंझधार में डूबता-उतराता छोड़कर तुम जा सकती हो, मेरा क्या है ? क्षय की निविड़ गलियों में फंस ही चुका हूं, इससे बच निकलने का ही कोई रास्ता नहीं दिखाई देता, अब यदि बच निकलने की साध भी न रहे, तो भी ठीक ही है। किन्तु तुम समझोगी इस तथ्य को तब जब समाज तुमसे और तुम्हारी होने वाली संतान से उसके पितृत्व की कैफियत मांगेगा। उस कैफियत से समाज का कुछ बनता-बिगड़ता नहीं, यह मैं जानता हूं, किन्तु अपने भविष्य की गतिविधि तो उसे संयमित रखनी होती है, वह दो प्राणों की कुर्बानी की ओर नहीं देखता। और तब अपनी संतान के अभिशाप को तुम अपनी आंखों देख नहीं सकोगी ! तुम्हें मृत्यु से अधिक यंत्रणा मिलेगी ! तुम मरना चाहोगी, किन्तु तुम्हारी संतान तुम्हारे लिए मरने की सुविधा नहीं रखेगी। मैं उसीकी चिन्ता से तुम्हें और, यदि जीवित रह सकूं, तो ज़रूर ही अपने आपको भी बचाना चाहता था। तुमने मुझे गलत समझा कमला, गलत समझा ! मैं तुम्हें तलाक नहीं दे सकता, मैं तुम्हें ज़हर नहीं दे सकता ! मैं केवल तुम्हें सुख देना चाहता हूं, केवल सुख, मरकर भी यदि यह सम्भव हो—और कमला, विश्वास मानो, मेरे द्वारा यदि तुम्हें तनिक भी दुःख पहुंचा, तो वह मेरे जीवन का सबसे बड़ा अभिशाप होगा।' और नटनागर ने अपने मुंह पर चादर डाल ली।

कमला की आंखें डबडबा आईं पहली बार—उसने अपनी सिक्त-दृष्टि को उठाया, किन्तु सिवा निविड़तम अंधकार के उसे कुछ नहीं दिखाई दिया !—भविष्य की उस सूनी दिशा में कुछ देर तक निष्प्रयोजन ताकते रहने के बाद, कमला ने अपना हाथ बढ़ाकर नटनागर के हृदय पर रख

दिया, नटनागर ने चादर के भीतर से अपना हाथ बाहर निकाला, अचेतन ही में दोनों हाथ एक दूसरे में गुथ गए ! कई क्षण और भी इसी निर्वाक् संभाषण में बीत गए !

जब कमला ने मुंह खोला, तो उसकी वाणी भींगी हुई थी, शब्द कठिनाई से उसके गले से बाहर हो रहे थे, 'तुम जो कुछ कहोगे, मैं करने के लिए तैयार हूं, पर मेरी संतान की हत्या के लिए तुम मुझसे न कहना, वह मुझसे नहीं होगी, कभी नहीं होगी !'—और उसने पास सरककर नटनागर के वक्ष पर अपना मस्तक रख दिया। उसकी आंखों से आंसुओं की धाराएं बहने लगीं, जैसे-जैसे नटनागर की अंगुलियां उसके मस्तक के बालों में घूम-घूमकर उसे आश्वस्त करने का प्रयत्न करने लगीं !

बहुत देर तक सोचते रहकर नटनागर ने कहा, 'मैं तो अब केवल एक ही मार्ग देखता हूं कमला !'

'कहो ?'

'संतान की आसक्ति तो तुम्हें छोड़नी ही होगी।'

'संतान-सुख की मुझे कल्पना नहीं है, उसकी याचना भी नहीं करूंगी !'

'तो प्रसव के बाद ही उसे या तो किसी अनाथालय में या किसी मिशनरी-संस्था में दे देना होगा !'

कांपते ओठों से कमला ने कहा, 'मिशन वाले उसे ले लेंगे ?'

'प्रयास तो करना ही पड़ेगा, शायद कुछ अर्थ की व्यवस्था भी करनी पड़े।'

'वह कैसे हो सकेगी ?'

'गांव के घर को बेचकर !'

'घर बेचकर ?'

कुछ मुस्कराकर नटनागर ने कहा, 'काफी बड़ा घर है ! हम लोग तो वहां रहते नहीं। कभी रहने की आशा भी नहीं है। मां जब तक ज़िन्दा है, यदि हमारे साथ नहीं रह सकती, तो गांव में एक छोटा घर

किराए लेकर भी गुज़र कर सकती है।'

'पर मां इसके लिए राजी हो जाएंगी ?'

'राजी तो उसे होना ही पड़ेगा कमला ! आखिर उसके लड़के के जीवन से उसका घर बड़ा नहीं है।'

'और भविष्य ?'

'मेरा भविष्य तुम जो हो !....'

'नहीं, नहीं, घर बेचने की आवश्यकता नहीं होगी। यदि अर्थ की व्यवस्था ही करनी पड़ी तो उसका भार मेरे सिर पर रहेगा ! मेरे पास मेरी मां के दिए हुए गहने हैं, वे किस दिन काम आएंगे; और भविष्य में मेरी निज की भी तो सर्विस हो जाएगी ?—लेकिन...'

'क्या ?'

'मिशन में भेजने की....'

'मैं यहीं पर तुम्हारे प्रसव की व्यवस्था करवा दूंगा, रेलवे मेटर्निटी होम में। यहां जो नर्स मुझे देखती है उसकी छोटी बहन वहां पर वार्डन है; सच तो तुम्हारे प्रसव के बारे में मैंने एक तरह से व्यवस्था कर ही दी थी। केवल सी० एम० ओ० को लिखकर एक रूम रिजर्व करवाने की कार्यवाही ही करना शेष है ! किन्तु उस बच्चे को मिशन में भेजने की दिशा में क्या करना होगा, सो मैं समझ नहीं पा रहा हूं।'

कमला ने लम्बी सांस लेकर कहा, 'अब अधिक न सोचो तुम। रात तीन पहर बीत चुकी है ! यदि कुछ नींद ले सको तो अच्छा है ! अभी काफी समय है, न होगा मैं ही कोई व्यवस्था करूंगी !'

और उठकर कमला ने अपना मुंह पोंछा, नटनागर के बिस्तर की चादर को ठीक किया, ठण्डी हवा के झोंके आने शुरू हो गए थे, उसने खिड़की को बन्द किया, फिर दूसरी चादर से नटनागर के शरीर को भली भांति ढंककर, वह पास ही सिरहाने बैठकर उनके मस्तक को सहलाने लगी।

कहा नहीं जा सकता कि कब नटनागर सोचते-सोचते सो गए, किन्तु

कमला की आंखों में उस रात सिवा भविष्य की धूमिल कल्पना-रेखा के और कुछ न था। कई बातों के साथ उसने निश्चय किया कि सहायता के लिए वह एक पत्र धर्मप्रकाश को भी लिखेगी ! आखिर उसके सर्वनाश में उसका ही तो सबसे बड़ा दायित्व है !

१४

उस रात को बीते दो माह हो गए। कमला रेलवे के मेटर्निटी हास्पिटल में भरती हो गई है। नटनागर का ऑपरेशन हो गया है। उस रात के दूसरे दिन ही डॉक्टरों ने देखा कि नटनागर की तबियत एकाएक ही गिर गई है। उसके पहले तक उन्होंने एकाएक ही अप्रत्याशित सुधार का परिचय दिया था, अतः उनके स्वास्थ्य की आकस्मिक गिरावट को डॉक्टर समझ न सके, और बीमारी को अधिक अवसर देना उन्होंने उचित नहीं समझा। स्वयं नटनागर का भी आग्रह रहा, क्योंकि इस ऑपरेशन के बाद ही मिसेज़ नटनागर को अपने कन्फाइनमेंट की तैयारी करनी थी।

ऑपरेशन सफलतापूर्वक हो गया। कमला ने बड़े मनोयोग से नटनागर की सेवा की, अब उन्हें सेनेटोरियम में भेज दिया गया है, जहां कम से कम छः मास उन्हें बिताने पड़ेंगे। कमला उन्हींके साथ रहना चाहती थी, पर मज़बूरी थी, वैसे सेनेटोरियम में सब प्रकार की बड़ी उत्तम व्यवस्था थी, और कमला के उद्विग्न होने का कोई कारण नहीं था।

मेटर्निटी हास्पिटल की चीफ वार्डन थी नटनागर के अस्पताल की नर्स पेट्रीशिया की छोटी बहिन पोर्शिया। कमला पोर्शिया के नाम पेट्रीशिया से एक पत्र लेकर आई थी। पोर्शिया ने उसके साथ बहुत ही सुन्दर व्यवहार किया। अस्पताल रेलवे का था, वार्डन कमला पर मेहरबान थी

ही, उसे एक सुन्दर कमरा अपने लिए मिल गया। अभी प्रसव में देर थी, किन्तु बम्बई में कमला को और कहीं ठहरने की व्यवस्था न थी। नटनागर की बीमारी और विशेष प्रार्थना से कमला को अस्पताल ही में ठहरने की अनुमति मिल गई थी।

पोर्शिया कमला की समवयस्क थी। अभी-अभी ही कॉलेज छोड़ा था। यहां पर उसे छः माह बिताने हैं, यह उसकी प्रैक्टिकल ट्रेनिंग का एक भाग था, इसके बाद उसे कहीं हाउस-सर्जन का काम करना था, बाद में फिर किसी अच्छे डॉक्टर के साथ कुछ अनुभव प्राप्त करेगी। उसके बाद तै करेगी कि उसे कहीं सर्विस करना है, या जमकर स्वतन्त्र व्यवसाय।

कमला का कमरा पोर्शिया के कमरे के पास ही है। प्रायः ही कमला पोर्शिया के कमरे में देखी जा सकती है, कभी-कभी पोर्शिया भी कमला के कमरे में चली आती है, दोनों में सौहार्द्र और सख्य बढ़ता जा रहा है। समवयस्क होने पर भी पोर्शिया अविवाहित है, कुमारी है; कमला विवाहित ही नहीं, मां बनने की तैयारी कर रही है। दोनों पढ़ी-लिखी हैं, किन्तु दोनों के संस्कार बिल्कुल पृथक्-पृथक् हैं। दोनों भारतीय हैं, किन्तु दोनों का धर्म जुदा, सामाजिक पृष्ठभूमि जुदी, आशा-विश्वास जुदे, और भविष्य जुदा—दोनों अपने-अपने अनुभवों का आदान-प्रदान करने लगीं।

वार्ड की अन्य नर्सों के साथ पोर्शिया का सम्बन्ध बराबरी का न था, पोर्शिया थी उनकी सरदार, अतः उनसे घुल-मिलकर बात करने का प्रश्न ही न था। अन्य डाक्टर सदैव वार्ड में रहती न थीं, शेष में अन्य महिलाएं, जो वहां प्रसव के लिए ठहरी हुई थीं, इतनी पढ़ी-लिखी न थीं कि पोर्शिया उनके साथ अपना मन खोलकर बात कर सकती थी। फिर किसी अन्य महिला को इतना अवसर भी न था। प्रसव-काल के समीप होने पर वे उपस्थित होतीं, और उसके बाद उन्हें अधिक समय न मिलता।

ज़रा स्वस्थ होते ही वे घर लौट जातीं। कमला की परिस्थितियां बिल्कुल ही दूसरी थीं।

उस दिन पोर्शिया के कमरे में ही दोनों सखियां बैठी हुई थीं।

बातचीत के दौरान में पोर्शिया ने कहा, 'मां बनने की सम्भावना तुम्हें कैसी लगती है कमला ?'

'बड़ा डर लगता है पर्सी !'

'डर ?'

'सो ही तो ! क्या जाने क्या होगा ? कहते हैं, यह स्त्री का नया जन्म ही होता है।'

'तो नये जन्म से डर कैसा ?'

'इस जन्म की क्या वह मृत्यु नहीं होती ?'

'एकदम तो मृत्यु नहीं। और फिर नारी के जीवन में यह घटना तो बहुत ही सामान्य है। प्रत्येक नारी ही तो मां बनती है। फिर डर कैसा ? बायोलोजिकली यही घटना तो नारी-जीवन के व्यक्तित्व का चरम विकास है।'

कमला ने हंसकर कहा, 'तुम भी शीघ्र ही विवाह करके क्यों नहीं अपने व्यक्तित्व का विकास लाभ करतीं।'

'मेरी बात अलग है। मैं मां बनने की अपेक्षा नारी को मां बनने में सहायक होना अधिक अच्छा समझती हूं।'

'पर इससे स्वयं मां बनने में क्या बाधा उपस्थित होती है ?'

'वाह ? प्रसव मात्र से तो मां बनने की क्रिया सम्पन्न नहीं हो जाती। शिशु का लालन-पालन, उसको बड़ा करना, मनुष्य बनाना, अपने प्रेम का उसपर अभिषेक करना, यह सब किए बिना तो मां नहीं बना जा सकता। और इतनी सारी जिम्मेदारियों के बाद क्या सोच सकती हो कि मैं यह धन्धा जारी रख सकती हूं ? नहीं, इसं लिए मैंने निश्चय किया है, कि मैं विवाह ही नहीं करूंगी।'

'फिर तुम्हारे व्यक्तित्व का विकास कैसे होगा ?'

हंसकर पोर्शिया ने कहा, 'मैं माताओं की माता जो बनने जा रही हूं, यही मेरे व्यक्तित्व का विकास है। प्रसव की पीड़ा मुझे नहीं अनुभव करनी पड़ेगी, किन्तु माताओं को ठीक माता बनाना क्या कम दायित्व का काम है ?'

'अच्छा पर्सी, एक बात बताओगी !'

'क्या ?'

'क्या सन्तान के ऊपर माता-पिता का कुछ प्रभाव पड़ता है—यानी एथिकल (आचरण-सम्बन्धी) और बायोलोजिकल—दोनों !'

'इसका तो एक अलग शास्त्र ही है, जेनेटिक्स, वंशानुक्रम—अवश्य बच्चा कई बातों में माता-पिता का प्रभाव प्राप्त करता है, वह उनका अंश ही तो है। इसीलिए तो देखती हो, बच्चों की शक्ल, रूप, गुण माता-पिताओं के अनुकूल होते हैं।'

'यदि माता-पिता में कुछ दोष हों ?'

'तो सन्तान भी उसकी भागीदार हो सकती है। बहुतेरी बीमारियां होती हैं, जो सन्तान को उत्तराधिकार में मिल सकती हैं।'

'क्या यह सच है !' कमला ने मानो भय का नाट्य करते हुए कहा।

'सच क्यों नहीं। यह तो बहुत सामान्य बात है। अन्य देशों में तो इसीलिए विवाह के पूर्व डाक्टरी प्रमाण-पत्र लेना पड़ता है। ताकि उनकी सन्तान किसी प्रकार के ऐसे रोग का शिकार न हो।'

'ऐसे माता-पिता यदि सन्तान पैदा करें, तो क्या वह समाज के प्रति अविचार न होगा !'

'अवश्य होगा। भारतवर्ष में भी ऐसा कानून बनना चाहिए।'

'पर्सी'

'क्या ?'

'तुम जानती हो, मेरे पति बीमार हैं ?'

'अच्छा, यह तो तुमने कभी बताया नहीं। पेट्रीशिया ने भी अपने पत्र में ऐसा कुछ लिखा तो था, किन्तु क्या अभी तक वे बीमार हैं ?'

'हां, अभी वे आरोग्य लाभ कर रहे हैं। जानती हो उन्हें क्या बीमारी है ?'

'नहीं तो !'

'उन्हें फेफड़ों की टी० बी० है !'

'अरे ?' दोनों कुछ देर तक चुप रहीं।

कमला ने पूछा, 'क्या उत्तराधिकार में इस रोग को भी उस शिशु को पाना होगा ?'

पर्सी को आघात-सा लगा, उसकी प्यारी सखी की आशंका निर्मूल तो नहीं है, बोली, 'हो भी सकता है, नहीं भी !'

कमला ने मुस्कराकर कहा, 'यह तो कोई उत्तर नहीं हुआ। अच्छा, इसका कुछ उपचार भी है ?'

'उपचार है क्यों नहीं।—बी० सी० जी०....'

'वह बात रहने दो ! बी० सी० जी० का टीका मैंने भी लिया है। उन्होंने भी लिया था !'

'यह भी तो हो सकता है कि उस शिशु को यह रोग हो ही नहीं ! फिर, भविष्य की पीढ़ियों का इतनी सूक्ष्मता से विचार कौन करता है कमला, कि तुम्हींको करना पड़ेगा।'

'बात यह है पर्सी, कि मैं इसी आशंका से डरी हुई हूं। मैं नहीं जानती कि मां होना कैसा होता है, सन्तान के प्रति उसकी कैसी आसक्ति रहती है ! मेरी मां मेरे बचपन में ही मर गई। पिता दूसरा विवाह कर लाए, सो अनुभव तो मुझे विमाता का ही है ! इस अनुभूति के बल पर मैं कह सकती हूं कि एक बीमार शिशु की मां बनकर, जीवन भर उसके भार को ढोते रहकर, एक दिन अकस्मात् ही उसके अनावश्यक और अकर्मण्य अस्तित्व के अभाव में धारासार आंसू बहाते रहने की अपेक्षा, मां न बनना ही बहुत उत्तम है !'

'कहती क्या हो ?'

'सच कहती हूं पर्सी, मां बनने की मुझे कोई साध नहीं। अभी मेरी

उमर ही क्या है ? तुम्हें देखकर मुझे बड़ी जलन होती है। कितनी मुक्त हो तुम, और मां बनने के बाद मैं !' कमला ने एक पत्र निकालकर पोर्शिया को दिया और कहा, 'देखो, मैंने रेलवे स्कूल में अध्यापिका की जगह के लिए आवेदन किया था, मेरी प्रार्थना स्वीकृत हो गई है, क्या तुम सोचती हो उस शिशु को लेकर मैं सर्विस कर सकूंगी ?'

'पर यह तो तुम्हें विवाह के पहले ही सोचना चाहिए था कमला।'

'था की बात जाने दो, अब क्या हो सकता है सो बताओ। और फिर इस बीमारी की सम्भावना से ग्रस्त सन्तान की मां बनना ! पर्सी मुझे बचा लो, ममता की अनुभूति के जागृत होने के पहले ही यदि मैं इस आफत से बच सकूं।'

'क्या अबोर्शन की कहती हो ?—किन्तु इस स्टेज पर····'

'नहीं, नहीं—अबोर्शन की नहीं ! किन्तु—क्या कोई रास्ता तुम नहीं सुझा सकती ! मैं प्रसव की पीड़ा से नहीं डरती, किन्तु मां बनने की मेरी कतई साध नहीं है।'

पोर्शिया विचारमग्न हो गई !

कमला ने कहा, मानो अपनी भावना को छिपाने के लिए, 'एक और कठिनाई देख रही हूं पर्सी, मिस्टर नटनागर पर इसकी क्या प्रतिक्रिया होगी ?—'

'यस कमला, यह पक्ष तो मैं भूल ही गई थी ! यों, आफ्टर डिलीवरी अगर कुछ पैसे की व्यवस्था हो जाए, तो हम किसी कान्वेण्ट में उस शिशु को भेज सकते हैं। लेकिन एक तो वह ईसाई बना दिया जाएगा, दूसरे मुझे उसका परिचय छिपाने के लिए कुछ कहानी गढ़नी ही पड़ेगी। कान्वेण्ट वाले जब तक उनकी दिलजमई नहीं हो जाए, सरलता से ऐसा कोई भार नहीं लेते ! यों, तुम्हारे मत के कुछ अनाथाश्रम भी तो हैं, उनका भी मेरे मन में ध्यान आया था, लेकिन जानती हो तुम तो, उनकी बड़ी बदनामी भी है ! देखकर तो मक्खी नहीं निगली जा सकती। जो हो, मि० नटनागर का पक्ष तो सोचना ही पड़ेगा। उस कठिनाई को

तुम कैसे पार करोगी ?'

कमला ने कहा, 'तुम से क्या छिपाऊं पर्सी। यह बीमारी के उत्तराधिकार की सम्भावना उन्हें भी है ! और वे इसके लिए बड़े चिंतित हैं। अपने आपको बड़ा अपराधी अनुभव करते हैं।'

'किन्तु वे सन्तान के बिछोह को कैसे सहन कर सकेंगे ?'

'यही मैं भी सोच रही हूं। अच्छा बहन, एक बात नहीं हो सकती ?'

'क्या ?'

'यदि उनसे यह कह दिया जाए, कि डिलीवरी अब्नार्मल (असामान्य प्रसव) हुई, और बच्चा इसी प्रोसेस में मर गया।'

'कमला !'

'एक मिथ्या का आश्रय तो होगा !···' और उसने दृष्टि नीची कर ली, फिर धीरे-धीरे बोली, 'शायद इस दुःख को सहन करना उसके लिए कठिन न होगा ? अपराध की भावना जो उनमें है, सम्भव है वह इससे, अव्यक्त मन ही से सही, अपनी मुक्ति भी समझें !···'

पोर्शिया कमला की ओर देखती रही, उसने देखा कि कमला की आंखें भर आई हैं।

पोर्शिया ने अपने हाथों से कमला के आंसू पोंछकर कहा, 'अच्छा, सोच देखूंगी कि क्या किया जा सकता है। यहां आई हूं अनुभव प्राप्त करने के लिए, एक अनुभव यह भी सही !'

वह जानती थी कि अब उसे कोई भय नहीं है अतः रात्रि को लेटते ही कमला को नींद आ गई। किन्तु आधी रात के बाद ही एक दुःस्वप्न की विभीषिका ने उसे जगा दिया। भीषण स्वप्न था : वह एक बकरी के बच्चे का मानो गला दबा रही थी, गला दबाने में उसे मानो पैशाचिक संतोष प्राप्त हो रहा था; एक ओर उस बच्चे की मां टुकर-टुकर निहार रही थी, देखते ही देखते मानो उस मां का मुंह एकाएक विकृत होने लगा, वह बकरी का मुंह न था, किन्तु मानो एक भयानक बकरे का मुंह था, उसकी आंखों से आग बरस रही थी, अपनी लटकती हुई दाढ़ी को

हिलाकर उसने अपने मस्तक को हिलाया, दो नुकीले टेढ़े सींग, कमला की ओर प्रवृत्त हुए, उसने उस बच्चे का गला छोड़ दिया, और हाथों को बकरे के मस्तक की दिशा में आगे बढ़ा दिए। एक ओर झाड़ी में से तभी एक भयानक गर्जन सुनाई दी, फिर हंसी, अट्टहास—मालूम दिया वे कई पुरुषों की आवाज़ थीं, उनमें धर्मप्रकाश, कमल तथा नटनागर की आवाज भी पहचानी जा सकती थी। तभी एक भेड़िया भी उसकी ओर लपका, उसके धड़ पर मुंह था, धर्मप्रकाश का—वह भय के मारे चीख उठी, और उसकी नींद उचट गई।

अपने बदन का पसीना पोंछकर उसने सोचा कि आज दिन में जो कांड हो चुके हैं, उन्हींकी प्रतिक्रिया उसके मन पर छाई हुई है। धर्मप्रकाश को लिखे हुए पत्र का उत्तर भी उसे मिल गया है। समाचार हर्ष और अमर्ष दोनों पैदा करते हैं। उसकी सर्विस की अर्जी मंजूर हो गई है, नियुक्ति-पत्र भी धर्मप्रकाश ने भेज दिया है। भविष्य की एक आर्थिक चिन्ता तो मानो उसकी मिट गई।

उसने धर्मप्रकाश को लिखा था कि वह नैतिक रूप से कमला की होने वाली संतान का पिता है इसलिए उसे उसका उत्तरदायित्व लेना चाहिए। जहां तक उसका स्वयं का—माता का दायित्व है, वह उसे जन्म दे लेगी, किन्तु बाद में उसकी रक्षा, भरण-पोषण आदि का भार पिता को लेना पड़ता है। वह उस सन्तान को उसके बाप के मत्थे मढ़कर दोनों के जीवन को कष्ट में नहीं डालना चाहती। केवल यह चाहती है कि उसके जीवन-निर्वाह की व्यवस्था हो जाए। वह बच्चे को अपने पास नहीं रख सकेगी, क्योंकि वह किसी दूसरे पुरुष की पत्नी है, जो किसी दूसरे के बच्चे का पालन-पोषण करने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता। उसे आशा थी कि धर्मप्रकाश बाबू उस संतान के निमित्त कुछ पैसा अभी भेज देंगे, और कुछ माहवार भेजते रहेंगे, ताकि किसी कान्वेंट में उसकी व्यवस्था हो सके।

धर्मप्रकाश का पत्र इतना विचित्र था कि कमला समझ भी नहीं

सकी। शायद उनके मन में यह आशंका थी कि कमला कहीं उस पत्र का कानूनी व्यवहार कर बैठेगी। अतः उन्होंने अपने आपको बड़ा बचाकर पत्र लिखा है। यहां तक पत्र के नीचे उनके हस्ताक्षर तक नहीं हैं।

उन्होंने लिखा है कि मां की व्यवस्था के लिए एक नियुक्ति-पत्र साथ में है। इससे अब मां का उनके ऊपर कोई भार नहीं रहेगा। जहां तक संतान का प्रश्न है, यदि कोई पुरुष उसकी मां का पति न हो, तो उसके लिए यह बात प्रमाणित होनी आवश्यक है कि वही उसका पिता है। इस प्रमाण के अभाव में कोई भी कोई दावा स्वीकार नहीं कर सकता। शेष में उन्होंने यह भी लिखा कि उनका स्थानान्तर हो गया है, और इसी सप्ताह वे अपना नया कार्य संभालने के लिए जा रहे हैं, अतः भविष्य में वे किसी प्रकार के पत्र-व्यवहार की आशा नहीं करते—आदि-आदि! कहां उनका स्थानान्तर हुआ है, यह उन्होंने नहीं लिखा—मतलब यह कि बड़ी सावधानी से पत्र लिखा गया है, ताकि यह कभी प्रमाणित न हो कि यह पत्र उन्होंने लिखा है। पत्र हाथ से नहीं टाइप किया हुआ था।

कमला को क्रोध और हंसी दोनों ही एक साथ आए—बेवकूफ, वह उसके पत्र का किसी तरह का उपयोग करना ही कब चाहती थी। वह विवाहिता है, उसका पति उसे प्यार करता है, उसके आशा है, विश्वास है, प्रतिष्ठा है और भविष्य है। हां, एक बात अवश्य हुई, उसे भ्रम था कि शायद धर्मप्रकाश के मन में उसके लिए कुछ स्थान था, वह भ्रम दूर हो गया! कायर कहीं का, एक स्त्री के समान भी साहस नहीं दिखा सका। कमला ने कहीं उस संतान को अस्वीकार नहीं किया। भाग्य की विडम्बना ही थी कि कमला को ऐसे अपदार्थ के प्रति मोह हो गया था। उसे अलक्ष्य में एक और संतोष हुआ कि त्यागकर वह धर्मप्रकाश की निष्ठुरता का बदला उसकी संतान से ले सकेगी।

इसी तरह दिन बीतने लगे। एक दिन उसे मालूम हुआ कि उसके पास ही के कमरे में बड़े ज़ोर-शोर से सफाई हो रही है, कुछ अतिरिक्त

फर्नीचर आ-जा रहा है, हास्पिटल ही के नहीं, बाहर के भी कुछ चपरासी सामान ला-ले जा रहे हैं। मालूम देता है, कोई बड़ा ग्राहक आ रहा है।

पोर्शिया ने कहा, 'हां कमला, एक सहायक इंजीनियर की पत्नी का केस है। केस वैसे कुछ विचित्र ही है। समझो बुढ़ापे में औलाद हो रही है। मिसेज़ कपूर यों उमर में मिस्टर कपूर से दस-बारह वर्ष छोटी होंगी ही, लगभग पैंतीस की समझ लो। पहली डिलीवरी है, और मिसेज़ कपूर कुछ अब्नॉर्मल बताई जाती हैं। हां, पहले उनको काफी हिस्टीरिया के दौरे पड़ते थे, कहते हैं कुछ-कुछ पागल थीं, शुरू से ही शायद ऐसी रही हों। किन्तु कन्सेप्शन के बाद से उनकी मानसिक और शारीरिक दशा में काफी अन्तर हुआ है। मिस्टर कपूर बड़े परेशान-से थे, कल आए थे। यहां बेचारे का टेम्परेरी पोस्टिंग हुआ है, छुट्टी लेकर जा सकते नहीं; रहने का कोई ठिकाना ही नहीं, कहते हैं अभी स्टेशन पर किसी 'सैलून' में ही रहते थे। इसीलिए उन्होंने उत्तम समझा कि यहां शिफ्ट कर देने से कम से कम खतरा रहेगा। आज शाम ही को शिफ्ट हो रही हैं मिसेज़ कपूर! हां, मेरा ख्याल है उसका डिलीवरी पीरियड तुम्हारे समय के आसपास ही समझो! वे चाहते थे कि मिसेज़ कपूर अनवरत मेरी दृष्टि में रहे, मेरे पास का यह कमरा तो तुम लिए हुए हो अतः पास ही का कमरा उनको देना पड़ा।

उसी संध्या को मिसेज़ कपूर भी आ गईं। कमला ने अपने ही कक्ष के द्वार से देखा कि मिसेज़ कपूर ठीक उसी तरह की हैं, जैसा कि पोर्शिया ने बताया था। पोर्शिया भी साथ ही थी। रंग गोरा, देखने में काफी सुन्दर, किन्तु चेहरे पर थकान, चिन्ता तथा भय के चिह्न। सचमुच उमर पैंतीस से भी अधिक दिखाई देती थी। सच ही बेचारी को मां बनने के लिए बहुत प्रतीक्षा करनी पड़ी है, निराशा की स्थिति में उसने स्वास्थ्य और संतुलन खो दिया हो, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं।

पीछे-पीछे मि० कपूर भी चले आ रहे थे। साधारण तौर पर सुदर्शन, क्लीन शेव्ड चेहरा कुछ खिचा हुआ लम्बा, पतले ओंठ, जिनमें

से दांत दिखाई देते हुए, उमर अवश्य ही ४५ और ५० के बीच, किन्तु इतने लगते न थे। सिर खुला हुआ था, बाल खिचड़ी हो रहे थे, और इस तरह संवारे हुए थे कि पीछे की बढ़ती जा रही चांद को छिपा ले।

दूसरे दिन मिस्टर कपूर से अकस्मात् ही भेंट हो गई। कमला पोर्शिया के कमरे में बैठी हुई थी। उसके दिन नज़दीक चले आ रहे थे, उद्वेग तो उसे था ही। उसकी भी वह पहली डिलीवरी थी, किन्तु तत्सम्बन्धी साहित्य पढ़कर उसने अपने आपको सम्पूर्णतया आने वाली परिस्थिति के लिए तैयार कर लिया था। चिन्ता थी केवल नवजात शिशु के भविष्य की; पोर्शिया ने एक फ्रेंच कॉन्वेण्ट से बातचीत करके सब कुछ निश्चित कर लिया था। यह निश्चय कर लिया गया था कि प्रसव के बाद ही शिशु कमला से अलग कर दिया जाएगा। कमला शिशु को नहीं देख सकेगी, जिससे कि उसपर उसके राग-आसक्ति आदि की छाया का स्पर्श न हो। कॉन्वेण्ट से एक सिस्टर शिशु का भार सम्हालने के लिए ठीक समय पर उपस्थित हो सकेगी; यदि संभव हुआ तो शिशु को एक सप्ताह से अधिक यहां नहीं रखा जाएगा। और कमला भी एक सप्ताह के बाद ही यहां से प्रस्थान कर सकेगी, किन्तु यदि उसके शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए आवश्यक होगा तो वह कुछ दिन तक पोर्शिया के साथ ठहर सकेगी।

नटनागर को आवश्यक खबर दे दी जाएगी। वार्ड के रजिस्टर में भी परिवर्तन करने पड़ेंगे। इसमें कठिनाई अवश्य होगी, निवास की व्यवस्था कमला के नाम से हुई है, अतः उसका नाम परिवर्तित नहीं किया जा सकता, फिर शिशु के जन्म सम्बन्धी सूचनाएं भी दर्ज करनी पड़ेंगी, किन्तु बाद में इन रजिस्टरों को कौन पूछता है?—कभी आवश्यकता ही नहीं पड़ती। किसीको इस सम्बन्ध में चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है।

बातें हो ही रही थीं कि मिस्टर कपूर ने दरवाज़े का पर्दा हटाकर पूछा :

'क्या मैं भीतर आ सकता हूं सिस्टर ?'

'यस-यस—शूअर—मि० कपूर—मीट मिसेज़ कमला—माई फ्रेण्ड ऐण्ड पेशंट—यहीं मिसेज़ कपूर के पास कमरे में जो हैं !—और आप हैं मिस्टर कपूर एक्जीक्यूटिव इंजीनियर···'

कमला ने उठकर हाथ जोड़े और मिस्टर कपूर ने कहा, 'मिलकर प्रसन्नता हुई कमला देवी ! मुझे विश्वास है कि योर कम्पनी टु माइ वाइफ़ विल बी ए ग्रेट सैटिसफेक्शन टु हर' (आपकी संगति मेरी पत्नी के लिए बड़ी संतोषजनक होगी।)

'थैंक्यू मिस्टर कपूर' और पोर्शिया की ओर देखकर उसने कहा, 'तो मैं चलूं सिस्टर !'

मिस्टर कपूर ने कहा, 'यदि चले जाना आवश्यक न हो, तो बैठिए! मैं सिस्टर से अपनी वाइफ के सम्बन्ध ही में कुछ परामर्श करना चाहता था। यू आर ए हैपी नेवरर टू हर (आप उसके पड़ोस ही में हैं) आप भी यदि चाहें तो मुझे बहुत कुछ सहायता कर सकती हैं—मेरा मतलब है मिसेज़ कपूर कुछ एब्नार्मल टाइप की हैं। मैं उनके बारे में बड़ा चिन्तित हूं। उन्हें एक विशेष व्यवहार और वातावरण की आवश्यकता है।'

पोर्शिया ने कहा—'बैठो न कमला।'

कमला बैठ गई।

पोर्शिया ने कहा, 'मिस्टर कपूर, आपने कमरे की सारी व्यवस्था तो देख ही ली होगी, मैं आशा करती हूं आपको कोई शिकायत नहीं है।'

'मैं आपके प्रति कृतज्ञ हूं कि आपने इतनी सुन्दर व्यवस्था कर दी है। मैं तो मिसेज़ कपूर को आपके भरोसे छोड़ चुका हूं। मुझे विश्वास है, कि आप इस केस को बड़ी चतुराई से हैण्डल कर सकेंगी। वे बड़ी व्यग्र और चिन्तातुर हैं। क्वाइट नेचरल—इतनी उमर के बाद, जब कि उनकी मां बनने की सब आशाएं नष्ट हो गई थीं, वे मां बनने जा रही हैं। उनके लिए विश्वास करना भी कठिन हो रहा है कि वे सचमुच कभी

मां बन सकेंगी इसलिए दिन-रात सोचती रहती हैं कि कहीं कुछ हो न जाए !'

'बिल्कुल स्वाभाविक है मिस्टर कपूर, उनको समझाने का हम प्रयत्न करेंगी कि वे बिल्कुल चिन्ता न करें—और आप तो स्वयं समझदार हैं हम अपनी चेष्टा में कोई कमी न रखेंगी, ताकि उनका यहां का निवास सुविधापूर्ण हो, और स्वस्थ होकर अपनी संतान के साथ विदा हों।'

'यही आशा है सिस्टर, किन्तु मैं अपना फर्ज समझता हूं कि आपको उनके स्वभाव से परिचित करा दूं ताकि गलतफहमी से बचने के साथ ही साथ आप उनकी वास्तविक सहायता भी कर सकें।'

'यस-यस—दिस इज वेरी नेसेसरी !'

'और इसी सम्बन्ध में यदि मुझे अपना कुछ गत इतिहास बताना पड़े, तो आशा है आप मुझे क्षमा कर देंगी।'

'ज़रूर-ज़रूर।'

मिस्टर कपूर ने कहना शुरू किया :

मेरी पत्नी के माता-पिता और मेरे माता-पिता दोनों एक ही गांव के रहने वाले थे और उनमें गहरी दोस्ती भी थी। मेरी ससुराल वाले पहले काफी धनवान थे, मेरी पत्नी उनकी इकलौती संतान है। वह पांच-छः साल की थी तभी हमारा वाग्दान हो गया था। मैं तब पन्द्रह-सोलह का था। पढ़ने के लिए मुझे बाहर शहर चले जाना पड़ा। इधर मेरे ससुराल वालों की माली अवस्था गिरने लगी, और जब छः वर्ष बाद मैं घर लौटा तो मेरे पिता का इरादा मेरा विवाह कहीं अन्यत्र कर देने का हो गया था। शायद इसका आभास मेरे पिता ने इनके पिता-माता पर प्रकट भी कर दिया था। उसकी बेचारी मां पर इसका इतना बुरा प्रभाव पड़ा कि वह दो-तीन माह में ही स्वर्ग सिधार गई। किन्तु मेरी माता इसी कन्या के पक्ष में थी, और उन्होंने मेरे ससुर को सांत्वना दी, कि वे किसी तरह मेरे पिता को राजी कर लेंगी। कठिनाई सबसे अधिक मेरी हुई, मुझे अपनी ससुराल वालों के प्रति सहानुभूति हो गई थी। मां ने एक

बार छल से लड़की को भी दिखा दिया था, तब वह किशोरावस्था में ही थी, किन्तु मेरे मन को भा गई थी। परन्तु पिताजी से मैं कुछ कह नहीं सकता था।

पिताजी विवाह के लिए मुझे परेशान करने लगे, तो मैंने बाहर गांव में एक अध्यापक की नौकरी करके घर से पीछा छुड़ाया। साल-डेढ़ साल वहां बिताया, पर मन न लगा; घर लौट आना पड़ा। पिताजी ने इसी बीच किसी दूसरे धनी घराने से मेरे विवाह की बातचीत पक्की कर ली। घर पर मां ने कहा कि बेचारी लड़की अपने भविष्य की चिन्ता और पिता के दुःख में बीमार हो गई है। मैंने मां को कहा कि मैं उनकी आज्ञानुसार उसी लड़की से विवाह करने को तैयार हूं। मां ने पिता जी को बहुत समझाया, पर वे नहीं माने।

दूसरी जगह विवाह करने से बचने का मैंने एक उपाय निकाला। मैंने इंजिनियरिंग की उच्च शिक्षा के लिए इंग्लैंड जाने की इच्छा व्यक्त की। अपने पहले के प्रोफेसरों से पिता जी पर प्रभाव डलवाया, और वे इसके लिए राजी हो गए। विवाह टल गया।

पांच वर्ष विलायत में बिताकर घर लौटा, तो पिता भी वृद्ध हो चुके थे, किन्तु यह कन्या तब भी पार्वती की तरह मानो मेरे ही लिए तपस्या किए बैठी रही। लड़की का रूप तब और भी निखर चुका था, यद्यपि उसके मन को मर जाने के यथेष्ट कारण थे। खैर, किसी तरह पिताजी भी अब अधिक बाधा न दे सके, और लम्बी प्रतीक्षा के बाद हम दोनों का विवाह हो गया।

इस सारी खींचतान का इतिहास व्यक्त करने का यही उद्देश्य है कि आप इसके मानसिक संघर्ष को समझ सकें। कह चुका हूं, अनायास ही इस लड़की से मेरा बहुत अधिक प्रेम हो गया था। जब हम शादी के सूत्र में बंधे तब इसका शारीरिक स्वास्थ्य ठीक नहीं था। मन पर यह अनेक बाधाएं झेल चुकी थी। इसे हिस्टीरिया के दौरे पड़ने लग गए थे। विवाह के कुछ दिन बाद, इसकी अवस्था में बहुत कुछ सुधार हुआ।

और मैं कह सकता हूं, कि विवाह करके मैं कभी पछताया नहीं।

इसी तरह हमारी प्रसन्नता की ज़िन्दगी बीतती जा रही थी, कि उसके पिता की मृत्यु हो गई। हालांकि उनका पुराना वैभव तो नहीं लौट सका था, पर वे विशेष दुःख में नहीं मरे। उनकी कन्या एक प्रकार से संकटों को पार कर ही चुकी थी। पर कन्या के जीवन पर इसका भी प्रभाव पड़ा ही। कुछ समय के बाद मेरी माता भी, जो इसे अपनी पुत्री के समान ही समझती थी, स्वर्ग-वासिनी हुई। मैं स्वयं सर्विस पर चला गया। घर पर यह अकेली रह गई, और पुरानी-नई चिन्ताओं ने फिर इसे धर दबाया। शायद इसने यह भी सोचा, कि मेरी मां को दादी बनने के पहले ही जो मर जाना पड़ा, इसके लिए वही उत्तरदायिनी है। और शायद वह माता बनने के अयोग्य है। इन्हीं चिन्ताओं में इसका स्वास्थ्य गिरने लगा, और हिस्टीरिया के पुराने दौरे पुनः इसपर हावी होने लगे। बीच में इसकी हालत और भी गिर चली थी, यहां तक कि हम इसके जीवन से निराश होने लग गए थे।

'किन्तु परमात्मा ने इसकी प्रार्थना को मानो सुना, और डेढ़ वर्ष पूर्व उसके सन्तानवती होने के लक्षण प्रकट होने लगे, बस इसके स्वास्थ्य में भी अप्रत्याशित सुधार होने लगा। शायद उसे जीने का उत्साह हो गया था। किन्तु भाग्य को कुछ और ही स्वीकार था, तीन माह के बाद ही गर्भ स्खलन हो गया, और इसका मानसिक संतुलन बिगड़ गया-सा प्रतीत हुआ। दो माह तक काफी चिकित्सा के पश्चात् इसकी मनः स्थिति कुछ ठिकाने लगी, और पुनः संतानवती होने की संभावना उदय होने पर ही उसकी सामान्य अवस्था लौटी। अब वह बहुत ही संदेहाकुल हो गई है। जैसे-जैसे प्रसव के दिन निकट आते जाते हैं, कई आशंकाएं उसके दिमाग को घेरने लग गई हैं। ख्यालों ही ख्यालों में वह दिन के दिन बिता देती रही है। कितनी उसकी हमें चिन्ता रखनी पड़ी है, यह हम ही जानते हैं। घर में मेरी बड़ी बहन गत छः माह से इसकी देखभाल करती रही है। —यहां ले आने के बाद मैं आश्वस्त तो हो गया हूं, किन्तु सिस्टर, भाग्य

की परीक्षा तो अभी शेष है ही ! मिसेज़ कपूर बड़ी नर्वस टाइप की है, परिस्थितियों ने उसकी नर्व्स को बिल्कुल ही तोड़ दिया है। अगर उसकी विशेष परवाह न की गई, तो वह अपने आपको निग्लेक्टेड महसूस कर सकती है, और फिर उसकी खामखयालियां हममें कोई ट्रेजिडी न कर दें। मैं आपको यह सारी बैकग्राउण्ड बता देना अपना फर्ज़ समझता था। हालांकि, अवश्य ही आपको इसमें कोई दिलचस्पी लेने की आवश्यकता न थी।

पोर्शिया और कमला दोनों ही बड़ी उत्सुकता से मिस्टर कपूर की कहानी सुन रही थीं। कमला कुछ नहीं बोली, किन्तु उसकी मुखमुद्रा से स्पष्ट था कि उसे मिस्टर कपूर के लिए घनी सहानुभूति हो गई थी।

पोर्शिया ने कहा, 'वेल मिस्टर कपूर, मैं मनोवैज्ञानिक तो नहीं हूं, किन्तु जो बैकग्राउण्ड आपने मिसेज़ कपूर की बतलाई है, वह किसी भी नारी को इस हालत में पहुंचा देने के लिए काफी है। यह बड़ा अच्छा हुआ कि आपने केस का सारा इतिहास हमें बता दिया। इससे हमें मिसेज़ कपूर के साथ व्यवहार करने में काफी सरलता होगी। जहां तक हमारा वश है, हम मिसेज़ कपूर को किसी तरह का कष्ट न होने देंगे, और मेरा अनुमान है कि इस प्रसव के बाद उनको अपने अभावों की पूर्ति हो गई अनुभव होगी। आइ सपोज़, यूकैन लुक फॉरवार्ड टू ए ब्राइट ऐण्ड हैपी लाइफ देअराफ़्टर' (मैं कल्पना करती हूं कि आप उसके बाद एक चमकीले और प्रसन्न जीवन की आशा कर सकते हैं।)

'थैंक्यू वेरी मच, अगर ऐसा कभी सम्भव हुआ, तो वह केवल आपकी कृपा होगी।' और फिर मिस्टर कपूर कमला की ओर मुखातिब हुए, और कहने लगे, 'माफ कीजिएगा कमलादेवी ! आप उनके पड़ोस में ही हैं। आप पढ़ी-लिखी और बड़ी समझदार हैं. आपने इस परिस्थिति को, मालूम देता है, बड़े ही सहज भाव से स्वीकार कर लिया है। यह बड़ी ही खुशी की बात है। आप भी चाहें तो मुझे कृतज्ञ कर सकती हैं। मेरा मतलब है आपको विशेष कष्ट नहीं दिया जाएगा, खाली आप अपनी

उपस्थिति से ही मिसेज़ कपूर के चारों ओर एक सहानुभूति और साहस के वातावरण का निर्माण कर सकती हैं।'

कमला ने मुस्कराते हुए कहा, 'मिसेज़ कपूर को हम बहन मानकर सब तरह की सहायता देंगी, आप निश्चित रहिए! किन्तु मिस्टर कपूर, बुरा न मानें तो एक बात कह दूं ?'

'कहिए न, अवश्य कहिए, बुरा क्यों मानूंगा ?'

'मिसेज़ कपूर की अपेक्षा मुझे तो आप ही अधिक चिन्तित दिखाई देते हैं!'

मिस्टर कपूर कुछ लजा-से गए; पोर्शिया हंस दी, बोली, 'कमला, मिसेज़ कपूर को चिन्ता है केवल शिशु की, किन्तु मिस्टर कपूर को तो दोनों की चिन्ता है!'

मिस्टर कपूर ने मुस्कराकर शर्माते हुए-से कहा, 'देखिए सिस्टर मुझे मिसेज़ कपूर ही की बहुत चिन्ता है, शिशु का अगर मुझे कुछ ख्याल हुआ भी, तो वह है मिसेज़ कपूर के लिए! इसलिए कि मिसेज़ कपूर की वह आवश्यकता है।'

कमला ने आंखें नीची करके कहा, 'मिसेज़ कपूर को आप बहुत चाहते हैं।' और यह कहने के साथ ही पोर्शिया ने देखा कि मिस्टर कपूर की लज्जा तो बढ़ी ही, कमला के चेहरे पर भी सुर्खी दौड़ गई।

जवाब पोर्शिया ने दिया, 'बिलकुल स्वाभाविक है कमला! आखिर विवाह की सार्थकता यही तो है।'

मिस्टर कपूर ने उठकर कहा, 'मैं चल दिया, मुझे काम पर भी जाना है।'

और दोनों नारियों को मिस्टर और मिसेज़ कपूर के बारे में बातें करने के लिए स्वतंत्र छोड़कर, मिस्टर कपूर बाहर चले गए।

आखिर वह दिन आ पहुंचा, जब कमला ने पुत्र प्रसव किया; कोई विशेष घटना नहीं हुई; सभी बातें सामान्य तौर से निपट गईं। कमला ने अपने आपको आश्चर्यजनक रूप से दृढ़ रखा, उसने संतान का मुख भी

नहीं देखा; पोर्शिया ने कह दिया कि मां के स्वास्थ्य के कारण बच्चे को ऊपर ही का दूध पिलाया जाए, मां की मनोवैज्ञानिक स्थिति को संतुलित और दृढ़ रखने के लिए कम से कम बच्चे को एक-दो दिन मां से बिल्कुल अलग रखा जाए; जब मां की मानसिक स्थिति दृढ़ हो जाएगी, बच्चा मां के पास पहुंचा दिया जाएगा ! भीतरी व्यवस्था यह थी कि एक-दो दिन देखकर ही बच्चा कॉन्वेण्ट की सिस्टर के सिपुर्द कर दिया जाएगा।

उसी दिन रात्रि को कुछ समय बाद ही मिसेज कपूर के प्रसव की घड़ी भी आ गई। और मिसेज कपूर ने वह हंगामा उपस्थित किया कि सारा आसमान सिर पर आ लगा। प्रसव-पूर्व के दर्द से वे इतनी बेचैन और आशंकित-आतंकित हो उठीं कि नर्सों को उन्हें सम्हालना भारी पड़ गया ! वे कमरे में पागलों जैसी दौड़ने लगीं, दर्द भी शुरू हुआ था दुपहर के पूर्व। पोर्शिया को भी चिन्ता हो गई थी, वह हर पांच मिनट में आकर उन्हें देख जाती—तीन बार डॉक्टर को बुला भेजा था। यद्यपि डॉक्टर ने कह दिया था कि घबराने जैसी कोई बात नहीं है, किन्तु मिसेज़ कपूर के व्यवहार ने सबको हैरान कर डाला था। मिस्टर कपूर को बुला भेजा गया। वे भी आकर कुछ न कर सके।

एकाएक मिसेज़ कपूर का पैर फर्श पर से फिसल गया, और वे फर्श पर बुरी तरह गिर पड़ीं ! डॉक्टर को बुलाया गया। मिसेज़ कपूर बेहोश हो गई थी। ६ घण्टे के अनवरत परिश्रम के बावजूद प्रसव के आसार दिखाई नहीं देते थे। बड़े डॉक्टर को बुलाया गया, परीक्षा के बाद देखा गया कि किसी कारण से गर्भस्थ शिशु की स्वयं की कोई क्रिया नहीं हो रही है। यदि यही अवस्था रही तो गर्भिणी की जान को खतरा है। अतः बड़ी दुविधा के बाद अस्त्रोपचार द्वारा प्रसव की व्यवस्था की गई। गर्भिणी की जान बच गई, किन्तु गर्भस्थ शिशु को नहीं बचाया जा सका। कदाचित् वह गर्भिणी के गिरने से ही शेष हो गया था।

डॉक्टर अपना काम करके चले गए, पीछे रह गई पोर्शिया, और उसकी साथी अन्य नर्सें। मिसेज़ कपूर तब भी अचेत थीं, और मिस्टर

कपूर समस्त संसार की निराशा को अपने चेहरे पर पोते हुए एक कोने में बैठे मिसेज़ कपूर के चेत में आने की प्रतीक्षा कर रहे थे।

पोर्शिया ने कहा, 'मिस्टर कपूर! हमें बड़ा खेद है, लेकिन शायद हमारे वश में कुछ नहीं था! आपको साहस से काम लेना चाहिए। आइ मीन, इन ए वे, यू आर लकी दैट ऐट लीस्ट द मदर कुड बी सेव्ड्' (आप एक तरह से भाग्यशाली हैं कि कम से कम मां की रक्षा तो की जा सकी।)

'मैं आप लोगों का कृतज्ञ हूं सिस्टर, किन्तु मेरी चिन्ता तो भविष्य के सम्बन्ध में है। आइ नो, ह्वाट द लॉस आफ द बेबी वुड मीन टु द गर्ल ह्वेन शी कम्स टु हरसेल्फ!' (मैं जानता हूं कि उस बच्चे की हानि का उसपर, जब उसे चेत होगा, क्या प्रभाव पड़ेगा!)

'वाट कैन वी डू?...'

'कुछ नहीं!—सोचता हूं कि इससे तो उसका स्वयं का मर जाना ही बेहतर होता। मैं जानता हूं गई बार के मिसकैरेज (गर्भपात) का उसपर क्या मानसिक प्रभाव पड़ा था।'

—इतने ही में एक नर्स ने दौड़े आकर कहा कि मिसेज़ कपूर को होश आने लगा है। खबर सुनते ही मिस्टर कपूर का चेहरा और भी लटक गया; किन्तु पोर्शिया भीतर गई।

मिसेज़ कपूर को वास्तव में होश आ रहा था, बड़े धीमे स्वर में बोली, 'मेरा बच्चा!'

पोर्शिया ने कहा, 'अपने आपको सम्हालिए मिसेज़ कपूर, बच्चा आपका तन्दुरुस्त है, वह अभी नहलाया जा रहा है। तुम उसे कुछ देर बाद देख सकोगी।'

मिसेज़ कपूर ने आंखें बन्द कर लीं, बोलीं, 'बच्चे के बाप हैं?'

'हैं!'

'उन्हें कुछ कहना चाहती हूं।'

पोर्शिया बाहर आई, बोली, 'मिसेज़ कपूर आपसे कुछ कहना चाहती

हैं। देखिए, हमने उनसे कहा है कि बच्चा अच्छी तरह है, थोड़ी देर बाद उसे वे देख सकेंगी। उनकी अवस्था ऐसी नहीं है कि उन्हें शीघ्र ही वह समाचार दे दिया जाए। आप उनसे यही मानकर बात कीजिएगा। जाइए, वे अब स्वस्थ होती जा रही हैं।'

मिस्टर कपूर ने कहा, 'झूठी आशा से क्या लाभ होगा सिस्टर!—इसी बीच वह कितने सोने के काल्पनिक संसार न बना लेगी, और जब उसे उन्हें ही तोड़ डालना होगा, तो क्या उसका वह दुःख और भी अधिक भयानक न हो उठेगा?'

'मिस्टर कपूर, हम लोग निकट के खतरे से ही पहले जूझना उचित समझते हैं। बाद में क्या खतरा होगा, होगा या नहीं—यह हमें अधिक कायर बना देता है। आप जाइए, और इसी बात को मन में रखकर उनसे बातचीत कीजिएगा।'

मिस्टर कपूर बड़े अनमने मन से भीतर गए। पलंग पर पड़ी हुई मिसेज़ कपूर के माथे पर उन्होंने हाथ रखा, हाथ रखते ही मिसेज़ कपूर ने आंखें खोल दीं।

धीरे से वे बोलीं, 'सुनते हो?'

'कहो!—कैसी हो तुम?'

'ठीक ही हूं।—साफ दिखाई नहीं देता, किन्तु तुम्हारा चेहरा इतना उदास क्यों है?'

'ठीक तो हूं।—तुम्हारी चिन्ता जो है।'

'मेरी चिन्ता छोड़ो!—मेरा क्या है?—मेरा कर्तव्य तो पूरा हो गया! मैं समझती हूं मैं बचूंगी नहीं···'

'यह क्या कहती हो?'

'सच ही कहती हूं—जैसे कोई मेरे प्राण खींचे जा रहा है। ओह, बड़ी पीड़ा है।'

'तुम सो जाओ, अधिक बोलो मत, सोचो मत!'

'नहीं बोलूंगी, नहीं सोचूंगी—परन्तु—मुन्ने को देखा है?'

'हां देखा है।

'तुम्हारे जैसा ही है न ?'

मिस्टर कपूर चुप !

'देखो, अगर अब मैं मर भी जाऊं तो मुझे अफसोस नहीं होगा। तुम्हारे प्रेम का प्रतिदान देना चाहती थी, तुम्हारे प्रेम के उपयुक्त होना चाहती थी····'

'तुम आराम करो न !'

'करूंगी—लेकिन यदि मुझे कुछ हो गया तो मेरे मुन्ने की देखभाल करोगे न ?'

कपूर की आंखों में आंसू आ गए।

'एक बार नर्स से कहकर ले आओ न मुन्ने को।—यदि मर ही गई तो साध तो बाकी न रहेगी।'

'अच्छा, तुम आराम करो—मैं नर्स से कहता हूं।'

और मिस्टर कपूर कमरे से बाहर चले आए।

इधर पोर्शिया का मन बड़ी तेज़ी से काम कर रहा था। मिस्टर कपूर के पीठ फेरते ही वह कमला के कमरे में पहुंच गई। थकी हुई कमला कई तरह के काल्पनिक चित्र देखकर, इस समय गहरी नींद में सो रही थी। पोर्शिया ने आकर उसको जगाना चाहा, परन्तु रुक गई। कुछ देर तक उसने खड़ी होकर कमला की ओर देखा, एक लम्बी सांस ली, और बाहर आ खड़ी हुई।

मिस्टर कपूर ने पूछा, 'सिस्टर, जिसकी आशंका थी, वही हुआ। वह बच्चे को देखना चाहती है। अब क्या होगा ?'

पोर्शिया ने मि० कपूर को कुछ उत्तर नहीं दिया, उसने एक नर्स को इशारा किया। वह एक दूसरे कमरे में गई, और कमला के पुत्र को उठा लाई। पोर्शिया ने कहा :

'ले जाइए; नर्स, यह लड़का मिसेज कपूर के पास लिटा दो।'

'किन्तु यह मिथ्या—इसकी मां····' मिस्टर कपूर ने तुतलाते-तुतलाते कहा।

'वह मैं देख लूंगी।'

'और यदि वह बच्चे को छोड़ना न चाहे ?'

'तो इसे उनके पास रहने देना।'

'और यदि वह इसे अपना दूध पिलाना चाहे ?'

'आप इसकी चिन्ता न कीजिए मिस्टर कपूर—नर्स जानती है कि उसे क्या करना है ?'

सवेरे जब कमला नींद से उठी, तो उसने निश्चय कर लिया था कि कुछ भी हो जाए, वह अपनी सन्तान को छोड़ नहीं सकती ! उसने सबसे पहले पोर्शिया को बुलाने के लिए कहा :

पोर्शिया बेचारी रातभर की जागी हुई किसी तरह आंखें बन्द कर अपने कमरे में आराम कुर्सी पर ही नींद ले रही थी। उसे जगा दिया गया।

पोर्शिया के भीतर आते ही कमला ने कहा, 'मेरा बच्चा कहां है पर्सी, मैं उसे नहीं छोड़ सकती, नहीं छोड़ सकती।'

पोर्शिया ने कहा, 'कहती क्या है कमला ! तूने उस बच्चे को····'

'मैंने कुछ भी कहा हो, तब मैं मां का मन नहीं जानती थी, अब मैं मां हूं—पोर्शिया, तुम मेरी भावना को नहीं समझ सकती। मेरा बच्चा····'

पोर्शिया ने दृढ़ कंठ से कहा, 'मैंने उसकी व्यवस्था कर दी है।'

'व्यवस्था—क्या व्यवस्था कर दी है ?'—और वह अपने पलंग पर उठ बैठी।

पोर्शिया ने कहा, 'कमला तुम्हें उत्तेजित नहीं होना चाहिए !—सो जाओ—सो जाओ !' और उसने दोनों हाथों से उसके कन्धे पकड़कर उसे फिर से लिटा दिया। दूसरी नर्स उसके इशारे से बाहर चली गई।

पोर्शिया ने उसके पास बैठकर उसके सिर पर हाथ फिराते हुए कहा, 'कह कमला, क्या कहना चाहती है अब ?'

'मैं बच्चे के बिना नहीं रह सकती।'

'किन्तु पहले तो तूने कुछ दूसरी ही बात कही थी।'

'मैं पहले खुद ही दूसरी थी, वह मर गई—मैं आज एकदम दूसरी स्त्री हूं—मां, केवल मां; मुझे और कुछ नहीं चाहिए।'

'किन्तु मैंने तो उस लड़के की व्यवस्था कर दी है।'

'व्यवस्था ?—क्या व्यवस्था कर दी है ?'

'उसे मैंने एक बहुत अच्छी जगह पहुंचा दिया है···'

'कान्वेण्ट में ही न ?—किन्तु तुमने तो कहा था कि एक सप्ताह तक वह यहीं तुम्हारी देख-रेख में रहेगा।'

'मैंने उसकी आवश्यकता नहीं देखी। फिर एक सुयोग हाथ आ गया—उस समय पीछे हटने से उसे खो देना पड़ता। उससे बढ़कर कोई अच्छी व्यवस्था हो नहीं सकती थी।'

'व्यवस्था! व्यवस्था! व्यवस्था!—तुम व्यवस्था करने वाली होती कौन हो ?—मैं उसकी मां हूं।—मैं चिल्लाऊंगी—मेरा बच्चा !—मेरा···'

पोर्शिया ने कमला के मुंह पर हाथ रखकर कहा, 'कमला ! पागल मत बनो !—शांति और धैर्य से काम लो !'

'शांति और धैर्य मुझे नहीं चाहिए, मुझे मेरा बच्चा चाहिए ! कहां है मेरा बच्चा ?'

'तुम्हारा बच्चा यहीं है, अस्पताल में है।'

'उसे मंगवा दो—उसे मंगवा दो बहन—तुम्हारे पांव पड़ती हूं। उसके बिना मैं जिन्दा नहीं रह सकती। वह कहां है ?'—पोर्शिया ने देखा कि कमला की आंखों में से आंसू बहे चले आ रहे हैं।

पोर्शिया ने बड़े धैर्य के साथ कहा, 'तुम्हारा बच्चा मिसेज़ कपूर के कमरे में है। मिस्टर कपूर ने उसे अपना बना लिया है···'

'मिसेज़ कपूर—वह पगली चुड़ैल—वह मेरे बच्चे को खा जाएगी।' और फिर कमला ने उठ बैठने का प्रयत्न किया, किन्तु पोर्शिया उसे सम्हाले रही। बोली :

'वह तुम्हारे बच्चे को खाएगी नहीं कमला, वह उसे अपना बच्चा मानकर बड़ा करेगी···'

'लेकिन ?····'

'तुम नहीं जानतीं—उसको एक मृत बच्चा हुआ था। वह पागल हो जाती, उस दुःख से शायद वह मर जाती। मैंने तुम्हारे बच्चे को उसे देकर दो प्राणों की नहीं, तीन प्राणों की रक्षा की है।'

'तीन प्राणों की ?'

'हां—मिसेज़ कपूर की, तुम्हारे बच्चे की, और स्वयं तुम्हारी !····'

'मेरी ?—मेरी—मुझे मरने दो पोर्शिया—मैं ज़िन्दा नहीं रहना चाहती ! मेरे अपराधों की सीमा नहीं है !'

'मरने से अपराध का प्रायश्चित नहीं होता कमला !'

'लेकिन मेरा बच्चा—मैं उसके बिना कैसे जीवित रहूंगी !'

'जैसे अब तक थी !'

'और मां के बिना वह बच्चा कैसे जीवित रहेगा ?'

'मां का अभाव उसे नहीं होगा। मिसेज़ कपूर कभी नहीं जानेंगी कि वह बच्चा उनका निज का नहीं है। इस बात को अभी तक मैं जानती हूं, या मिस्टर कपूर—नहीं चाहती थी कि तुम भी जानो, किन्तु तुमने मुझे कहने के लिए विवश जो कर दिया है।'

'किन्तु यदि भविष्य में कभी मिसेज़ कपूर के और संतान हुई ?'

'उसकी आशा नहीं है कमला !'

कमला बहुत देर तक चुप रही, जाने क्या सोचती रही। आंखों से उसकी जल बहता रहा। पोर्शिया ने उसे रोते रहने दिया, शायद उसके मन का भार यों ही कुछ कम हो जाए। बहुत समय जब बीत गया तो कमला ने आंखें खोलीं, और कहा :

'पर्सी, तुम बड़ी निष्ठुर हो।'

'जीवन में निष्ठुर भी बनना पड़ता है कमला !—मैं तुम्हारे अन्तर का रहस्य जानना नहीं चाहती, किन्तु कुछ गहरा सोचोगी, तो पाओगी

कि इस समय की यह क्षणिक निष्ठुरता, कई जीवनों की रक्षा कर सकेगी ! इस समय तुम कमज़ोर हो, उत्तेजना तुम्हारे लिए हितकर नहीं है। पर मैं तुमसे इस बारे में विस्तार के साथ बात कर सकूंगी। तुम्हारा लड़का यहीं है। एक सप्ताह तक तो यहीं रहेगा। यदि तुम आखिर सब बातों की विवेचना के बाद भी अपने लड़के को छोड़ना न चाहोगी, तो उसकी व्यवस्था की जा सकेगी। यद्यपि मिसेज़ कपूर की जान का खतरा सामने आ जाएगा, पर कुछ तो करना ही पड़ेगा····'

'मिसेज़ कपूर ?'

'हां—अभी उन्हें नहीं मालूम कि उनकी संतान मरी हुई थी। उनके बचने की आश तब भी नहीं थी। किन्तु बच्चे ने उनके जीवन में मानो प्राण फूंक दिया है। तुम नहीं जानतीं मिस्टर कपूर तुम्हारे निकट कितने कृतज्ञ हैं····'

'मिस्टर कपूर ? वे जानते हैं कि यह मेरा बच्चा है ?'

'जानते हैं कमला—वे खुद आकर अपनी कृतज्ञता जताना चाहते थे !'

'नहीं पर्सी, नहीं—मैं उन्हें अपना मुंह नहीं दिखा सकूंगी ! वे मन में क्या सोचते होंगे—नहीं-नहीं—उन्हें मेरे पास मत आने देना। मेरा संयम तब बना न रह सकेगा।'

'घबराओ नहीं कमला—जैसा तुम चाहोगी, वही होगा।—हां, तुम्हारे कथन के अनुसार कल ही मैंने मिस्टर नटनागर को खबर भेज दी है कि तुम कुशलपूर्वक हो, किन्तु तुम्हारी सन्तान···'

कमला ने हाथ बढ़ाकर कहा, 'मैं जानती हूं पर्सी, उस अमंगल शब्द को जीभ पर न लाओ !—और—पर्सी, पर्सी—तुमने क्या किया···'

पोर्शिया भी उसके गले लगकर आंसू बहाने लग गई।

१५

समय कटते देर नहीं लगती। वर्ष-मास-दिन-घंटा-मिनट-सेकण्ड आदि के छोटे-छोटे कई विभागों में हमने उसे काट रखा है। घंटा-मिनट-सेकण्ड आदि के परिमाण की प्रतीति व्यक्ति-सापेक्ष्य हो सकती है—व्यक्ति-सापेक्ष्य ही क्यों वह मन-सापेक्ष्य भी हो सकती है, किन्तु तब भी निरपेक्ष समय का प्रवाह प्रत्येक पल आगे बढ़ता ही जाता है, रह जाएं पीछे मन, शरीर, सुख, दुःख, गमी, बीमारी, और इन सबसे उत्पन्न मोह कि हमारे दिन नहीं कटते, या हमें समय ही नहीं मिलता—किन्तु काल के पैर कभी रुकते नहीं!

कमला को लौटे और अपनी नई नौकरी का कार्य-भार सम्हाले चार माह से ऊपर हो गए हैं। उसके मन के भी घाव भर चुके हैं; आखिर एक स्वप्न के अलावा वह सब कुछ था ही क्या?—उसकी सार्थकता का प्रमाण ही क्या है?—नटनागर जानते हैं कि कमला को एक मृत संतान उत्पन्न हुई थी, बहुत ही सरल तरीके से उन्हें छुटकारा मिल गया, कमलनयन को कमला ने विश्वास दिला दिया था कि यहां की लेडी डॉक्टर का निदान ही गलत था। बम्बई जाने पर एक अच्छे अस्पताल में स्पष्ट हो गया था कि वह सामान्य-सा पेट का एक विकार था—और विकार तो था ही!—कुछ दिनों के पथ्य-सेवन से ही वह मुक्त हो गई थी, और यदि पथ्य-सेवन सफल न होता तो जो एक सामान्य-सा अस्त्रोपचार आवश्यक होता—उसकी भी आवश्यकता न हुई। अविश्वास करने की कमल को आवश्यकता ही क्या थी!—रह गए धर्मप्रकाश!—वे अब यहां से तबदील हो गए हैं; एकदम से थर्ड परसन!—उनके जानने न जानने की कोई कीमत ही नहीं है। इतने कापुरुष प्रमाणित हो चुके हैं कमला के सम्मुख वे, कि जानकर भी वे अनजाने ही बने रहना पसन्द करेंगे!—रहे हैं सुसराल-पक्ष में भी कुछ व्यक्ति—एक तो वही अंधी

सास जो दूसरों ही की आंखों से कुछ देख सकती है, और कुछ घूमर काकी जैसी जो अपनी आंखों से दूसरों ही के लिए देखना पसन्द करती है, और वह भी वह जो किसी भी आंख वाले को दिखाई न दे। ऐसे प्राणियों की जानकारी और संशय और प्रवाद का मूल्य ही क्या है?—फिर अब उसे सुसराल जाना ही कहां है?

क्या वह अपना निज का भी विश्वास कर सकती है?—क्यों नहीं कर सकती!—कौन उसकी संतान है?—उसने आंख उठाकर भी तो उसे कभी देखा नहीं—उसके शरीर का, मन का, भावना का कौन-सा कितना अंश वह खोया अनुभव करती है, कि उस अनजाने और अनचाहे अतिथि के ऊपर उसे थोपकर अपने ममत्व का दावा कर सके! वह पोर्शिया, वह मिस्टर कपूर, उनकी वह अर्द्धविक्षिप्त, सदारुग्ण पत्नी—स्वयं वह संतान सशरीर, किन्तु कौन जानता है? पोर्शिया यदि जानती है, तो वह स्वयं कानून के निकट दोषी है, मिस्टर कपूर अपनी पत्नी के प्रति उस अपरिचित संतान से भी अधिक सजग हैं, और मिसेज कपूर?—कमला का ऐश्वर्य चुराकर वह मां बनी मोद मनाती फिरे—कमला का क्या आता-जाता है?—अतः कमला निश्चिन्त है—इस तथ्य को प्रत्येक प्रभात में वह आंखें बन्द करके भगवान् की पूजा के बहाने अपने मन में दुहरा लेती है, और फिर उसका सारा दिन अनवरत कर्म-प्रवाह में निश्चित कट जाता है।

कटे हाथ का दादू कमला की सेवा में ही है। कमलनयन ने चेष्टा करके उसकी तैनाती दफ्तर से बदलकर स्कूल में कर दी है। वह कितना जानता है, कितना नहीं, इसका कमला को पता नहीं। वह कमला के साथ ही बम्बई गया था, किन्तु कमला के प्रसूति-प्रवास के समय वह नटनागर के साथ सेनेटोरियम चला गया था। शरीर के अनुपात में उसका दिमाग काम नहीं करता। जो दृष्टि में है उसके परे भी कुछ हो सकता है, ऐसी उद्भावना करते उसे देखा नहीं गया। लौटकर जब उसने कमला को अकेले देखा, तो भी उसने कोई प्रश्न नहीं किया

था, फिर भी ऐसा मालूम दिया मानो उसकी आशा को कहीं कुछ आघात लगा है। मालकिन अस्पताल में जब भरती हुई थीं, और उसे सेनेटोरियम के लिए रवाना होना पड़ा था, तब अवश्य उसने प्रकट किया था कि आकर वह मालकिन से मुंहमांगा इनाम पाएगा, किन्तु फिर उसने उसकी चर्चा ही नहीं छेड़ी। मानो कुछ हुआ ही नहीं था।

उसकी आशा के अनुकूल यदि मालकिन दुःखित दिखाई देतीं, तो वह भी अवश्य ही बहुत अधिक दुःखित होता, और मालकिन को सुखी देखने के लिए क्या न कर गुज़रता; किन्तु जब मालकिन के चेहरे पर ऐसी किसी भी प्रकार की छाया नहीं दिखाई दी, तो उसे मालकिन पर मानो कुछ क्रोध हो आया, किन्तु एकाध बार ही—उसके मन का प्रवाह ऐसी ढालू जमीन पर बहता है कि न तो कूड़े-कर्कट को, न मुक्ता-माणिक्य ही को कहीं अटके रहकर कुछ प्रभाव पैदा करने का साहस होता है ! जो हो, दादू को अब उतना अधिक काम नहीं करना पड़ता; और सदैव ही मालकिन की सेवा उसे आवश्यकता से अधिक ताज़ा बनाए रखती है।

कमल पुनः आकाश का चांद पा गया है। कितने दिन उसे और यहां रहना है, यह तो वह नहीं जानता; किन्तु अब तक जो वह यहां रह चुका है, वही कम नहीं है। यही नहीं; इस माह के अन्त में सारा दफ्तर यहां से चला जा रहा है, लगभग सभी क्लर्क यहां से कागज़-पत्र के साथ ही रवाना हो जाएंगे। तब भी, कमल को यहां कुछ अवधि तक रहकर क्षेत्रीय कार्यालय से तालमेल बनाए रखना होगा। और उसके बाद सवेतन, अर्द्धवेतन पर उसका जितना अवकाश बाकी है, वह काफी है, उसका ध्यान करने भर से वह एक तृप्ति का अनुभव करता है। अब तो उसका प्रतिद्वन्द्वी धर्मप्रकाश भी यहां नहीं है। बस वह है और है कमला। समस्त प्राचीन के संस्कारों को धो-पोंछकर ! दोनों एक दूसरे में खूब मगन हैं।

किन्तु अन्त किसका नहीं है ?—यदि भावना सुख की हो तो उसके

अन्त की उद्भावना और भी समीप होती है। कमल और कमला के निर्द्वन्द्व स्वच्छ समारोह के दीपक का अवसान भी आया, और श्रीमान् नरवरोत्तम नारायण नटनागर उर्फ एन्-क्यूब अटनागर सेनेटोरियम में आरोग्य-लाभ का अपना कार्यकाल निःशेष करके जीवन की क्रूर-कठिन वास्तविकताओं से संघर्ष करने के लिए लगभग डेढ़ वर्ष की अनुपस्थिति के बाद पुनः एक प्रातःकाल सशरीर वहां पर उपस्थित हो गए। आने के पहले उन्होंने बाकायदा अपने शुभागमन की सूचना का तार प्रेषित कर दिया था, अतः आते ही उन्हें किसी नाटकीय दृश्य को देखने का सुयोग नहीं मिला, किन्तु जीवन ही जब नाटक हो तो ऐसे दृश्यों का अभाव ही क्या है?

अटनागर के जाने के पूर्व जो एक प्रधान कार्यालय था, वह उनके लौटने पर एक सामान्य-सा कार्यालय भी नहीं रहकर कैसे केवल एक व्यक्ति—कमलनयन जोशी में सिमटकर शून्यवत होना चाह रहा था इसे यदि अटनागर ने आंखों से देखे बिना विश्वास न किया हो, तो आश्चर्य की बात नहीं है। फिर भी कमला के द्वारा उन्हें समस्त वस्तुस्थिति का पता पहले ही लग चुका था। आने के दो-तीन दिन बाद ही एक दिन जब कमला स्कूल चली गई थी, नटनागर ने कमल को घर पर ही बुला भेजा।

नटनागर ने कहा, 'कमल, मैं ड्यूटी जॉइन करना चाहता हूं!'

'अभी?—मेरा तो ख्याल है आप कुछ थोड़ा यहां रहकर विश्राम कर लेते!'

—वही १८०° डिग्री का कोण बनाकर उनके ओठों ने बिना कारण ही हंसकर कहा, 'विश्राम तो काफी कर चुका हूं। अठारह महीने कम नहीं होते। रहा स्वास्थ्य, सो पहले जैसा तो चिर विश्राम के बाद ही बन सकता है, पर वैसे अब विशेष तो कमज़ोरी मैं अनुभव नहीं करता।'

'सो तो ठीक है—पर घर छोड़कर बाहर रहने जैसी अवस्था····'

'घर छोड़कर बाहर रहना?—क्या मतलब?'

'मतलब—यानी आप अभी बाहर—मेरा मतलब है बम्बई अकेले कैसे रहेंगे ?'

'बम्बई क्यों ?—मैं तो यहां जॉइन करूंगा ?'

'यहां ?—समझा नहीं भाई साहब !'

'इसमें समझने की बात ही क्या है !—मैंने अवकाश यहां से लब्ध किया था, अवकाश की समाप्ति पर मुझे यहीं पर जॉइन करना चाहिए। मैं तुमसे सीनियर हूं, अपना चार्ज मुझे दे दो।'

'सीनियर आप ज़रूर हैं, और देने को वैसे चार्ज है ही क्या ! किन्तु···'

'किन्तु क्या !—जब तक तुम्हें नया आदेश नहीं मिले, यू विल वर्क अण्डर मी ! (तुम मेरे मातहत काम करोगे !)'

कमल ने मुस्कराकर कहा, 'आपके अण्डर (मातहती) में तो मैं सदैव ही काम करता रहा हूं, पर यहां पर जिस आदमी को उन्होंने तैनात किया है, वह मेरी ही ग्रेड का होना चाहिए। आपकी ग्रेड और पोस्ट तो उन्होंने बम्बई बदल दी है !—इसलिए आपको वहीं जॉइन करना चाहिए।'

'पोस्ट उन्होंने ट्रांसफर की होगी, मुझे तो उन्होंने नहीं किया !···'

'मेरी समझ में तो नहीं आया भाई साहब !'

'इसमें समझने की क्या बात है !—इट्स वेरी क्लीयर (बड़ी साफ बात है !) मैं तुमसे सीनियर हूं ! अपनी रिस्पोन्सीबिलीटीज़ (जिम्मेदारियों) को खूब समझता हूं ! यू कैरी आउट ह्वॉट आइ से !' (मैं जो कहता हू, उसका पालन करो !)

'माफ कीजिएगा, मैं आपके दृष्टिकोण से सहमत नहीं हूं।'

'इसमें सहमति का प्रश्न ही नहीं है कमल, उसके औचित्य का भार मुझपर छोड़ दो, मैं उसके लिए उत्तर दूंगा, तुम जो मैं कहता हूं वह करो। विशेष कुछ नहीं—एक रिपोर्ट तो मेरे रिजम्प्शन (कर्त्तव्यभार ग्रहण) की टाइप कर दो, मैं हस्ताक्षर कर दूंगा, और एक फॉर्मल

(औपचारिक) पत्र, जिसमें यह लिखा हो, कि हम लोगों ने आज पूर्वाह्न में चार्ज सम्हाल लिया और सम्हला दिया है। हम दोनों उसपर हस्ताक्षर कर देंगे !—ऐण्ड यू विल कन्टीन्यू टु वर्क एज ह्विदर्टूफोअर !' (और तुम पूर्ववत् काम करते रहोगे !)

'मुझे माफ कीजिए ! यदि आप मुझे लिखकर दे देंगे, तो मैं उसे अपने नोट के साथ आगे भेज दूंगा। बिना प्रधान कार्यालय के आदेश के मैं अपना चार्ज किसीको नहीं दूंगा।'

'किन्तु मैं जब अवकाश पर गया था, तब तो चार्ज तुम्हें ही दे गया था ?'

'जिस आदेश के द्वारा मैंने आपसे वह चार्ज लिया था, उसीके द्वारा वह दूसरों को मैंने सम्हाल दिया है। इस समय मेरे पास जो भार है, वह आपका नहीं है !'

'मैंने प्रधान कार्यालय को यहां आने के पहले ही यह लिख दिया है, कि मैं यहां रिज्यूम करना चाहता हूं।'

'वहां से इसका कोई उत्तर मिला आपको ?'

'लिखित उत्तर वे कुछ ही दिनों में भेजने के लिए कह रहे थे।'

'तो उत्तर आ जाने दीजिए ! किन्तु क्या आप यह लोअर ग्रेड (छोटी ग्रेड) स्वीकार कर लेंगे !'

'नहीं। मैंने स्पेशल कन्सीडरेशन (विशेष विचार) के लिए आवेदन किया है। मेरी पत्नी यहां पर पोस्टेड (मुकीम) है, अपने स्वास्थ्य की इस अवस्था मे मैं बाहर कैसे रह सकता हूं ? इस विषय में मैं इनफार्मली (अनौपचारिक) बातचीत भी कर चुका हूं।'

कुछ देर तक विचारमग्न रहकर कमल ने कहा, 'देखिए, मेरी स्थिति बड़ी नाजुक है। आप नाराज न होइएगा। मैं खुद ही आज सारी परिस्थिति लिख भेजता हूं। दो-चार दिन में कुछ आदेश आ ही जाएगा। फिर मुझे क्या विरोध हो सकता है ? तब तक यदि आप कुछ लिखकर दे दें, तो मुझे रिपोर्ट करने का आधार मिल जाएगा। आप कहें तो मैं

ही आपकी ओर से एक पिटीशन (प्रार्थना-पत्र) लिख दूं, आप हस्ताक्षर कर दीजिएगा।'

किन्तु नटनागर ने अपने जूनियर क्लर्क को अपना प्रार्थना-पत्र देना, अपने योग्य न समझा। उन्होंने अपनी अर्जी सीधे प्रधान कार्यालय को भेज दी।

कमल और कमला की मुलाकातें अब संक्षिप्ततर होती जा रही थीं, यद्यपि कमला ने आगे इण्टरमीजिएट के अध्ययन के लिए कमल से पुनः पढ़ना प्रारम्भ कर दिया था, किन्तु नटनागर को कोई काम न था, संध्या को वे भी गुरु-शिष्य के पठन-पाठन में योग देने आ बैठते थे। शायद अनुभव का एक धक्का खाकर वे कमला की गतिविधि भी नियंत्रित करना चाहते हों! संध्या को पढ़ाते समय कमल ने कागज का एक टुकड़ा नटनागर की दृष्टि बचाकर कमला के हाथ में थमा दिया—'बहुत आवश्यक चर्चा करनी है, रात्रि को कमल कमला की प्रतीक्षा करेगा।'

एक पद्यांश का भावार्थ लिखते हुए उसने लिखा, 'रात को उन्हें नींद बहुत कम आती है! कल दफ्तर के टाइम में किसी समय स्कूल में आकर मिल लेना।'

वाक्य-रचना की त्रुटि बताते हुए उसने लिखा कि कल एक बार दादू को दफ्तर में भेज देना, वह कुछ व्यवस्था कर देगा।

दूसरे दिन उसने दादू के हाथ एक पुड़िया भेजी और लिखा कि पीने के पानी में मिलाकर पिलाने से खूब गहरी नींद आ जाएगी, और पानी का रंग या स्वाद बिल्कुल नहीं बदलेगा। वह कमला की रात को बारह बजे तक राह देखेगा।

संध्या को कमला ने अपनी नोट-बुक में लिखा कि गहरी नींद का खतरा कमल चाहे जितना चाहे, वह नहीं ले सकती। कमल ने अपने प्यार की कसम देकर विश्वास दिलाना चाहा कि वह केवल अनिद्रा की औषधि है, और सभी डॉक्टर उसका उपयोग करते हैं। कमला ने लिखा कि आज रात वह स्वयं अपने ऊपर परीक्षा करेगी, यदि सफल हुई तो

कल दूसरा भाग अटनागर पर प्रयोग करेगी। एक रात की प्रतीक्षा कमल को खटकी तो पर उसे स्वीकार करने के सिवा कोई चारा न था।

किन्तु कमला ने उसी रात को बारह बजे जाकर जब कमल के दरवाज़े को धीरे से थपथपाया, तो कमल सो रहा था। सामने अपने घर के बरामदे मे दादू लेटा हुआ सोने का बहाना किए आश्चर्य के साथ अपनी मालकिन का नैश विहार देख रहा था। आवाज़ सुनकर कोई जाग न जाए, इसलिए कमला ने बगल की खिड़की पर जाकर धीरे से कमल को आवाज़ दी। कमल जाग गया।

दूसरे दिन कमला जैसे ही चाय लेकर उपस्थित हुई, नटनागर ने उसके चेहरे की ओर देखकर कहा, 'क्या बात है डार्लिग, चेहरा उतरा हुआ क्यों ? आंखें सूखी-सूखी सी····'

'कहां ?'

'मेरी आंखों से देखोगी तो पता लगेगा। अपनी आंखों से न अपना रूप देखा जा सकता है न विद्रूप। क्या रात को नींद नहीं आई ? और उन्होंने चाय को अधरों पर लगा लिया।

'वाकई नहीं आई !'

'पर रात तो तुम जल्दी ही सो गई थीं ?'

'शायद इसीलिए हो ! बारह बजे एकाएक कोई सपना देखकर उठ बैठी, बस फिर पांच बजे तक घड़ी की टिकटिक सुनने के सिवा और कुछ किया ही नहीं जा सका। इसीलिए तो अभी सोकर उठी हूं। हां, चाय दादू ने बनाई है, इसलिए यदि कुछ नुक्स हो तो नाराज़ नहीं हो सकोगे।'

'नाराज़ ? बल्कि कहता हूं, चाय तुम्हारा दादू ही क्यों नहीं बनाया करे ! तुम्हें कुछ तो आराम मिलेगा।'

'सो कैसे हो सकता है ? मुझे सुख किसमें मिलता है, यह मैं जानती हूं। सुख के सामने आराम की कोई कीमत नहीं है।'

'सो तो है, किन्तु डार्लिग, एक बात जानती हो ?'

'कहो !'

'तुम रात को ठीक तरह सो नहीं सकीं, किन्तु रात को मैं तो खूब सोया। ऐसा सोया कि कभी कोई कह ही नहीं सकता कि मैं अनिद्रा का शिकार हूं। तुमसे कहा नहीं, सेनेटोरियम में जब मुझे रात को किसी तरह भी नींद नहीं आती थी, तो मुझे कुछ हेल की मदिरा पिला दिया करते थे। उससे नींद तो आ जाती थी, किन्तु दिन भर आलस घेरे रहता था। यहां उस आदत को शुरू करना नहीं चाहता था, किन्तु कल मन ऐसा शिथिल हो गया था कि मन हुआ कुछ थोड़ी ले ही लूं। लेकिन रात की नींद से तो ऐसा मालूम पड़ता है कि अब मुझे उसे छूने की जरूरत ही नहीं है।'

'यह तो बड़ा अच्छा है, किन्तु कल मन शिथिल क्यों हो गया था ?'

'शिथिलता तो आज भी अनुभव हो रही है, वैसे ही जैसी कि पूर्व रात्रि में मदिरापान के बाद ! किन्तु कल की शिथिलता कुछ अलग थी....'

'अलग कैसी ?'

'यों तो विशेष कुछ नहीं। कल तुम तो स्कूल चली गई थीं, मैंने कमल को बुला भेजा था !'

'कमल बाबू को ! क्या मेरे अध्ययन के सम्बन्ध में ?'

हंसकर नटनागर ने कहा, 'नहीं ! अपने ही सम्बन्ध में। कमल से मुझे यह आशा न थी !'

'क्या ? क्या किया ऐसा उन्होंने !'

'मैं जब छुट्टी पर गया था तो उसे चार्ज देकर गया था, वापस मुझे चार्ज देने से उसने इनकार कर दिया।'

'कारण क्या बतलाया ?'

'कारण क्या, यही कि वह जब तक अधिकारियों का आदेश न पाए, मुझे चार्ज वापस न देगा।'

'शायद उनके पास ऐसे आदेश हों !'

'यानी कि, मुझे चार्ज न दे !'

'हो सकता है ऐसा ही हो कि जब तक उन्हें नया आदेश न मिले, किसी दूसरे को चार्ज न दें। किन्तु डार्लिंग, यह तो छोटे क्लर्क की पोस्ट है, तुम तो प्रधान क्लर्क थे।'

'मेरी ग्रेड और स्टेटस (स्थिति) तो सुरक्षित है! किसी पोस्ट पर काम करने से उनमें कोई अन्तर नहीं आ सकता। विशेष कावेनण्ट द्वारा स्टेट के कर्मचारियों को यह आश्वासन दिया गया है!'

'तो अब क्या होगा!'

'होना-हवाना क्या है?—कल मैंने एक एक्सप्रेस लेटर हेड आफिस को भेज दिया है। दो-तीन दिन में आर्डर्स आ जाएंगे।'

'किस तरह के?'

'कि यहां का चार्ज मुझे दे दिया जाए और कमल को बम्बई या और कहीं क्षेत्रीय कार्यालय में ट्रान्स्फर कर दिया जाए।'

'यह तो बहुत बुरा होगा।'

'क्यों?'

'कमल बाबू को जाना पड़ेगा?—मेरी पढ़ाई का क्या होगा?'

नटनागर बाबू ने दोनों गाल फुलाकर हंसी का फुव्वारा छोड़ दिया, बोले, 'खूब हो मेरी रानी, तुम भी!—कमल न होगा तो क्या तुम्हारी पढ़ाई रह जाएगी?—अरे, मैं खुद तुम्हें क्या, कमल तक को पढ़ा सकता हूं, परीक्षा नहीं दी बस यही तो बात है?—लेकिन फिर भी यदि कमल मेरी बात मान लेता तो सम्भव है कि वह यहीं रह जाता।'

'सो कैसे?'

'मैंने कहा था कि चार्ज मुझे दे दें, और मेरे हाथ नीचे काम करे। मैं रिपोर्ट कर देता और इसके लिए जस्टिफिकेशन भी दे देता कि यहां पर एक सहायक लेखक की ज़रूरत है ही।'

'तो फिर अब?'

'जो कुछ हो।—रहा तुम्हारे अध्ययन का, सो ऐसे अनेक कमल की व्यवस्था हो सकती है। डोण्ट यू वरी (तुम चिन्ता न करो)—अच्छा,

एक प्याला चाय तो और दो ।'

आठ-दस दिन और जब नटनागर के आवेदन का उत्तर न आया तो उन्होंने एक और स्मरण-पत्र भेज दिया, फिर दूसरा, और जब तीसरा स्मरण-पत्र भेजने की वे तैयारी कर ही रहे थे कि वहां से आदेश मिल गया कि अब यहां पर किसी लेखक को रहने की आवश्यकता नहीं है। नटनागर बाबू प्रधान कार्यालय में जाकर ड्यूटी जॉइन करें और कमलनयन जोशी क्षेत्रीय कार्यालय में।

आदेश पाते ही कमलनयन ने सभी सम्बन्धित कागज-पत्रों को उसी दिन डाक द्वारा क्षेत्रीय कार्यालय में भेज दिया, उसके साथ ही उसने सवेतन अवकाश की अर्जी भी भेज दी। एक तरह से वह खुश ही हुआ, क्योंकि यों भी अब तक उसे वहां से अपना कारोबार समेट लेना था—अब सब झंझट से छुट्टी मिल गई और यदि नटनागर बाबू को अधिक अवकाश पर न रहना हो, तो उन्हें भी कमला को यहीं छोड़ना पड़ेगा—और अधिक अवकाश पर वे रह नहीं सकते—मेडिकल सर्टीफिकेट की व्यवस्था करनी पड़ेगी, और वह हो भी जाए तो भी बिना वेतन पाए पलंग तोड़ते रहने जैसी मनोदशा उनकी नहीं है।

राय ही कमला को पीछे छोड़कर मिस्टर एन्-क्यूब अटनागर ने जाने का निश्चय कर लिया, और इस निश्चय की सूचना भी यथासाध्य सभी तरफ उन्होंने प्रचारित-प्रसारित कर दी।

विदाई-समारोह सभी अफसरों को दिए गए थे। नटनागर उस समय मौजूद न थे, किन्तु खबर तो उन्हें सब ओर से मिल ही गई थी। अफसर से वे भी कम नहीं, और अब तो प्रधान कार्यालय में जा रहे हैं। वहीं से सबके भाग्य की डोर हिलाई जाती है। नटनागर बाबू पर्सनेल (नियुक्ति) विभाग के सदस्य हैं, बहुत सम्भव है कि वहां पर उन्हें मुख्य लेखक का स्थान मिल जाए; कुछ भी हो, उनको अपनी तिकड़म तथा लेखन से लगाकर कर्मचारियों के बिस्तर तक गोल कर देने तथा हर चीज को गोलमाल कर देने की क्षमता पर पूरा विश्वास है, जिसके बल पर वे

प्रधान लेखक ही को नहीं अधिकारियों तक को गोल कर सकते हैं। अतः उन्हें भी विदाई-समारोह तो मिलना ही चाहिए।

किन्तु विदाई-समारोह देने वाले तो पहले ही वहां से गोल हो चुके थे। रह गया केवल कमलनयन जोशी, और स्टोर्स विभाग के जाते हुए नक्शे-कदम को धो-पोंछकर साफ कर देने के भार से लैस मैं—इसलिए कि मैं अपना त्याग-पत्र इसी शर्त पर रोके हुए था कि मुझे यहां से अभी तदबील नहीं किया जाए। नटनागर के पुनीत इरादे की सूचना मुझे भी मिल चुकी थी, किन्तु किसीको विदाई-समारोह देने जैसा उत्साह मुझमें नहीं था—विशेषकर नटनागर महाशय मुझे फूटी आंखों देखना पसंद नहीं करते थे। यों मैं उनके लौटने पर एक बार उनकी मिजाजपुर्सी के बहाने श्रीमती कमला नटनागर का आतिथ्य ग्रहण कर आया था।

सो, ले-देकर रह गया कमलनयन जोशी, नटनागर का पुराना शागिर्द। उसने एक दावत आखिर दी ही। मेहमान बने श्रीमान् और श्रीमती नटनागर और श्रीमती-विहीन मैं, श्रीमती नटनागर के स्कूल की प्रधान अध्यापिका मिसेज़ स्मिथ तथा एक मिस्टर शर्मा, फोटोग्राफर। सारी पार्टी निहायत इन्फार्मल, ढंग हिन्दुस्तानी—अंग्रेजी मिक्सड। स्थान चुना गया रियासत का एक होटल जो पहले केवल रियासती मेहमानों के लिए था, किन्तु अब रियासतों के विलयन के बाद ही से जन-साधारण के लिए सुलभ हो गया था।

टेबल के छोर पर आमने-सामने मैं और मिस्टर शर्मा फोटोग्राफर, मेरी दाहिनी ओर बाजू में मिसेज़ अटनागर, उनके बाद कमलनयन जोशी; दूसरे बाजू में मिस्टर नटनागर, उनके बाद मिसेस स्मिथ!

मिसेज़ स्मिथ एक हिन्दुस्तानी ईसाई महिला हैं, जिनके पहले पति, एक इंजिन ड्राइवर, किसी दुर्घटना में मारे गए थे। रंग जैसा कि होना चाहिए था, वैसा ही था, किन्तु पढ़ी-लिखी सामान्य रूप से अच्छी है। बाइबिल पढ़ लेती थीं, प्रति रविवार को गिरजा जाती थीं, अन्य ईसाइयों से जिनमें अंग्रेज, एंग्लो-इंडियन आदि भी थे, मेल-मुरव्वत होने से रंग का

भी संस्कार होने लग गया था। अतः जब मिस्टर स्मिथ दुर्घटना के शिकार हो गए, तो तत्कालीन अंग्रेज महा व्यवस्थापक ने इन्हें रेलवे स्कूल में अध्यापिका बना दिया था। अब जब स्कूल का विकास किया गया, और मिसेज़ अटनागर की नई नियुक्ति की गई, तो यद्यपि कमला, मिसेज़ स्मिथ से अधिक पढ़ी हुई हैं, किन्तु वरिष्ठता (सिनिओरिटी) के कारण प्रधान पद मिसेस स्मिथ ही को मिला। मिसेज़ स्मिथ यों उमर में शायद चालीस के आसपास हों किन्तु दीखती अभी भी पच्चीस के आसपास हैं। कुछ दिनों से उनके चेहरे पर पाउडर और रूज़ का रंग घना होता जाता देखा जा रहा है, परिधान में भी विशेष सज्जा, गति में अधिक चांचल्य, पैरों में हलकापन, मन में छल के द्वारा पकड़ी हुई सरलता जिससे जबर्दस्ती भोलेपन का अभिनय कराया जा रहा हो—सुनते हैं कि मिसेज़ स्मिथ शीघ्र ही मिसेस रॉब्सन होने वाली है। मिस्टर रॉब्सन कारखाने में फोरमन थे। कारखाना अब क्षेत्रीय कार्यालय के कारखाने से संयुक्त कर दिया गया है। अतः अपने सम्बन्ध को अब वैधानिक रूप देने की उन्हें आवश्यकता पड़ गई है!

मिस्टर शर्मा के परिचय के लिए आप शायद ही उत्सुक हों। फोटोग्राफर कह देने से बहुत कुछ काम परिचय का चल ही जाता है। इससे अधिक फोटोग्राफर के बारे में जानने की उत्सुकता प्रायः नहीं ही होती। उनके निमंत्रित किए जाने की सार्थकता भी उतनी ही स्पष्ट है।

मिसेज़ स्मिथ को निमन्त्रण दिया गया था, मिसेज़ नटनागर के दृष्टिकोण से; मैं प्रतिनिधित्व करता था हमारे भूतपूर्व प्रधान कार्यालय का। कमलनयन था मेजवान; मेहमान थे ही श्रीमान् नरवरोत्तम नारायण नटनागर! पार्टी का रंग जमने लगा। प्रारम्भ हुआ आपानकों से। मैं टोमेटो स्क्वैश का गिलास लेकर बैठा, मिस्टर नटनागर तथा शर्मा ने बीयर से प्रारम्भ किया, अन्त कहां किया इसका लेखा-जोखा मैं नहीं रख सका। कमल को मेहमानदारी में बीयर तो पीनी ही पड़ी। मिसेज़ स्मिथ मिस्टर शर्मा के आग्रह पर सब कुछ पीने लग गईं, मिसेज़ नटनागर ने

अपने आपको बचाए रखा !

फिर प्रारम्भ हुआ डिनर ! सफेदपोश नौकर चीनी के बरतनों में एक के बाद एक कई प्रकार की सामग्रियां लाने लगे। मैं, कमल और मिसेज़ नटनागर निरामिष भोजी, अन्य सभी सामिष भोजी—पार्टी रंग लाने लगी !

नटनागर ने मुझसे पूछा कि हमारा विभाग कब गोल हो रहा है।

मैंने कहा, 'गोल तो हो गया, केवल लादना बाकी है !—वह कब होगा, सो कुछ मेरी सुविधा पर और कुछ मेरे विभाग की सुविधा पर निर्भर करता है।'

'यानी आपका मतलब है, जब आपको विभागीय आदेश प्राप्त होगा ?'

'अंशतः।'

'यानी ?'

'यानी यही कि यदि मैं चाहूं तो मैं भी इसमें जल्दी कर सकता हूं।'

'उनके आदेश की प्रतीक्षा किए बिना ?'

'उनके आदेश की प्रतीक्षा करने का आदेश तो मुझे नहीं है।' मैंने कुछ मुस्कराकर कहा। मैं देख रहा था कि किस तरह मिस्टर नटनागर मेरे अधिकारों के प्रति तुच्छता का भाव दिखाना चाह रहे थे। टेढ़ी दृष्टि से देखा, कमलनयन भी मुस्करा रहा है।

मिस्टर नटनागर ने उपदेश देना चाहा, 'आप शायद प्रधान कार्यालय की चालबाज़ियों को नहीं जानते—आपको कोई अधिकार अपने हाथ में नहीं लेने चाहिएं।'

'अधिकारों को मैं हाथ लगाता ही नहीं, परन्तु जब हाथ नहीं लगाया जाता, तो वे पैरों के पास पड़े रहते हैं, शिकायत यही है कि मैं उनका उपयोग नहीं करता।'

नटनागर ने चट से पहलू बदला, 'यही तो, अधिकारों का उपयोग बूमरैंग है, बूमरैंग ! दुतरफा हथियार। यदि सामने उसने किसीको 'हिट'

किया तो वह फेंकने वाले को भी 'हिट' कर सकता है।'

'समझ लीजिए, इसीलिए मैं उसका उपयोग ही नहीं करता।'

'पर तब काम कैसे चलता है ?'

'वह भी चल ही जाता है !—लोग यदि कर्तव्य का भी ध्यान रखें तो अधिकारों के प्रयोग की बात न भी उठे।'

'लेकिन योग्यता-अयोग्यता का इम्प्रेशन (प्रभाव) पैदा करने का यही मौका है। यदि भविष्य बनाना हो····'

कमल ने आखिर बात काटी, और कहा, 'भाई साहिब, इन्होंने तो कंडीशनल रेज़िग्नेशन (सशर्त त्यागपत्र) दे रखा है। यहां से यदि इन्हें बाहर जाना पड़ा, तो वह त्यागपत्र कारगर समझा जाएगा !····'

नटनागर ने कहा, 'और एडमिनिस्ट्रेशन ने इस शर्त को मंजूर कर लिया ?'

मैंने कहा, 'क्या करूं मिस्टर नटनागर ? वे मुझे छोड़ना नहीं चाहते।'

मानो उन्होंने मेरी बात नहीं सुनी, बोले, 'ओह, तो इसलिए आप जान-बूझकर डिस्पेचेस में देरी कर रहे हैं ?'

'देरी तो कर रहा हूं, और जानबूझकर भी—पर मजबूर जो हूं, उन्होंने लिख दिया कि वहां गोदाम में जगह नहीं है, और सामान यहां से चला भी गया, तो मुझे तब तक छुट्टी नहीं मिलेगी जब तक कि सामान वहां पुस्तकों पर नहीं ले लिया जाता। वहां चौकीदारों का भी प्रबन्ध नहीं है, इसलिए सामान अभी यहां रहने दिया जाए।'

तब कमला ने कहा, 'क्या रेलवे की बातें करने के सिवा और कुछ बात ही नहीं है ? यह तो आप लोग जीवनभर ही करते रह सकते हैं। देखिए मिस्टर शर्मा को और मिसेज़ स्मिथ को इन बातों में कोई रस ही नहीं मिल पा रहा है।'

मैंने मुस्कराकर कहा, 'इससे इन्हें भोजन में अधिक रस प्राप्त करने का भी तो अवसर मिल गया है।'

उसके बाद कुछ देर जब फोटोग्राफी के बारे में बात चली तो मिस्टर नटनागर तथा कमल का उत्साह वहीं तक रह सका, जहां तक उनके फोटोग्राफ लेने की बात थी। शिक्षा तथा शिक्षालय का विषय भी कुछ ही देर चलकर बासी और उत्साहहीन हो गया।

कुछ खयाल न रहा जाने कैसे बातचीत नर-नारी के अनादि और अनन्त विषय पर चल पड़ी। कमला देवी ने पूछा, 'पुरुष और स्त्री, दोनों में से श्रेष्ठ कौन है ?'

जाने क्यों, सभी लोगों ने समझा कि प्रश्न मुझीसे किया गया है, यद्यपि मैंने यही समझा कि और चाहे जिससे यह प्रश्न किया गया हो, मुझसे नहीं किया गया है, और मैं उत्तर सुनने को कान बिछाए, चक्षु और हाथों को कांटे-छुरी और भोज्य-सामग्री पर जुटाए रहा।

कुछ देर की चुप्पी के बाद मिसेज़ नटनागर ने दुहराया, 'कहिए, क्या सोचते हैं आप ?'

मैंने कहा, 'मुझसे कह रही हैं ?'

आंखें मिलते ही कमला देवी ने आंखें नीची कर लीं, और कहा, 'आपसे भी, और सभी से भी।'

मैंने कहा, 'प्रश्न मैं ठीक तरह से समझा नहीं ! फिर यदि प्रश्न सभी से है तो उन्हें भी उत्तर देने दीजिए, शायद प्रश्न का आशय समझ जाऊं।'

नटनागर ने शीघ्र ही कहा, 'ऐसा कठिन प्रश्न में है क्या ?—मैं कहता हूं, स्त्री पुरुष की अपेक्षा श्रेष्ठ दीखती है, पर है नहीं।'

मिसेज़ स्मिथ ने कहा, 'इसका कुछ कारण भी तो होगा !'

'हां-हां, एक नहीं, अनेक हैं। पहला तो यही कि उसे प्रसाधन की अपेक्षा रहती है। किसी सुन्दर से सुन्दर महिला को भी देख लीजिए, बिना 'कॉस्मेटिक्स' के किसी समाज में जा सकती है ?—अपने स्वयं में ही अपने सौंदर्य के प्रति उसमें आस्था नहीं !'

मिसेज़ स्मिथ यों लजातीं नहीं, किन्तु आज जाने क्यों उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया। बोले मिस्टर शर्मा :

'देखिए, जहां सौंदर्य की बात चली है, चुप रहने की मुझसे आशा नहीं की जानी चाहिए। मैं फोटोग्राफर हूं, और सौंदर्य को पकड़ रखना ही मेरा जीवन है। कॉस्मेटिक्स के प्रयोग का जहां तक सवाल है, मैं समझता हूं, यह सौंदर्य को बढ़ाने-घटाने के महत्व से कोई सम्बन्ध नहीं रखता, यह तो सिर्फ उसको पेश करने का एक तरीका है। हम किसी गांव की निराभरण किसान कन्या की हवा में ऊंचाई से अनाज साफ करती हुई उभरे वक्ष की श्याम छवि पर भी उसी गहराई से मुग्ध हो जाते हैं, जिस गहराई से किसी रूज-पाउडर-लिपस्टिक-आच्छन्न गौर-मुख कांति पर। बल्कि घूंघट का जादू भी नारी के चेहरे पर वही करिश्मा करता है जो किसी शो-रूम के प्रकाश-उत्स को ढांक रखने वाले कई तरह के प्रयत्न किया करते हैं। प्रकाश-रश्मि को बाहर से बचाकर वस्तु के प्रकाश को अत्यधिक उज्ज्वल रेखा में प्रस्तुत करने के लिए मैं कैमरे पर भी काले कपड़े के घने घूंघट का प्रयोग करता हूं—यह तो आप सभी जानते हैं।'

मिसेज़ नटनागर ने मुस्कराते हुए कहा, 'मिसेज़ स्मिथ, आप कहिए न ?'

'अभी मिस्टर नटनागर का कथन कहां शेष हुआ ?—अनेक कारण उन्होंने कहे थे, अभी तक तो उनके एक ही कारण का उपचार हुआ है।'

मिस्टर नटनागर कच्ची खाने वाले न थे, बोले 'मैं अपने पहले पाइण्ट की भी हार स्वीकार नहीं करता। सवाल तो नारी की भावना का है, जिससे वह अपने आपको इन समस्त उपकरणों से लादना चाहती है ! देखने वाली आंख कहां सौंदर्य देखेगी, यह सौंदर्य का पात्र तो नहीं बता सकता। खैर, यह तो एक ही बात हुई। समाज में हम एक नियम की बात जानते हैं : प्रिफरेन्स फौर द फेअर सेक्स (स्त्रियों अग्रमान्यता) या लेडीज़ फर्स्ट (महिलाएं पहले)। क्या इस नियम ही में नारी के लिए दुर्बलता की भावना नहीं है ?—वे क्या पुरुषों से सपोर्ट (सहारे) की अपेक्षा नहीं करतीं ! सपोर्ट चाहने का तात्पर्य ही यह है कि जिसका

सपोर्ट चाहा जाता है, वह सपोर्ट चाहने वाले से अधिक दृढ़ होता है !'

कमल ने कहा, 'पर भाई साहिब, दृढ़ता में तो पुरुष से बांजी मार ले जाने वाले अनेक पशु भी होते हैं। शेर, चीते आदि हिंस्र जन्तुओं की बात जाने दें, तब भी बैल ही पुरुष की अपेक्षा दृढ़ होता है !—तो क्या बैल आदमी से भी श्रेष्ठ है ?'

'पर बैल का सहारा तो कोई चाहता नहीं।' नटनागर ने कहा, 'मनुष्य ने बैल को साधन अवश्य माना है, उसका सहारा लिया है, किन्तु उससे सहारा चाहा नहीं।"

टेबल के नीचे मिसेस नटनागर के डोलते हुए पैर मेरे पैरों से टकरा गए। मैं चौंक उठा। सोचा, शायद इशारा इस बाजू में बैठे हुए मिस्टर नटनागर के लिए हो, क्षणार्ध के लिए उनकी ओर देखा, अपना वक्तव्य समाप्त कर इत्मीनान से विजय-गर्व के साथ वे छुरी से प्लेट पर रखी सामग्री को काटने में दत्तचित्त थे, कि मिसेस नटनागर ने मेरी भ्रांत-चकित दृष्टि को पकड़कर कहा, 'आप तो कुछ बोल ही नहीं रहे हैं ?'

मैंने कहा, 'गुलाब जामुन बहुत अच्छे बने हैं; कमल बाबू का आतिथ्य ठहरा, ज़रा लोभ लग गया था।'

नटनागर ने कहा, 'गुलाब जामुन में रस भी बहुत होता है, बातों का रस, सुनते हैं, केवल नारियों ही को बहुत भाता है।'

मैंने कहा 'नारी स्वयं रसीली वस्तु जो ठहरी !—परिचय ज़रा उस रस को फीका कर देता है, वरना पुरुष के लिए तो कोई रस उस रस के सामने नहीं ठहरता।'

नटनागर ने कहा, 'तो आप मेरी बात से सहमत हैं ?'

'आप शायद कह रहे थे कि पुरुष नारी की अपेक्षा अधिक दृढ़ होता है। कमल बाबू ने कहा कि पशु पुरुष से भी अधिक दृढ़ होता है।··· आप दोनों ही सच हैं, जहां पाशविकता का प्रश्न है वहां पर दृढ़ता ही किसीके गुण का पैमाना होती है; किन्तु मनुष्य का उत्कर्ष यदि पाश-विकता से ऊपर उठना हो तो शायद कहा जाएगा कि कोमलता का

पैमाना ही मनुष्य के गुणों की परख करे। हमारे शास्त्र तो शत-सहस्र जिह्वा से कह रहे हैं कि क्षमा दण्ड से अधिक श्रेष्ठ है, त्याग लोभ से आगे है, करुणा को क्रोध कहीं नहीं पा सकता। और ये गुण केवल स्त्री ही में नहीं, पुरुष में भी पाए जाते हैं।'

'लेकिन प्रश्न तो यहां स्त्री और पुरुष के बीच श्रेष्ठत्व का है।' नटनागर ने कहा।

मैंने जो बात कही, वह दृढ़ता और कोमलता के बीच की थी—और अपनी बात के प्रमाण के लिए मैं गुलाब जामुन की बालूशाही से तुलना करना चाहूंगा। मैं गुलाब जामुन को पसन्द करता हूं।'—सब सदस्य हंस पड़े।

मिस्टर शर्मा ने कहा—'आप नर और नारी के बीच की बात कहिए।'

'वह ब्रह्मा भी नहीं कह सका, कह सका केवल इतना ही कि स्त्रिया चरित्रं और पुरुषस्य भाग्यं—दैव भी नहीं जानते, मनुष्य क्या जानेगा। किन्तु मनुष्य ने यह तो जान लिया है कि ज्यामिति का सिद्धांत यहां पर अच्छी तरह लगाया जा सकता है—जो एक ही चीज़ के बराबर हों वे आपस में भी बराबर होती हैं, अतः नारी का चरित्र और पुरुष का भाग्य दोनों एक ही बात हैं।'

मिस्टर शर्मा ने मुस्कराकर उत्साह के साथ कहा, 'आपकी बात सोलह आने सच है। अगर आप लोग आज्ञा दें तो मैं एक सत्य घटना कह सुनाऊं।'

'अवश्य, अवश्य!' सभी ने कहा।

'मैं एक व्यक्ति को जानता हूं, जो अब तो बुढ़ापे में कदम रख रहे हैं, लेकिन तब भी ऐसे कोई जवान न थे। लगभग चालीस के रहे होंगे —चार-पांच बच्चों के बाप, घर में मजे की नाक-नक्शे से दुरुस्त सुघड़ बीवी—आराम से जिन्दगी बसर कर रहे थे कि, उनके जीवन में एक धूमकेतु उदय हो गया। उनके पड़ोस में एक नये पंजाबी सज्जन आए

किराये से मकान लेकर अपनी अठारह-उन्नीस बरस की एक कुमारी सुन्दर कन्या के साथ रहने के लिए। रोज खिड़कियों से देखा-देखी हो जाती थी, कोई खास बात न थी, था केवल कुतूहल ! पति-पत्नी में चर्चा भी होती रहती, कि इतना बड़ा हिया इन बाहरी लोगों ही का हो सकता है कि इतनी बड़ी धींगरी लड़की के घर पर रहते हुए भी चैन की नींद ले सकते हैं। यही नहीं, लड़की मजे से खिड़की पर खड़ी रहकर न केवल बाहर वालों को देखती ही रह सकती है, बल्कि अपने आपको दिखाती भी रह सकती है, और उनके कान पर जूं नहीं रेंगती। इसी तरह दिन बीतने लगे।

रोज की बात ठहरी, चर्चा के बावजूद हजरत पत्नी से डरते, कि कहीं उनका खुद का खिड़की पर खड़े होकर ताकना पत्नी देख न ले, अतः उस शुद्ध कुतूहल से भरी ताक-झांक में आ मिली लुका-छिपी—और लुका-छिपी ने पैदा कर दिया रस····'

और मिस्टर शर्मा ने मेरी ओर देखकर आशा की कि मैं इसी बात पर कुछ कहूं।

मैंने कहा, 'लुका-छिपी में रस होता है, इसमें सन्देह नहीं। बच्चे भी इस बात को जानते हैं, यद्यपि सेक्स से उनका कोई चेतन परिचय नहीं होता। आपकी कथा में भी बड़ा रस आ रहा है, आगे कहिए ! मिस्टर कमल आपको धन्यवाद देंगे कि उनका गुलाब जामुन का बिल अधिक नहीं बढ़ेगा।'

कमल ने कहा, 'उसकी चिन्ता न कीजिए ! ठेके की बात है, उसमें अब न बढ़ सकता है, न घट ही, परन्तु मिस्टर शर्मा, इसमें सन्देह नहीं कि आपकी बात बड़ी मजेदार है।'

मिस्टर शर्मा ने कहना शुरू किया—'ताक-झांक और लुका-छिपी, आप जानते ही हैं, छिपी नहीं रहती। उस लकड़ी ने भी इसे पहचाना, और पास-पड़ोस के अन्य उसके समवयस्क साथी सहेलियों ने भी जाना। और इस प्रौढ़ व्यक्ति की लगन पर उनको तरस भी जल्दी ही आ गया !

योजनाएं बनने-बिगड़ने लगीं। एक दिन एक युवक ने इन प्रौढ़ व्यक्ति से कहा :

'आपसे एक ज़रूरी बात करनी है।'

'कहिए।'

'सामने वाली मिस ने आपको सलाम भिजवाया है।'

'कहते क्या हैं आप ?'

'बिल्कुल ठीक कहता हूं ! कहा है कि आप पत्र लिखिए।'

'और पत्र पहुंचाएगा कौन ?

'मैं।'

'मगर····'

'नहीं, डरिए नहीं, कोई बात नहीं। आपको उत्तर मिलेगा।'

फंस गए हजरत जाल में। फंसने के सिवा कोई चारा ही नहीं था। बड़ी सूझ-बूझ से पत्र लिखा। लड़की ने इशारे से जताया कि उसे पत्र मिल गया है। फिर क्या था, महाशय की बांछें खिल गईं। दो दिन के बाद उत्तर भी आ गया। फलां संध्या को अमुक उद्यान में वह उनकी प्रतीक्षा करेगी। और इशारे से भी उसने पूछ लिया कि उन्हें पत्र मिला या नहीं। इशारे ही इशारे में बहुतेरी बातें हो गईं, जिनको शायद भाषा कभी व्यक्त न कर सके। फलां संध्या को अमुक उद्यान में बड़ी आशा, बड़ा विश्वास और धड़कता हुआ हृदय लेकर पहुंचे हजरत।'—और फिर शर्मा ने एक और दृष्टि सबकी ओर डालकर अपनी प्लेट से कांटे से उठाकर रसगुल्ले एक टुकड़ा मुंह में डाला।

मिसेज़ स्मिथ हाथ रोके, और सांस रोके हुए बड़ी उत्सुकता से कहानी सुन रही थीं, बोलीं :

'फिर क्या हुआ ?'

'आप ही कहिए ?···'

मिसेज़ नटनागर ने कहा, 'होना क्या चाहिए। आप यही तो कहेंगे, कि उससे भी बड़ी आशा और बड़े विश्वास के साथ उस लड़की ने इन

महाशय का स्वागत किया। रही दिल की धड़कन, वह जब इन महाशय की संयत हुई तो उस लड़की की बढ़ गई ! प्रेम करने का अभिशाप जो उसकी तकदीर में बदा है।'

नटनागर महाशय ने कहा, 'प्रेम करने का अभिशाप ?—इसे प्रेम करने का, मौज करने का, आनन्द मनाने का अवसर क्यों न कहना चाहिए !' —क्यों मिस्टर शर्मा ! जब वे महाशय उद्यान के उस निभृत कुंज में गए तो सूखे हाथों तो नहीं गए होंगे। मधुर बातों से कान को ही तृप्ति होती है। नारी खाली पेट और खाली मन लिए कहीं भी किसी भी अवसर पर जा सकती है, प्रेम करने के अवसर पर तो अवश्य ही, किन्तु पुरुष तो खाली पॉकेट घर के बाहर निकल भी नहीं सकता। प्रेम करने का अवसर हो, तब तो वह विलोम अनुपात ही में भरा रहना चाहिए।—कम से कम नियम तो यही है !—पर क्या हुआ सो तो मिस्टर शर्मा ही कह सकते हैं !—कहानी सचमुच मजेदार है इसमें संदेह नहीं।'

मिस्टर शर्मा ने मेरी ओर देखा, लोगों की उत्सुकता को शायद वे बढ़ने देना चाहते थे। पूछा :

'आप क्या सोचते हैं !'

'जब आप कह ही रहे हैं तो मुझे सोचने की ज़रूरत ही क्या है ?'

'मगर आप लेखक जो हैं।'

'तो क्या हुआ ?'

'आप ऐसी सिचुएशन को कैसे हैण्डल करेंगे ?'

'आपकी कहानी कहानी तो है नहीं; आप कह चुके हैं, वह है सच्ची घटना ! सच्ची घटना कहानी से अधिक मजेदार होती है। घटना को मजेदार बनाने के लिए मैं फलां संध्या को अमुक उद्यान में उस लड़की को ले ही नहीं जाता !'

'गुड—वेरी गुड—दिस इज़ ह्वाट एग्जैक्टली हैपन्ड देअर !—(ठीक बिल्कुल ठीक; ठीक यही वहां पर हुआ !)—अच्छा, आगे बताइए आगे क्या करेंगे आप ?'

मैंने कहा, 'एक रसगुल्ला और खाऊंगा ! बस···'

'और कहानी ?'

'वह आप कहते चलिए। अब नहीं कहूंगा। मेरी तो केवल कल्पना होगी, और नाराज हो उठेंगी मिसेस नटनागर···'

मिस्टर नटनागर ने एक कड़ी निगाह से मेरी ओर देखा। लेकिन शर्मा जी ने कहानी शुरू की :

'सचमुच उस उद्यान में वह लड़की न थी, बल्कि था छिपा हुआ लड़कों का गिरोह। महाशय जी समझे शायद आने में देर हो गई हो। कुछ बैठकर प्रतीक्षा कर ली जाए ! तभी वही लड़का जिसने पत्र-व्यवहार का दौत्य स्वीकार किया था, सामने आया और बोला कि उन्हें कुछ असुविधा हो गई है, वे थोड़ी देर राह देखें, वे आती ही होंगी। जब अंधेरा होने आया, तो उस लड़की का बड़ा भाई वहां पर उन महाशय का पत्र हाथ मे लेकर आ पहुंचा।'

कहानी एक दूसरे मोड़ पर पहुंच गई ! मिसेस स्मिथ ने कहा, 'ओह ! तब तो हजरत बड़े घबराए होंगे ?'

'घबराए क्या—बड़ी मुश्किल में फंस गए ! यार लोगों ने बड़ी गत बनाई, सारा पॉकिट खाली करवा लिया। बुढ़ापे में इश्क करने की स्पर्द्धा पर तरस खाया, और जब हार मानकर महाशय ने मुंह में तिनका धर-कर दया की भीख मांगी, तो कहीं जाकर छुटकारा मिला। घर पर बीवी से कहा कि बस पर चढ़ते समय दुर्घटना से पैर फिसल गया था। मरहम-पट्टी की गई। तीन-चार दिन की छुट्टी लेनी पड़ी। महाशय जी ने कसम खाई कि प्रेम की गली में अब कभी पैर न रखेंगे !'

मिसेज़ स्मिथ मुस्करा रही थीं। बोली, 'बड़ा अच्छा सबक दिया खूसट को !—बुढ़ापे मे बीवी और बच्चों के होते हुए इश्कबाजी करने वालों को सबक मिलना ही चाहिए। इसमें नारी का सम्मान बढ़ेगा ही। आइ मस्ट कांग्रेचुलेट दैट ब्रेव गर्ल !' (मुझे उस बहादुर लड़की का अभि-नन्दन करना चाहिए।')

मिस्टर नटनागर ने कहा, 'आपकी कहानी सच हो सकती है मिस्टर शर्मा ! लेकिन इससे स्त्री जाति की शरारत ही प्रमाणित होगी । यह तो आप कह ही चुके हैं कि प्रारम्भ में तो बेचारा बिल्कुल कुतूहल से ही देखता था । और यदि वह लड़की सुन्दर थी, तो इसमें उस पुरुष को दोष नहीं दिया जा सकता । वह लड़की ही खिड़की पर क्यों खड़ी हुआ करती थी ? और उस बूढ़े को फंसाने के लिए जब जाल बिछाया गया, तो जाल में फंसाने वाले को दोष न देकर फंसने वाले को दोष देना तो भद्रता नहीं कही जा सकती । इसीलिए मैंने कहा था कि स्त्री पुरुष की अपेक्षा श्रेष्ठ दीखती तो है, पर होती नहीं ।'

मिसेज़ नटनागर ने कहा, 'खिड़की पर दोनों ही खड़े थे, तब बेचारी लड़की ही को दोष क्यों ? लड़की के पास तो उमर का सम्बल भी न था ! क्यों मास्टर साहब, आपका क्या ख्याल है ? पर आप तो पुरुष का पक्ष लेंगे ।'

कमल ने कहा, 'स्त्रियों के बारे में राय देने के लिए जितना नजदीक से उन्हें जानना आवश्यक है, वह तो मेरे लिए संभव हुआ नहीं है ! फिर भी हमारा संस्कार तो नारी के प्रति सहानुभूति का ही रहा है । कोमलता गुण हो या अवगुण—हमीं ने तो उनको ऐसा बनाया है ! यों नारी यदि कुसुमादपि मृदु कही गई है, तो वज्रादपि कठोर भी उसीके लिए प्रयुक्त हुआ है । यदि मूल प्रश्न के ऊपर मुझसे बोलने को कहा जाए तो मैं कहूंगा कि प्रश्न ही गलत है । एक गाड़ी के दो पहियों में एक को दूसरे से श्रेष्ठ नहीं कहा जा सकता !'

मिस्टर शर्मा ने देखा कि उनकी बात जिस ढंग से जमी थी, उसी ढंग से उखड़ी जा रही है, तो उन्होंने कहा, 'आप लोगों ने केवल पूर्वार्द्ध सुनकर ही मेरी कहानी पर फतवा दे दिया । यदि मैं भूलता नहीं तो जिस सवाल पर मेरी कहानी चली थी, वह था स्त्री-चरित्र और पुरुष का भाग्य !'

नटनागर ने मुस्कराकर कहा, 'स्त्री-चरित्र की व्याख्या तो आपने कर

दी, अब क्या पुरुष के भाग्य की कथा कहना चाहते हैं ?—पर उसका भी तो वर्णन आपने कर दिया है। हीरो चाहे आपकी कहानी का हतभाग्य न बन पाया हो !'

'पर पूर्वार्द्ध ही !'

'तो उत्तरार्द्ध भी कह दीजिए।' मिसेज़ स्मिथ बोलीं। 'जरूर वह भी मज़ेदार बात ही होगी।'

'निश्चय ही।—हुआ यह कि लड़की को जहां अपनी करतूत पर बहुत अधिक आनन्द आया, वहां पर अपने किए पर लज्जा भी !....'

नटनागर ने बीच ही में कहा, 'लज्जा नारी का भूषण जो कहा जाता है।'

शर्मा जी ने मेरी ओर देखकर कहा, 'यहीं पर, आप अनुभव करेंगे, कहानी और सत्य घटना में अंतर प्रारम्भ होता है !....'

मैंने कहा, 'मैं सुन रहा हूं—आप सत्य घटना ही की बात कहिए, कहानी की बात मैं जानता हूं। जो कुछ लड़की ने किया वह उसकी आसक्ति ही का एक प्रकार था। वह आप सब लोगों की भर्त्सना-आलोचना की परवाह न करके उस खूसट को सचमुच ही चाहने लग गई थी। यदि ऐसा न होता तो वह रास्ते से हट जाती। रास्ते में रोड़ा अटकाने वाले वे ही होते हैं जो रास्ते का अधिकार मांगते हैं—अबाध अधिकार मिस्टर शर्मा ! पर यह मेरी कहानी की बात है आप सत्य घटना कहिए।'

मालूम पड़ा, शर्माजी अप्रतिभ हो गए ! 'नहीं, आप लोगों को मज़ा नहीं आएगा।'

'क्यों-क्यों ?' दोनों देवियों ने एक साथ कहा।

'जो कुछ होना था, वह तो इन्होंने कह ही दिया है। बात केवल समय और सुविधा की थी ! लड़की ने आत्मसमर्पण किया—यही नहीं, दोनों का विवाह होकर रहा।'

'अरे ?—और उस पहले वाली बीवी तथा बच्चों का....?'

'पहले वाली बीवी कुछ दिनों तक जीवित रही। बीमार वह पहले से ही रहती थी, इतनी कि स्वयं उसे पता न था, पर एकाएक ही उसकी बीमारी उभर आई, और एक दिन शांति से पति के चरणों में ही उसने परलोक-लाभ किया। बच्चे बड़े हो गए थे, अपने-अपने धन्धे लगे। हां, वही नटखट लड़की इतनी सुशील निकली कि न तो उस पहले वाली पत्नी को सौत का कष्ट उठाना पड़ा, न बच्चों को सौतेली मां का। है न अद्भुत चरित्र स्त्री का और भाग्य पुरुष का ?'

कमला ने कहा, 'शर्मा जी, आपकी बात का विश्वास करना बड़ा कठिन है। क्या वे लोग यहीं के रहने वाले हैं ? कब की बात है यह ?'

शर्माजी ने मुस्कराकर कहा—'विश्वास करने के लिए आपको कहता नहीं ! मन हो, विश्वास कीजिए, न हो न कीजिए, पर बात मेरी सच है। यदि कभी आप मेरे घर तशरीफ लाएं तो आप अपनी आंखों से देख लेंगे।'

'कहते क्या हैं ?—आपके मकान ही में रहते हैं ?' कमल ने पूछा।

'मेरे मकान ही में नहीं, मेरी गृहस्थी में ही।'

'आपके रिश्तेदार····' मिसेज़ नटनागर ने पूछा।

'मैं मिसेज़ शर्मा से आपका परिचय करवा दूंगा। वे मिलकर प्रसन्न होंगी आपसे।'

'मिस्टर शर्मा !' नटनागर ने पहली बार शायद अपने १८० डिग्री के ओठों को वर्तुलाकार बनाकर कहा। 'वी हैव मिस्ड ए ग्रेट पर्सनेज़।' (हम एक बड़े व्यक्तित्व से नहीं मिले।)

काफी देर तक शांति बनी रही। नारियां दृष्टि चुराकर शर्मा जी की ओर देख रही थीं; किन्तु शर्मा जी निश्चिन्त भाव से अपने सामने की प्लेट साफ कर रहे थे। उमर यही पचास के आसपास, खिचड़ी बाल, निष्कलुष, भरा हुआ मुंह, आंखें कोटरों में छिपी हुईं किन्तु सतेज मानो शिकार की खोज में हों, पृथुल भाल, पृथुल कण्ठ, वृषभ-स्कन्ध, औसत शरीर-भार—किन्तु सुष्ठु—मानो किसी शिल्पी ने आवश्यकता के अनु-

सार ही लम्बाई-चौड़ाई का अनुपात स्थिर किया है !—पहले इस शरीर में कुछ भी आकर्षक न था, सभी कुछ सामान्य, औसत, किन्तु रोमान्स का घेरा उनके चारों ओर क्या छाया, उनके शरीर की एकदम काया-पलट हो गई।

कमल ने नटनागर से कहा, 'भाई साहब, गरम पुलाव थोड़ा और लीजिए। ऐ बॉय····'

कमला ने कहा, 'बहस जहां से शुरू हुई, वहीं समाप्त भी हो गई। पर यह निर्णय नहीं हो सका···'

नटनागर ने बात काटकर कहा, 'निर्णय क्या बाकी है ?—जो कुछ मैंने कहा था, उसीका समर्थन तो अब तक होता आ रहा है।'

मिसेज़ नटनागर ने टेबल के नीचे पुनः मेरे घुटनों से अपने घुटने छुआते हुए कहा, 'आपने तो कुछ कहा ही नहीं।'

'कुछ नहीं कहा ?—लो, शर्मा जी की सारी सत्य घटना को कहानी बनाकर मैंने कहा, और इनाम यह कि मैंने कुछ कहा ही नहीं ?'

नटनागर ने कहा, 'और अभी ही क्या !—इस समस्त बातचीत को यदि कागज पर लिख डालो, तो एक अच्छी कहानी का यश भी आपको मिल ही जाएगा। नहीं क्या ?'

मैंने कहा, 'यश का प्रश्न हो तो उसके पात्र शर्मा जी हैं, जिन्होंने कागज पर नहीं, अपने जीवन के रंगीन पट पर अनुभूति की लेखनी से प्रयोग की स्याही में डुबोकर उस कथा को अमिट कर दिया है। कागज पर उतारने के लिए, यदि मुझे आवश्यकता हुई, तो शर्मा जी ही का नहीं, आपका इतिहास भी कम रुचिकर नहीं होगा मिस्टर नटनागर !'

कमल ने कहा, 'तो फिर जिसे मौलिकता कहते हैं, वह क्या आप लेखकों की ऐसी ही परवशता है ? यदि शर्मा जी के साथ में अन्य तरह की घटना घटी होती तो ?'

मैंने कहा, 'जोशी, तुम तो साहित्य के विद्यार्थी रह चुके हो। तुम्हें तो इस बात को जानना चाहिए था। शर्मा जी के साथ चाहे जो घटना घटे

मेरी कहानी उसकी मुहताज नहीं है। मैं अपनी सृष्टि का मालिक हूं। मैं शर्मा जी को अपनी इच्छा के अनुकूल गढ़ता हूं। यह तो मेरी सफलता है कि प्रकृत जीवन के शर्मा जी भी मेरे गढ़े हुए मानदण्ड के बाहर पैर नहीं रख सकते। शर्मा जी नियम के दास हैं, वह चाहे मनोविज्ञान का नियम हो, और मैं उस नियम का नियमन करता हूं। किन्तु मिस्टर नटनागर की बात भी गलत नहीं है। मुझे यश मिलेगा कागज पर लिखने का, जीवन-पट पर लिखने वालों को यश नहीं मिलता, उन्हें अनुभूति भी मिलती है या नहीं, कहा नहीं जा सकता, किन्तु उन्हें सहना अवश्य पड़ता है।'

कह नहीं सकता, मेरी बात कितने समझे, कितने न समझे, और समझे तो कहां तक समझे, पर मिसेज़ नटनागर को बड़ा उत्साह दिखाई दिया, वे बोलीं—

'आप मूल प्रश्न पर भी तो कुछ कहने की कृपा कीजिए।'

कमला के कहने का ढंग, मालूम दिया, नटनागर को रुचा नहीं। वे बोले, 'कमला, तुम्हारी प्रार्थना का कोई फल न होगा। आप हैं साहित्यिक पुरुष, और हम लोग नितान्त साहित्य-संगीत-कला विहीन—आपको इस सभा में केवल गुलाबजामुन, चाहो तो, और खिलाए जा सकते हैं; उसमें स्थूल रस है, सूक्ष्म रस की प्राप्ति इनको यहां शायद नहीं हो सकेगी।'

मैंने कहा, 'आप सच ही कहते हैं मिस्टर नटनागर!—जब स्थूल-रस नहीं मिले, तभी सूक्ष्म रस में मन देना पड़ता है। रहा प्रश्न साहित्य-संगीत-कला विहीन सभा के आपके आरोप का, सो पुच्छ-विषाण तो देखे जा सकते हैं, किन्तु साहित्य-संगीत-कला आदि को तो सूक्ष्म रस के अभाव में देखा भी नहीं जा सकता!—फिर भी चर्चा इतनी सामान्य नहीं है कि रस का एकदम ही अभाव हो। नारी की चर्चा सदैव ही सब रसों से पूर्ण होती है। मिसेज़ अटनागर, मिसेज़ स्मिथ और अनुपस्थित मिसेज़ शर्मा—ये सभी जब तक यहां पर वर्तमान रहीं, स्थूल रस की

आप लोगों को अपेक्षा ही न थी। मैं ज़रा मोटी भावना का आदमी हूं, मोटी चीज़ ही को देख सका होऊं, तो इसमें मेरा क्या दोष है ?'

कमल ने कहा, 'भाई साहब, इस शब्द-जाल में उलझने की अपेक्षा हमें आप मूल प्रश्न के ऊपर ही अपनी राय बता दें···'

मिसेज़ स्मिथ ने कहा, 'बात तो वाकई ठीक है।—विषय बड़ा दिल-चस्प है, और नर और नारी दोनों के समुदाय में यह विषय बड़ा ही मौजूं है।'

मैंने कहा, 'सो तो है।—लेकिन मेरा मतामत—देखिए कमल बाबू ने जो कहा, उससे मेरा बहुत कुछ इत्तिफाक है। सही बात तो यह है कि यह प्रश्न ही अनावश्यक है। आप यदि किसी व्यक्ति से यह पूछें कि उसका दायां हाथ श्रेष्ठ है या बायां तो इसमें तो कुछ तथ्य देखा जा सकता है, (यद्यपि बायां हाथ प्रयोग करने वाले व्यक्ति के सामने वह उत्तर बिल्कुल भ्रामक होगा।) किन्तु यदि दाईं और बाईं आंख में आप किसी प्रकार की चढ़ा-उतरी स्थापित करेंगे तो कौन आपके प्रयत्न पर हंसेगा नहीं ?—नर और नारी एक दूसरे के पूरक हैं। नर के अभाव को नारी पूरा करती है, नारी के अभाव को नर !'

कमल ने कहा, 'मेरा मत तो अवश्य यही था; पर एक जगह कहीं पढ़ा याद आता है कि नारी नर से इसलिए श्रेष्ठ है कि वह देती है, और नर सदैव ग्रहण करता है। नर को उपमा दी गई थी एक जमीन के टीले से, ढूह से, जिसका प्रयत्न सदैव ऊपर उठते रहना हो; किन्तु नारी को एक नदी बताया गया था जो अपने तटों को आप्यायित करती हुई बढ़ती चली जाती है—सागर से मिलने वह प्यासों की प्यास बुझाती है, रेगिस्तानों को हरा करती है, दर्शक को मोह लेती है।'

'मेरे मित्र ! इस उपमा के जाल में मत आओ ! यह केवल शब्दों का छल है। नारी यदि नदी है, तो उसके तट, जिनको वह आप्यायित करती है, रेगिस्तान जिनको वह हराभरा करती है, दर्शक जिनको मोह लेती है, वे क्या हैं ?—वे क्या नर नहीं ?—और यदि वे नर हैं तो नदी

का यह धर्म या कर्तव्य क्या नर को संतुष्ट करने ही के लिए, उसकी सेवा करने ही के लिए नहीं समझा जाएगा ?—तब कहो, कहां रही नारी श्रेष्ठ ?—सेवा करने वाला उत्तम हो सकता है, पर श्रेष्ठ भी हो सकेगा क्या ?'

मिसेज़ स्मिथ ने कहा, 'तो आपका मतलब है कि नर श्रेष्ठ है ?'

'यह मैंने कब कहा ?—यह तो उस उपमा का करिश्मा है, जो कमल बाबू ने दी थी !···'

कमल ने कहा, 'नहीं मैंने नहीं दी; मैं तो केवल दूसरे की बात कर रहा था।'

'बात वही है। शब्दों का छल इसीको कहते हैं। हो सकता है कि उपमा देने वाले का यह इरादा न रहा हो, पर इस प्रकार की उपमा का नतीजा तो वही हो सकता है, जो अब तक नारी को भुगतना पड़ा है।'

कमला ने कहा, 'किन्तु यदि एक का काम सदैव देना ही हो, और दूसरे का लेना, तो दोनों बराबर कैसे हुए ?'

'इसलिए कि जो देता है, वह इसलिए नहीं कि दूसरा उससे वसूल करता है, बल्कि इसलिए कि उसके पास इसका प्राचुर्य है ! जो लेता है वह भी इसीलिए हाथ पसारकर नहीं लेता। वह बदले में आश्रय देता है, और फिर जब दोनों दिशाओं से समर्पण की क्रिया पूर्ण हो जाती है, तो फिर लेन-देन कहां ? फिर कहां अभाव और प्राचुर्य ? तब हम उन्हें एक-एक कर—अलग-अलग कर देख सकते हैं क्या ?'

'पर यह क्या सदैव सम्भव है ?'

'न हो; पर होना तो यही चाहिए। प्रकृति तो यही चाहती है।'

'यदि ऐसा नहीं होता, तो क्यों नहीं होता ?' कमला ने पूछा। कमला, मालूम दिया, विषय में तल्लीन हो गई थी, शायद प्रश्न की गम्भीरता में अपनी ही किसी समस्या का समाधान खोजती हो।

मैंने कहा, 'और ऐसा नहीं होता, इसीलिए ऐसे प्रश्न पैदा होते हैं कि यह श्रेष्ठ है या वह श्रेष्ठ है। जब व्यक्ति की प्रकृत इच्छा के ऊपर

समाज का या और किसी का विधि-निषेध काम करने लग जाए तो वह व्यक्तिगत रूप से विद्रोह करना चाहता है, यह स्वाभाविक ही है। प्रकृति ने दोनों की शरीर-रचना ऐसी की है, कि पुरुष का विद्रोह तो सरलता से छिपाया जा सकता है, किन्तु नारी का नहीं। पुरुष बच जाता है, किन्तु नारी नहीं बच पाती और समाज उसे दण्ड का भागी बना देता है। इससे नारी में और भी विद्रोह की भावना उत्पन्न होती है, वह प्रतिशोध पर भी उतारू हो सकती है, किन्तु इससे समस्या का हल तो नहीं होता। यों, विद्रोह और प्रतिशोध की अनन्त कड़ियों में गुंथती हुई सामाजिक उच्छृंखलता फैलती जाती है, और हानि उठाता है समाज भी, और जन-जीवन भी।'

पता नहीं, किसको कितनी दिलचस्पी मेरे कथन में रही। मैं महसूस कर रहा था कि कहीं मेरा पंडिताऊपन मजाक न बन जाए, इसलिए एका-एक चुप हो गया, देखने के लिए कि लगभग सभी खाने से हाथ खींच चुके थे। मिस्टर नटनागर को स्पष्ट ही कोई रस नहीं आ रहा था, प्रत्युत् उन्हें शायद कुछ कड़वाहट ही अनुभव हो रही थी। मिस्टर शर्मा यद्यपि देख मेरी ओर रहे थे, पर मन उनका कहीं अन्यत्र ही था। मिसेज़ स्मिथ टेबल के ऊपर देखकर शायद कान मेरी ओर किए हुए सुनने का बहाना कर रही थीं। कमल की दृष्टि लुक-छिपकर कमला की दृष्टि का अनुसंधान करना चाह रही थी, किन्तु कमला मानो मेरे उत्तर में खोई जा रही थी। जब कि मैं ही मेरे उत्तर के गुरुडम से ऊब रहा था, कमला ने पूछा :

'उच्छृंखलता तो अपराध है ही, और इसका दंड भी मिलना ही चाहिए। आप क्या सोचते हैं ?'

'उच्छृंखलता अपराध हो सकता है, किन्तु किसका ? सांकल की जब कोई कड़ी गतिमान हो उठती है, तो यह देखना होगा कि धक्का कहां से लगा है। जो कुछ दिखाई देता है वही तो ध्रुव सत्य नहीं होता ! और फिर दंड ? यह अपराध स्वयं क्या कम दण्ड नहीं ? फूल यदि देवता के

सिर पर चढ़ाने के लिए हो, और वह धूल में ही चू पड़े तो क्या यही उसका कम दण्ड नहीं हो जाता—यद्यपि अपराध ही उसका क्या है ? क्या उसे तब भी पैरों से कुचलने की जरूरत रह जाती है ?....'

मिसेज़ स्मिथ ने एकाएक कहा, 'पैरों से कुचला तो जाता है।'

'इसीलिए वह फूल भी यह कामना करने लग जाता है कि देवता के सिर पर चढ़ने ही में कौन-सी कविता है ! यदि शूल ही होता, तो पैरों से कुचलने पर रस के स्थान पर विष ही की सृष्टि कर सकता, और तब वही मेरी सार्थक सृष्टि होती।'

नटनागर ने कहा, 'आप जानते हैं कि इससे समाज में कैसा भ्रष्टाचार फैल जाएगा ?'

'एक दल के किए तो भ्रष्टाचार नहीं फैलता। एक हाथ से कभी ताली बजी है ?'

'दोषी कोई हो—पर दोष तो होता ही है। समाज को तो दोष का निराकरण करना है।'

'बिल्कुल सच, पर वस्तुतः दोष का निराकरण न करके वह निराकरण दोषी ही का करता है। इसका फल भी साफ है, व्यक्ति विद्रोही होता चला जाता है, दोष बढ़ता जाता है, और जीवन की पूर्णता नष्ट होती चली जाती है। समाज को यदि अपने जीवन के स्वास्थ्य को लौटा लाना है, तो उसे अपने दृष्टिकोण में अन्तर लाना ही पड़ेगा।'

नटनागर जाने क्यों उत्तेजित होते जा रहे थे, बोले, 'पति के सर्वस्व-अर्पण करने पर भी यदि पत्नी कुलटा हो जाए तो आप क्या करेंगे ?'

मैंने कहा, 'माफ कीजिएगा, मैं दूसरा प्रश्न करूंगा, यदि पत्नी के सर्वस्व अर्पण करने पर भी पति स्वैर हो जाए, तो आप क्या करेंगे ? मेरे इस प्रश्न का उद्देश्य यह है कि हम लोग स्त्री ही के अपराध को मन में लाने के आदी हैं, पुरुष के नहीं, और वह इसलिए कि पुरुष के पक्ष में यह अपराध इतनी कसरत से होता है कि वह उसकी एक सामान्य आदत-सी बन गई है। धर्म और कानून तक कल तक उसे अपराध नहीं मानते

थे। शरीयत के अनुसार आदमी चार विवाह कर सकता है आज भी, और भारतवर्ष में तो श्रीकृष्ण की सोलह हजार आठ रानियां थीं। जहां कहीं इतिहास ने द्रौपदी जैसी स्त्री का नाम गिना दिया तो, वहां प्रत्येक रात्रि को अग्नि-परीक्षा आदि के समस्त संभव-असंभव खुराफातों के विधान के द्वारा स्त्री के लिए एक पतिव्रत का विधान बनाए ही रखा। राम-राज्य में भी धोबी अपनी पत्नी को राम का नाम लेकर ताना दे सकता है, पर रजक-पत्नी तीन रानियों वाले दशरथ का नाम नहीं ले सकती। कहिए, मेरे प्रश्न का आपके पास क्या उत्तर है ?'

'यदि पति स्वैर हो जाए तो छोड़ दे पत्नी उसे।'

'और जाए कहां वह ? आर्थिक परिस्थितियों को अपने हाथ में लेकर अंधेरे में उसे ढकेलने के लिए पुरुष तैयार सरलता से हो सकता है, वह जानता है कि स्त्री जा नहीं सकती। स्त्री यह भी तो सोचने को बाध्य होती है कि कई भेड़ियों की लोलुप जीभ की अपेक्षा एक भेड़िया ही क्या बुरा है ? इसलिए शायद अपने प्रश्न का यह उत्तर भी आपने सरलता से सोच लिया हो कि कुलटा हो जाने पर पत्नी को पति त्याग दे।'

'और इतने पर भी यदि वह नहीं त्याग देता, तो क्या वह नारी की अपेक्षा श्रेष्ठ नहीं है ?'

—कि कमला खाने पर से उठ गई। मैंने कहा—

'और यह जानकर भी कि पति की भावना उसके प्रति ऐसी है, जो नारी उस पति की उसी तरह सेवा करती जाए, वह क्या उससे भी श्रेष्ठ नहीं ? पर देखिए', और मैंने भी उठकर कहा, 'अब नारी अपने महत्व को समझने लग गई है। श्रेष्ठत्व का दावा वह चाहे न करे, किन्तु अपना उचित अधिकारी तो वह चाहने ही लगी है ! मिसेज़ अटनागर को आपने क्रुद्ध तो कर दिया है किन्तु फिर भी आप देखेंगे कि उनके मन पर कुछ भी मैल नहीं है। अभी तो आप पुरुष समाज का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं पर जैसे ही आप केवल मिस्टर अटनागर रह जाएंगे, आप देखेंगे कि आप दोनों में पार्थक्य की भावना ही नहीं है।'

श्रीमती नटनागर ने शायद सुना नहीं। वे बेसिन पर जाकर अपने हाथ धो रही थीं।

उसके बाद कमलनयन के धन्यवाद-दान के बाद पार्टी का समारोह सानन्द समाप्त हो गया। जब सब अपने-अपने घर लौटे, तो रात आधी जा रही थी।

१६

गत तीन-चार दिन से श्री नटनागर पुनः अपने आपको अस्वस्थ अनुभव करने लगे हैं। कमल की दावत वाली पार्टी के बाद से ही कमला अनमनी देखी जाने लगी है। इधर नटनागर को व्यस्त भी काफी रहना पड़ा है, कल सवेरे वे यहां से रवाना हो रहे हैं। सामान की व्यवस्था, लेन-देन का हिसाब, यार-दोस्तों से विदा, इनमें व्यस्त रहने से भी थकावट हो आना स्वाभाविक है। यह अस्वास्थ्य शायद इसीका परिणाम है। यहां से चले जाने पर उन्हें शायद अधिक आराम मिल सकेगा। अब जाना अधिक स्थगित नहीं किया जा सकता। बिना वेतन उनकी आर्थिक स्थिति दुर्बल होती जा रही है, और यद्यपि कमला कमाने लग गई है, किन्तु वह होता ही कितना-सा है, फिर नटनागर पुरुष हैं, वे स्त्री की कमाई पर जीवित नहीं रहते।

कमला को आज रात का निमंत्रण है। थकी हुई वह भी है, अतः संध्या को सिर-दर्द का बहाना करके वह साढ़े सात बजे ही लेट गई है। नटनागर से भी उसने कह दिया है कि उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता, वे अधिक जागते न रहें। जल उसने उनके बिस्तर के पास स्टूल पर रख दिया है, किताब से ढंककर—उस समय वे कोई पत्र लिख रहे थे। शायद

अपनी मां को लिख रहे थे, कमला ने उत्सुकता प्रकट न करके अच्छा ही किया।

पत्र समाप्त करके उन्होंने अंगड़ाई ली। जल पीने के लिए गिलास उठाया, यह ऊपर से किताब उन्होंने कब उठा ली थी ?—अच्छा, पत्र के नीचे रखने के लिए, परन्तु गिलास को और किसी वस्तु से ढंक देना चाहिए था—बल्कि पानी में कुछ गिरा हुआ भी दिखाई देता है। नहीं यह पानी वह नहीं पी सकेंगे। कमला—पर शायद सो गई है, क्यों उठाया जाए उसे, कहीं पत्र के बारे में पूछ ले तो।

नटनागर स्वयं ही उठे। बाहर जाकर गिलास का पानी फेंक दिया। फिर मटके में से दूसरा पानी पीकर लेट रहे। गिलास का पानी न पीने से उन्हें कोशिश करने पर भी नींद नहीं आई। बन्द आंखों की पलकों पर वे निद्रा के स्वप्नों से भी अधिक प्रखर रूप वाले भले-बुरे कई तरह के दिवा-स्वप्न देखने लगे।

रात बीतने लगी, पूर्व की खिड़की खुली हुई थी, ठण्डी हवा का वेग बढ़ना चाह रहा था कि नटनागर को अनुभव हुआ, मानो अंधेरे में कमला जाग उठी है।—उस समय वे सोच रहे थे कि बम्बई के प्रधान कार्यालय में कई लड़कियां भी नौकर हैं। वे प्रधान क्लर्क की जगह न भी गए तब भी उपप्रधान के पद पर तो नियुक्त होंगे ही। अवश्य ही एकाध लड़की उनके हाथ नीचे भी होगी। कैसी होगी वह लड़की ?—सुमित्रानन्दन पंत की 'भावी पत्नी के प्रति' कविता की पंक्तियां उनके मानस-पटल पर चमकने लगीं; तभी उन्हें मालूम दिया कि कमला जाग उठी है।—कमला शायद उस कविता को जानती है, उससे कहा जाए कि वह उन पंक्तियों को गुनगुनाए, किन्तु क्या उस लड़की को कमला सहन कर सकेगी ?—नहीं-नहीं—कमला रहे, अभी उस लड़की की कल्पना से नटनागर यदि खेल सकें, तो क्या बुरा है ?

कमला ने उठकर पलंग के पास आकर देखा कि नटनागर की आंखें बंद हैं। ग्लास टेबल पर पड़ी हुई है, उसने उठाकर देखा—देखा कि

खाली है, ज़रूर ही पानी नटनागर पी चुके हैं, इसीलिए सो भी गए हैं। खिड़की से ठण्डी हवा का झोंका आ रहा है, उसने पैरों के नीचे पड़ी हुई चादर को इत्मीनान से उठाया और नटनागर के शरीर को ढंक दिया। नटनागर का मन कृतज्ञता और हर्ष से भर गया। वे चादर के भीतर से आंखें खोलकर कमला की गतिविधि का अनुसरण करने लगे। कमरे में प्रकाश न था, किन्तु कृष्ण पक्ष की सप्तमी का चांद बाहर अपनी क्षीण चांदनी फैला चुका था, कमरे में क्या हो रहा था, यह बाहर से नहीं, किन्तु भीतर से देखा जा सकता था।

नटनागर ने देखा कि पुनः अपने बिस्तर पर जाकर लेट जाने के स्थान पर कमला दूसरे कमरे में गई, शायद कुछ देखने गई हो, किन्तु पांच-सात मिनट के बाद जब वह लौटी तो उसने कपड़े बदल रखे थे, और कपड़ों पर एक गहरे रंग की चादर डाल रखी थी; यह क्या ?....

कमला ने दरवाजा खोला। बाहर बरामदे में दादू लेटा हुआ था। उसे कुछ भी आहट न हो, इस तरीके से कमला ने दरवाजा भिड़ा दिया। नटनागर ने आश्चर्य से देखा कि दादू जो पहले बिल्कुल नीरव, शान्त सोया हुआ था किन्तु जैसे ही घर का दरवाजा खुला, उसकी नाक खर्राटे भरने लगी, और कुछ ही देर बाद पुनः बन्द हो गई। नटनागर ने चादर उतार दी। पलंग पर उठ बैठे। खिड़की में से देखा कि बाहर बरामदे में लेटा हुआ दादू अपने बिस्तर पर उठ बैठा है और सामने की ओर देख रहा है। उसकी दृष्टि का अनुसरण करने पर नटनागर ने देखा कि चादर में अपने सारे शरीर को लपेटे एक छायामूर्ति वृक्षों की छाया में अपने को यथासाध्य छिपाती हुई सामने क्वार्टरों की ओर चली जा रही है !—तभी मानो अंधेरे में ही सामने के क्वार्टर का दरवाजा खुला। वह क्वार्टर शायद कमल का है, अंधेरे में कुछ स्पष्ट नहीं हो सका। क्षीण-सी आहट से मालूम दिया शायद दरवाजा बन्द हो गया। तभी ऊपर से रोशनदान में एक क्षीण-सी रोशनी फैल गई। कमरे में प्रकाश कर दिया गया होगा।

तो यह है कमला ! और कमल है वह छोकरा, जिसकी सन्तान को नौ मास तक उठाए रहकर उसने नटनागर की शांति को नष्ट कर दिया था। आशा तो यह थी कि उसके बाद ही वह अपने चरित्र की ओर ध्यान देगी, किन्तु—और यह अपदार्थ कमल, जो उन्हींकी कृपा से इस योग्य हो सका, आज जिस पत्तल में खाया उसीमें छेद कर रहा है ! एक क्षण के लिए भी उन्होंने नहीं सोचा था कि नटनागर का मुंह काला करने वाला छोकरा यह कमल होगा ! कितना विश्वास किया था उन्होंने उसका !—अपनी अनुपस्थिति में घर की सारी जिम्मेदारी उसपर छोड़ दी थी, घर ही की नहीं घर की मालकिन की भी—उसीका तो यह फल है !—और अब भी उसे पढ़ाने के बहाने यह यहीं तो डटा हुआ है। खूब पढ़ाया दोस्त ! तूने !

लेकिन नहीं, अब यह सब नहीं चलने का !—कमला को यहां छोड़कर उसे अपनी मर्जी का मालिक और कमल की अंकशायिनी नहीं रहने दिया जा सकता। नौकरी—नहीं, उसकी भी क्या आवश्यकता है ! नटनागर स्वयं जब कमा रहे हैं, तो कमला को इस नाटक की आड़ लेने का अवसर भी नहीं दिया जाना चाहिए।—कमला को वे साथ ही ले जाएंगे। यदि जरूरत हुई तो कल जाना स्थगित किया जा सकता है !—कमला काफी स्वतन्त्रता का उपभोग कर चुकी।

किन्तु अभी ?—अभी क्या करना चाहिए ?—क्या अपने पलंग पर पड़े-पड़े उसके लौट आने की राह देखते रहेंगे ? और जब वह आए, वे चुपचाप पुनः नींद का बहाना करके पड़े रहें ?—न जाने कितनी रात्रियों से यह अभिसार चलता आ रहा है !—बन्द कमरे में दोनों व्यक्ति नटनागर की अबाध्य निद्रा की मजाक उड़ा रहे होंगे। नहीं, कमला से ही नहीं, कमल से भी उन्हें प्रतिशोध लेना है। वे इस दृश्य को कल्पना की आंखों भी नहीं देख सकते।

नटनागर की आंखों के सामने जाने कैसे दृश्य घूम गए ?—उस टेबल की ड्रावर में छुरा रखा है, नतीजा क्या होगा ?—जान से वे नहीं मारना

चाहते। पर किसी ढंग से यदि दोनों की नाक यह छुरा काट ले ?—कमल काफी ताकतवर है, और नटनागर टी० बी० के बीमार, कमजोर, थके हुए—और क्या भरोसा कि कमला भी उसीका साथ न देवे ? किन्तु—हां, पकड़े जाने पर दोनों ही चोर—चोर का हौसला ही क्या ?—कम से कम दोनों को जब रंगे हाथों पकड़ लिया जाए तो मुंह तो नहीं खोल सकेंगे—इज्जत, प्रतिष्ठा—पर वह रही ही कहां है ?—नटनागर स्वयं इतने मूर्ख नहीं हैं कि हल्ला मचाकर वहां भीड़ इकट्ठी कर देंगे। कम से कम कमला को साथ लिए जाने का एक अच्छा कारण तो हाथ में हो ही जाएगा।—पर छुरे का व्यवहार—यदि पुलिस बीच में पड़ गई ?—बड़ा कठिन है। कमल कह देगा, वह तो किसीके घर गया नहीं—हां, यदि कोई खुद चलकर उसके घर चला आए तो वह क्या कर सकता है, इसमें उसका क्या कसूर है !—कानून कमल का कुछ नहीं बिगाड़ सकता और नटनागर एक ऐसे जाल में फंस जाएंगे कि उनका बम्बई जाना भी अनिश्चित काल के लिए स्थगित हो सकता है। हो सकता है, पुलिस उन्हें हिरासत में भी ले ले। तब फिर क्या करना चाहिए ?—कायर की तरह यहां बैठे-बैठे उसके लौट आने की प्रतीक्षा करें।

नहीं, छुरे का प्रयोग वे नहीं करेंगे, किन्तु हाथ में रहने से उनकी मर्दानगी का इजहार जरूर हो जाएगा। कमल समझ लेगा कि बदला लेने की प्रवृत्ति नटनागर में भी है, और काफी उग्र रूप से; अगर वह बच गया है, तो केवल भाग्य से ही, और स्वयं नटनागर की महान उदारता के कारण !

नटनागर उठे, और अंधेरे में ही टटोलकर उन्होंने ड्रावर में से छुरा निकाल लिया। छुरा कोई खास छुरा नहीं था, विभाजन के दिनों में हिन्दू-मुसलमानों के झगड़े को ध्यान में रखकर, उन्होंने एक दिन बाजार से मजाक ही मजाक में खरीद लिया था। दो-चार बार उससे पेंसिल बनाई गई, एकाध बार चाकू न मिलने पर कमला ने उससे सब्जी काटने का काम भी लिया था। उससे कभी प्रतिहिंसा की प्यास बुझाने की चेष्टा

की जाएगी यह किसीने सोचा भी नहीं था ।—अब तो जगह-जगह पर जंग भी लग गया है उसमें !

ड्रावर खोलने की आवाज़ से बाहर दादू को संदेह हुआ, और वह चौकन्ना हो उठा । एक अतर्कित भय से उसका लम्बा-चौड़ा शरीर आक्रांत हो उठा । एक बार खिड़की पर आकर उसने झांककर देखना चाहा कि भीतर क्या हो रहा है, किन्तु अन्धकार के कारण उसे कुछ नहीं दिखाई दिया । फिर भी न जाने क्यों उसके मन ने कह दिया कि भीतर साहब जाग रहे हैं, और उसीकी तरह वे भी मेम साहब का बाहर जाना देख चुके हैं ।

मेम साहब के इस नीरव अभिसार को वह कई बार देख चुका है, किन्तु मालकिन के कामों की आलोचना करना उसे कभी प्रिय नहीं लगा । अवश्य वह कमला की इस हरकत को पसन्द नहीं करता, इतनी बुद्धि उसमें है, किन्तु वह कौन है कि उसका प्रतिविधान करे ?—जो भक्त भगवान की भक्ति के साथ पूजा करता है वह उनके कार्यों की आलोचना नहीं करता, कर नहीं सकता । यदि मालकिन कुछ ऐसा काम करती है, जिसके लिए उसका मन गवाही न दे, तो वह आंखें बन्द करके न देखने का बहाना कर लेता है, फिर भी जागता वह रहता है । कब मालकिन गईं, कब वे लौटीं, कुछ भी उससे छिपा नहीं; फिर भी इस तरह वह रहता है मानो वह कुछ जानता ही नहीं । वह जानने की चिन्ता करता है तो केवल इसलिए कि मालकिन का यह काम भयानक है, इसमें खतरा है और यदि वह जानता रहे, तो खतरा उपस्थित होने पर वह अपनी भक्ति प्रमाणित कर सके । कितना वह चाहता रहा है कि ऐसा अवसर आए, ताकि वह अपनी भक्ति प्रमाणित करने के साथ ही साथ मालकिन को यह भी बता दे कि ऐसा काम अच्छा नहीं है । आज जब अनायास ही ऐसा अवसर उपस्थित हो गया है, तो वह आतंकित हो गया है । कारण कि खतरा जिधर से उपस्थित हुआ है, वह भी उसकी भक्ति के आधार का दूसरा सिरा ही है । यहां खतरे से केवल कार्य की बुराई

ही नहीं प्रमाणित होगी, बल्कि सर्वनाश ही प्रमाणित हो जाएगा। इस खतरे का सामना कैसे करे ?

—दादू के अधपके मन में यह सारी विचार-शृंखला जब प्रतिफलित हो ही रही थी, तभी कमरे का दरवाज़ा खुला, और ड्रेसिंग गाउन में छिपे हुए नटनागर साहब अंधेरे कमरे से बाहर निकले। दादू किंकर्तव्य-विमूढ़ दरवाज़े के पास ही खड़ा पाया गया।

नटनागर ने धीरे से कहा, 'कौन दादू ?'

'जी हां !'

'क्या कर रहा है यहां ?'—दादू की उपस्थिति का नाटनागर को ख्याल ही नहीं रह गया था। सारी योजना पर वे ठीक-ठीक विचार कर चुके थे, किन्तु दादू की भूमिका भी उपस्थित हो सकती है, यह उन्होंने सोचा भी न था। और बिना विचारे ही शीघ्रातिशीघ्र उन्हें इस क्षेपक से पार पाना है।

दादू ने क्या उत्तर दिया, यह उन्होंने नहीं सुना। वे बोले :

'तू घर का ख्याल रखना, मैं आता हूं।'

'कहां जा रहे हैं आप ?'

'जहन्नुम में !—टोक मत !'—और किवाड़ भिड़ाकर वे आगे बढ़ने लगे।

दादू ने सामने आकर कहा, 'आप मत जाइए।'

'क्यों ?'

'आप बीमार हैं। आपको आराम करना चाहिए।'

'हट एक ओर ! तू नहीं जानता कि कितना ज़रूरी काम है मुझे !'

'जी मैं जानता हूं, इसीलिए मैं आपको नहीं जाने दूंगा।'

'जानता है और फिर भी नहीं जाने देगा ?—मालूम पड़ता है तू भी इस साजिश में मिला हुआ है। तुझे मैं फिर समझूंगा। अभी मैं दूसरों को देखता हूं।'

और नटनागर हाथ से उसे हटाते हुए आगे जाने का प्रयत्न करने लगे।

दादू ने कहा, 'देखिए शोर-गुल हो जाएगा—मैं आपको जाने न दूंगा।'

'कैसे नहीं जा सकता हूं!' और उन्होंने दादू को जोर से धक्का दिया। दादू को इसकी आशा न थी, वह गिरते-गिरते बचा। नटनागर बरामदे की सीढ़ियों से नीचे कूद पड़े।

दोनों ही जानते थे कि शोर-गुल मचाना ठीक न होगा। अत: मनोभावों की चरम सीमा पर पहुंचे हुए आवेश के ये क्षण भी नितान्त फुसफुसाहट में चले जा रहे थे। नटनागर साहब जैसे लपकने को हुए कि दादू ने उन्हें अपनी भुजाओं में लपेटकर कस लिया। वे बेकाबू हो गए।

दादू ने कहा, 'भीतर चलिए। जो आप सज़ा देंगे मैं भुगत लूंगा।' और वह प्राय: जबरदस्ती नटनागर को घसीटता हुआ ही कमरे के भीतर लेता चला गया। दादू के पहाड़ जैसे शरीर में टी० बी० ग्रस्त नटनागर की देह के नीरव शांत होते एक निमिष भी न लगा!—भीतर जाकर दादू ने फिर से दरवाज़ा बन्द कर लिया। नटनागर को उसने एहतियात से पलंग पर लाकर सुला दिया, और हाथ जोड़कर बोला—'साहब, मुझे माफ कर दीजिएगा। मैंने जो कुछ किया आपके भले ही के लिए किया है।'

'मेरे भले के बच्चे!—जानता हूं कि तू भी इसमें मिला हुआ है। जब वह रण्डी यहां से चली जाती है, तो तू पहरा देता है कि उसके अभिसार में कोई बाधा न दे।—देखता हूं, तेरी नौकरी कैसे रह पाती है।'

दादू ने कहा, 'मैं इसमें मिला हुआ नहीं हूं मालिक! मेरी बात का आप यकीन कीजिए!'

'चुप रह कमीने, कुत्ते—निकल जा मेरी आंखों के सामने से!'

नटनागर को बहुत क्रोध हो आया था। यद्यपि वे अपनी आवाज़

को बहुत दबा-दबाकर बोल रहे, फिर भी अब वह पहले जैसी शांति न थी, वे व्यग्र हो रहे थे कि किस तरह बाहर जाएं। और यह कमीना, कुत्ता, उनके द्वारा दिए हुए टुकड़े पर पला हुआ, उन्हींके सामने आज गुर्रा रहा है।

दादू कुछ अधिक बोल न सका, वह मुड़ गया और दरवाज़े के बाहर जाने लगा, कि नटनागर ने उठकर कहा—'देख कुत्ते, मेरे पास छुरा है, यदि तूने मुझे नहीं जाने दिया तो मैं तेरा खून कर दूंगा।'

'कर दीजिए मालिक, पर आप जा नहीं सकेंगे।'

'क्या कहा ?'—और अबकी बार छुरा तानकर नटनागर दादू के ऊपर लपके। बाहर दरवाजा खुल चुका था। दादू सामना करने के लिए तैयार था, पर अंधेरे में उसे कुछ भी पता न था कि किस हाथ में उनके छुरा है और वह कहां है ?—बल्कि शायद उसने यह भी सोचा हो कि नटनागर खाली उसे भय दिखाने के लिए ही यह कह रहे हों ! पहले जब वह उन्हें पकड़कर लाया था, तब तो किसी ऐसे छुरे का उनके पास होना जाहिर नहीं हुआ था। जो हो दोनों हाथ आगे बढ़ाकर वह खड़ा हो गया, कि नटनागर उसके फैले हुए हाथ से टकरा गए। शीघ्र ही उन्होंने छुरे का वार किया—दादू ने बचाने की कोशिश की किन्तु कटे हुए हाथ की कोहनी से ऊपर हिस्सा उसका शिकार हो ही गया। दादू ने एकाएक उसकी चिन्ता न की, नटनागर का छुरेवाला हाथ अब उसकी मुट्ठी में था।

—शोर विशेष हुआ न था; फिर भी जितना कुछ हुआ था वह चौकन्ने चोर प्रणयियों को सावधान करने के लिए पर्याप्त था। कमला ने देखा कि शोर तो उसके घर की दिशा से ही आ रहा है तो वह घबराई—क्या करे ?

उसे विश्वास था कि नटनागर ने ओषधि जल के द्वारा ले ही ली थी। अतः सवेरे सात बजे से पहले उनका जाग जाना संभव न था। मालूम पड़ता है दादू किसीसे उलझ गया है। कहीं कोई चोर-उचक्का

हो। और शोरगुल सुनकर नटनागर जागें, इसके पहले ही उसे घर चले जाना है, अतः वह शीघ्र ही दरवाज़े पर आ पहुंची, जब कि दादू ने पुनः नटनागर को अपनी भुजाओं में लपेटकर पलंग पर लिटा दिया। यह आश्चर्य की बात है कि इतना होने पर भी उसे क्रोध नहीं आया था। क्रोध आने पर वह क्या कर गुज़रता, जबकि छुरी वह चाहे जब छीन सकता था, यह सोचने मात्र से नटनागर कांप उठे। कमला बिना कुछ बोले कमरे में घुस आई, दोनों को शायद मालूम ही तब पड़ा, जब अपने कमरे में जाने के लिए उसने दरवाज़े को धक्का दिया!—कमरे में अंधेरा तब भी वैसा ही था।

दादू ने चौंककर कहा—'कौन?'

कमला ने कहा, 'मैं हूं, यह क्या उपद्रव मचा हुआ है?'

नटनागर ने दांत भींचकर कहा—'अभिसार खत्म हो गया तुम्हारा?'

दादू ने कहा—'जी!'

कमला नहीं जानती थी कि दादू जख्मी हो गया है, इधर कमला समझ गई कि सारा काण्ड नटनागर ने उसीको लेकर रच डाला है। उसने कहा, 'दादू! तुम बाहर जाओ।'

दादू ने कहा, 'जी···' और वह बिना कुछ बोले बाहर होने के लिए मुड़ा, कि नटनागर ने कहा :

'बच गया तू! बेहतर यही है कि अब कभी मुझे अपनी सूरत न दिखाना, नहीं तो इसी छुरे से कत्ल कर दूंगा।' और जब उन्होंने छुरे को हवा में ताना, तो अंधकार में भी कमला उसको बखूबी देख गई।

दादू ने कहा, 'कोशिश तो आप कर ही चुके हैं, यदि हाथ सामने न आ गया होता, तो आपकी इच्छा पूरी हो ही जाती! तब भी यह हाथ उसकी याद दिलाता रहेगा!—रहा चले जाने का सवाल, सो अगर मालिक की मर्जी नहीं हुई, तो कौन नौकर रह सकता है?'

कमला ने कहा, 'क्या कहा दादू—क्या तुम्हें कहीं चोट लगी है?'

'कुछ नहीं मेम सा'ब, एकाध दिन में ठीक हो जाएगा!'

'नहीं—ठहरो—' और उसने सामने बाहर खुलने वाली खिड़की को बन्द कर दिया ताकि कोई देखे नहीं ; फिर उसने स्विच ऑन करके प्रकाश कर दिया ।

दादू के बाएं हाथ का बाजू खून से लथपथ था । कमला घबरा गई, उसने कहा :

'ओह ! दादू !' फिर उसने एक जहरीली दृष्टि नटनागर की ओर डाली—उनका नशा हिरन हो चुका था, और आवेश के दौर के समाप्त होते ही, उनके रुग्ण शरीर की क्लांति इस बुरी तरह उनपर सवार हो गई थी कि सिर को हाथों में थामे उन्हें पलंग पर बैठ जाने के अलावा कोई चारा न था ।

कमला ने कहा, 'जानते हो ?—पुलिस में यदि रिपोर्ट हो गई, तो हाथों में कड़े पहने हुए फांसी का इन्तज़ार करना पड़ेगा ! बड़े तीसमारखां बने हुए हो···'

नटनागर ने कहा, कांपती आवाज़ में—'वही कर दो कमला !—इस तिल-तिल की जलन से वही क्या बुरा होगा ?'

दादू ने कहा—एक नजर उसने कमला की ओर भी डाल ली—

'नमक खाया है आपका । जान से मार दीजिए, उफ न करूंगा—मगर····' और वह पुनः दरवाज़े की ओर जाने लगा ।

'नहीं—' कमला ने आगे बढ़कर कहा, 'ठहरो—मैं तुम्हें पट्टी बांध देती हूं । फर्स्ट एड पड़ा है, उसका कुछ लाभ तो हो—सवेरे फिर अस्पताल ले चलूंगी !'

कमला ने अपेक्षा न की । वह दादू का दूसरा हाथ पकड़े अपने कमरे में खींच ले गई । नटनागर केवल देखते रहे, और तभी लेट गए, बैठने जितनी शक्ति उनमें नहीं रही !—लेटकर वे क्या सोचते रहे, यह कहना कठिन है ?—पुलिस में जाकर दादू यदि रिपोर्ट कर दे ?—हत्या के प्रयत्न में नटनागर को जेल जाना पड़ेगा, इसमें सन्देह नहीं । घाव उसको गहरा लगा है, छुरा उनके पास है—उन्होंने हाथ उठाकर

देखा छुरा तब भी उनके हाथ में था, रक्त के दाग उसपर सूखते जा रहे थे। कैसे मुक्ति पाएं वे इस छुरे से ?—फेंक दें ?—पर कहां ?—बाहर भागकर जाने इतनी शक्ति उनमें है नहीं। फिर क्या करें ?—कहां छिपा दें उसे ?—छिपाने से लाभ ही क्या होगा ?—कमला तो सभी कुछ जानती है, यदि वही उनके विरोध में गवाही दे तो उनकी रक्षा कहां है ?—फिर उनकी प्रतिष्ठा, उनकी नौकरी, उनकी अंधी मां—आज सवेरे ही तो उनका जाने का कार्यक्रम है ?—क्या किया जाए ?—क्या मूर्खता कर डाली नटनागर ने। आज की यह रात्रि कमला की कोई पहली रात्रि न थी कि नटनागर को इस तरह आसमान सिर पर उठा लेना चाहिए था !—क्या करें वे ?

दस-बारह मिनट बाद ही कमला और दादू बाहर निकले। दादू का हाथ पट्टी से ठीक तरह बांध दिया गया था। प्राथमिक चिकित्सा कमला बम्बई में सीख चुकी थी। दादू के चेहरे पर एकदम दीनता तथा निरीहता छाई हुई थी। हिंसा का कोई भाव वहां पर नहीं था। आंखों में दीनता ही नहीं, आर्द्रता भी छाई हुई थी। उसके पृथुल ओठ एक दूसरे से अलग, जिनके बीच पीले गन्दे दांतों की क्षीण आभा और उनके भीतर मोटी जीभ, थके हुए कुत्ते की जीभ के समान—उसे एक अजीब शकल दे रहे थे, किन्तु तब भी इस बदसूरत चेहरे के नीचे से उसके विशाल निश्छल हृदय की छाया आंखों के गवाक्षों से किसी छिपी हुई प्रेमिका की तरह झांककर अपने अस्तित्व का परिचय दे रही थी।

दादू कुछ कहना चाह रहा था, किन्तु कुछ कह न सका, झुककर उसने दूसरे हाथ से सलाम किया और बाहर हो लिया। कमला ने दरवाज़ा बन्द कर लिया। प्रकाश जलता रहा।

और तब वह पलंग के पास आकर खड़ी हो गई, चेहरा उसका तब भी तमतमाया हुआ था। शरीर पर वही अभिसार की साड़ी, प्रकाश में जगमग-जगमग कर रही थी। मस्तक का जूड़ा कुछ शिथिल हो गया था, किन्तु स्पष्ट था कि अभिसार के पूर्व उसे भी मालकिन का प्यार-

प्रतीक्षा भरा प्रयप्न प्राप्त हुआ था। आंखों की कोर से देखकर नटनागर ने पुनः आंखों को बन्द कर लिया। कमला ने घृणा से ओठ सिकोड़ लिए।

एकाध मिनट तक कमला ने नटनागर के बोलने की राह देखी, किन्तु नटनागर हिले भी नहीं। थूक निगलकर कमला ने कहा, 'सो रहे हो ?'

'नहीं।'

'सो मैं जानती थी !—जब तुमसे सोने की आशा की थी, तब भी यदि नहीं सो सके, तो इस समय कैसे सो सकोगे !—तब तो,—शायद मुझे आंखें खोलकर देखना भी नहीं चाहते ?'

नटनागर ने आंखें खोल दीं, उनमें भरी हुई बूंदें साधे प्रकाश की किरणों में व्यथा का एक सिन्धु उद्भासित कर रही थीं, कमला उस प्रवाह को सह नहीं सकी, उसने दृष्टि नीची कर ली। नटनागर ने गिरी हुई आवाज़ को यथासाध्य उठाकर कहा :

'कहो, क्या कहना चाहती हो ?'

'तुम कुछ कहना नहीं चाहते ?'

कमला ने आंखों को कुछ उठाया, दृष्टियां चार हुईं, नटनागर कुछ न बोले केवल आंख का बिन्दु गाल पर आ लगा।

कमला ही ने कहा, 'मुझसे घृणा करते हो, यही न ? करना ही चाहिए !—'वह और पास चली आई 'हाथ के पास छुरा अभी भी रखा हुआ है ! जिस इरादे को लेकर दादू से झगड़ बैठे, मैं खड़ी हूं, वह अभी पूरा कर लो। कोई बाधा नहीं देगा !'

नटनागर तब भी चुप—आंसू की बूंदें आंखों की कोटरों में इकट्ठी होने लगीं, फिर कनपटियों की राह एक-एक कर नीचे तकिये का अभिषेक करने लगीं। दृष्टियां तब भी दोनों की एक दूसरे से मिली हुईं—नटनागर की दृष्टि जिन्हें शिकार करने के लिए आवाहन किया जा रहा था, भीत मृग की तरह आकुल, और जिसका शिकार होना था, उस

कमला की आंखें क्रुद्धा दर्पिता बाघिन की तरह चमत्कृत !

कमला ही ने कहा, 'डर रहे हो ?—हाथ कांप जाएगा ?—जीवित रहने के लिए हृदय कठोर हो सकता है, किन्तु मृत्यु के लिए यह काफी कोमल होगा, कांपते हुए हाथों भी इसे बड़ी सरलता से विच्छिन्न कर सकोगे।'—और तब झुककर उसने पास पड़े हुए छुरे को उठाना चाहा —नटनागर ने हाथ पकड़ लिया। कमला कहती रही :

'नहीं, चीखूंगी भी नहीं; मैंने अपने आपको इतना मजबूत बना लिया है !' वह नटनागर के शरीर पर झुक चुकी थी।

नटनागर के मुंह से निकला, 'कमला !'

'जीभ को पवित्र करना पड़ेगा। उस दिन दावत में कहा तो था कि स्वैर स्त्री को त्याग दिया जाना चाहिए !—लेकिन—यह क्या ? तुम्हें तो ज्वर हो रहा है ?'—और तभी उसके मुंह का भाव एकदम बदल गया। वह उठी, और शीघ्र ही टेबल की दराज में से थर्मामीटर निकाल लाई।

नटनागर ने कहा, 'इस अभिनय की क्या जरूरत है। यह छुरा मैंने इसलिए पास रख छोड़ा है कि प्रातःकाल के पहले दादू पुलिस में जाकर रिपोर्ट करे, तुम उसके बयान की गवाही दो, और मैं कहूं कि इस छुरे से मैंने आक्रमण किया था।—एक क्षण के लिए आत्महत्या करने को भी जी चाहा था, किन्तु दुनियां तो देखे कि जिस स्त्री को वह देवी, आदि माता, कोमलता की अवतार, न जाने क्या-क्या कहती आ रही है, और जिसकी भक्ति करते फूली नहीं समाती, प्रकृत रूप में वह कैसी खूंखार, हिंसा की मूर्ति और छल तथा प्रतारणा की अवतार है !—मेरे हाथों में हथकड़ियां हों, पैरों में बेड़ियां, गले में फांसी का फन्दा—और तुम उस कमल के गले में हाथ डालकर स्फीत अधरों से मेरे उस महा-प्रस्थान के दृश्य को देखो....'

वे कहते रहे—कहते-कहते थक गए, उनसे अधिक बोला न जा सका, किन्तु मानो कमला ने कुछ न सुना। उसने प्रायः जबर्दस्ती ही थर्मामीटर

लगाकर देखा, तापमान १०५ डिग्री था। सिर पर हाथ रखा, वह तवे की तरह जल रहा था। उसने अपेक्षा न की, शीघ्र ही अपने कमरे में से यूडीकॉलोन की पट्टी भिगोकर नटनागर के माथे पर रख दी। फिर उसने उनके हाथ में से छुरे को लेकर एक तरफ दूर रख दिया। इस बार नटनागर ने आंखें नहीं खोलीं। इसके बाद ही कमला ने चादर से पुनः उनके शरीर को ढांक दिया। तब वह भीतर जाकर एक गिलास में थोड़ी ब्रांडी पानी में मिलाकर ले आई। नटनागर ने इनकार नहीं किया, एक निरीह शिशु की तरह वह उसे गले में उतार गए।

दूसरे दिन नटनागर का जाना नहीं हो सका। घर पर डाक्टर आया, उसने नटनागर का उपचार किया, और दादू का उपचार भी किया गया। रात को दादू लघुशंका करने उठा, एक तीखे पत्थर से टकरा कर गिर जाने से उसके हाथ में गहरी चोट आई, चोट विशेष भयानक नहीं थी। दस-पन्द्रह दिन में ठीक हो जाएगी। यह कहानी स्वयं दादू ने कही। रात को उसकी मालकिन ने मरहम-पट्टी करके उसका उद्धार ही कर दिया था। कमल दिन भर कहीं नजर नहीं आया! शायद वह उस दिन बाहर गांव चला गया।

कहीं संध्या को जाकर नटनागर का तापमान औसत हुआ। कल की सारी रात और आज दिन भर कमला नटनागर की सुश्रूषा में लगी रही, उसने एक क्षण के लिए भी विश्राम नहीं किया; स्कूल भी वह उस दिन नहीं गई। दादू आधा बीमार तो था ही, पर न जाने एक कैसी वितृष्णा उसके मन पर सवार हो गई थी कि शरीर के इस अवसाद को कुछ न समझते हुए भी, उसने घर के किसी कामकाज में दिलचस्पी नहीं ली। कमला ने उससे पूछा अवश्य था, खाना उसने भी उस दिन नहीं खाया, किन्तु दूध की व्यवस्था कमला ने उसके लिए भी कर दी थी। दादू अपनी कोठरी में ही सारा दिन पड़ा रहा।

शाम को सात बजे कमला ने देखा कि नटनागर का तापमान अब ठीक हो गया है, और वे नींद में लेटे हुए हैं, तो वह भी वहीं पास में नीचे

एक दरी बिछाकर घर के खिड़की-दरवाजे बन्द करके पड़ रही। थकी हुई थी ही, लेटते ही सो गई ! और रात के दो बजे तक बराबर सोती रही। एक बार भी नहीं उठी।

उठते ही कमला ने देखा कि अंधेरा हो रहा है, तो उसने बत्ती लगाकर घड़ी देखी। दो बज चुके थे। उसने नटनागर के पलंग के पास जाकर उनके माथे पर हाथ रखा। तापमान औसत ही था। उसने पुनः उन्हें अच्छी तरह उढ़ा दिया। पुनः प्रकाश बन्द करके वह उसी दरी पर लेट गई, कि तभी नटनागर ने कहा :

'कमला !'

कमला चौंक उठी, पर बोली नहीं।

'मैं जाग रहा हूं, और जानता हूं कि जो कुछ मैं कह रहा हूं तुम उसे सुन रही हो।'

'कहो, क्या कहना चाहते हो।'

'कल तो मैं नहीं जा सका, आज मैं चला जाना चाहता हूं। तबियत भी अब तो ठीक ही मालूम दे रही है।'

'एकाध दिन यदि और विश्राम कर लोगे, तो क्या बहुत हानि हो जाएगी ?'

'मेरी तो केवल तनख्वाह की हानि है, किन्तु तुम्हारे अध्ययन की हानि जो होगी।'

कमला कुछ न बोली। कुछ देर रुककर पुनः नटनागर ने कहा, 'देखता हूं, वह छोकरा भी कहीं मुंह छिपाए बैठा है। शर्म के मारे बाहर से लौटा भी नहीं। दिन भर ही उसके दरवाजे ताला लगा देखा है। बड़ा शर्मीला है। लेकिन यदि वह तुम्हें देख लेता, तो शर्म करने की उसे आवश्यकता ही क्या थी ?···' नटनागर एक क्षण के लिए रुक गए !

कमला ने कहा, 'झूठी शर्म से बेशर्म होना अच्छा।'

'यदि झूठी न हो तो शर्म ही क्या हुई ?—और यह शर्म, यह मिथ्या

ही तो स्त्री का भूषण है ! और तुम हो स्त्री जाति की रत्न !'

कमला ताने को सह नहीं सकी, बोली, 'तुम जो पुरुष जाति के रत्न हो।'

'मैं रत्न होता तो तुम्हारे गले में होता, तुम हो इसलिए मेरी कामना के गले में फांसी लगाते हुए भी छोड़ी नहीं जा सकती ! किन्तु तुम्हारे साहस का मुझे लोहा मान लेना पड़ेगा। उस दिन शाम को स्त्री-चरित्र पर शर्मा ने जो कहानी कही थी, याद है न तुम्हें ?'

कमला ने कोई उत्तर नहीं दिया ! नटनागर कहते रहे :

'शर्मा की उस कहानी में मनोविज्ञान रहा हो। किन्तु जो अभिनय तुम गत चौबीस घंटों में कर गुजरी हो, उसे किस विज्ञान का नाम दिया जाए ?'

कमला अधिक न सुन सकी, वह उठी और अंधेरे ही में दरवाजा खोलकर अपने कमरे में चली गई। नटनागर का क्रोध तार सप्तक पर जा पहुंचा। चिल्लाकर बोले—'उस कमरे में चले जाने मात्र से समस्या का हल नहीं हो जाता कमला ! खैर, तुम आराम करो, किन्तु मेरा निश्चय सुन लो—देख-सुनकर कोई मक्खी नहीं निगल सकता। तुम्हें मैं अपने साथ बम्बई लिए चल रहा हूं। तुम्हें तैयारी करने में यदि समय की जरूरत हो तो मैं एक दिन और ठहर लूंगा। आज ही अपना चार्ज देकर चौबीस घंटे का नोटिस तुम्हें देना है। सुन रही हो न ?'

उत्तर में कमला स्वयं कमरे में आ उपस्थित हुई। इस बार उसने अंधेरे की अपेक्षा न की। स्विच दबाकर कमरे में उसने प्रकाश कर दिया। देखा कि खिड़की बन्द थी ही। पास रखे हुए स्टूल को उसने ठीक नटनागर के मुंह के सामने खींच लिया और उसपर बैठते हुए अपने तमतमाते हुए चेहरे को ठीक प्रकाश के सामने करके कहा :

'अब सुनाइए जो कुछ सुनाना चाहते हैं। दासी सुनेगी !'

'सुना नहीं ?—तुम्हें मेरे साथ बम्बई चलना है !'

'और यदि मैं इनकार कर दूं !'

'मैं तुम्हारा पति हूं कमला ! पंचों के सामने मैंने तुम्हारा हाथ पकड़ा है, अग्नि के सामने हमने कसम खाई है।'

'कसम क्या आपने खाई थी ? मैंने खाई तो याद पड़ती नहीं—शायद हमारी ओर से पुरोहित ही ने खाई थी। फिर कसम का क्या ? उसके पहले भी मैंने बहुतेरी कसमें खाई थीं, बाद में भी खाई हैं—और जरूरत पड़ने पर अब भी खा सकती हूं !'

'लेकिन पंच !'

'वे बेचारे नहीं जानते कि जिसे उन्होंने पति करार दिया है, उसकी योग्यता क्या है !'

'कमला ! तुम मेरी बीमारी का मजाक उड़ाना चाहती हो, अपनी वासना को छिपाकर !'

'और मेरे नारीत्व का मजाक खूब हंसकर उड़ाया जा सकता है !' फिर कुछ क्षण चुप रहकर कमला ने दृष्टि नीची करके कहा, 'नारी को जब कोई गलत समझता है, तो कितने बड़े अभिशाप से उसे ढंक देता है, यह कौन जानेगा !' और वह स्टूल पर से उठ खड़ी हुई। उधर एक कोने में फूलदान के लिए एक ऊंचा स्टूल रखा हुआ था। महरी शाम को बासी फूल फेंककर फूलदान को साफ करने के लिए उठा ले गई थी। कमला ने जाकर उसका सहारा ले लिया और अपने सिर को उसपर छिपाकर मानो अपने ही आपसे कहने लगी।

'स्त्री की वासना को सबने धिक्कारा, उस पुरुष ने जो अपनी निज की वासना पर नियंत्रण नहीं कर सका—उस पुरुष ने भी, जो नारी की उस वासना को संतुष्ट न कर सका। वह जाए तो कहां, करे तो क्या ! उसे नारी बनाया, उसे रूप की आग दी, स्नेह की प्यास दी, उसे ममता का शून्य दिया, उसे यौवन की फिसलन दी, उसे कोमलता का आयुध दिया—और फेंक दिया उसे सूखे घास के ढेर में, भूखे भेड़ियों के बीच ! मुझे जब रूप की आग मिली, तो तुमने उसे वासना का पवन दिया, स्नेह की वृष्टि नहीं; यौवन के फिसलते मार्ग पर जब मैं खड़ी हुई तो

तुमने मुझे धक्का दिया, हाथ नहीं थामा; जब मुझे स्नेह की प्यास मिली, तो तुमने मुझे फ़ैशन की आग पिलाई, करुणा के आंसू न दिए; जब मुझे मां की ममता मिली, मेरे पुत्र को तुम खा गए, मुझे रक्षा का वरदान नहीं दिया; जब मुझे सहानुभूति की प्रेरणा मिली, तुमने मुझे मार्ग नहीं दिखाया, बल्कि ईर्ष्या से तुम उबल पड़े—और आज मेरे विचारक बनकर मुझे दण्ड देना चाहते हो ?—दो ! मैं मरना चाहती हूं, किन्तु मुझे तिल-तिलकर न मारो—मेरा कण-कण विद्रोही होना चाहता है—मैं घृणा करना चाहती हूं, अपने आपको—पर कैसे करूं ! यदि मैं अपने आप से घृणा करना सीख जाऊं तो यह सारी मनुष्य जाति मेरे लिए घृणा की वस्तु हो जाएगी ! तब—क्या मैं प्रलय की आग बनकर इसे भस्म करने में प्रवृत्त हो जाऊं ! नहीं, नहीं—मैं किसीसे घृणा नहीं कर सकती । मुझे प्यार का दण्ड मिला हुआ है, यह दण्ड मुझे मरने भी नहीं देता—लो, तुम्हीं मुझे मार डालो—मार डालो—यदि मेरे पति हो तो इतना ही करो—मुझे क्यों इतना दुःख दे रहे हो ?'

और यह कहती-कहती कमला वहीं पर अचेत होकर फर्श पर गिर पड़ी । नटनागर उठकर दौड़े । उसे उठाया, वह तब भी बेहोश थी । सिर पत्थर से टकरा गया था । नटनागर ने हथेली से उसे दबाने की चेष्टा की, पर वह फूलता जा रहा था । नटनागर ने देखा कि कमला तब से ज़ार-ज़ार हो रही थी। उसका सारा चेहरा विषण्ण हो उठा था !

नटनागर ने अपने रुग्ण और कमज़ोर शरीर से ही चेष्टा करके कमला को उठाया, और अपने पलंग पर ले जाकर लिटा दिया । अपने दोनों हाथों में चेहरे को दबाकर वह देर तक उस ओर देखते रहे । उसके बालों को उन्होंने ठीक किया, और एकाएक ही उन्होंने उसके अधरों पर अपने अधर रख दिए ! धीरे-धीरे प्रभात की ठण्डी पवन उसके शरीर से लगने लगी, और वह चेत में आ गई, किन्तु नटनागर ने कहा, 'कमला, बोलने की चेष्टा न करो । आंखें बन्द करके सो रहो ।'

दूसरे दिन नटनागर अपना बोरिया-बसना बांधकर बम्बई चले गए ।

१७

बड़े-बड़े दार्शनिक जो कह गए हैं कि जगत का यह जीवन एक अनवरत प्रवाह है, सो सत्य ही है, किन्तु यह प्रवाह किसी ढालू जमीन पर नहीं है, यह प्रवाह है वस्तुतः उर्ध्वोन्मुख, आरोही। यदि ऐसा न होता और जीवन केवल प्रवाह में ही बहता रहता, तो उसकी कोई निज की गति न रह पाती, और न ही उसका उत्थान हो पाता !

इसीलिए जब मास और वर्ष बनकर दिन बीतने लगे, तो परिवर्तन ने किसीको अछूता न छोड़ा। मिसेज़ नटनागर आगे पढ़ती रहीं; मेधावी थीं ही, ग्रेजुएट हो गईं; इधर पाठशाला भी बढ़कर हाई स्कूल होना चाहती थी। मिसेज़ स्मिथ का इसी बीच विवाह हो गया था, वे अब मिसेज़ राब्सन हो गई हैं। चूंकि मिस्टर राब्सन क्षेत्रीय कार्यालय के कारखाने से सम्बद्ध था, मिसेज़ रॉब्सन का तबादला हो गया, और मिसेज़ कमला नटनागर वहां की प्रधानाध्यापिका बन गईं।

श्री नटनागर के बम्बई चले जाने के उपरान्त लगभग तीन माह तक कमलनयन जोशी छुट्टी पर रहा। जब सब प्रकार की सवेतन, अर्द्ध वेतन वाली छुट्टी शेष हो गई, तो उसे क्षेत्रीय कार्यालय में उपस्थिति देनी पड़ी, दो-चार महीने तक उसने जी-तोड़ परिश्रम किया। अधिकारियों की जल, पत्र-पुष्प से पूजा-अर्चना भी की, और यद्यपि उसकी ग्रेड कम हो गई, किन्तु वह अपना पुनः तबादला करवाने में समर्थ हो गया। परमानेण्ट वे-इन्स्पेक्टर, पी. डब्लू. आई. (परमान्त पथ निरीक्षक) का आवास (हेड क्वार्टर) वहीं था, उसके छोटे-से दफ्तर में एक क्लर्क-कम-टाइम कीपर की आवश्यकता रहती थी। कमलनयन की वहीं नियुक्ति हो गई। कमला के अध्यापन में किसी प्रकार की हानि नहीं हुई। कमल के त्याग को कमला बराबर समझती है, उसने केवल कमला के लिए ही यहां अपना तबादला करवाया, इसके लिए लोगों की खुशामद की, रुपया खर्च किया, और वह तो यहां तक कहता है कि यदि उसका तबादला न होता,

तो वह त्याग-पत्र ही दे देता। बहरहाल उसने उन्नति के सभी अवसर तथा अच्छी ग्रेड का त्याग तो स्पष्ट रूप से किया ही था।

श्री नटनागर बम्बई के जीवन में लहरों के साथ जूझने वाले सूखे पत्ते की तरह कभी इधर-कभी उधर ढकेले जाने लगे। छोटे गांव और छोटे आफिस में उनकी पूछ थी, नाई की बरात में अपने आपको ठाकुर समझते थे; किन्तु बम्बई में कुछ ही दिन के बाद उनका मध्यवित्त समाज के क्लर्क के साहिबी दिमाग़ का पारा एकदम नीचे उतर गया। कहते हैं, वहां पर काम को नहीं पूछा जाता, पूछी जाती है केवल तिकड़म की ताकत, और छक्के-पंजे की कुशलता। नटनागर छक्के-पंजे की कला में तो निष्णात थे, बाबूगिरी उनके बाप-दादों की विरासत मे पाया हुआ पेशा था, किन्तु तिकड़म लड़ाने की ताकत उनमें न थी। इसके उपरांत भी अपने छक्के-पंजे का ज़ोर वे तभी आजमा सकते थे, जब करने को उन्हें महत्वपूर्ण काम मिलता। फिर उनकी महत्वाकांक्षा ने शीघ्र ही उन्हें अपने समाज में दुश्मन बना दिया।

इसके अतिरिक्त रहने को उन्हें मकान नहीं मिला। एक तम्बू में अन्य कई क्लर्कों के साथ पड़े हुए थे। मकान की खोज बम्बई जैसे शहर में ? कलियुग में भगवान की खोज सरल है, किन्तु मकान की खोज कठिन ! यदि कहीं एकाध मकान उनकी रुचि का मिला तो उसका किराया उनकी तनख्वाह के बराबर। अतः उनका जर्जर स्वास्थ्य जर्जर आवास और जर्जर परिस्थितियों में उनकी भावना का साथ न दे सका हो, तो कोई आश्चर्य नहीं। किन्तु उन्होंने अपनी परिस्थितियों का जिक्र किसीसे नहीं किया। अब वे कमला को लव लेटर्स नहीं लिखते—कमला के पत्र का उत्तर वे अवश्य देते हैं, किन्तु केवल औपचारिक उत्तर। 'लव लेटर्स फ्रॉम कमला' की अभ्र-भेदी कल्पना उनकी धूलिसात् हो चुकी है, मानो वे कमला ही से नहीं, समस्त संसार से अपना अस्तित्व समेट लेने की चिन्ता में हों। शायद इस लम्बे-चौड़े शहर में ही नहीं, इस समस्त मुक्त आकाश के नीचे वे अपने आपको नितान्त अकेला, निस्सहाय और

परित्यक्त अनुभव करते थे और अपने सुख-दुःख में वे अब किसीको साझीदार नहीं बनाना चाहते थे !

नटनागर का यह अध्ययन मेरा व्यक्तिगत है। मेरे त्याग-पत्र को स्वीकृत हुए दो साल होने आए थे, किन्तु मेरा हिसाब-किताब अब भी तै नहीं हुआ था। इसी सम्बन्ध में मुझे बम्बई जाना पड़ा। तब श्री नटनागर ने उपनगर में एक सस्ते-से मकान की व्यवस्था कर ली थी, साथ में उनके एक और बाबू था, दोनों मिलकर किराया चुकाते थे। भोजन का प्रबन्ध एक मेस में था।

विभागीय अध्यक्ष से मिलने के बाद, चक्कर लगाता हुआ मैं नटनागर से अनायास ही मिल गया। एक बड़े भारी हॉल में पंक्तिवार डेस्कें लगी हुईं, जिनके बीच में कागज़ रखने के लिए 'रेक' बने हुए थे। दोनों ओर क्लर्कों की पंक्तियां थीं। प्रत्येक क्लर्क फाइलों के अम्बार में सिर नीचा किए अपने आप में खोया हुआ-सा लग रहा था। यों, नटनागर को उस पंक्ति में से ढूंढ निकालना सरल न था, और खासकर तब, जबकि मैं उन्हें खोज भी नहीं रहा था; किन्तु जिस समय मैं गुज़र रहा था, उसी समय संयोग से उन्होंने चपरासी को बुलाने के लिए सिर उठाया, और चपरासी की जगह मैं उनकी दृष्टि को पकड़ा गया। मैं अपने ही ध्यान में चला जा रहा था, कि कंधे पर पीछे से किसीने हाथ रखा, और चौंककर पीछे मुड़कर देखता हूं तो नटनागर थे। इतनी नैसर्गिकता उनके व्यवहार में पहले मैंने कभी नहीं देखी थी। अभिभूत हो गया।

संध्या का खाना उन्हींके साथ उनके मेस में खाना पड़ा, फिर पकड़-कर अपने घर ले गए। मैं एक होटल में ठहरा था, इसलिए कठिनाई कुछ न हुई, केवल मैनेजर को कह भर देना पड़ा। एक पूरा दिन और पूरी रात बिताई उनके साथ मैंने।

कमरा काफी बड़ा था। पार्टीशन के बाद भी कमरे में दो खाट इतनी जगह थी। एक छोटी-सी टेबल और दो कुर्सियां, जो दोनों व्यक्तियों के पारस्परिक उपयोग की थीं, पार्टीशन के दूसरे बाजू में

भिजवा दी गई थीं। दूसरे दिन मालूम पड़ा कि मि० नटनागर ने दूसरी खाट अपने साथी से एक रात के लिए ले ली थी—यानी उनको उस रात फर्श पर ही सोना पड़ा। मुझे इसके लिए लज्जा रही ही, जो उनसे क्षमा मांगने पर भी नहीं जा सकी। उत्तम तो यह होता कि नटनागर और मैं उस रात फर्श पर ही सो रहते।

कमरे में पंखा न था। खिड़कियां खोल देने के बाद भी राहत नहीं थी। नटनागर से कहकर सवेरे का अखबार मांगा, उसीसे पंखे की ज़रूरत पूरी की। फिर मच्छरों ने अपना संगीत सुनाना आरंभ किया, लाचार एक पतली चादर से बदन को ढंकना पड़ा। जब रात के दस-ग्यारह बजने को आरंभ हुए तो खाट मानो सजीव हो उठी, बिस्तर के नीचे से जाने कहां से खटमलों ने हमला बोल दिया। परेशान देखकर नटनागर हंस दिए, वही मुक्त हंसी १८० डिग्री की, और बोले :

'भाई, यह बम्बई है, यही तो यहां का तोहफा है। यहीं नहीं, घर भी ले जाना होगा, और बच्चे वगैरा सब बम्बई के इस तोहफे को कई दिन तक याद रखेंगे।'

'लेकिन···'

'तुम्हारे होटल में इससे भी अधिक कसरत से होंगे। वहां तो इनका अखूट राज्य है ! जिस खाट में ये रहते हैं, बस 'मेन मे कम, मेन मे गो, बट आइ गो ऑन फॉर एवर !'

—किन्तु इस समस्त परेशानी के बावजूद कहना चाहिए, रात बहुत अच्छी तरह कटी। नटनागर का एक नया परिचय मिला !—नींद का अभाव भी बिल्कुल नहीं खला।

मैंने उनको घर के हाल सुनाए। मिसेज़ नटनागर की लोकप्रियता, उन्नति, बुद्धिमत्ता आदि का अतिरंजित वर्णन किया, किन्तु मि० नटनागर उदासीन भाव से सुनते रहे। उसके अध्यापन-अध्ययन की बातों में भी उन्होंने उत्साह नहीं दिखाया, तो मैंने विषय बदलकर मित्रों की चर्चा आरम्भ कर दी। जिनके बारे में मैं जानता था, मैंने कहा; जिनके बारे

में नटनागर जानते थे नटनागर कहते रहे। बात चल पड़ी श्री धर्मप्रकाश के सम्बन्ध में।

नटनागर ने कहा, 'ओह मि० धर्मप्रकाश !—वे मजे तो अब कहां हैं !—पहले तो तीन-चार नौकर सदा ही सेवा में रहा करते थे, अब तो रामू को भी अपने पास से तनखाह देनी पड़ती है !'

मैंने कहा, 'भाई, नौकर की बात जाने दो, नौकरी के क्या हाल-चाल हैं ?'

'नौकरी के क्या हाल होंगे ! जो हमारे हैं, वे सभी के हैं।'

'लेकिन वे तो अधिकारी···'

'अधिकारी हों या कर्मचारी ! प्रादेशिकता की भावना सभी जगह काम करती है। उन्हें प्रस्थापित तो किया था तृतीय श्रेणी में। यहां एक साल तो वे अधिकारी पद पर जैसे-तैसे काम करते रहे, रहने को मकान तक न था। सैलून (निरीक्षण-गाड़ी) के एक प्रकोष्ठ में बेचारे बच्चों-कच्चों सहित किसी तरह दिन गुज़ार रहे थे, कि उन्हें तीसरी श्रेणी के क्लर्कों में काम करने का आदेश मिल गया। चार माह तक की छुट्टी रहे, बहुत दौड़-धूप की, तब कहीं जाकर पुनः उन्हें द्वितीय श्रेणी में 'आफिशिएटिंग चांस' मिला है !—और अब तो उनको वहां से भी कारखाने में बदल दिया गया है।'

'कारखाने में ?'

'हां, सहायक नियुक्ति-अधिकारी की जगह पर !'

'चलो अच्छा है ! सच तो यह है भाई नटनागर, कि अपमान की अपेक्षा अपमान का अनुमान ही अधिक खतरनाक है !—रहा प्रश्न हानि-लाभ का, सो तो साफ है। राजनीति का खेल है, नाम लिया जाता है, जनता का; काम होता है नेता का। इस विलीनीकरण से भी लाभ तो शिखर-स्तरीय अधिकारियों का ही हुआ है, और राष्ट्रीय व्यय में कोई बचत भी नहीं हुई। इधर प्रशासनिक प्रवणता का भी दिवाला निकलता चला जा रहा है। बहरहाल बातें काफी बड़ी-बड़ी हो रही हैं।'

नटनागर ने कहा, 'कुछ अंशों तक तुम्हारा कहना सही है, किन्तु सदैव तो यह पोल चलने की है नहीं ! जानते हो तुम्हारे महा व्यवस्थापक का क्या हुआ है ?'

'नहीं तो !'

जितना पैसा उन्हें रियासत की नौकरी का अधिक मिला था, वह सब वसूल हो गया, और उधर वरिष्ठता (सीनिओरिटी) से भी गए। कई ठेकेदारों ने भी समय देखकर अपनी दरखास्तें पेश कर दीं। बदनामी के मारे मुंह दिखाना भारी हो रहा है। अभी छः माह बाकी हैं, पर हो सकता है, पहले ही अवकाश (रिटायरमेंट) मांग लें।—तुमने गलती की, अगर उस समय अपनी जगह का दावा कर देते, और त्यागपत्र न देते, तो तुम्हें भी अवसर मिल जाता।'

मैंने नटनागर को धन्यवाद दिया, और कहा, 'यही न कि तुम्हारी तरह या धर्मप्रकाश की तरह मैं भी इस तम्बू से उस तम्बू में बिस्तर उठाता फिरता ?'

'पर तुम्हें क्या है ?—तुम अकेले जीव ठहरे—या कहीं अटक बैठे ?' और वे वही १८० डिग्री का हास अधरों पर बिखेरने लगे।

मैंने कहा, 'अटका हुआ होता तो कम से कम झटका न खाता। लेकिन अकेला हूं, इसीलिए इच्छा होते ही त्यागपत्र दे सका, और अब लिखता हूं, पढ़ता हूं। मन हुआ बम्बई चला आया, जब तक मन रहेगा यहीं रह सकता हूं। किसीकी चिन्ता नहीं, फिकर नहीं। कोई पूछने वाला नहीं ! क्या यह जीवन बेहतर नहीं है नटनागर ?'

नटनागर ने मानो अलक्ष्य में एक लम्बी सांस छोड़ी और बोला, 'सो तो ठीक है, किन्तु फिर भी—अच्छा एक बात बताओ।'

'पूछो।'

'तुम्हें यह सब कुछ लिखने के लिए प्रेरणा कहां से मिल जाती है ?'

मैंने हंसकर कहा, 'प्रेरणा ?—प्रेरणा वास्तव में किसे कहते हैं, यह मैं नहीं जानता—तुम्हारा तात्पर्य 'अर्ज' से है या 'इन्स्पिरेशन' से ?

'अर्ज' का प्रश्न हो, तो कहूंगा कि यह एक आदत हो गई है ! जब तक कुछ लिख नहीं लिया जाता, खोया-खोया-सा महसूस करता हूं। फिर अब तो नौकरी भी नहीं रही। इसी तरह कुछ पैसे मिल जाते हैं, तो शरीर की आवश्यकताएं जुट जाती हैं !—बस उसी तरह जैसे तुम्हें विवश होकर दस बजते ही दफ्तर जाना पड़ता है—पर फिर भी दोनों बातों में अन्तर तो है ही। तभी तो दफ्तर जाने की विवशता को स्वेच्छा से त्यागकर लिखने की विवशता ही को मैंने स्वीकार किया। वह केवल इसलिए कि इसमें मन रम जाता है। मन इसमें अधिक क्यों रमता है, इसे भी समझने की कोशिश करता हूं। बचपन ही से शायद मैं सपनों के महल बनाता रहा हूं, उन दिवा-स्वप्नों के लिए भी सोचता हूं, मेरा वातावरण जिम्मेदार है, जिसकी मनोवैज्ञानिक ऊहापोह करने की शायद ज़रूरत नहीं है। बस, फिर शिक्षा का प्रसाद मिला, शब्दों ने सहायता की, और मैं चिन्दियां लेकर बन बैठा बजाज ! बस यही सब कुछ तो है।'

नटनागर ने कहा, 'हिन्दी में दोनों के लिए एक ही शब्द है शायद 'प्रेरणा'—पर तुमने उसका एक पहलू तो स्पष्ट कर दिया है, दूसरे पहलू के बारे में क्या कहते हो ?—पर देखो—डॉण्ट बी सो मच एकेडेमिक ऐण्ड सौफिस्टीकेटेड इन योर रिप्लाई !—(अपने उत्तर में इतने शास्त्रीय और ढंके मत रहना !)

'मतलब ?'

नटनागर ने हंसकर कहा, 'रोज ही तो सुनते हैं कि 'रमणी' के बिना रमणीय भावों का विकास सम्भव ही नहीं है। रमणी या तो मर-कर प्रेरणा बनती है या कलाकार को मारकर—तुलसीदास, सूरदास और उधर सुकरात, अब्राहम लिंकन, कार्ल मार्क्स—सभी नाम तो तुमने सुने हैं ?'

मैं भी हंस दिया, बोला, 'जो लोग 'रमणी' के बिना रमणीय भावों का दर्शन नहीं कर सकते, वे भी हैं तो साहित्यिक ही, क्योंकि उनके लिए

अभी तक और कोई नाम ईजाद नहीं हुआ। किन्तु 'रमणी' के प्राप्त होते ही वे 'चुक' जाते हैं, और रमणी के अभाव में कुछ ही दूर चलकर उन्हें रुक जाना पड़ता है। उनका साहित्य 'सेक्सीय' ही नहीं वस्तुतः बरसाती भी होता है। किन्तु तुमने तुलसीदास, सुकरात जैसे नाम भी गिना दिए हैं! भाई, मैं तो यह मानता हूं कि 'रमणी' इनके जीवन में इन्स्पीरेशन नहीं थी, वह केवल उनकी सामर्थ्य के लिए टर्निंग पॉइण्ट (मोड़ का बिन्दु) साबित हुई। शक्ति के ऊपर शायद नारी का रूप या उसकी सहानुभूति छाए हुए थे, उसके हटते ही उन्हें अपने मूल स्वरूप के प्रवाह में बह जाना पड़ा।—अपने लिए शायद यह कहूं, कि सामर्थ्य का प्रवाह तो मुझमें कभी है नहीं, पर हां, हृदय का गीलापन तो है ही—वह धीरे-धीरे सदा से ही बूंद-बूंदकर टपकता रहता है! यही मेरे लिए काफी है।'

नटनागर ने कहा, 'लो मज़ाक ही मज़ाक में तुमने तो अपनी सृष्टि-रचना का विश्लेषण ही कर दिया। सचमुच साहित्यिक हो भाई। मैं भी कभी लिखने की सोचता था, पर अब मन ही नहीं होता।'

'सच ?—क्या लिखना चाहते थे ?'

'विशेष कुछ नहीं। केवल पत्रों के रूप में कुछ हृदय के गुबार उड़ाना चाहता था, पर हिन्दी में नहीं, अंग्रेजी में।—हिन्दी की शायद मुझे आदत ही न हो।'

मैंने कहा, 'आदत तो डालने से होती है ...'

'जब से स्कूल छोड़ा, हिन्दी लिखने का अवसर ही नहीं आया। प्रभाकर की परीक्षा में लिखना पड़ा था पर आदत न होने ही से डिवीज़न खो बैठा।'

'भाषा का प्रश्न तो खैर बाद का है।'

बीच ही में नटनागर ने कहा, 'नहीं बाद का भी नहीं। बात यह है, माफ करना, अंग्रेजी की कुछ छटा ही अजीब है। बहुतेरी ऐसी बातें हैं कि हिन्दी में उन्हें ठीक तरह लिखा ही नहीं जा सकता।'

'ठीक कहते हो; उसी तरह जिस तरह कई बातों को अंग्रेजी में नहीं लिखा जा सकता, किन्तु हिन्दी में बखूबी लिखा जा सकता है।—सवाल भाषा का ही नहीं, सवाल यह भी है कि हम किसके लिए लिख रहे हैं? —यदि हम भारतीयों के लिए लिख रहे हैं तो हमें भारतीय भाषा ही में लिखना चाहिए क्योंकि भाषा केवल भावों ही का वहन नहीं करती, वह संस्कृति का भी वहन करती है।'

नटनागर ने हंसकर कहा, 'अब तो वह इरादा ही नहीं रहा।—भाषा का तो प्रश्न ही गौण है।'

मैंने भी हंसकर कहा, 'क्यों?—क्या अब प्रेरणा-स्रोत सूख गया है?'

जाने क्यों नटनागर के मुंह पर एक छाया-सी पुत गई, यह उस समय मैं नहीं समझ सका किन्तु रात्रि के प्रायान्धकार के बावजूद मैं उसे भांप गया। फिर भी मानो उन्होंने अपने को सम्हाल लिया और बोले—'उमर, स्वास्थ्य, परिस्थितियां—ये सभी कुछ भी तो कुछ प्रभाव डालती ही हैं।'

मैंने कहा, 'किन्तु रमणी की माया के आगे इनमें से किसीकी नहीं चलती। यह मैं खूब जानता हूं और तुम भी जानते होगे!—कहो, क्या बम्बई में सिर्फ सूखा जीवन ही बिता रहे हो?'

'सूखा और गीला किसे कहते हैं, यह क्या मुझे समझना है?—यही मेरे बारे में तुम्हारी धारणा है?'....

नटनागर को चोट पहुंचाने का मेरा इरादा न था, बात बिल्कुल ही मज़ाक में थी। मैंने कहा :

'तीन बरस होने को आए तुम्हें यहां!—किसीने कहा था, किसी लड़की की ट्यूशन-व्यूशन भी करते हो!'

'ट्यूशन?—लड़की की?—किसने कहा?'

'यही रास्ते चलते ही सुना था किसीसे!'

'ट्यूशन तो खैर करता हूं, सवेरे ही जाऊंगा। बम्बई में कुछ तो

करना ही पड़ता है भाई, नहीं तो पेट कैसे भरे।—पर लड़की की करता हूं, यह किसने कह दिया।'

'खैर, किसीने कहा हो। जो झूठ बात है, उसके लिए दर्देसर की ज़रूरत नहीं। पर तुम्हें इतनी मेहनत नहीं करनी चाहिए नटनागर!—खासकर अपने इस स्वास्थ्य में—अब तुम्हें चिन्ता ही क्या है?—खर्चा तो तुम्हें अपना ही निकालना है। मिसेज़ नटनागर अपना बोझ आप सम्हाल ही लेती हैं।'

'हां, सो तो ठीक है; पर बम्बई के खर्चे का अभी तुम्हें शायद अनुमान नहीं है!—फिर शायद तुम नहीं जानते, मुझे बूढ़ी मां को भी कुछ खर्चा भेजना पड़ता है।'—और यह कहकर उन्होंने उठती हुई एक लम्बी सांस को दबा लिया। फिर बोले—'तुम उसे नहीं जानते!—हर मां अपने बेटे को चाहती ही है, उसमें नया कुछ नहीं किन्तु मेरी मां के लिए मैं क्या हूं, यह मैं ही अनुभव कर सकता हूं। और मैं उसे कभी सुख नहीं पहुंचा सका। अब तो वह प्रायः अन्धी ही हो गई है फिर भी कैसी विवशता है कि मैं उसकी कोई सेवा नहीं कर सका।'—और मानो दुःख के आवेग में वे अभिभूत हो गए।

मैंने कहा, 'यदि उन्हें दिखाई नहीं देता, तो वहां अकेले उन्हें असुविधा नहीं होती होगी?'

'क्यों नहीं होती?—और इसे बीसवीं शताब्दि का अभिशाप कहना चाहिए कि यौवन के आरम्भ में मनुष्य की आंखों में जो रंगीनी छा जाती है वह मां की वेदना को समझने ही नहीं देती।—वह किसी वस्तु की कीमत उसे खोकर ही समझ सकते हैं। या जब हमें वास्तविक वस्तु के बदले नकली वस्तु मिल जाए।'

'तुम्हारा मतलब मैं नहीं समझा।'

नटनागर किनारा काट गए। बोले, 'इस ट्यूशन में मैं एक और सिद्धि की आशा कर रहा हूं क्योंकि यह ट्यूशन है यहां के उपप्रधान इंजीनियर के लड़के की।'

'उपप्रधान इंजीनियर ?'

'हां, मिस्टर कपूर; जो पहले एक्जीक्यूटिव इंजीनियर थे—काफी सीनियर आदमी हैं—क्षेत्रीय कार्यालय में नेक्स्ट चान्स उन्हींका है !—मैंने सोचा कि यदि इनसे कुछ पर्सनल सम्बन्ध हो जाएं तो किसी छोटे कस्बे में तबादला करवा लूंगा; जहां मकान की भी सुविधा हो ! तब मैं मां को वहीं बुलवाकर अपने पास रख सकूंगा।'

मैंने कहा, 'तब शायद मिसेज़ अटनागर भी वहीं तबदील होकर आ सकती है।'

नटनागर ने कहा, 'खैर, वह बात मेरे दिमाग में नहीं है। आ भी सकती हैं, नहीं भी आ सकतीं। क्या पता, जहां मैं तबादला करवा सकूंगा, वहां कोई गर्ल्स स्कूल हो भी या नहीं।'

निश्चय ही नटनागर के भविष्य-चिन्तन में मिसेज़ नटनागर के लिए गौण स्थान था।

मैंने कहा, 'योजना वास्तव में तुम्हारी ठीक है भई !—मैं तो इसलिए कहता था कि आखिर ट्यूशन के लिए कुछ तैयारी तो करनी ही पड़ती है, और फिर तुम अपने इस स्वास्थ्य····'

नटनागर ने बात पूरी नहीं होने दी, हंसकर कहा, 'तैयारी कुछ नहीं करनी पड़ती। लड़का है सिर्फ चार-पांच बरस का—नर्सरी स्कूल में जाता है, मैं उसे ए बी सी डी बतला देता हूं—किंडर गार्टन का बक्स है, दुनियां भर के खेल-खिलौने हैं, तस्वीरें हैं—सच तो यह है कि सवेरे एकाध घण्टे के लिए मनोरंजन हो जाता है।'

'लड़का बड़ा दुलार का दीखता है।'

'इकलौता है, और समझो बुढ़ापे का !—बीवी कुछ तो पागल जैसी दिखाई देती है, और सदैव ही बीमार। बाप चाहता है, कि कहीं मां की छूत न लग जाए; और मां उसे एक क्षण के लिए आंखों की ओट करना नहीं चाहती। बस, ट्यूशन क्या है, नाम भर है; जाने-आने का समय ज़रूर लगता है, पर एक तो तीस रुपया कुछ न करने का मिल जाता है

फिर अफसरों की निगाह में आते रहने का भी लाभ है ही।'

—उस दिन रात को बहुत देर तक बहुत तरह की बातें होती रहीं। उन्होंने कहा :

'मिस्टर ओझा !—एक बात तो कह ही देनी चाहिए !—मैं तुम्हें अब तक गलत समझता था, इसके लिए तुम्हें क्षमा कर देना होगा।'

'गलत !—क्यों ?'

'अब उन पुरानी बातों को छेड़ने से कोई लाभ नहीं है। उससे लज्जा ही बढ़ती है, और अब तो तुम रेलवे से अपने सम्बन्ध छोड़ ही चुके हो। —जैसा कुछ हो, एक क्लर्क का जीवन तो तुम जानते ही हो—उसकी आकांक्षाएं, उसके साधन, उसके राग-द्वेष, सभी तो विदित हैं ! किसीने चाहा कि तुम्हें नीचा दिखाया जाए, इससे उसका लाभ और स्वार्थ तो था ही—मुझे बनाया गया साधन; लोभ भी दिया गया, और झूठ न कहूंगा, उस समय तक तो कुछ पाया भी उस कारण से—किन्तु इस पाने की कीमत ही क्या है ?—सच तो, मालूम देता है जैसे उसीकी कीमत चुकानी पड़ रही है....'

मैंने कहा, 'नटनागर, मुझे किसीके प्रति कोई क्रोध नहीं है, मैं भी उन पुरानी बातों को नहीं सोचता, रहा सवाल क्षमा करने का—सो मैंने उस अपराध को कभी मन में लिया ही नहीं ! किसीके अपराध को मन में लेने से अपने ही मन को बड़ा छोटा बना देना होता है। मैं इससे सदैव ही बचने की चेष्टा करता रहा हूं।—मैं प्रारम्भ ही से सारी बात जानता हूं। धर्मप्रकाश को ठीक तरह से समझने इतनी बुद्धि मुझमें है, किन्तु उनके गलत कारनामों पर आंखें न डालने की क्षमता भी मुझमें है ! अपनी हानि का पहले ही आभास पाकर प्रतिविधान भी मैं कर सकता था, किन्तु वह मेरा मार्ग ही नहीं है। मैं मुक्त पंछी हूं—क्यों अपने को इन उपसर्गों में बांधूं ?'

नटनागर कुछ क्षणों तक चुपचाप पड़े सोचते रहे ! मैं भी सोचता रहा, दुःख वह रसायन है, जो व्यक्ति के समस्त कलुष धो-पोंछ देता है !

सहन करना ही शायद मानवता का चरम श्रेय है, इसीलिए सहकर ही नटनागर की आत्मा आज कंचन हो गई है।

रात बहुत बीत चुकी थी। हम लोगों ने नींद के लिए प्रयत्न किया।

१८

बम्बई से लौटकर मैंने देखा कि श्री नटनागर मेरे अच्छे मित्रों में बन गए हैं। श्रीमती कमला नटनागर को वह कब, कितने और कैसे पत्र लिखते हैं, यह तो मुझे मालूम नहीं, किन्तु अब तो जब-तब ही मुझे उनका पत्र मिल जाता है, कारण कोई न भी हो, और मैं चाहे उन्हें उत्तर देने में उनकी गति से मेल न मिला सकूं, तब भी उनके पत्र आते रहते हैं। 'कमलाज़ लव लेटर्स' का उनका इरादा चाहे समाप्त हो गया हो, किन्तु मुझे पत्र लिखकर क्या कोई नया मनसूबा तो वे नहीं बांध रहे हैं! जो हो, मालूम देता है, और एक बार पत्र में उन्होंने इसका आभास भी मुझे दिया था कि ये पत्र लिखकर, वे अपने को हलका महसूस करते हैं, मानो उनपर से एक भार उतर गया है।

कपूर साहब से उनकी घनिष्ठता बढ़ती जा रही है। घनिष्ठता का माध्यम है वही उनका पुत्र सोमदत्त! अपनी नियुक्ति के सिलसिले में कपूर साहब को प्रायः ही बाहर रहना पड़ता है, मिसेज़ कपूर दिन के बारह घण्टों में भी आठ घण्टे पलंग पर बिताने को मजबूर हैं—उनका अब मनोवैज्ञानिक उपचार चल रहा है, शेष चार घण्टे में उसका भाग आधे से अधिक खो जाता है—और फिर नित्य नैमित्तिक कार्य, पथ्य सेवन आदि-आदि के बाद उन्हें सोम के लिए कितना-सा समय मिल पाता है, फिर भी आश्चर्य यह है कि शरीर से पास न रहने पर भी, वे मन से सदैव ही सोम के पास मंडराया करती हैं, बल्कि डॉक्टरों का कथन है कि शायद

सोम की चिन्ता ही उनकी बीमारी का कारण है। वे उसे एक क्षण के लिए भी अपने से विलग करना नहीं चाहतीं, किन्तु पिता को उसके भविष्य का भी ख्याल है, बीमार पत्नी और उज्ज्वल भविष्य वाले स्वस्थ संतान में से उन्हें चुनाव करना पड़ा है। श्री नटनागर दोनों ही को श्रद्धा करते हैं, और दोनों ही की कामना के केन्द्र सोमदत्त को वे अनायास ही प्यार करने लग गए हैं—लड़का बड़ा मेधावी है, उसने कपूर साहब की बुद्धि पाई है—नटनागर सर्वान्तःकरण से उसका भविष्य बनाने के लिए कपूर साहब के बताए मार्ग में उत्साह के साथ बढ़े चले जा रहे हैं! कपूर साहब को अब एक बढ़िया फ्लैट मिल गया है, और श्री नटनागर वहीं एक कमरे में रहने लग गए हैं। दोनों दलों को इससे लाभ ही हुआ है! बम्बई का अब उनका जीवन शिकायत लायक नहीं रहा। केवल उन्हें चिंता रह गई है तो मां की! सो उसे अब पहले से कुछ अधिक रुपया वे भेज देते हैं। मां को कई बार लिख चुके हैं कि वह एक नौकर रख ले, किंतु मां है कि बात ही नहीं मानती। यह तो समझो कि गांव में पड़ोसी, लड़ता-झगड़ता, जलता-भुनता भी, अपने पड़ोसी धर्म को धार्मिक कृत्य समझकर उन्हें विशेष कोई कष्ट नहीं होने देता। और फिर जैसे ही कपूर साहब का तबादला हुआ कि वह भी उनके साथ जाएंगे ही। तब अवश्य वह मां को अपने पास बुला लेंगे! कपूर साहब काफी सीनियर अफसर हैं, तबादला उनका हो भी गया होता, किन्तु मिसेज़ कपूर की चिकित्सा से वे उसे टालते जा रहे हैं; पर अब दीखता है कि शायद अधिक टाला नहीं जा सकेगा, और तब नटनागर को किसी तरह का कष्ट नहीं होगा। यह सब मुझको उनके पत्रों से बराबर यथासमय विदित होता रहता था।

इधर श्रीमती कमला नटनागर का जीवन भी शिकायतों से ऊपर उठता जा रहा था।—अपने हाई स्कूल की प्रधान और इसी बीच कई अन्य प्रवृत्तियां चलाकर यहां के नागरिक जीवन में वह काफी लोकप्रिय होती जा रही थी। बम्बई से लौटने के बाद देखा गया कि उसकी भी कुछ मुझपर कृपा होनी शुरू हो गई। कमल अभी यहीं है, अब दोनों

के बीच गुरु-शिष्य के सम्बन्ध की स्थिति नहीं रही। कमला स्वयं ग्रेज्यूएट हो गई है, और जहां उचित वातावरण में उसका सहज उत्सुक मन श्रद्धा के साथ नये भाव ग्रहण करता हुआ विकसित होता जा रहा है, वहां रेलवे के दमघोटूं संकीर्ण वातावरण तथा सामान्य क्लर्क की अनुभूति में कमल का मन स्थिर रहकर सिकुड़ता जा रहा है, अब तो नए भावों के ग्रहण की क्षमता भी उसमें नहीं रह गई है ! फिर भी दोनों में एक दूसरे के प्रति आसक्ति में कुछ भी कमी नहीं आने पाई है।

बम्बई से जब लौटा था, तो नटनागर ने समाचार ही नहीं, एक छोटा-सा पैकेट भी श्रीमती कमला नटनागर के लिए साथ भिजवाया था। शायद उसमें एकाध साड़ी थी, भेजने का कोई उत्साह उनमें था नहीं, सिर्फ मैंने ही कहा था कि भई नटनागर, मिसेज़ के लिए बम्बई का क्या तोहफा भेज रहे हो ?—यदि मुझसे कभी आपके बारे में पूछा गया, तो क्या कहूंगा ?

यह प्रश्न करके मैं खुद भी लजा गया था—नटनागर ने मेरी ओर देखा, मानो यह पूछने के लिए कि क्या मिसेज़ नटनागर की मुझसे भी रब्त-जब्त है कि बम्बई से लौटते ही वह मुझसे बातचीत—चाहे वह उनके ही बारे में हो—करने के लिए व्यग्र हो उठेगी ?—उनके शंकालु मन को समझने का मेरे पास कोई कारण न था, फिर भी उस दृष्टि को मैं पकड़ गया, और कैफियत के तौर पर बोला, 'मेरा वहां जाना छिपा तो रह नहीं सकता ! अपने केस का सारा कॉरेस्पोण्डैन्स होता है कमल के दफ्तर के थ्रू ! यहां आने से पहले कमल ही ने आपके बारे में कहा था...'

नटनागर ने कहा, व्यंग्य की कुछ मुस्कराहट भी थी, 'तोहफा भेजना तो चाहिए—पर क्या भेजा जाए ?'

'सो मैं क्या जानूं ?'

'अच्छा, आज दफ्तर से लौटते समय बाजार होता आऊंगा।'

मैंने फिर कुछ खिसियाते हुए-से कहा, 'भिजवाना तो कमल ही के

हाथ पड़ेगा, इसलिए कमल के लिए भी कुछ पत्र-वत्र....'

नटनागर फिर मुस्करा दिए, 'जब तुम खुद ही जा रहे हो तो पत्र-वत्र की ज़रूरत है ही कहां ? मिसेज़ नटनागर के लिए भी नहीं। समाचार सब जबानी, और खाली यह पैकेट....'

—सो घर लौटने पर अपने ही नौकर के हाथ पैकेट श्रीमती नटनागर को भिजवा दिया था—समाचार कुछ थे ही कहां ?—किन्तु दूसरे ही दिन श्री कमलनयन जोशी और श्रीमती कमला नटनागर दोनों ही संध्या के समय ज़बानी समाचार जानने के लिए उत्सुक—मेरे घर पर तशरीफ ले आए। जितना मुझे मालूम था, वह सब उन्हें बताकर, तथा चाय पिलाकर मैं उन्हें विदा कर देना चाहता था, किन्तु कमला जी ने साहित्य-चर्चा छेड़ दी।

पूछा, 'आजकल क्या लिख रहे हैं ?'

'अभी तो बम्बई से लौटा ही हूं, और आज तक उसकी थकावट दूर की है। कल क्या करूंगा इसका क्या ठीक है ?'

कमल ने कहा, 'भाई साहब, आप भी खूब हैं !—ठीक तो है, शब्दों के मालिक जो ठहरे—उनके साथ आप ही खिलवाड़ न करेंगे तो करेगा कौन ?'

'मालिक ?....' मैंने हंसकर कहा, 'तुम कौन से कम हो कमल ? शब्दों का मालिक ?—शब्द क्या किसीकी बपौती होते हैं ?—शब्द अगर किसीकी मिल्कियत बने तो वह नष्ट हो जाता है, बल्कि मिल्कियत जताने वाले को खुद शब्दों को आश्रय देकर निःस्व हो जाना पड़ता है।'

'कैसे ?' मिसेज़ नटनागर ने पूछा।

'नहीं जानतीं ?—नये शब्दों का इतिहास यदि आप खोजेंगी मिसेज नटनागर तो...'

'क्षमा कीजिए, एक प्रार्थना कर सकती हूं ?' बीच ही में उन्होंने टोककर कहा।

'कहिए !'

'मैं आपसे उमर में, ज्ञान में, पद में सभी तरह छोटी हूं, जब आप मुझे 'मिसेज नटनागर' या 'आप' कहकर पुकारते हैं, तो मुझे बड़ा संकोच होता है; बल्कि आप जब मेरे गुरु (कमल की ओर इशारा करके) तक को 'तुम' कहकर पुकारते हैं, तो मैंने ही कौन-सा अपराध किया है ?'

'अपराध तो मेरा ही समझिए—किन्तु फिर क्या कहकर पुकारूं आपको ?'

'मेरा नाम है 'कमला', और 'आप' की जगह 'तुम' का प्रयोग !'

मैंने हंसकर कहा, 'नाम तो आपका खैर मुझे मालूम है, पर 'आप' की जगह 'तुम' का प्रयोग—मालिक नहीं, तो भी शब्दों का व्यवसायी तो मैं हूं ही !—अभी फिलहाल 'आप' की जगह 'तुम' का प्रयोग आपके लिए मुझसे नहीं हो सकेगा।'

कमल ने कहा, 'फिलहाल—यानी क्या ?'

'भाई ! 'आप' और 'तुम' में परिचय तथा सम्बन्ध की प्रगाढ़ता का अन्तर रहता है, यह तो तुम जानते ही हो।'

'जरूर !'

'हमारे समाज में नारी से एकाएक प्रगाढ़ता का दावा नहीं किया जा सकता !'

कमला जी एक क्षण के लिए उदास दिखाई दीं, किन्तु बात बदलने के लिए उन्होंने कहा, 'आप कह रहे थे शब्दों के मालिक की निःस्व हो जाने की बात !'

'यह भी एक उसीका उदाहरण है कमला जी !—जब हम किसीको 'तुम' कहकर पुकारते हैं, तो उसपर अपनी मिल्कियत का आभास देते हैं, चाहे वह उसकी हीनता के कारण हो, अथवा आत्मीयता के कारण ! यदि हीनता के कारण हो, तो हम उस व्यक्ति को पा नहीं सकते, यदि 'आत्मीयता' के कारण हो, तो हमें अपने आपको ही खो देना पड़ता है उसके लिए। दोनों ही दशाओं में निःस्व होना पड़ता है उसको !'

कमल ने मुस्कराते हुए कहा, 'यह तो शब्द के प्रयोग की बात हुई।'

'प्रयोग करने के लिए वस्तु की उपलब्धि तो आवश्यक है ही !—किन्तु मैं दूसरा स्थूल उदाहरण दूंगा ! आविष्कार की दुनियां में नई वस्तु के नामकरण की प्रवृत्ति पर कभी ध्यान दिया है ? आविष्कारक को महत्व देने के लिए उस आविष्कार का नाम ही उसके नाम के आधार पर कर दिया जाता है। जैसे माउण्ट 'एवरेस्ट', किसी एवरेस्ट नामक अंग्रेज व्यक्ति के नाम के आधार पर; आज माउण्ट एवरेस्ट को कौन नहीं जानता, किन्तु उस सर्वेयर एवरेस्ट को कौन जानता है ?—यही नहीं सर्वेयर की कुछ फुटों की सीमित ऊंचाई में एवरेस्ट शब्द की संज्ञा का जो बोध था, वह क्या 'माउण्ट एवरेस्ट' ने छीनकर अपनी अभ्रभेदिनी महानता में नहीं छिपा लिया ?—और सर्वेयर एवरेस्ट ने माउण्ट एवरेस्ट के साथ जोड़कर मानो अपने नाम का पेटेण्ट 'मिल्कियत' सुरक्षित करनी चाही थी।'

'मिल्कियत', 'प्रगाढ़ता', 'घनिष्ठता', 'आत्मीयता' आदि शब्दों को लेकर नारी के मनोवैज्ञानिक जगत में जो एक सूक्ष्म-अव्यक्त-अबूझ छाया-नाटिका चल पड़ी थी उसका भार पलकों पर लेकर थकी हुई—ऊबी हुई-सी कमला ने कहा, 'कहां से कहां, बातों ही बातों में उलझ जाता है आदमी ! खैर, आपको कष्ट दिया।—इसी बीच एक प्रार्थना और कर लूं, यदि आज्ञा दें।'

'आप हुक्म दीजिए।'

हंसकर उन्होंने कहा, 'हमारे स्कूल में यदा-कदा कुछ साहित्यिक-सांस्कृतिक कार्यक्रम हुआ करते हैं। सोचती हूं, यदि कभी आप कुछ समय दें, तो हमारे लिए ज्ञान के साथ ही साथ प्रेरणा का बड़ा अमूल्य अवसर मिल सकेगा। यों आपका बहुमूल्य समय ...'

मैंने हंसकर कहा, 'समय तो अवश्य ही बहुमूल्य होता है, पर मैं एकदम निर्मूल्य हूं—नौकरी से भी इस्तीफा दिए बैठा हूं—एकदम बहुमूल्य हाथी पर बैठे भिखारी के समान—उसका उपयोग भी नहीं जानता, भीख मांगने के लिए वह क्या उपयुक्त वाहन है ? यदि आप उस बहुमूल्य

वस्तु को लेकर किसी समारोह में जोत देंगी, तो मेरा भी कुछ सार्थकता हो जाएगी ! हाथी अपना है, महावत का काम तो कर ही सकूंगा ।'

और उस दिन वे विदा हो गए ।

—सो एकाध बार उनके स्कूल के समारोहों में जाना पड़ा—अवश्य ही सभापति की हैसियत से! परिचय दिया था कमला जी ने स्वयं, और जैसा परिचय उन्होंने दिया था, उसके लिए मुझे उनका अनुगृहीत ही होना चाहिए । उनकी कृपा से मैं नगर के महिला-विभाग में भी ख्याति प्राप्त करने लगा ।

उस बार पड़ गया एकाएक बीमार, वही मलेरिया—एक दिन तो चिन्ता न की और बिस्तर पर लेटा रहा, किन्तु दूसरे दिन बुखार की तेज़ी बढ़ गई, तो नौकर को डॉक्टर के लिए भेजना पड़ा । उधर स्थानीय साप्ताहिक के सम्पादक जी किसी लेख के लिए आ बैठे । बीमारी की बात सुनकर चिन्ता तो प्रकट की ही, साथ ही में भले आदमी ने एक कॉलम में इस खबर को प्रकाशित भी कर दिया । गत सप्ताह आगामी अंक के प्रस्तावित लेखकों में मेरा नाम भी था, अतः मेरे लेख के अभाव के लिए क्षमा-प्रार्थना करना उनके लिए आवश्यक था । जिस दिन पत्र प्रकाशित हुआ, उसी दिन संध्या को श्रीमती कमला नटनागर केवल दादू को लेकर आ उपस्थित हुईं ।

मैं लेटा हुआ कोई पुस्तक देख रहा था । आते ही कहा, 'वाह ! आप बीमार हैं, और खबर भी न दी ?'

मुंह फेरकर किताब छाती पर रखते हुए मैं बोला, 'कौन ? कमला जी! आइए, आइए !—आखिर मैं बीमार हूं, यह कहा किसने आपको ?'

'सो तो आपकी शकल ही कह रही है ।'

'लेकिन देखने के बाद ही तो ! मेरा मतलब है देखने की प्रेरणा से ! बैठिए न। नौकर इस समय घर चला गया है। कुर्सी वह रखी है । दिन भर ही तो बेचारा यहीं पिस रहा था । जब खाना बनाने की बेगार

नहीं है तो उसे आराम ही क्यों न करने दूं।'

कुर्सी मेरे पलंग के पास ही खींचकर बैठते हुए बोलीं—'खाना क्यों नहीं ?'

मैंने पलंग पर तकिए के सहारे बैठते हुए कहा, मुस्करा कर, 'यदि खाने की इच्छा रहती, तो बुखार ही को शरीर में कौन घुसने देता ?'

कमला जी ने एकाएक ही मेरे हाथ को मुट्ठी में लेकर कहा—'देखूं, ऐसा क्या बुखार है ?'···और मेरे सारे शरीर में कांटे उग आए, स्वयं ही उन्होंने इसे लक्ष्य कर लिया। मैंने मुस्कराते हुए कहा—'ठण्ड देकर आया है न।'

—पर हाथ को एक क्षण भर के लिए ही मुट्ठी में रखकर जैसे वे सहम उठीं, और बोलीं—'अरे ! बुखार तो आपको इस समय भी बड़ा तेज़ है।'

'तेज़ हो या मन्द, बुखार है तो बुखार ही ! आखिर हम ओषधि ही का तो उपचार कर सकते हैं, शाम को डॉक्टर ने देखकर कहा था कि एक सौ चार डिग्री है ! मैंने पूछा, मरने के लिए कितने अंश और चाहिएं, तो हंसकर बोले, मौत का क्या है, वह एक सौ पांच या छः तक भी न हो, और हो तो बिल्कुल नार्मल साढ़े सत्तानवे पर भी हो जाए ! सो चिन्ता किस बात की है ?' और मैंने अपना हाथ खींच लिया।

'ओषधि क्या ले रहे हैं आप ?'

'वह देखिए न, उस स्टूल पर रखी है, लाल-लाल-सी, पर इससे आगे उसके नाम-धाम आदि के बारे में विशेष कुछ जानता होऊं सो बात नहीं है।'

'आपने ओषधि ले ली ?'

'ओषधि तो ले ही रहा हूं, चाहे अच्छा होना सम्भव हो या नहीं।'

'वाह ! अच्छे क्यों न होंगे ? ऐसी बात मुंह से नहीं निकालते। डॉक्टर क्या कह रहा है ?'

मैंने मुस्कराकर कहा, 'डॉक्टर क्या कहेगा ? उनकी तो वही नपी-

तुली, रटी-रटाई बातें हैं। पास में किताब पड़ी देखी, तो कह दिया, पढ़ो मत। एक मित्र बैठे थे, कह दिया, अधिक बातचीत न करो—पूरा विश्राम करो। लो पूरा विश्राम ! उस डॉक्टर को क्या यह भी समझाना पड़ेगा कि पूरा विश्राम किस बला का नाम है ? और जब पूरा विश्राम करना ही है तो उसके पहले की चेतना की यह घड़ियां···'

कमला मानो व्यतिव्यस्त हो उठीं, बोलीं—'नहीं, नहीं; आप लेट जाइए। लेट जाइए।' और तब भी जब मैं बैठा ही रहा, तो उन्होंने कुर्सी से उठकर मेरे सिर के पीछे हाथ लगाकर मुझे मानो जबर्दस्ती ही लिटा दिया। मैं शर्म और संकोच से गड़ गया, किन्तु अव्यक्त में एक अभूतपूर्व संतोष की व्याप्ति भी मेरे मन को आपूर्यमान कर गई। उसके बाद ही कमला जी ने मुझे लिहाफ डालकर अच्छी तरह से उढ़ा दिया।

पुनः कुर्सी पर बैठते हुए वे बोलीं, 'नौकर को घर भेजकर आपने अच्छा नहीं किया। अच्छा, कुछ पथ्य—डॉक्टर ने कुछ कहा है ?'

मैंने कहा, 'डाक्टर ने कहा कि सिवा वायु-भक्षण के और कोई वस्तु मुंह में न जाए।'

'नहीं, यह आप मजाक कर रहे हैं ! सच कहिए, साबूदाना या दलिया, बार्ली—मैं अभी बना देती हूं। यों दादू बाहर है, बाजार से भी कुछ मंगाया जा सकता है।'

मैंने कहा, 'डाक्टर ने यदि कुछ गुंजायश रखी होती, तो नौकर ही को क्यों छुट्टी दे देता। आप तो व्यर्थ ही परेशान हो रही हैं।'

'परेशान होने की बात ही है। आप क्या जानें स्त्री का दिल कैसा होता है ? अच्छा घर पर किसीको खबर कर दी है ?'

'घर पर—किसे ?'

'घर पर किसे ? 'आपके घर पर ? आपकी वाइफ, बच्चे वगैरा···'

मैं उस अवस्था में भी हंसे बिना नहीं रह सका ! 'वाइफ़—बच्चे वगैरा, खूब ! आप भी खूब हैं कमला जी।'

'क्यों ? क्या पुरुषों के वाइफ-बच्चे वगैरा नहीं होते ?'

'क्यों नहीं होते—बल्कि एक-एक से अधिक भी। पर मेरे भी यह सब झंझट होगा इसकी खबर आपको किसने दी।'

'झंझट ? आप भी झंझट कहते हैं इसे ?'

'झंझट न सही, सुविधा ही सही ! नाम कोई भी दे लो !'

कमला जी कुछ अप्रतिभ हो गईं, बोलीं, 'क्या आपका विवाह नहीं हुआ ?' और मानो एक ही क्षण में अपनी इस अहेतुक प्रश्न से उठी हुई लज्जा को दबाकर उन्होंने कहा— 'क्षमा कीजिए, व्यक्तिगत बातों में अधिक दिलचस्पी नहीं ली जानी चाहिए ! आपकी मां-बहन···'

मैंने एक क्षण कुछ रुककर कहा 'विवाह भी हुआ था, और मां-बहन भी थीं ही। पर लम्बी कथा है। आज तो सभी को अपने महसूस कर रहा हूं। इसमें शिकवा-शिकायत ही क्या ? यदि ये सब आज यहां होते, तो क्या आपकी यह निःस्वार्थ सहानुभूति कभी मुझे मिल पाती ?'

'फिर भी इस अवस्था में आपकी देख-रेख···'

'ग़ालिब की वह गज़ल नहीं सुनी आपने ?—पड़िए गर बीमार, न हो कोई तीमारदार—और गर मर जाइए, नोहाख्वां कोई न हो।—दिल मुझे ऐसी ही जगह तो ले आया है।'

'आपका जीवन तो रहस्यमय दिखाई देता है। यदि कुछ आपत्ति न हो तो···'

'आपत्ति तो क्या होगी। साहित्यकार का अपने कहने को रहता ही क्या है ? किन्तु कमला जी ! आपको अधिक समय हो गया होगा। आज तो कमल भी साथ नहीं है। वह क्या हुआ ?'

'क्या हुआ ? उन्हें साथ नहीं ला सकी। अखबार में आपके अस्वास्थ्य के हाल पढ़कर रुक न सकी। उन्हें खबर करने का भी धैर्य न रहा।'

'धन्यवाद ! आपको बहुत कष्ट हुआ। सच मानिए, आपके आने से मेरा आधा दुःख गायब हो गया।'

'और आधा ?'

'वह तो सहते ही बनेगा। किताब से कुछ सहायता लेने की चेष्टा करूंगा। यदि भूल सका और नींद लग गई तो गनीमत है, वरना सिर-दर्द तो है।'

'सिर-दर्द !'

'जी ! बुखार में सबसे पहले सत्याग्रह करता है सिर ! इसको मनाना सरल भी नहीं है। पर किया क्या जाए।'

'मैं दबा दूं।'

'अरे वाह ! आप यह कष्ट क्यों करेंगी ? बल्कि आप जाइए, मैं कुछ लेटने ही की चेष्टा करूंगा।'

'नींद आ जाएगी ?'

'यों आती नहीं है, पर प्रयत्न तो इसीके लिए करना पड़ेगा।'

'तो एक काम कीजिए। मैं आपका सिर दबाती हूं, आप सोने का प्रयत्न कीजिए।'

'और यदि मैं सो ही गया तो दरवाज़ा कौन बन्द करेगा।'

कमला लजाकर चुप हो गई, लेकिन उसका वरद हस्त मेरे माथे पर आ जमा और बिना कुछ बोले ही धीरे-धीरे वे उसे सहलाने लगीं।

मेरी आंखें जाने क्यों आंसुओं से गीली हो गईं, जिसे उन्होंने लक्ष्य कर लिया, बोलीं, 'साहस रखिए, अच्छे हो जाएंगे आप।'

'अच्छा तो हूंगा ही कमला जी ! पर किसलिए ?'

'जगत के लिए !—जीवन के लिए !—जीवन और जगत क्या सामान्य-सी बात है ?'

'पर मेरे जैसे का जीवन ?'

'वह जगत का तो है—ऐसे ही जीवनों की इकाइयों से तो जगत बना है।—अच्छा आप सोने का प्रयत्न करें।'

मैंने कहा, 'वह ताला रखा है, बाहर लगा जाइएगा, सवेरे दादू के साथ ताली भेजकर खुलवा दीजिएगा।'

'मैं सब प्रबन्ध कर लूंगी। आप सोइए।'

आधी रात को जब नींद उड़ी तो मेरी तबियत कुछ हल्की हो गई थी। सोचा, दवा की रात्रि की खुराक भी ले लूं। बैठकर टेबल लैम्प का स्विच दबाया ! मेरे आश्चर्य की सीमा न रही, श्रीमती कमला नटनागर पास ही नीचे फर्श पर एक चटाई पर लेटी हुई थीं।

जीवन के ऊपर पीछे नज़र डालने से मैं बचना चाहता हूं, उसकी स्मृति सिवा दुःख के और दे ही क्या सकती है ?—भविष्य को उससे क्या बल मिलता है, यह देखना तो शेष रहता ही है, वर्तमान को हम अवश्य बोझिल बना देते हैं। जिस क्षण में हम रहते हैं, उससे बढ़कर मूल्यवान और कोई क्षण होता हो, यह मैंने कभी नहीं पाया। बीता हुआ क्षण सुख का हो या दुःख का, उसकी गहराई आज हमारे पास नहीं, गहराई का आभास भी आज की अवस्था के मापदण्ड से ही आंकने को रह जाता है।

किन्तु श्रीमती नटनागर के गम्भीर रात्रि के उस व्यापार ने मुझे जीवन में पीछे की ओर देखने को उत्प्रेरित किया ही।—इस कथा में ही क्या, किसी भी कथा में किसी पात्र के साथ मैंने लगाव अनुभव किया हो किन्तु कहीं पर नायक या नायक जैसी ही किसी भूमिका की लब्धि की न मैंने कभी कामना ही की न उसके लिए किसी प्रकार की अपने में योग्यता का ही अनुभव किया। सदैव परदे के पीछे ही रहना चाहा है, आज अनायास ही किसने इस आसन पर मुझे बैठा दिया है ?—जिस दिन मैंने प्रारम्भ में नटनागर की दावत में मिसेज़ कमला नटनागर का दर्शन किया था, उसी दिन से इस रमणी के प्रति कुछ उत्सुकता चाहे जगी हो, पर किसी प्रकार की आसक्ति का मैंने कभी अनुभव नहीं किया, न ही इस उपसर्ग को लेकर मेरे चैतन्य में मैंने किसी ऐसे व्यवहार की अवतारणा की, जिससे दूसरे को मेरे प्रति किसी तरह की आसक्ति का बोध हो !—और फिर एकदम से सामान्य पुरुष मैं ! भाग्य की विडम्बना के सिवा इसे और क्या कहूं ?

उस बात को लगभग पन्द्रह दिन बीतने को आए थे। पीड़ा के

कटीले कगार तक पहुंचकर मैं पुनः जीवन और स्वास्थ्य की हरियाली पर लौट आया था—कह नहीं सकता कि मेरा आयुर्बल मुझे खींच लाया या किसी नारी के कल्याण-कामी वरद-हस्त का चन्दन-विनिंदित अनवरत शीतल स्पर्श, किन्तु अब मैं स्वस्थ था।

संध्या घनी होती जा रही थी। शुभ आकाश में पूर्व की ओर शुक्ल-पक्ष का चांद अभी दूध में नहाया न था, पश्चिम में एकवसना संध्या की साड़ी खिची जा रही थी, मध्य आकाश में नीड़ को लौटते हुए पक्षियों के फैले हुए पंखों के बीच कहीं-कहीं एकाध नक्षत्र बुझ-बुझकर चमक उठता था।

मकान की छत पर कपड़े की आरामकुर्सी पर पड़ा हुआ मैं इन्हीं नक्षत्रों को गिन रहा था, किन्तु गिनती पूरी नहीं हो पा रही थी, जहां भी दृष्टि को निविष्ट करता वहीं पर कुछ झिलमिल करने लग जाता, दृष्टि-दोष को मिटाने के लिए वहां से दृष्टि हटाते ही फिर उसी स्थान को पाना सम्भव नहीं है—समुद्र में एक स्थान पर जल का स्पर्श करके दुबारा उसी स्थान का स्पर्श करना कभी निश्चित नहीं हो सकता—और किसी भी दूसरे स्थान पर देखने से उसी दोष की सम्भावना हो जाती! तब भी इस खेल में काफी आनन्द था। तारों की संख्या जैसे-जैसे बढ़ती जाती, मन में उस अनन्त सीमाहीन के विस्तार की कल्पना सजग होती जाती, हृदय उछलने लगता, ये समस्त पार्थिव सम्बन्ध विस्मृति के किसी गहरे अन्धकार में छिप जाते, और समस्त स्थूल शरीर सूक्ष्म मन के निराकारशून्य में सिमिटकर ऊपर-ऊपर अनन्त की अगम्य-अकल्प्य ऊंचाइयों को छूने लग जाता। चांद की शुभ्र चांदनी घन-नीलिमा के आंचल का एक काढ़ा हुआ फूल मात्र बनकर प्रतीत होती, और उस अन्त-हीन दिगन्त के सितारों जड़े नीलाभ नयन में यह ब्रह्माण्ड एक अश्रु की व्याप्ति लेकर मानो लुढ़क पड़ना चाहता!

—कि किसीने पीछे से आकर इस इन्द्रजाल की प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रस्तोता मेरी शीर्षा आंखों पर अपनी कोमल हथेलियां ढंक दीं। स्वप्न-

भंग हो गया, कविता अधूरी रह गई। किन्तु जब टटोलकर, हाथों को पहचानने का प्रयत्न किया, तो हृदय में एक दूसरी कविता का स्फुरण हो आना स्वाभाविक था। रस-परिपाक के लिए पहचानकर भी नहीं पहचान सका।

'मालूम पड़ता है, किसी गहरी कल्पना में खोए हुए हैं।'—और घूमकर सामने श्रीमती कमला नटनागर आ उपस्थित हुईं।

मैंने कहा, 'अरे आप ?'

'फिर वही आप ?'—पास पड़ी हुई एक कुरसी उसने खींचकर दखल कर ली !

इसी बीच 'तुम' और 'आप' का व्यवधान समाप्त हो चुका था। मरणान्तक पीड़ा के समुद्र से उबारने वाले के प्रति प्राणों का समर्पण ही नहीं, आत्मा का समर्पण भी करना ही पड़ता है। मैंने हंसकर कहा, 'परिचय की घनिष्ठता की अवधि की अपेक्षा परिचय की दूरी का समय भी तो अभी तक बलवत्तर है।'

कमला ने कुर्सी और पास खींच ली, 'लेकिन मैं ऐसा नहीं समझती।'

'क्या समझती हो फिर ?'

'तुम हो कवि, लेखक, साहित्यकार।—नहीं जानते कि घनिष्ठता का एक क्षण इतना ठोस, कठोर होता है कि अपरिचय के युगों के युग उसमें सिमटकर समाहित हो सकते हैं ?'

'सुनता तो हूं, किन्तु इसकी प्रतीति तो कभी हुई नहीं !'

'कभी नहीं हुई ?'—और वह खिलखिलाकर हंस पड़ी। दोनों हाथ उसने कुर्सी के पटिए पर रख दिए और पृष्ठ भाग का सहारा लेकर चेहरे को ऊपर आकाश की ओर करके वह उछल पड़ी। तभी उसकी रूप-सज्जा पर ध्यान चला गया अकस्मात् ही।

संध्या का झुटपुटा फैल रहा था, पर उधर दुग्ध-धवल चन्द्रमा अपनी श्री विकीर्ण करने लग गया था। छत पर शुभ्र चांदनी अलस भाव से फैली पड़ी थी, मन्द्र वायु मानो उसके शरीर को अपनी बाहुओं में भर-

कर गुदगुदा रहा था। ठीक आंखों के सामने कमला अपने सहज रूप और वैभव में बैठी हुई उस अनिन्द्य उत्फुल्लता में मेरी आंखों में रूप का एक अभूतपूर्व समारोह सजा रही थी, इसे मैं उसकी सज्जा की अपेक्षा अपनी आंखों ही का कसूर कहूंगा।

महीन सूत की एक सफेद साड़ी, चौड़े गले का सफेद कसा हुआ ब्लाउज़, जिसके भीतर की शरीर से चिपकी हुई अंगिया इस शीतल पाण्डु प्रकाश में भी आभासित हो रही थी।

सिर के बाल बीच से विभाजित पीछे एक जूड़े में बांधे हुए थे, जिसके चारों ओर सफेद केवड़े का गजरा गूंथा हुआ था, रह-रहकर जिससे भीनी-भीनी मीठी सुगंध नासा-रन्ध्र पर आघात कर रही थी। शरीर पहले से काफी भरा हुआ था, सुन्दर स्वास्थ्य और निश्चितता से रंग में भी काफ़ी निखार आ गया था, जिससे कि अब उसे सांवले की अपेक्षा गौर रंग कहना ही अधिक समीचीन मालूम होता है, परिचय के पहले ही दिन उसके चेहरे पर जो सूक्ष्म रोमावलि दिखाई दी थी, वह अब नहीं दिखाई देती, बैठे हुए कपोल अब भर गए हैं, इससे अधरों के बीच पहले जिस दंतपंक्ति के बड़े होने का भ्रम होता था, वह अब काफी सुन्दर और सुडौल दिखाई देती है। उस समय के सूखे-से ओठ अब रस-प्रपुष्ट द्राक्षा-पंक्ति से प्रतीत होते थे, पतली-सीधी नोक पर उठी हुई नाक देखने वाले की दृष्टि को मानो आंखों से लड़ जाने से रोक रही थी—और इन सबसे ऊपर थी वे भावमयी अगाध आंखें, जिनकी बरौनियों से आवेष्टित कज्जल-पंक-तट-भूमि पर किसी नयनात्पर सजल बोध की तरंगें क्षण-क्षण में उठती-गिरती, निश्चेष्ट समर्पण में अपने आपको प्रणिपात करती हुई किसी अलक्ष्य-अव्यक्त भाव को अनुरंजित कर रही थीं। घनीभूत चन्द्रिका-स्नात संध्या की इस निविड़ सरसी में, चाहे वे रमणी की आंखें ही क्यों न हो, किसी एक का एकाधिकार महत्तत्व की इस सीमाभूमि में किसी युक्ति को स्पर्श नहीं कर पा रहा था!—उसकी शीतलता में केवल एक ही व्यक्ति का साझा हो, और शेष में वह समस्त

शीतलता, जो सारे संसार के ताप का शमन कर सकती है, व्यर्थ हो जाए, इतनी बड़ी स्वार्थपरता की कल्पना समाज के किस निठल्ले ने कर डाली, उसके ऊपर रोष ही होना उचित है।

प्रश्न के उत्तर में मेरा केवल इस प्रकार ताकना शायद वह सह न सकी, और कह उठी, 'मेरी ओर इस तरह घूर क्या रहे हो ?'

'रूप के इस उत्सव को आंखों के सामने पाकर भी, क्या चाहती हो, आंखें बन्द कर लूं ?'

साड़ी के पल्ले को हाथ से सम्हालते हुए, आंखों को आधा बन्द करके, तथा सीने को थोड़ा उभार देते हुए उसने कहा, 'चलो हटो !'—और उस रात्रि के ढंके हुए प्रकाश में भी देखा गया कि कमला के गालों पर लाली दौड़ गई। मैं मुस्कराकर रह गया।

फिर उसने अपनी दोनों हथेलियों को परस्पर गूंथकर घुटनों को आवेष्टित करके कहा :

'पुरुष सभी एक ही तरह के होते हैं, कवि हो, लेखक हो, या विचारक हो—उनमें आपस में विशेष कोई अन्तर नहीं होता।'

'कैसे ?—समझाकर कहो।'

'यही, किसी नारी को देखा और पागल हो गए !'

'तो मंजूर करती हो कि वह पागल कर देती है, कर सकती है !—तब फिर मैं ही कसूरवार क्यों हूं ?'

'इसलिए कि तुम तो एक बहुत बड़े चिन्तक होने का भी दावा करते हो !'

'ऐसा दावा मैंने कभी किया, याद तो नहीं पड़ता ! किन्तु फिर भी सौंदर्य देखने की वस्तु ही तो है—क्या इसके लिए भी किसीको पागल कहलवाना होगा ?' मैं कुछ गंभीर हो उठा।

'नहीं—पर नाराज़ क्यों होते हो ?—अभी तुमने नहीं कहा था कि सुख के क्षणों को ठोस होने की तुम्हें कभी प्रतीति ही नहीं हुई ?'

'सो क्या मिथ्या कहा था ?'

'अवश्य—इस बात को तुम नहीं समझते, इसे मैं कदापि नहीं मानती। मैंने तुम्हारी रचनाएं पढ़ी हैं। अनुभूति की तीव्रता के अभाव में ऐसी प्रौढ़ अभिव्यक्ति हो ही नहीं सकती।'

'पर उस सम्बन्ध में इससे तुम्हारा निष्कर्ष क्या निकला, सो तो मैं अब भी नहीं समझा।'

कमला ने एक क्षण के लिए आंखें नीची कर लीं, मालूम दिया, मानो अपनी कुर्सी पर वह एकाएक निरवलम्ब होकर शिथिल हो गई है, उसने उसी दृष्टि से धीरे-धीरे कहा :

'तुम तो जानते हो, पुरुष की भांति नारी भी पुरुष की मोहिनी में अवश हो जाती है। निमंत्रण कभी एकतरफा नहीं होता, किन्तु जो कोमल है उसे लज्जा की ढाल रखनी पड़ती है, शायद प्रकृति ने ही उसे रक्षा का यह साधन थमा दिया है!—अगर ऐसी ही मादक चांदनी रात हो, नीले निभृत आकाश के नीचे केवल दो प्राणियों का मुक्त स्वच्छन्द स्पन्दन मनोराज्य की समस्त प्राणवायु का नियंत्रण करता हो, तो क्या उस रमणीय क्षण की प्रतीति का लोभ नहीं जाग उठता। गोद में पड़ी हुई मुक्त कुन्तला नारी का सुरभित स्पंदन, पुरुष के धड़कते हुए हृदय की दीवार से लगे हुए उसके कान, और अधरों पर अधरों का स्पर्श—' और दूसरे ही क्षण तनकर कुर्सी पर बैठते हुए वह एकाएक ही खिलखिलाकर हंस पड़ी और बोली—'कहोगे, यह कविता किसी प्यासे मन की निर्लज्जता के अलावा क्या होगी!—पर सच कहो—क्या ऐसी अनुभूति तुम्हारे जीवन में कभी नहीं हुई?'

एक लम्बी सांस लेकर मैंने कमला की ओर देखा—आंखों में वही लालसादग्ध शिथिल मूक आह्वान, अधरों पर प्यास—और जैसे ही मैं आंखें निवारित करना चाहता था, पहली बार मैंने लक्ष्य किया कि चौड़े गले की ब्लाउज का ऊपर का हिस्सा, स्कन्ध पर से साड़ी के नीचे खिसक पड़ने के कारण अनावृत हो चुका है, जिसका कदाचित कमला को ध्यान ही नहीं है। अंगिया के कसे हुए बंधन में भी उनकी उन्नतोदर सीमा

साफ परिलक्षित हो रही है, बल्कि कसे हुए होने के कारण मुंहज़ोर घोड़े की तरह उनका उभार शायद बढ़ गया है, उनके ऊपर ब्लाउज़ का साम्राज्य है, किन्तु मानो दुर्दान्त दस्यु की तरह दर्शक का मन चुराकर वे इस राज्य के नियंत्रण से निकल भागना चाहते हैं, उन्मुक्त निर्बाध शासनहीन शरीर की मूल-भूमि में !—और दोनों के बीच की गहरी उपत्यका में यदि दर्शक का मन-माणिक छिपा दिया जाए तो किसीको पता भी नहीं लगेगा !

एक ही क्षण में यह सब कुछ मैंने देख लिया, और दूर दिगन्तहीन रात्रि की नीलिमा में आंखें गड़ाकर मैंने कहा—एक लम्बी सांस भी साथ ही मेरे मुंह से निकल गई—

'शब्दों की प्रतीति मुझे हो सकती है—किन्तु प्रकृत अनुभूति से मेरा परिचय शायद नहीं ही है।'

'लेकिन तुमने तो कहा था, कि विवाह हुआ था ?'

'तुम भाग्यवान हो, और भाग्यवान हैं नटनागर, किन्तु तुम्हें यह भी जान रखना चाहिए कि विवाह हो जाने मात्र से सुख की अनुभूति से परिचय नहीं हो जाता !'

कमला का उत्साह मन्द पड़ता दिखाई दिया, किन्तु एक क्षण के लिए ही, और वह बोली—'हमारे भाग्य की कथा यदि सुनोगे तो सुनाऊंगी किसी दिन, किन्तु अपने बारे में क्या कभी कुछ सुनाओगे नहीं ?'

'सुनाने लायक है ही क्या कमला ?—आज तो वह सब कुछ याद भी नहीं है !—उस सबसे एक सबक सीखा था, वही याद है, और उसीको याद रखना चाहता हूं।'

'वह क्या ?'

'वह भी सुन लेना चाहती हो ?—बहुत बड़ा सबक नहीं है, किन्तु मेरे जीवन का तो वही भाष्य है !—वह सबक है, अभिनेता बनने की अपेक्षा दर्शक बनना बहुत सुखकर है ! लेकिन दर्शक बनना सरल नहीं

है, बहुत कठिन है वह।'

'कैसे ?'

'आसक्ति का परित्याग किए बिना कोई दर्शक—सच्चा दर्शक नहीं हो सकता। व्यक्ति का 'ईगो', उसका अहम् उसे चुप बैठने कहां देता है ?—अभिनेता ही नहीं, वह तो नायक, महा नायक तक की भूमिका खेल जाना चाहता है। पाता कुछ न हो, यह बात नहीं है; पर कीमत भी उसे कम नहीं चुकानी पड़ती ! उसके अहम् को तृप्ति तो कभी मिलती ही नहीं, सफलाओं को वह सरलता से भूल जाता है, और असफलताओं की वितृष्णा में उसे प्राचीन सफलताओं के संतोष का पता ही नहीं मिलता !—अभिनेता बनने में दुःख के सिवा और कुछ मिलता हो, यह तो देखा नहीं गया।'

'तब फिर लोग अभिनेता बनते क्यों हैं ?'

'अपने अहम् की बेगार ढोने के लिए !—इसीलिए वह शादी करता है, ब्याह करता है, बाप बनता है, नौकरी करता है, स्वामी बनता है, पैसा कमाता है, स्वार्थ-परमार्थ-अनर्थ सभी कुछ करता है। चलता रहता है आंखें बन्द करके तेली के बैल की तरह, और जब यात्रा के अन्त में, जीवन की संध्या में जूआ उतारे जाने पर आंख खोलकर देखता है तो पाता है कि वह है वहीं पर जहां से चला था—और रास्ते भर कितनी ठोकरें, कितने चाबुक, कितने मान-अपमान वह सहता रहा है !—किसलिए ?'

'किन्तु सभी यदि तुम्हारी तरह हो जाएं ?'

'हो नहीं सकते, यह मैं जानता हूं—प्रकृति के साथ बिना कड़ा संघर्ष ठाने यह सुविधा प्राप्त नहीं हो सकती—और भी साधना करनी पड़ती है, दुनियां के दुःख-सुख, राग-द्वेष, यश-अपयश, लाभ-हानि सभी में एक अनासक्त भाव को संजोए रखना पड़ता है।'

'यानी हिमालय की निर्जन कन्दरा में जाकर तपस्या करना ?'

'पता नहीं, उस तपस्या में क्या मिलता है, क्या मिलने के लिए वह

तपस्या की जाती है। कहते हैं, शायद अपने को पाने की ही उनकी चेष्टा रहती है—जो ईश्वर को पाना चाहते हैं, वे निज को शायद उसीका रूप समझकर, उसीकी व्याप्ति में खो जाना चाहते हैं, मैं उस साधना की बात अभी नहीं सोच पाया हूं, किन्तु तब भी मैं सोचता हूं उस पाने की अपेक्षा इस तरह अपने आपको समग्र रूप से खो देना क्या अधिक अच्छा नहीं है ?—ईश्वर है तो हुआ करे, जब मैं हो न रहूं तो मुझे क्या चिन्ता है, कि मैं ईश्वरमय होता हूं, या शैतानमय।—मेरे न रहने पर मैं तो यह भी चिन्ता नहीं करूंगा कि ईश्वर है या नहीं।'

पता नहीं किस आवेश में आकर मैं अपना वह सब दर्शन उस समय उस लड़की के सामने बघार गया। शायद यह मेरे मन की प्रतिक्रिया थी। आज जब सोचता हूं तो अपने ऊपर मुझे क्रोध ही आता है। न जाने किस भावना से कमला उस निविड़ संध्या में मेरी स्वास्थ्य-कामना का उपलक्ष्य लेकर मेरे सामने बैठी थी। जैसा भी हो मेरा अतीत, नारी ने मुझे कभी प्रतारणा तो नहीं दी थी। सुख न दिया हो, यह आखिर मेरी ही तो शिकायत है।—सुख होने ही से तो काम नहीं चल जाता, उसे पाने की पात्रता भी तो हो। बिना पात्र के कुएं से पानी कैसे निकाला जा सकता है। तब फिर जो मैं उसे अपना यह सारा अनबूझ दर्शन सुना गया, सो ही क्या मेरे 'अहम्' का एक प्रकार का प्रदर्शन नहीं है ?—और चाहता था कि मैं केवल 'दर्शक' मात्र रहूं—कर्ता दर किनार, कर्म भी नहीं—केवल मात्र अपादान, बहुत हुआ तो सम्बोधन !

किन्तु कमला कुछ क्षण स्थिर नीरव बैठी रही, शायद मेरे वक्तव्य को तोलना-समझना चाह रही थी, पर शायद मेरी प्रतिक्रिया का कारण तलाश कर रही थी—और मैं उसी झोंक में बहकता चला गया···

'दर्शक होना भी सरल नहीं है, कहा न मैंने !—पहले तो मन की अनासक्ति, यानी केवल टुकर-टुकर देखना, उपयोग का समस्त लोभ छोड़कर—बहती गंगा में सभी सुविधा के साथ हाथ धो रहे हैं देखकर भी तट पर बैठे रहना, निष्क्रिय, निर्विकार !—फिर सुविधा—कितनी

बड़ी है यह दुनियां, कितने प्राणी भरे हुए हैं इसमें। केवल मनुष्यों ही को लिया जाए, तो कोई दो मनुष्य एक जैसे नहीं !—और यह वैविध्य भी कितनी-सी सीमा में ?—वही दो आंख, दो कान, एक नाक, दो ओठों के बीच दांतों की पंक्ति, दो हाथ, दो पैर—और अधिक से अधिक लम्बाई आठ फुट। फिर भी कहीं समानता नहीं; सबका व्यक्तित्व जुदा, सबके नाम अलग, सबकी पहचान अपनी निज की !—सब अपनी-अपनी परिस्थितियों, समस्याओं में व्यस्त, समस्या के समान होने पर भी हल जुदा—पर इन सबका दर्शक होना, तटस्थ दर्शक होना आनन्ददायक तो है, किन्तु सुविधाजनक नहीं। देश-देशान्तरों, नगर-प्रान्तर, वन-उपवन-जल-स्थल-नभ, गिरि-कन्दरा सब ओर इच्छानुसार घूमने की सुविधा हो, वायु के समान सर्वत्र प्रवेश का अधिकार हो, पेट की चिन्ता से मुक्ति —कहां हैं ये सब मानव के भाग्य में ?—इसीलिए मैं लेखक हूं, अपनी इच्छा से भांति-भांति के पात्र गढ़ता हूं—विभिन्न परिस्थितियों के वात्याचक्र में फेंककर तमाशा देखता हूं, छोड़ देता हूं उन्हें अपने तौर पर हाथ-पैर हिलाने के लिए मुक्त !—उनके सुख में हंसता हूं, उनके दुःख में रोता हूं—पर रुकता कहीं नहीं—उनसे काम हुआ, कि आगे बढ़ चलता हूं अपना पीछे का सबकुछ वहीं छोड़कर। फिर नई अनुभूति, नई समस्या, नया हल, नये राग-द्वेष—किन्तु···'

देखा कि कमला तब भी भावावेश में अचेत-सी मेरी ओर देख रही है, अकस्मात् ही मुझे धक्का लगा—क्या कमला मुझे पागल तो नहीं समझ रही है ?—मैं एकदम रुक गया !

कमला ने मानो निन्दा से चौंककर कहा—'कहिए, रुक क्यों गए ?'

मैंने हंसकर कहा, 'वाह ! इतने ही में मैं 'आप' हो गया ?'

एक लम्बी सांस लेकर कमला ने कहा, और तभी वह कुर्सी पर से उठकर मानो बैठने की अपनी थकावट दूर करना चाहती थी, इसलिए थोड़ी चहल-कदमी भी करने लगी। मैंने उठने की चेष्टा नहीं की।

'मेरी धृष्टता के सिवा और क्या कहा जा सकता है इसे !—कहां आप, और कहां मैं !'

मैंने कहा, 'यदि तुम्हें मुझसे बात करना हो कमला, तो मैं कभी इस 'आप' को बीच में न आने दूंगा।'

कमला मेरी कुर्सी का पृष्ठ पकड़कर खड़ी हो गई, और मुस्कराकर बोली—'अधिकार तो दे रहे हो, पर अधिकार को पाने की पात्रता भी तो होती है। फिर तुम ठहरे दर्शकमात्र, कहीं रुकोगे नहीं; आंखें बन्द कीं और चल दिए ! फिर इस 'आप' या 'तुम' का अन्तर ही क्या किसी को बांध सकता है ?'

'किन्तु मेरे शरीर को तो मृत्यु के मुख से लौटा लाकर तुमने बांध ही लिया है कमला !'

'नारी की भूख क्या इस शरीर इतनी ही है ?'

'सो तो मैंने कभी कहा नहीं !····'

'तुम लेखक हो—किन्तु अभिधा और व्यंजना के अन्तर को मैं भी समझती हूं !'

'पर मैंने यह तो कभी नहीं कहा, कि मेरे शरीर पर मेरे मन का अंकुश नहीं है !···'

—कमला एकाएक ही मेरे पैरों को पकड़कर बैठ गई, और मैं उसका मन्तव्य समझकर उसे निवारण करूं उसके पहले ही बोल उठी—'तो मैं जी गई मेरे देवता···'

'यह—यह क्या ?'—और मैंने उसे उसकी मांसल और गौर बाहुओं से पकड़कर उठाने का प्रयत्न किया।

वह बोली—'आसक्ति के किसी भाव से बांधकर तुम्हें छोटा नहीं करूंगी—तुम बंध ही नहीं सकते ! किन्तु इस दुनियां में मैं अकेली हूं, नितान्त अकेली···'

'अकेली ?—मिस्टर नटनागर···'

'सुनोगे मेरी कथा ?—विवाह तो तुम्हारा भी हुआ था, कहते हो।

फिर तुम क्यों अकेले हो ?'

मैंने उसे उठाकर, कुर्सी पर बिठाते हुए कहा—'मैंने कब कहा बहन, कि मैं अकेला हूं ?'—और स्पष्ट मैंने अनुभव किया कि 'बहन' सम्बोधन मात्र से उसके अंग में एक सिहरन छूट गई,—'मेरे तुम हो, मिस्टर नटनागर हैं, यह है, वह है—सारी दुनियां मेरी है ! मैं हिमालय की निर्जन कन्दरा में कहां हूं ?—मैं हूं इस जगत में, इस इन्द्रधनुषी जीवन के बीच—सबकी तरह क्षुत्पिपासा से त्रस्त, आशा-निराशा से मण्डित, मित्रों के बीच हंसी-मज़ाक में व्यस्त—कहां हूं मैं अकेला ?'

'तुमने मुझे बहन कहा है—तुम्हें अधिकार है कि तुम मेरे जीवन-चरित्र को जानो, उसपर भी यदि तुम्हें मुझसे घृणा न हो, तभी मैं बहन का अधिकार रख सकूंगी।'

'पर मैं तो उसे सुनना नहीं चाहता—मुझे किसीसे घृणा नहीं करनी है।'

'किन्तु वह न्याय तो नहीं होगा।'

'न्याय करने वाला कमला ! मैं ही कौन होता हूं ? मैं ही कौन दूध का धुला हुआ हूं ?—जिसे लम्बी पहाड़ की यात्रा करनी है, यदि वह कभी फिसल जाए, या गढ़े में भी पड़ जाए, तो उसे कोई घृणा करे, इससे अधिक अन्याय की बात क्या हो सकती है !—और खासकर इस दुनिया में जहां एक दूसरे का हाथ पकड़कर सहायता देने की अपेक्षा, धकेलना अधिक उत्तम समझा जाता है, वहां कौन किसका न्याय करेगा ?'

कमला ने फिर एक लम्बी सांस ली और कहा, 'तब भी, सभी तो न्याय करने के लिए तुले बैठे हैं। और इन कौओं की जमात में आलोचना का शिकार होकर यदि कभी हंस का भी आत्मविश्वास खो जाए, और वह अपनी श्वेतता ही को दुर्गुण समझने लगे ?'

'बिल्कुल सम्भव है !—किन्तु तब भी दो बातें तो हमें पहले ही देख लेनी हैं—पहले तो यह कि गुण और दुर्गुण की कसौटी क्या है, और हमारी मान्यता उस कसौटी पर कैसी उतरती है ! बहुमत अवश्य ही एक

कसौटी है, पर भेड़िया धंसान को बहुमत प्राप्त होने पर भी गुण नहीं कहा जा सकता। उस समय बहुमत ही नहीं, बहुकाल का आश्रय भी हमें लेना पड़ेगा !—फिर जब ऐसी कसौटी निश्चित हो जाए, और हमारी मान्यता उसपर खरी उतरे, तो सब आपदाओं-विरोधों के बावजूद उस-पर स्थिर रहने का संकल्प हम में हो—तभी कल्याण की दिशा स्पष्ट हो सकेगी।'

'सो ही तो, इसीलिए तो मैं तुम्हें अपना किस्सा सुनाना चाहती हूं। यह जानती हूं कि जो कुछ मैंने किया, उसके लिए मैं विवश थी, यदि कभी मैंने बुरा किया हो, तो केवल अपना ही, दूसरों का कभी नहीं, फिर भी मन में एक कचोट, एक फांस जो अटकी प्रतीत होती है, जिससे रात को एकाएक गहरी नींद में से मैं उछल पड़ती हूं, वह क्या है ?—क्या वास्तव में मैं बुरी हूं ?—मैं इसीलिए सुनाना चाहती हूं तुम्हें अपनी आत्मकथा—हो सकता है, वह नारी की लज्जा की कहानी हो, पर वह तो उसकी कमज़ोरी है, कमज़ोरी के ऊपर कोई दया न दिखाए तो हंसे क्यों ?—रहे तुम—सो तुम्हारे सामने मुझे लज्जा न होगी ! सुनो तुम उसे, अपने लिए नहीं, मेरे लिए—ताकि मैं कम से कम तुम्हारे सामने तो अपना मस्तक ऊंचा रख सकूं !'

'यदि सोचती हो कि इससे तुम्हें शांति मिलेगी तो सुनाओ, मैं सुनूंगा ! पर नारी की लज्जा, या उसके पतन के किस्सों में मुझे कोई अभिरुचि नहीं है, जो अभिरुचि लेते हैं, उन्हें मैं दया के पात्र समझता हूं कमला ! फिर भी यदि तुम नहीं मानती तो कहो !'

शुक्ल पक्ष की अष्टमी का चांद हमारी बातों के लिए अपेक्षा नहीं कर सका, वह पश्चिम की गोद में चला जाना चाह रहा था। मेरा मुंह उसी ओर था, किन्तु कमला उस ओर पीठ किए बैठी थी—डूबते हुए चांद की ज्योति का प्रसाद भी उसके चेहरे पर न था। धीरे-धीरे वसंती वायु के मन्द-हलके हिलोरों में जूड़े में से एक-एक दो-दो बन-कर निकल उड़ने वाले रुपहले बालों के समान उसके मन की दुविधा भी

धीरे-धीरे समाप्त-सी होने लगी, और वह अपनी कथा कहने लगी, तभी से जब श्री नटनागर के साथ उसका विवाह हुआ था।

प्रारम्भ में कुछ झिझक-सी थी, किन्तु जैसे-जैसे कथा का विकास होता गया, वह अपने आप में मानो खोने लगी, और उसने अपनी समस्त कथा, कैसे वह कमलनयन जोशी, धर्मप्रकाश आदि के संपर्क में आई, किस तरह दादू का निरीह मन उसके प्रभावुक मन को छू गया, किस तरह नटनागर के बौड़म स्वभाव ने उसके निर्मल मन पर आकांक्षाओं की आड़ी-तिरछी रेखाओं के नाना प्रकार के सुन्दर-असुन्दर चित्र बना दिए, किस प्रकार कमल का साहचर्य पाकर उसकी ज्ञान की भूख बढ़ती गई, और अन्त में जाकर उसने बम्बई में अपने प्रसव की कथा, सन्तान-त्याग की कथा, सब अकुतोभयभाव से मुझे सुना दी।

मुझे उसने क्या समझा था, यह कहना कठिन है। नारी का मेरा अधिक प्रत्यक्ष परिचय नहीं है यह मैं स्वीकार करता हूं, जो कुछ है वह दूसरों के अनुभव का उधारमात्र! नारी के प्रति एक आकर्षण अनुभव करता हूं, पर अपने मन का स्वामी होना मैंने सीखना चाहा है, सफलता चाहे न मिली हो, पर प्रयत्न मैंने अवश्य किया है। प्रयत्न करने पर कुछ न मिलता हो, ऐसा मैं नहीं मानता।

—सो यह नारी है, जिसे दान की प्रतिमूर्ति कहा जाता है, जो सदैव देती है, समर्पण करती है, बदले में कुछ नहीं मांगती; कुछ नहीं चाहती। विधाता ने, प्रकृति ने उसके लिए एक विधान रच दिया है कि वह दान ही में अपने को निःस्व कर दे—वह स्वयं प्रकृति का एक मनोहारी रूप—स्रष्टा, सर्जक है, समय पाकर वह ऋतुमती हो, फलवती हो, और अपने दान के भार से भारावनत एक दिन झड़ जाए! देने के लिए दया का प्रवाह उसकी नस-नस में बहता है, दाक्षिण्य, सहानुभूति, स्नेह, और इन सबके ऊपर उन्मत्त मन को बांध लेने वाला शीतल नयनरंजक सौंदर्य—उसके ऐश्वर्य हैं—और इस रमणी ने, इस निर्बल नारी ने क्या नहीं दिया?—जिसने भी इसके आगे हाथ पसारा, निराश नहीं लौटा!—

नटनागर ने क्या नहीं पाया इससे ?—और जब यह किसी दूसरे याचक को निराश नहीं कर सकी, तो वह क्रुद्ध हो गए ?—कमलनयन, धर्मप्रकाश, और अन्त में जाकर जिस संतान के लिए उसने नटनागर का क्रोध सहा, उसीका क्या उसने एक सन्तान-वत्सला पीड़िता मां को दान नहीं दे दिया ?

मैं जानता हूं, मेरे मन का चोर रह-रहकर उठता है, और मुझे कहता है कि शब्दों के धोखे में मत आ बेवकूफ !—कमला ने दिया हो, पर क्या वह देने के ही लिए देना था ?—और यौवन के उच्छृंखल प्रवाह की तटभूमि छोड़कर किसी सूखी घाटी को आप्लावित कर देने के महत्व में, समाज-व्यवस्था की हरी-भरी खेती को अपनी प्रबल बाढ़ में नष्ट-भ्रष्ट कर देना क्या सरलता से भुलाया जा सकता है ? मैं सोच रहा था और कमला कहे चली जा रही थी, तभी मानो उसने मेरे मन के चोर को पकड़ लिया हो, और वह बोली :

'नर और नारी एक दूसरे के पूरक हैं, यह तुमने उस दिन कहा था, कौन किससे श्रेष्ठ है, यह प्रश्न तो तब उठे जब नर एक वस्तु हो और नारी एक अलग !—फिर प्रत्येक नर और प्रत्येक नारी किसी मशीन का स्टैण्डर्ड पुर्जा भी नहीं, कि सब जगह समान रूप से 'फिट' हो जाएगा।—तब भी उनके पारस्परिक संबंधों की चरम सार्थकता तो यही 'फिट' हो जाने ही में है। ठीक फिट न होने की अवस्था में मशीन की गति कुण्ठित हो जाए, संघर्ष पैदा हो, अवरोध बढ़ते जाएं, तो किसे आश्चर्य होगा ?—तब क्या एक ही पुर्जे के व्यक्तित्व को इधर-उधर मनचाहे ढंग से तराशकर, 'फिट' करना ही समाज के पास शेष उपाय है ?—खासकर तब जबकि सभी आकार-प्रकार के कई-कई पुर्जे उसके पास मौजूद हों ?'

'तो क्या तुम प्रयोग की बात कहती हो कमला ?'

'वह कहूं भी तो कौन उसे युक्तिहीन कह देगा ?—पर वह भी नहीं

भैया ! तुम्हारी फिलासफी को मैं नहीं पहुंच पाऊंगी, किन्तु मेरा भी तो एक मन्तव्य है ही ।'

'अवश्य, और मैं उसकी इज्ज़त करूंगा बहन ।'

'सो मैं जानती हूं !—पर···'

'कहो न ।'

सूखी हंसी हंसकर उसने कहा, 'सामान्य मापदण्डों से तो मुझे स्वैर—व्यभिचारिणी—पर-पुरुषगामिनी, वेश्या इन्हीं शब्दों से समाज अभिषिक्त करेगा—कुछ और प्रगतिशील विचारक मनोवैज्ञानिक मेरे स्खलन को जस्टिफाई करने के लिए मेरी वकालत के लिए कहेंगे 'बेचारी इस सोशल आर्डर में—सामाजिक विधान में 'फिट' नहीं हो सकी !'—किन्तु मैं इसे भी अपनी ढाल नहीं बनाऊंगी । मैं यह स्वीकार करती हूं कि नर और नारी एक दूसरे के पूरक हों, पर वह तो व्यक्तित्व का केवल एक ही पहलू है, एकमात्र पहलू नहीं—केवल शरीर सम्बन्धी, सिर्फ बायोलॉजिकल, किन्तु इसके आगे तो हर व्यक्ति का चाहे पुरुष हो या स्त्री, उसका एक निज का व्यक्तित्व है, जो किसी कल विशेष का प्रमापित, स्टैण्डराइज़्ड, पुर्जा नहीं है, जहां पर हर व्यक्ति पुरुष या स्त्री, एक सतह पर अपने-अपने व्यक्तित्व के विकास के लिए समान अधिकारी है ! नहीं क्या ?'

'तुम ठीक कहती हो ।'

'सच तो यह है कि, जो स्टैण्डराइज़्ड है, वह जड़ है, वहां व्यक्तित्व के लिए कोई चुनाव, स्वेच्छा नहीं, वहां वही जड़तापूर्ण 'फिटनेस' समायोजन की अपेक्षा है, निरी भावहीन, यांत्रिक—किन्तु जो कुछ उसके परे है वही है शुद्ध चैतन्य, मनोरम, भावपूर्ण, सतत विकासोन्मुख !—अधिक साफ कहने दो तो कहूंगी कि नर-नारी के बीच का यौन सम्बन्ध एक यांत्रिक, जड़, पाशविक सम्बन्धमात्र है, और समाज इतना जड़, यांत्रिक और पाशविक हो उठा है कि इस सम्बन्ध को ही शाश्वत मानकर व्यक्तित्व के परवर्ती विकास को भुला बैठा है, बल्कि कहना चाहिए,

दूसरे सम्बन्ध की महत्ता को पहले की महत्ता पर बलिदान कर दिया है, जिसे कहते हैं मोहरें लुटें और कोयलों पर कलम।'

अपने मनोराज्य में कमला की एक और नई मूर्ति के दर्शन मुझे हो रहे थे। अब तक प्राचीन मापदण्डों से ही मैं कमला को परखने की चेष्टा कर रहा था, उसकी दीखने वाली उच्छृंखलता को भी मैं औचित्य के दायरे में अपने ही तरीके से देखने की चेष्टा कर रहा था—किन्तु नहीं, उसका स्वयं का एक विवेकपूर्ण, सुस्पष्ट और सशक्त दर्शन है—वह उचित या अनुचित उच्छृंखलता नहीं, किन्तु एक सत्य का विकारहीन अनुभव है।

वह कह रही थी और मैं सुन रहा था, 'फिर भी भैया! जड़ भाव ही सही, कहना चाहिए यौन सम्बन्ध का यह पहलू ही नारी के दुर्ग का सबसे कमज़ोर मोर्चा है; जड़ है, प्रकृति ने इसे स्टैण्डराइज़्ड कर दिया है, इसलिए पुष्ट व्यक्तित्व के बावजूद इस कमज़ोरी से मुक्ति नहीं मिलती। तब एक ही उपाय रह जाता है, कि किसी दृढ़ दुर्गपाल, प्रहरी के हाथों इस भाग का समर्पण कर दिया जाए। शायद कभी प्राचीन काल में समाज की विवाह-संस्था ने इसी उद्देश्य को सिद्ध किया हो! पर यदि प्रहरी ही कमजोर हो तो क्या किया जाए?'

मैंने कहा ज़रा हंसकर, 'उससे स्तीफा लेकर किसी उपयुक्त प्रहरी को नियुक्त कर दिया जाए!'

उसने भी हंसकर कहा, 'यह उपाय है तो—पर समाज इसे स्वीकार कहां करता है?—फिर स्तीफा?—वह तो प्रहरी का पद पाकर मालिक जो हो जाता है।—उसे पदस्थ करना....'

मैंने कहा, 'पुरुषों का समाज स्वीकार नहीं करेगा।'

'मैं अपनी ही बात कहूंगी भैया!—यह जड़ भाव वास्तव में, इस समय तो, व्यक्तित्व की एक बहुत बड़ी बाधा है! मनोविज्ञान की बात, कि सेक्सीय प्रेरणाएं—सेक्सुअल अर्जेस—ही मनुष्य की क्रियात्मकता का उदय है, न भी मानी जाए, तो भी शरीर के साधारण नियम से ही सरलता से

दिखाई दे जाता है कि इस बाधा को पार किए बिना नर और नारी अपने स्वस्थ संबंध के स्तर पर आ ही नहीं पाते, चाहे जितनी सदाचार की शिक्षा दो, पाप-पुण्य का भय दिखाओ, समाज-व्यवस्था के द्वारा दण्ड का विधान करो। व्यक्ति को इस संकीर्ण छोटे दरवाज़े में अपने को नीचा-छोटा करके निकलना ही पड़ता है, किन्तु एक बार इस बाधा को पार किया कि फिर विकास का एक राजमार्ग सामने आ जाता है। मैं नहीं समझती कि इस व्यर्थ की पंगु किन्तु अनिवार्य वस्तु को व्यर्थ का महत्व देकर समाज ने क्या पाया है ?'

'व्यक्ति को भोग-लिप्सा तो मिली है।'

'गरीब अश्वत्थामा की वह कथा नहीं सुनी कि आटा मिले पानी को दूध के भ्रम में पीकर वह उसे ही दूध का शाश्वत आनन्द समझे बैठा था। आज का व्यक्ति भी इतना ही गरीब है; वह दूध के स्वाद को जानता ही नहीं ! मेरा अपराध है भैया, तो इतना ही कि मैंने जीवन के प्राकृत तत्व को पाने की चेष्टा की है।—तुमने अब तक शायद अपने आपको खोने की दिशा में काफी सफलता प्राप्त कर ली हो—तुम्हारी उस शांति के संतोष का अनुभव मैं भी करती हूं। मैंने प्रयत्न किया है दूसरी प्रकार का—अपने आपको पाने का ! नहीं कहती कि मैं उसमें सफल हुई हूं। किन्तु प्रयत्न तो है ही। प्रयत्न का आनन्द तो है ही भैया !'

मैंने जैसे निद्रा से उठकर एक लम्बी सांस लेकर कहा, 'तुम्हारी ही बात सच हो शायद। समाज को तुम एक नई दिशा दे सकोगी या नहीं—किन्तु तुम्हारी स्वयं की तो एक नई दिशा है ही, और देखता हूं कि किसीको उसकी आलोचना करने का अधिकार तो नहीं ही है; आलोचना करने का साहस भी उसे नहीं होना चाहिए।'

'क्यों—क्या यह मेरा व्यक्तिगत मामला है इसलिए ?—पर यह छूट तो मैं नहीं चाहती।'

'इसलिए नहीं कमला !—यह सच है कि समाज तुम्हें विद्रोहिणी कहे !—तुमने समाज के जर्जर संस्कारों को तोड़ फेंकना चाहा है—

समाज के धनी-मानी इसे सहन नहीं करेंगे—आलोचना करने पर उन्हें अपने ही पक्ष की कमज़ोरी दिखाई देगी, इसलिए वे इस मार्ग को पसन्द नहीं करते किन्तु उनके हाथ में चाबुक है, वे सीधे उसीका प्रयोग करते हैं !'

'मै उसकी चिन्ता नहीं करती ।'

'तो तुम्हें सफलता मिलेगी । किन्तु बहन ! एक बात का बड़ा भय लगता है ।'

'क्या ?'

'नारी के समस्त संस्कारों से जूझना—कल्पना करो एक अपरिचित नई जगह में एकाकिनी की, जिसे अपने हाथों अपना मार्ग बनाना होगा, अपने आशा-विश्वासों से जूझना होगा—अपने आशा-विश्वासों से और शर्त यह है कि तुम नारी बनी हो उस भूमि में जहां उसका गठन बिल्कुल भिन्न प्रकार का है; उसकी आकांक्षाएं····'

'ठहरो भाई !—तुम कहना क्या चाहते हो ? साफ कहो न ? नहीं कह सकते ? मैं ही कहती हूं । जिस यौन सम्बन्ध को मैंने बाधा कहा है, 'सुविधा' कहना चाहते हो न तुम उसे ?···' और वह मुस्करा दी—'यह दुर्बल मोर्चा है न—नारी ही का नहीं पुरुष का भी महाशय !—पुरुषवादी समाज में अब तक विजेता पुरुष ही रहा है, इसलिए अपनी दुर्बलता की बात वह बिल्कुल ही भूल बैठा और नारी के उस दुर्बल मोर्चे को लेकर सदैव ही आक्रमणकारी का दम भरता रहा ।—और उसकी क्षुद्रता देखो—वहीं पर उसकी विजय की इतिश्री हो गई ! उस कमज़ोर मोर्चे को हथिया कर बस दरवाज़े पर ही थककर वह बेहोश हो गया—उसके मनोराज्य पर उसने कभी विजय पाने की चेष्टा न की ।···'

'वह भूमिका तुम ग्रहण करना चाहती हो ?'

कमला मुक्त कंठ से हंस पड़ी, 'नहीं, वह हीन, पशु-सुलभ जय-लिप्सा मुझमें नहीं है भाई ! उस जड़ भाव को अंगीकार करके मैं जड़ होना नहीं चाहती । मैं उसे कोई महत्व दूं ही क्यों ?'

'किन्तु उस जड़ भाव का लाभ तो तुम्हें मिलता है। तुम ऐसा सोचती तो हो ही।'—और फिर क्षीण भाव से मुस्कराकर मैंने उसके कंठ-प्रदेश के नीचे के अनावृत भाग पर एक भावपूर्ण दृष्टि निक्षिप्त की। डूबती हुई चांदनी में भी मालूम दिया, कमला को मेरी दृष्टि का तात्पर्य समझ में आ गया और उसने शीघ्र ही साड़ी के पल्ले को उठाकर अपने स्कन्ध पर डाल लिया, पर हंसी नहीं रोक सकी वह, और बोली :

'पर तुम तो मुफ्त ही में मेरे भाई बन गए हो।'

'भाई बनने के लिए इससे अधिक पूंजी की अपेक्षा भी नहीं है क्या ?'

'तुम्हारे पास है ही क्या ?—निःस्व जो हो चुके हो !'

'ठीक तरह से देख लिया है ?'

'यही तो देखा है आज ?'—और फिर मानो किसी दूसरी ओर देखकर उसने कहा, 'संध्या को मेरे मन की स्थिति क्या थी, कहूंगी नहीं ! दादू ने कहा था, बीबी जी, मैं भी चलूं ?···मैंने सोचा, अपने प्रयोग में मुझे अकेली रहना ही रुचता है, और उसे छुट्टी दे आई। पर किसे पता था कि आज की संध्या मेरे प्रयोग की असफलता की सूचक ही नहीं होगी, बल्कि उसे एक नया मोड़ ही मिल जाएगा।'

'क्यों ?···यदि प्रहरी मन के उपयुक्त न हो तो दूसरे को क्यों नहीं नियुक्त कर लेतीं।'

'मन के उपयुक्त न हो; पर अशक्त तो नहीं है। वह दुर्बल मोर्चा इस संरक्षण को पाकर स्वयं जो सशक्त हो उठा है····और सबसे बड़ा संतोष, यह केवल प्रहरी है; अपनी कोई कीमत नहीं मांगता, कोई स्वामित्व नहीं चाहता, सर्वस्वान्त होकर जो आ बैठा है···'

मेरे सारे बदन में कंपकंपी छूट गई, 'पर मैं····'

'हां हां····मैं !····मैं !! मैं !!!····पर डरो मत, मैं तुम्हें घेरूंगी नहीं —तुम्हारे अनासक्त मन को बांधने जैसी शक्ति मुझमें नहीं है, तुम रहोगे केवल मेरे वायवीय मन का आधार—दिगन्तहीन तूफानी समुद्र में

जहाज़ के कोने में पड़ा हुआ एक दृढ़ लंगर, जिसकी आवश्यकता शायद कभी न हो !···पर आधी रात से अधिक हो गई है। सोओगे नहीं ?—बीमारी से उठे हो !'

मैंने उठने की कोई चेष्टा नहीं दिखाई। शायद उसने क्या कहा यही नहीं सुना ! बोला :

'कमला ! एक बात बताओगी ?'

'क्यों नहीं बताऊंगी ?'

'अपनी सन्तान से बिछुड़ते समय क्या तुम्हारे मन में मां बनकर कोई नहीं बोली ?'

कमला हंस दी, बोली, 'यही प्रश्न मैंने भी अपने आप से असंख्य बार किया है।—तुम्हें आश्चर्य होगा, मैंने उस सन्तान का कभी मुंह तक नहीं देखा। फिर भी दो-चार दिनों तक मैं उद्भ्रान्त अवश्य रही थी। दुर्भाग्य से यदि मेरे पति ने मेरे साथ उस सम्बन्ध में असहयोग नहीं किया होता, तो शायद मेरे मातृत्व की भावना का कुछ दूसरी ही दिशा में विकास होता। सम्भव है, मुझे अपने दुर्ग के एक और कमज़ोर मोर्चे की ज़िल्लत उठानी पड़ती। पर परिस्थितियों ने उसे सम्हाल लिया ! और उसके बाद मैं उस बात को एक तरह से भूल ही गई हूं, एक स्वप्न की भ्रान्ति की तरह ही—अच्छा या बुरा स्वप्न !'

'और तुम्हें यह नहीं मालूम कि वह सन्तान अब कहां है, कैसी है ?'

'बिल्कुल नहीं—कभी जानने की इच्छा ही नहीं होने दी। जीवित भी है या मृत, यह भी नहीं जानती।'

'क्या तुम जानती हो कि वह सन्तान किसको दी गई थी ? या यह भी नहीं जानतीं ?'

'तुमसे झूठ नहीं बोलूंगी। अब तक तो मैं एक तरह से इस बात को बिल्कुल ही भूल चुकी थी; पर अब याद पड़ता है, वह कोई रेलवे ही के अधिकारी थे !'

'रेलवे के अधिकारी ?'

'हां !'

'नाम ?'

'नाम तो याद नहीं रहा भाई ! शायद कुमार—या, हां, एक इंजीनियर थे !'

'उन्हें देखा था ?

'देखा था ! वैसे अच्छे ही व्यक्ति थे, बेचारे दुःखित थे तो अपनी पत्नी के कारण—पत्नी एब्नार्मल, हिस्टीरिया से ग्रस्त, अर्ध विक्षिप्त, बिल्कुल नर्वस !—प्रौढ़ावस्था में डिलीवरी का अवसर प्राप्त हो रहा था, और दुर्भाग्य बेचारी का—'स्टिल डिलीवरी' का केस हो गया, उसकी जान बच गई, पर बच्चे को वह नहीं पा सकी।'

'आदमी कैसा था ?' धड़कते मन से मैंने पूछा।

'तब यही ४५-५० की उमर होगी उनकी, साधारण तौर पर सुदर्शन, क्लीन शेव्ड, चेहरा कुछ लम्बा खिचा हुआ, पतले अधर, दांत उनके बीच से कुछ-कुछ दिखाई देते हुए—अपनी उमर जितने लगते न थे। सिर पर चांद, किन्तु खिचड़ी बाल इस तरह कढ़े हुए कि चांद को ढक ले।'

मैंने कहा, 'क्या मिस्टर कपूर तो नहीं ?'

'हां—हां—यही, तुम जानते हो क्या ?'

मेरा दिल जोर से धड़क उठा, एकाएक मैं कोई उत्तर नहीं दे सका।

कमला ने हंसकर कहा, 'तुम जानते भी होगे उन्हें, तो निश्चय जान लो मैं उस लड़के का दावा करने कभी न जाऊंगी।'

मै क्या कहता ! संयोग कहूं इसे या भाग्य कि श्री नटनागर जिस अजात शिशु को प्राणपण से घृणा करना चाहते थे, और जिसके लिए उन्होंने अपनी एकमात्र सभ्य पत्नी तक को खो दिया था, उसीकी माया में एक अपरिचित शिक्षक होकर यों विवश हो जाएंगे ?—कमला से कहूं या नहीं ?—नहीं, अभी नहीं—

कि कमला ने कहा, 'लो, बहुत बातें हो चुकीं। देख रहे हो पूर्व की ओर ?—अगर कुछ हो गया तो भुगतना मुझे ही तो पडेगा। चलो सोओ।' और उसने मेरा हाथ पकड़कर उठा लिया जबर्दस्ती ही।

मैंने उठते हुए कहा, 'अच्छा, यदि कभी अपनी सन्तान को अपने सामने पा जाओ ?'

'तो पहचान नहीं सकूंगी। कभी देखा ही नहीं।' और वह फिर हंस दी।—इतनी अनासक्त, इतनी अहेतुक !—क्या यह नारी है ?—मां है ?

मैंने कहा, 'और यदि कभी परीक्षा लूं ?'

'चुनौती देते हो ?—देखती हूं, तुममें भी कुछ ईर्ष्या घर कर रही है !' और वह फिर हंस दी, निर्बाध-निर्मुक्त, मेघमुक्त चन्द्रमा की तरह !

'ईर्ष्या ही सही !—आखिर मनुष्य ही तो हूं।'

'मनुष्य नहीं, बच्चे हो तुम—और तुम्हें ईर्ष्या मुझसे नहीं, उस बच्चे से है !'—शायद उसने अपनी आंखों के भाव को छिपा लिया, या मैं ही नहीं समझ सका; पर उसने सचमुच ही मेरे हाथ को इस तरह पकड़ लिया, जैसे कोई मां अपने बूढ़े बीमार बच्चे को एहतियात से मना कर सहारा दे रही हो।

१९

किन्तु अब कमलनयन का काम पहले जैसा चलना नहीं चाहता। एक साधारण पी० डबल्यू० आई० के आफिस में साधारण क्लर्क की बिसात ही क्या ?—इसी बीच अकस्मात् उसके पिता का देहांत हो गया, और आ पड़ा उसके कन्धे पर भार उसकी बूढ़ी मां तथा एक सम्प्रदानोत्सुक बहन का। बाप की स्थिति कोई विशेष अच्छी न थी। बेटे से बहुत क

आशाएं थीं, एड़ी-चोटी का पसीना एक करके और किसी तरह आधा पेट भर के उसे बी० ए० तक पढ़ाया था। जब उसे क्लर्क की नौकरी मिल गई, तो उन्होंने अपने परिश्रम को सार्थक भी समझ लिया था, किन्तु कालान्तर में जब देखा कि वही ढाक के तीन पात हैं, तो वे लोग निराशा-ग्रस्त हो गए थे। विवाह की बात भी चली थी, पर लड़के ने जब इन्कार कर दिया, तो वे ही क्या कर सकते थे—फिर आर्थिक सुविधा का भी प्रश्न था ही। लड़का तो फिर भी ठहर सकता है, पर यह लड़की जो उमर के बन्धन को तोड़कर होली की तरह बढ़ती जा रही है, वह तो ठहर नहीं सकती। उसके हाथ तो पीले करने ही पड़ेंगे—इसी चिन्ता में ही मानो बूढ़ा बाप घुल गया। कमल की रूमानी ज़िन्दगी पर पाला पड़ गया। विधवा बूढ़ी मां और जवान कुंवारी बहन, इधर भविष्य की सब आशाओं में हीन छोटी-सी नौकरी! क्या आश्चर्य कि कमलनयन जोशी का मिज़ाज अपनी जगह छोड़ बैठे।

कमला, सतत प्रगतिमान, अनिरुद्ध जल-प्रवाह की भांति शुद्ध, स्वच्छ, अतः अब आज के कमल जैसे स्थिर-जड़ीभूत व्यक्तित्व से उसका मेल बैठना कठिन है। जड़ वस्तु उस प्रवाह को रोकना चाहती है, यदि प्रवाह मार्ग बनाकर निकल भी जाए, तो भी वहां पड़ी वह जड़ वस्तु बहते हुए कचरे को रोककर इकट्ठा करने की प्रवृत्ति को रोक नहीं सकती।

उस दिन सन्ध्या के समय जब कमलनयन जोशी श्रीमती कमला नट-नागर के घर पर आए, तो उन्होंने सोचा था कि कमला घर पर बैठी हुई उन्हींकी प्रतीक्षा कर रही होगी, और चूंकि गत कई दिनों से वे जा नहीं सके हैं, इसलिए उनसे कैफियत तलब की जाएगी। उत्तर में वे क्या-क्या कहेंगे, और फिर किस तरह अपनी शिकायतों का अम्बार लगा देंगे, यह भी वे सोच चुके थे, पर देखा गया कि घर पर घर का मालिक नहीं है, है सिर्फ नौकर दादू।

इसी बीच यह भी कह देना उचित होगा, कि जिस घर पर कमल

आया है, यह वह पहले वाला घर नहीं। कमला भी अब वह पहले वाली नहीं है। उसके उपयुक्त पहले वाला घर हो भी नहीं सकता। यह एक छोटा-मोटा बंगला ही समझिए। हाई स्कूल की प्रधानाध्यापिका जो ठहरीं। स्कूल की सीमा में ही है यह बंगला! छोटा-सा किन्तु सुन्दर—स्कूल के माली द्वारा लगाया हुआ एक छोटा-सा बगीचा चारों ओर—सुरुचिपूर्ण सजाया हुआ। कोई नया अतिथि बिना संभ्रम के न जाता।

किन्तु कमलनयन नये अतिथि नहीं। दादू उन्हें पहचानता है, अतः उन्हें वह ड्राइंग रूम में ले जाकर बैठा आया।

कमल ने पूछा, 'कहां गई हैं?'

'पता नहीं! मगर कह गई हैं, जल्दी ही लौटेंगी!'

कमल बाबू का अधिकार भी दादू समझता है, वह आगे हुक्म की राह देखने लगा, तो कमल ने कहा, 'तब तक चाय ही बना ला एक कप!'

दादू कमल को उसी कमरे में छोड़कर चला गया।

कमरा भी रुचि के साथ सजाया हुआ, दीवारें हलके नीले डिस्टेम्पर से पुती हुईं, प्रवेश-द्वार के साथ ही एक खिड़की, सामने की दीवार में भी उसी तरह एक दरवाज़ा तथा खिड़की, जिनपर दीवार ही के रंग के पर्दे; बगल की दोनों दीवारों से जड़ी हुई दो अलमारियां, जिनमें पुस्तकें सजी हुईं! नीचे फर्श पर सुन्दर कालीन, कोने में एक ऊंचे स्टूल पर फूलों का एक ताज़ा स्तवक, पीतल के पॉलिश किए हुए गमले में सजा हुआ। प्रवेश द्वार के ऊपर महात्मा गांधी का आवक्ष चित्र, दूसरे कोने में वैसे ही एक स्टूल पर बुद्ध की आवक्ष मृण्मूर्ति बाजू की दीवार से अलमारी के साथ सटी हुई एक सेक्रेटेरियट टेबल, जिसपर लिखने का सामान सजा हुआ। कमरे के ठीक बीच में काले कांच की एक गोल टेबल, सामने की ओर सोफा सेट का कोच, बगल में दोनों ओर सेट की शेष कुर्सियां—इसके अलावा भी चार इज़ीचेयर्स—सोफा सेट के पास काले कांच के छोटे स्टूल जिनपर इनेमल की सुन्दर राखदानी! शीर्ष पर बिजली का

पंखा जो इस समय मंथर गति से चल रहा है, और कमरे में प्राण फूंक रहा है ! प्रकाश के लिए दीवार में दोनों ओर दो सुन्दर शेड लगे हुए हैं, जिनसे रोशनी आंखों पर सीधी नहीं पड़ती। टेबल पर एक स्टैण्ड के साथ एक छोटी ट्यूब लाइट लगी हुई है, जिससे लिखते समय काम लिया जा सकता है। इस समय प्रवेश-द्वार के पास वाली हलकी बत्ती जल रही है। कमरे को देखकर उपभोक्ता की सुरुचि की सराहना करने को जी चाहता है।

पर कमल की दृष्टि इस ओर नहीं थी—वह अपने अन्तर में भविष्य को देखना चाह रहा था ! कमला आज काफी ऊंचाई पर चढ़ गई है; क्या इसमें उसका निज का कोई श्रेय नहीं ?—जितना वह बढ़ पाई है, उतना कमल नहीं; किन्तु फिर भी बिना उसकी सहायता के क्या वह इतनी आगे बढ़ सकती थी ? नींव का महत्व तो उसे ही मिलना चाहिए। भले ही नींव नज़र न आए, पर जितना ऊंचा चढ़ना हो, उतनी ही गहरी क्या नींव न होगी ?—फिर उसका त्याग ?—उसीके लिए उसने भविष्य के सब सपने नष्ट नहीं कर दिए ?—उसकी जैसी योग्यता थी ही किन क्लर्कों में ?—स्वयं नटनागर केवल इण्टर पास—यदि चेष्टा करता, तो क्या उनसे कमल बाज़ी नहीं मार ले जाता ?—उसके बाद भी जब उसे क्षेत्रीय कार्यालय में तबदील कर दिया गया, तब भी उसने उन्नति के समस्त दावे छोड़कर जो यहां रहना पसन्द किया, वह किसके लिए ? —यदि वह तब वहां चला जाता तो आज अपर डिविजन की ग्रेड में मिलता !—मां-बाप छोड़े, अभी तक विवाह नहीं किया—सब आखिर क्यों ?···

वही कमला क्या ठाठ से रहती है !—ऐसा शानदार बंगला, मानो सारी रेलवे की जनरल मैनेजर ही हो !—और एक वह है पचपन-तीन-अस्सी की दीवारों में कैद, फटीचर, टूटे हुए कन्धे पर विधवा मां और विवाह के लायक बहन !—क्या यह उचित नहीं है कि कमला अपने ऐश्वर्य में भी कमल को भागीदार बनाए ?—भागीदार न भी बनाए,

तब भी कमला उसे कुछ सहायता अवश्य देगी। आखिर दोनों में इतना गाढ़ा सम्बन्ध रहा है—वे दोनों एक दूसरे को कितना चाहते रहे हैं !—बिना त्याग किए क्या किसीको चाहा जा सकता है ?—कमल ने अपना पार्ट कर दिया, अब कमला की बारी है।

चाहा तो है, पर क्या वह प्रेम भी था ?—सम्बन्ध के उस प्रभात में शायद कमला जानती भी न थी कि कहां चली जा रही है वह ?—फिर कमला की जगह कोई 'एक्स' उस अंधेरे में उसका हाथ पकड़कर खींच ले जाता, तो क्या वह नहीं जाती ?—ऐसे किसी 'एक्स' को वह न जानता हो, तो भी एक धर्मप्रकाश को तो वह जानता ही है। तब उसे कैसे कहे वह कि यह सब कुछ प्रेम के कारण था ?—लेकिन एक बात तो साफ है—धर्मप्रकाश के बाद भी उसका परित्याग न हुआ, और उसने जो त्याग किया है, वह तो है ही।

विवाह वह अब भी कर सकता है, उमर ही वैसी कौन बहुत बड़ी हो गई है ?—उसकी जाति में उस जैसे लड़के मिलते ही कहां हैं ?—पर जाति की लड़कियां····नहीं, वे कमला जैसी नहीं होतीं—प्रारम्भ में कमला भी ऐसी नहीं थी, पर अब एक और कच्चे मसाले से मूर्ति गढ़ने का धैर्य और सामर्थ्य कमल में नहीं है। अब वह विवाह करेगा, तो कमला जैसी गढ़ी-गढाई मूर्ति ही से करेगा। और लड़कियां उसे मिल जाएंगी। ऐसा बुरा भी तो वह नहीं है। यदि संकल्प वह कर ही ले तो अब भी अपना भविष्य बना सकता है।—कमला भी तब उसे देखेगी—किन्तु—नहीं-नहीं, अभी तो उसे बहन के विवाह की बात सोचनी है, बहन के विवाह की—नहीं तो उसकी दुखिया मां को चैन नहीं मिलेगी। किसी तरह इस दायित्व से छुटकारा पा ही लेना है।

लड़का है ही, बात केवल रुपयों की है ! मां भी क्या सोचे बैठी थी कि मैं इतने दिनों से टनों पैसा इकट्ठा करता रहा हूं !—कुछ नहीं तो भी चार-पांच सौ तो पिता के श्राद्ध में ही श्राद्ध हो गए !—वह भी क्रेडिट सोसाइटी से उधार मिल गया, आखिर इतना पैसा प्रॉविडेण्ट फंड

में मिल ही जाएगा !—पर अब ?

इन्हीं चिन्ताओं से व्यस्त था कि पीछे से आवाज़ आई, 'कौन कमल बाबू ? माफ करना भाई !—कब से बैठे हो ?'

'तुम्हारी बला से !—शाम से बैठा हूं, साढ़े छः से, गई कहां थीं ?'

कमला ने हाथ का बैग राइटिंग टेबल पर फेंककर कहा, 'तुम तो हो गए हो अब ईद के चांद। कितने दिनों से खबर ली है ?'—और वह बिजली के पंखे को थोड़ा तेज़ करके कमल के सोफे के बाजू पर ही बैठ गई—'क्या नाराज हो गए ?—कुछ सुस्त भी दिखाई देते हो !'

कमल ने मुस्कराकर कमला की आंखों में आंखें गड़ाकर कहा, 'उस दिन कहा तो था मां और बहन आ गई हैं; घर से निकलना अब उतना आसान कहां रहा ?—फिर दिन भर उनका वही रोना, बहन क्या हुई, आफत हो गई !'

कमला ने हंसकर कहा, 'लड़की होते तो मालूम पड़ता।'

'तुम भी तो हो !—कहां से लौट रही हो ?'

'क्या बताऊं।—अकेले तबीयत ही नहीं लग रही थी, ज़रा पिक्चर चली गई थी।'

'वहां दुकेला कौन हो गया।'

'दुकेला क्यों ?—वहां तो कई थे।—तो बहन को अगर आफत समझते हो, तो पीले क्यों नहीं कर देते उसके हाथ ?'

कमल अपनी आफत की बात भूल ही गया। कमला के पूर्वार्द्ध से ही सूत्र पकड़कर उसने कहा :

'तुम तो कभी अकेली जाती नहीं हो ?'

'सो अकेली थी कहां ?—कह तो रही हूं—पर्दे पर, जिन्हें देखने गई थी, वे भी कई थे और उन्हें देखने वालों का भी अभाव नहीं था।' स्पष्ट ही कमला साफ कहना नहीं चाहती थी।

कमल ने कुछ खीझते हुए-से कहा, 'कोई नया दोस्त फांसा है क्या ?'

कमला कुछ चौंक उठी, नाराज़ भी हुई, बोली, 'तुम्हारा मतलब ?'

कमल सम्हल गया, उससे सचमुच गलती हो गई। ईर्ष्या का कोई कारण तो उसके पास नहीं है। हंसकर उसने कमला के फैली हुई गौर बाहु पर अपना हाथ भी रख दिया, और बोला :

'लो, तुम नाराज़ हो गईं ! मार्कट्वेन ने कहा है न, दुःख तुम्हें अकेले ही सहना पड़ता है, पर सुख के क्षण में जब तक कोई साथी न हो, उसका उपभोग हो ही नहीं सकता।—यह तो तुम खुद ही कई बार कह चुकी हो।'

कमला भी हंस दी, क्रोध करने का कोई कारण सचमुच नहीं था, बोली, 'आदमी का मन भी तो बड़ा लोभी अथवा क्षुद्र है।—मंत्र, ब्राह्मण और अग्नि की पूंजी जिसकी स्मृति में हो, वह तो किसी भी क्षण नारी के ऊपर अपने अधिकार को चरितार्थ कर ही डालता है, पर बिना ऐसी पूंजी के भी बहुतेरे इस लोभ में भटकते फिरते हैं। फिर भी कमल, यू आर ए प्रेटी इनोसेण्ट बॉय—भोले बालक हो !'—और यह कहकर अपनी सुगन्धित साड़ी के पल्ले से प्रायः कमल को ढांकती हुई वह उठ खड़ी हुई और हंसकर कहती रही—'तुम्हारे मित्र 'माई लॉर्ड' मेरे साथ थे।'

'माई लार्ड—वे कहां मिल गए तुम्हें ?'

'मिलते कहां ?—पहले से निश्चय था, वे यहां आ गए थे।'

'तब हमारी याद क्यों आने लगी। अच्छा, तुम्हारे पहले ही एक बार चाय पी चुका हूं। समय भी बहुत हुआ, यदि आज्ञा दो तो चलूं। तुम्हें भी आराम करना ही होगा।'

कमला फिर हंस दी। आज, मालूम देता है, वह बड़ी प्रसन्न है। बोली, 'अरे ! क्या उस पत्थर के आदमी से भी तुम्हें ईर्ष्या होने लग गई ?'

'पत्थर के ?'

'पत्थर के नहीं तो क्या ?—उसके क्या कुछ भावना है ?

गुलाबजामुन तो वह पसन्द करता है, पर शेष में तो वह कोरा शून्य है, क्या तुम नहीं जानते ?—आखिर उनसे परिचय तो तुम्हींने करवाया था मेरा !'···

'पर देखता हूं कि मुझसे अधिक तुम्हीं उन्हें जानती हो। इतने नज़दीक से देखना स्त्री ही को तो आता है।'

'सो तुम्हें भी तो कम नज़दीक से नहीं देखा है।' और पास आकर उसने अंगुली से कमल के गाल को छू लिया, फिर ज़रा क्रोध का नाट्य करके बोली, 'अरे !—तुमने तो आज शेव भी नहीं की। यदि अंगुली में खून निकल आता तो ?'

'अच्छा ही होता, खून के अपराध में फांसी पा जाता, छुटकारा मिल जाता।'

'छुटकारा चाहते हो ?—सचमुच, चाहते हो ?'—और उसने कमल की आंखों को अपनी आंखों से पकड़ लिया।

नीची निगाह करके कमल ने एक लम्बी सांस ली, और कहा, 'तुम ही यदि छुटकारा देने पर आमादा हो जाओगी तो मेरा रह ही क्या जाएगा।'

'दार्शनिक बनते जा रहे हो।—मालूम होता है, दिल पर चोट खा गए हो।—धड़क रहा है न दिल ? देखूं और अनायास ही कमला ने नीचे झुककर बैठे हुए कमल के सीने से अपने कान लगा लिए। कमल ने आंखें बन्द कर लीं, धीरे-धीरे उसकी बाहुओं ने कमला को घेर लिया।

कमला ने कहा, 'चोट कैसे लगी, कहोगे नहीं ?'

'लाभ क्या ?'

'लाभ ?—स्त्री से नहीं कहोगे तो कहोगे किससे ?—नारी सब आघातों का मरहम जो है।'····

'इस समय तो दूसरा ही आघात है।'

'दूसरा कौन-सा ?—कोई अन्य नारी ?'—और वह पास से छूटकर हंसती हुई कहने लगी, 'नहीं, मैं तुम्हारी तरह ईर्ष्या नहीं करूंगी····'

'ईर्ष्या तुम नहीं करोगी, यह मैं जानता हूं। मेरी समस्या—है तो नारी ही, पर····'

'कहो न !—'

'वह मेरी बहन है।'

कमला एक दूसरे सोफे पर बैठ गई और बोली, 'क्या उमर हो गई उसकी ?'

'यही सोलह-सत्रह।'

'अच्छा। कोई लड़का-वड़का देखा है ?'

'लड़का तो है—पर लड़की के विवाह में···'

'क्यों ? क्या दहेज मांगता है ?'

'दहेज मांगे, वहां मैं कभी शादी नहीं करूंगा, किन्तु फिर भी कुछ अपनी ओर से तो करना ही पड़ेगा। मां जो पुराने विचारों की ठहरी।'

'सो तो करना ही चाहिए।'

'करना तो चाहिए पर—कुछ रुपया प्रॉविडेण्ट फण्ड में जमा किया था, वह पिताजी के श्राद्ध में समाप्त हो गया—अब कोई किनारा ही नज़र नहीं आता।'

'मां के पास क्या कुछ जेवर वगैरा नहीं हैं ?'

कमल ने कमला की ओर देखा। यह स्त्री जो मां के जेवर का सुझाव दे रही है, उसे कुछ सहायता देगी ?—मां का जेवर—वह है ही कहां उसके पास ?—मां का जेवर तो वह स्वयं था, पर आज उसकी ही क्या कीमत है।

हंसकर बोला, 'जेवर तो मां के पास था, बहुमूल्य, पर वह तो पहले ही बन्धक हो गया है।'

'तो उसे बेच दो।' कमला ने निर्भ्रान्त मन से कहा।

'अब उसकी कीमत ही क्या रही ?—जहां गिरवी रखा था, वही उसे खा गई।'

'कहते क्या हो ?—क्या वह कोई स्त्री थी ?'

कमल ने एक क्षण के लिए आंखें उठाकर कमला की ओर देखा, और फिर नीचे झुका लीं, यही उसका उत्तर था।

कमला ने कहा, 'समझी ! अच्छा कितना रुपया होने से काम चल जाएगा ?'

'कम से कम एक हज़ार तो चाहिएगा ही।'

कमला पुनः स्वस्थ हो गई थी, बोली—'लड़का कैसा है ?'

'मजे का है, जैसी हम लोगों की हैसियत है। घर की ज़मीन है, खेती करता है, परिवार वाला है, खाता-पीता, स्वस्थ, सुन्दर और कुछ पढ़ा-लिखा भी है। हमारे समाज में इससे अधिक की कामना नहीं की जा सकती।'

'लड़की को पसन्द है ?'

कमल ने हंसकर कहा, 'हमारे समाज की लड़की के पसन्द भी कुछ होती है ?—पसन्द दर किनार, उसके जीभ भी नहीं होती।'

कमला ने भी हंसकर कहा, 'यानी मैं तुम्हारे समाज की नहीं हूं। अच्छा, तुम प्रबन्ध करो।—पैसे तुम्हें कब चाहिएं ?'

'इन्हीं दस-पन्द्रह दिनों में मिल जाएं, तो अगले माह उसका विवाह हो जाएगा। मां कहती है, बाद में इस वर्ष लग्न नहीं आते।'

'तो कल तक का समय मुझे और दो, मैं खोज लूं।'

'खोज लूं ?'

'मेरे पास तो है नहीं।—तुम तो जानते हो, बम्बई में मुझे उन्हें भी खर्च भेजना पड़ता है। बचाना चाहती हूं, पर बच ही नहीं पाता।'

'फिर !'

'उधार मांगूंगी।'

'यदि नहीं मिला तो ?'

कमला ने हंसकर कहा, 'मिल ज़रूर जाएगा ! मुझे विश्वास है। न हुआ कुछ ब्याज की चढ़ी रकम देनी पड़े। बस।'

'किन्तु···' और वह आगे नहीं कह सका।

कमला ने हंसकर कहा, 'कमल !—मैं तुम्हें खा नहीं गई। तुम्हें क्या, किसी भी पुरुष को अपने घेरे से परिव्याप्त करके, उसे पंगु बना देने का मेरा कभी इरादा न रहा। लेकिन इस लोलुप पुरुष का मैं क्या करूं ? वह जीवन के पर्वत पर चढ़ना चाहता है, धीरे-धीरे न जाकर रास्ते की शिलाओं को पदस्थ करके उसके शिखर को पाना चाहता है, पर वहीं पर थककर वह बैठ जाए, अपने पैर तुड़ा ले, और फिर कहे कि नारी की यह चट्टान उसे खा गई, तो नारी क्या करे !—खैर, मैं तुम्हें रास्ता दूंगी—मुझे अपनी भूमि तो छोड़नी ही पड़ेगी····'

कमल ने कहा, 'नहीं कमला, यदि तुम्हें कष्ट···'

बीच ही में हंसकर कमला ने कहा, 'कष्ट नहीं, प्रसन्नता होगी !'

'पर तुम जो चढ़ी हुई ब्याज की दर कह रही हो—तुम्हारा मतलब मैं नहीं समझा !'

हंसकर कमला ने कहा, 'मैं नारी जो हूं।'

कल्पना करके कमल सिहर उठा, 'नहीं कमला, मैं तुम्हें किसी ऐसे काम में प्रवृत्त नहीं होने दूंगा···'

कमला ने हंसकर कहा, 'घबराओ नहीं, मैं तुम्हारे ऋण से मुक्त होने के लिए नहीं कर रही हूं।'

'फिर भी तुम्हें मैं कोई ऐसी दर के लिए कभी बाध्य नहीं करूंगा जिससे तुम किसी पुरुष की दृष्टि में छोटी हो जाओ।'

'पुरुष की दृष्टि में ?—मैं कभी छोटी नहीं हुई हूं !'

'पर पुरुष तो समझेगा, आखिर वह इसी समझ से तो तुम्हें उधार देगा।'

'उसकी समझ से मेरा क्या जाता है ?'

कमल निर्वाक् हो गया; कुछ देर रुककर मूढ़ की भांति पूछ बैठा, 'आखिर तुम्हें पुरुष में ऐसा क्या मिल जाता है, तुम उसकी इतनी भक्ति क्यों करती हो ?'

'उसमें कुछ न भी हो, तो भी नारी विवश है कमल बाबू।'

'जो तुम्हें इतना सताए, क्या इसमें भी नारी का कोई स्वार्थ है ?'

'है !'

'वह कहोगी नहीं क्या ?'

'सुनकर खुश न होओगे कमल ।'

'तब भी कहो न । पुरुष की खुशी-नाखुशी की तुम्हें तो अपेक्षा नहीं है ।'

'नहीं कैसे नहीं है ! फिर भी तुम सुनना चाहते हो ?'

'हां ।'—कमला उठ खड़ी हुई और बोली :

'तो इसलिए कि प्रत्येक नारी यह सोचती है, कि पुरुष उसके गर्भ से उपन्न हुआ है !' और वह पास के दरवाज़े का परदा ढकेलकर दूसरे कमरे में चली गई ।

नटनागर के पत्र बराबर आते रहे । वे कमला को भी पत्र लिखते ही रहते थे, किन्तु औपचारिकता के सिवा उनमें कुछ नहीं रहता था । मुझे जो पत्र लिखे जाते थे, प्रतीत होता था उनके द्वारा वे अपने भार हलका करना चाहते हैं । जहां कहीं मिस्टर कपूर या सोमदत्त की बात होती, उसे बचाकर शेष सब सम्वाद मैं कमला को बता देता था । अभी वर्तमान में सोमदत्त या उससे सम्बन्धित वातावरण से कमला को सूचित करने में कोई सार्थकता न थी—शायद प्राचीन स्मृति को उभाड़कर कहीं वही उसके दुःख का कारण न बन जाए, इसलिए भी ये सूचनाएं उससे बचाई जानी आवश्यक थीं ।

एक दिन उन्होंने सूचना दी कि मिस्टर कपूर क्षेत्रीय दफ्तर में सुपरिंटेंडेंट बनकर जा रहे हैं । उनका स्वयं का ट्रान्सफर कुछ समय के लिए स्थगित कर दिया गया है—क्योंकि मिस्टर कपूर अभी इसी समय अपने लड़के सोमदत्त को वहां से नहीं हटा सकते । एक माह के बाद जब उसकी परीक्षा हो जाए वे उसे लेकर ही वहां जा सकेंगे । मिसेज़ कपूर स्वयं तो जाना नहीं चाहतीं, किन्तु डॉक्टर ने राय दी है कि उनको जलवायु बदलना आवश्यक है, यह एक अच्छा अवसर है । अतः नटनागर और सोमदत्त

दोनों ही इसी फ्लैट में रहेंगे। नटनागर के ऊपर कपूर साहब का कितना विश्वास है, यह भी उन्होंने लिखा !—बस, इसी माह की बात है, फिर वे भी क्षेत्रीय दफ्तर चले जाएंगे। वहां बड़ा अच्छा मकान उन्हें मिल रहा है। उन्होंने मुझे लिखा है कि इस समय उनकी पत्नी को भी ग्रीष्मावकाश मिल जाएगा, अतः यदि मैं भी कुछ दिन के लिए तब वहां जाकर उनका आतिथ्य ग्रहण कर सकूं, तो उनका अहोभाग्य होगा—आदि-आदि।

पत्र ऐसा ही कमला को भी गया, जिसमें उन्होंने कहा है कि यदि कमला को असुविधा न हो तो ग्रीष्मावकाश वे इकट्ठे ही बिताएं !—न होगा तो मां को वे गरमियों के बाद बुलवा लेंगे, ताकि कमला को किसी प्रकार की असुविधा न हो।

मैंने तो शीघ्र ही उत्तर दे दिया कि गई बार की बीमारी का ऋण परिशोध करना है, डॉक्टरों ने राय दी है कि किसी पहाड़ पर जाऊं। रेलवे से पैसा मिल ही गया है, कुछ पैसा तो दोस्तों ने उधार मार लिया, जो बचा है यदि उसे भी जल्दी ही ठिकाने नहीं लगा देता, तो संकट की स्थिति उपस्थित हो सकती है। पहाड़ पर यों कभी जाने का सौभाग्य या सुविधा भविष्य में कभी हो, इसमें संशय ही है, इसलिए अवसर का लाभ उठा लेना चाहता हूं।—रहा प्रश्न उनके आतिथ्य का, उसके लिए मुझे तो कभी तिथि देखने की आवश्यकता है नहीं। किसी भी दिन बिना तिथि देखे ही टपक पड़ना मेरे लिए कठिन न होगा तब मैं भी वास्तविक अतिथि बन सकूंगा।

पत्र पोस्ट करने के पूर्व मैंने कमला को बताते हुए कहा, 'मुझे आशा करनी चाहिए कि तुम दोनों के बीच की खाई इस बार बिलकुल पट जाए !'

'खाई दिखाई देती है क्या ?'

'पर है तो सही !—दिखाई न दे तो और भी बुरा है।'

'तो इसीलिए पहाड़ पर जाने का बहाना कर रहे हो ?'

'क्यों ? क्या मैं बीमार नहीं था ?—गरीब हूं तो क्या इसीलिए पहाड़ पर जाने का हक नहीं है ?'

'गरीब तो तुम हो नहीं, पर—मेरी बात जाने भी दो, उन्हींको क्या मिल जाएगा ।'

'आकाश का चांद !—कमला, तुमने नटनागर को भीतर से नहीं पहचाना, उस कठोर-शुष्क छिलके के नीचे कितना मधुर रस है···'

कमला ने हंसकर कहा, 'मैं गुठली तक पहुंच चुकी हूं महाराज !'

'वही योग तो सुझा रहा हूं जहां आम के आम और गुठली भी के दाम हों !'

कमला ने सिर झुका लिया, कुछ सोच में पड़ गई, फिर बोली, 'यह मेरी बदनामी क्यों करते फिरते हो तुम ?'

'बदनामी ?' मैं नहीं समझा ।

'नहीं तो क्या ?—पैसा दोस्तों ने उधार मार लिया, सो क्या मेरी लज्जा की बात नहीं है ?—मैंने तुमसे पैसा तो नहीं चाहा था, चाहा था केवल उपदेश—सो ही तुमने न दिया, और दे दिया पैसा !—मैं तो ब्याज भी देने के लिए तैयार हूं, तुम लोगे ?'

'क्यों नहीं लूंगा ?—मैं क्या कोई महात्मा हूं ?—नहीं पैसा कोई मुफ्त का मुझे मिला है ! पर ब्याज की मेरी धारणा सभी पुरुषों के समान हो यह तो कोई बात नहीं !'

कमला हंस दी, 'किन्तु तुम्हारी धारणा के अनुकूल ही यदि मुझे ब्याज चुकाना होगा, तो यह बात उधार देने से पहले ही क्यों न बता दी ?'

'बता देने से शायद सौदा न पटता !'

'और यदि मैं अब तुम्हारी शर्तें न मानूं ?'

'तो और भी अच्छा है—समझ लो, मेरी शर्त पूरी हुई ।'

'तुम यों ही शब्दों में छला करते हो ! अच्छा, अगर यह रुपया तुम से मैं नहीं ले लेती, तो क्या होता ?'

'कोई दूसरा लेता—लक्ष्मी तो आखिर चंचला है, वह कहीं रुकी रहती है ?'

'फिर भी सुनूं, तुमने भी तो कुछ सोचा ही होगा ?'

'चंचल को अचल करने के बारे में ? नहीं, असाध्य चिंतन मैं नहीं करता ।'

'अच्छा तो एक मिनट में अभी सोचकर उत्तर दो ।'

'क्यों ?'

'प्रयोजन है !'

मैंने हंसकर कहा, 'अभी अकेला ही पहाड़ जाने की सोच सका हूं, तब तुम दोनों को भी ले चलता ?'

'दोनों को ?'

'हां—नटनागर-दम्पति को । उनके स्वास्थ्य का मुझे ख्याल होता है—मैं साथ में रहकर उनके मानसिक स्वास्थ्य का भी प्रबन्ध करता !'

'यानी, हम दोनों में घटक-वृत्ति करते !'—और वह हंस दी । फिर उसने जैसे बात उड़ाते हुए कहा, 'कमल रुपये लौटा नहीं सकेगा । मैंने उसे इसलिए दिया भी नहीं है ! आखिर उसने मेरे लिए कम भी नहीं किया है ।—गुरु-दक्षिणा ही की बात सोचूं, तो भी यह कितनी-सी रकम है । पूरी रकम चुकाने में कुछ समय भी तो लगेगा, किन्तु मैं प्रयत्न करूंगी कि शीघ्र ही तुम्हें यह रकम मिल जाए ।'

'धन्यवाद !' कहकर मैं मुस्करा उठा । बोला, 'जल्दी न चुकाओ सो ही अच्छा है । दुनियां में मेरा कोई कर्जदार नहीं, अगर एक कोई अपने आप को समझे, तो दिल को तसल्ली रहेगी । दूसरे इसी तरह कुछ ब्याज ही मिल जाएगा ।—हां, पति के साथ ग्रीष्मावकाश बिताने के लिए यदि कुछ और अपेक्षित हो, तो मेरा वज़न हल्का हो जाएगा । पहाड़ पर सरलता से चढ़ सकूंगा ।'

उत्तर में कमला भी हंसकर रह गई ।

नटनागर के पत्र आते रहे । मेरे पहाड़ पर जाने के प्रस्ताव पर

उन्होंने प्रसन्नता व्यक्त की, यद्यपि इससे उन्हें मेरी संगति के आनन्द से वंचित होना पड़ेगा !—उनके दिन अच्छी तरह कट रहे हैं, केवल एक बात विशेष हो गई है। कपूर-दम्पति के चले जाने के बाद सोमदत्त के मन पर माता-पिता की अनुपस्थिति का प्रभाव पड़ा दिखाई देता है। लड़का बड़ा भावुक है, बाहर से उसे व्यक्त नहीं होने देता, किन्तु अभी उमर ही क्या है— कहां तक छिपा सकता ?—उस दिन सध्या को एकाएक बांध टूट गया, तो नटनागर के गले झूमकर बहुत रोया, और रोते-रोते ही सो गया। नटनागर पर, मालूम देता है, लड़के की माया व्याप्त हो गई है।—सोचकर, कभी-कभी मुझे भय होता, कभी एक छिपी प्रसन्नता भी। प्रकट में मैं किसी भी भाव का कारण खोज पाने में असमर्थ रहता—कारण खोज पाना चाहता भी नहीं। मनोविज्ञान का विद्यार्थी रह चुका हूं, और सोमदत्त के गुप्त रहस्य से भी अवगत हूं ! दर्शक हूं, तो चाहता हूं कि दर्शक ही बना रहूं।

दूसरे पत्र में लिखा कि सोमदत्त अब पहले जैसी व्याकुलता प्रकट नहीं करता।—पढ़ने में बहुत अधिक मन लगाता है, मानो अपने पास समय रहने ही नहीं देना चाहता।—दस-बारह दिन बाद परीक्षा शुरू हो जाएगी, छः-सात दिन उसमें लग जाएंगे। बस—यों उनके ट्रांसफर का आदेश जारी हो गया है।—जल्दी से वहां पहुंचकर लड़के को भली-चंगी हालत में उसके मां-बाप को सौंप दे, एक तो यही सबसे बड़ी चिन्ता है। इस डर से कि वे कहीं चिन्ता न करें, नटनागर उन्हें वस्तुस्थिति से भी अवगत नहीं करा सकते।

पत्र में उन्होंने एक और कठिनाई का उल्लेख किया। उनके घर से पत्र आया है कि मकान की एक दीवार गिरने जैसी हो रही है, यदि बरसात से पहले उसका उद्धार न कर लिया गया, वह इस बरसात में बचेगी नहीं। इसलिए उन्हें एक बार घर जाना ही पड़ेगा। एक बार शिफ्ट हो लें; बस। छुट्टी उन्हें मिल ही जाएगी। अपनी पत्नी को वे घर ले जाने की आवश्यकता नहीं समझते। वहां उसकी कोई उपयोगिता

नहीं होगी। व्यर्थ गर्मी में उसे गंवई गांव में कष्ट देने से क्या लाभ। उन्होंने पत्नी को लिखा था—कि न हो तो गरमी वह वहीं बिता ले। किन्तु उनकी पत्नी ने कहा है कि पाठशाला की छात्राएं कुछ बाहर का कार्यक्रम रखना चाहती हैं, सो यह एक तरह से सुविधाजनक ही होगा।

मैंने कमला से पूछा, 'गरमी में सुसराल नहीं जा रही हो ?'

'यहां कौन मेरे पिता का घर है ?'

'सुसराल तो पति के घर को कहते हैं।'

कमला हंस दी, 'पहले तो पतिगृह जाने की बात थी ही, तुम जानते ही हो, किन्तु उसके बाद तो—पर सुसराल का अर्थ तो पति का भी घर नहीं होता।'

मैंने मुस्कराकर कहा, 'सास-ससुर का ही घर सही ! वहीं क्यों नहीं जातीं ?—पति भी तो वहीं जा रहे हैं।'

'पति का निषेध जो है ! हिन्दू स्त्री हूं उसकी अवहेलना कैसे कर सकती हूं ?'

'तो क्या कहीं 'कैम्प' में जा रही हो ?'

'बिलकुल !'

'शिष्याओं के साथ !—कहां ?'

'शिष्याओं के साथ नहीं, गुरु के साथ—पहाड़ पर !'

मैं चौंक उठा, 'कह क्या रही हो कमला ?'

'बिल्कुल ठीक कह रही हूं। तुमने वादा किया था ग्रीष्मावकाश व्यतीत करने के लिए अपेक्षित द्रव्य देने का।'

'किन्तु कमला···'

'क्यों डरते हो ?'

'अस्वाभाविक क्या है ?—और फिर नटनागर···'

'वे मेरी सुविधा का ख्याल जो रखते हैं।'—और वह मुस्करा दी।

'किन्तु दुनिया क्या कहेगी ?'

'न हो, एक वक्तव्य देकर प्रतिवाद कर देना। इतनी क्षमता तो तुम में है ही।'

मैं कुछ देर तक नीरव रहा, फिर बोला, 'पहाड़ जाने की बात मन में आई अवश्य थी किन्तु इस निश्चय से उसे नहीं सोचा था, कि पहाड़ मुझे जाना ही पड़ेगा। समझ लो नटनागर के निमंत्रण से छुट्टी पाने के लिए ही मैंने इस बहाने का आश्रय लिया हो।'

'तो अब उसे बहाना न रहने देकर संकल्प कर लो।'

और मानो यही बात अन्तिम है, यह जतलाकर वह उठ गई।

दिन बीतने लगे, और कमला मुझे पहाड़ पर घसीट ले जाने के लिए प्रतिदिन विवश करने लगी, यहां तक कि मुझे निश्चय करना ही पड़ा। व्यवस्था का समस्त भार लिया कमला ने। मेरे पैसों का श्राद्ध होने लगा, लेकिन कुढ़ने का भी मानो मुझे अधिकार नहीं रह गया था।

नैनीताल, मसूरी, शिमला—जाने कहां-कहां जाने के प्रस्ताव हुए, किन्तु बहुत विचार-विनिमय के बाद निश्चय हुआ कि माउण्ट आबू चला जाए। वहां कमला की एक छात्रा के पिता की विशाल कोठी है, उसमें ठहरने की व्यवस्था हो सकेगी! वैसे व्यय भी विशेष नहीं होगा, और दूसरी कई सुविधाएं अनायास ही प्राप्त हो जाएंगी।

दिन बीतने लगे। स्कूल की परीक्षाएं समाप्त हो गईं। जाने के लिए सभी व्यवस्था हो गई। कमला ने अपने लिए पास भी मंगवा लिया। केवल रह गया रेल में स्थान-आरक्षण।

कमला ने पूछा तो मैंने कहा, 'देखता हूं कि तुम्हारे साथ मेरा जाना नहीं हो सकेगा।'

'क्यों?—आग लगाकर भाग जाना चाहते हो?'

'आग मैंने लगाई नहीं, और भागना भी मैं नहीं चाहता।'

'फिर—क्या डरते हो?—ऊखल में सिर देकर मूसल से?'

'ऊखल में सिर देने तक तो डर की कोई बात नहीं है, बात है डरने की वास्तव में मूसल से। ऊखल में सिर दे ही दिया है, यदि मूसल की

चोट बचाई जा सकती हो तो क्यों न बचाई जाए !—खासकर तब, जब कि इससे कठिनाई तो कुछ न होगी, किन्तु सुविधा बहुत हो जाएगी।'

'सुविधा क्या हो जाएगी ?'

'मेरा जो नया उपन्यास छप रहा है, उसके चारेक फर्मे और शेष रह गए हैं, हफ्ते-दस दिन में वह समाप्त हो जाएगा। इसी बीच तुम वहां पहुंचकर सब व्यवस्था ठीक कर लोगी। जिस दिन मैं पहुंचूंगा, तार दे दूंगा, तुम स्टेशन पर गाड़ी भिजवा देना ! इधर लोगों की दृष्टि से भी रक्षा हो जाएगी।'

'और यदि नहीं आए ?'

'सोचती हो, क्या इतना असाध्य बन जाऊंगा ?'

सो यही तय रहा, और एक दिन श्रीमती कमला नटनागर अकेली ही माउण्ड आबू के लिए रवाना हो गई, रवाना होने के पहले उन्होंने मुझे अनेक कसमें दिलाकर विश्वास दिला दिया, कि मैं यदि दस दिन के भीतर-भीतर उन्हें अपने वहां पहुंचने का तार न दे दूंगा, तो वे वहां से पुनः लौटकर मुझे क्रीत पशु की तरह गले में रस्सी बांधकर खींच ले जाएंगी !—चलो, दस दिन के लिए तो जान बची !

पर जान बची नहीं ! नटनागर तबदील होकर अपनी नई पोस्ट पर आ विराजे थे, यह समाचार उन्होंने मुझे दे दिया था। दूसरे दिन उनका एक एक्स्प्रेस तार आ धमका। लिखा था—'तुम्हारी सहायता अपेक्षित है। शीघ्र आओ ! पत्र जा रहा है !'

दूसरे दिन पत्र भी आ गया। सोमदत्त को लेकर एक समस्या खड़ी हो गई। वह मानसिक रूप से बीमार तो हो ही गया था, अब वही बीमारी शारीरिक होकर ऊपर उठ आई थी। इधर मिसेज़ कपूर की अवस्था में भी नया मोड़ उपस्थित हो गया। डाक्टरों की राय है कि बच्चे को उसकी मां से अलग रखा जाए। अच्छा हो कि गर्मियों में उसे कहीं अच्छी जलवायु वाले स्थान पर भेज दिया जाए।—कपूर साहब स्वयं जा नहीं सकते, इसलिए उन्होंने यह भार नटनागर को

पकड़ा दिया है। नटनागर अब क्या करे ?—मकान की व्यवस्था के लिए मां की ओर से तकाजे पर तकाजे आ रहे हैं। बड़ी कठिनाई से उन्होंने कपूर साहब को राजी किया है कि एक उनका अन्यतम मित्र पहाड़ पर जा रहा है, यदि सोमदत्त को उनके साथ भेज दिया जाए तो वह सोमदत्त को उसी तरह रखेंगे, जैसी कि नटनागर से आशा की जा सकती है, बल्कि अधिक ही, क्योंकि वे मित्र महोदय एक बड़े मनोविज्ञान-वेत्ता तथा शिक्षाविद् हैं। कपूर साहब ने सब व्यय अपने पास से देना निश्चय किया है। इसलिए नहीं तो भी कम से कम नटनागर के लिए मुझे उनकी प्रार्थना मान ही लेनी चाहिए। बड़ी आशा से उन्होंने पत्र लिखा है, उन्हें विश्वास है कि मैं उन्हें निराश नहीं करूंगा।

पत्र पढ़कर हंसी आ जाना स्वाभाविक है ! यदि चला जाता तो ही उत्तम होता। तब कुआं था, तो अब खाई है ! सोचा कि जाने के कार्यक्रम को ही क्यों न गोली मार दूं ! किन्तु दस दिन के बाद यदि सचमुच कमला यहां आ टपकी ?—या इसी बीच नटनागर उस लड़के ही को लेकर यहां डट गए ?—तब तो मुसीबत का अन्त न रहेगा।

वाह रे संयोग !—यह भी क्या नाटक है कि दर्शक ही को करना पड़ता है, उसकी इच्छा-अनिच्छा का कोई प्रश्न ही नहीं ! और यह कमला ?—चाहती क्या है मुझसे ? किस चक्रव्यूह में लिए जा रही है ?—उसके संकेत करने भर पर उसे एक हजार रुपया दे चुका हूं—अवश्य ही वह उसे कमल के लिए ले गई है। क्या उससे मैं रुपया वापस लेना चाहूंगा ? लेखक को रुपया मिलता ही कहां है कि उसके प्रति इतनी निर्वेदना व्यक्त की जाए ?—और फिर यह पहाड़ पर जाने का शौक !

नटनागर के इस प्रस्ताव से रुपया तो अवश्य बच जाएगा।—और दर्शक महाराज ! तमाशा भी क्या बुरा रहेगा ? वात्सल्य के अपार्थिव गुण की बड़ी विरुदावलि सुनी है। परिचय के अभाव में या प्रभाव में भी, उसका स्वाभाविक प्रवाह कैसे होता है, यह अनायास ही देख

सकोगे ! यदि कमला की भूख को ममता का आहार अनुकूल पड़ जाए, तो शायद तुम्हें मुक्ति ही मिल जाए ! चलो, अच्छा ही है !

मैंने तार द्वारा उत्तर दिया, 'कल संध्या की गाड़ी से आ रहा हूं।'

२०

अफसर मैंने बहुत देखे हैं, उनकी मनोवृत्ति का अध्ययन भी किया है। नौकरशाही की मशीन के वे भी एक बड़े पुर्जे हैं। मशीन के एंजिनघर से इन्हें शक्ति मिलती है, और उसीसे खुद चलकर अपने कई मातहतों को ये चलाते हैं। चलाने वाली मूल मशीन दूसरी, यद्यपि वह भी पूंजीवाद के समस्त तंत्र-जाल का ही एक अंग है। शक्ति का केन्द्र बिल्कुल दूसरा, किन्तु यह अधिकारी वर्ग केवल उसका विकीरण-विभाजन करते हैं, ताकि अपनी-अपनी सीमा में सभी उस पाई हुई शक्ति के द्वारा हिल-डुल सकें, किन्तु यह शक्ति किसीकी निज की नहीं, अतः उनमें रस नहीं, अपनापन नहीं। उन्हें रस नही मिलता, मिलता है केवलमात्र तेल-मज़दूरी, जिससे वे पुर्जे घिसें नहीं, और सरलता से चलते रह सकें। घिसाई-भंगाई (वीयर ऐण्ड टीयर) न हो, सो बात नहीं, कभी पुर्जों को बराबर तेल भी नहीं मिलता, तब वे प्राय चर्राते-मर्राते हैं, और यदि शीघ्र ही व्यवस्था नहीं की जाए, तो अर्रा कर टूट भी जाते हैं।

किन्तु मनुष्य नाम के ये छोटे-बड़े पुर्जे केवल मशीन ही नहीं होते, जो केवल दूसरों से पाई हुई शक्ति से काम करें। उनकी छाती के भीतर भी निज का एक धड़कता हुआ हृदय नाम का यंत्र रहता है, पूंजीवाद या नौकरशाही अभी यह नहीं जानती। यदि उसे पर्याप्त मात्रा में रस मिलने लगे, तो वह उस पुर्जे को अपनी ही गति से गतिमान कर दे ! बाहर से पाई हुई शक्ति तब उसकी बहुत बड़ी पूरक होगी, और समाज

के कल्याण की दिशा में एक अभूतपूर्व परिवर्तन संभव होगा, यह तो स्वतः सिद्ध है !

मैं बात कर रहा था क्षेत्र-निरीक्षक (डिवीजनल सुपरिन्टेन्डेन्ट) कपूर साहब की ! यद्यपि आज वे एक शक्ति-उत्पादक-जेनरेटर मशीन हैं, पर हैं मशीन ही; तब भी उनकी उदारता की बात मुझे माननी ही पड़ेगी। उनके मातहत सभी व्यक्ति छोटे से लगाकर बड़े तक उनसे बड़े खुश दिखाई दिए। यों, दफ्तर में बैठकर कुर्सी तोड़ने वालों में उन्हें शरीक करना ज्यादती ही होगी। वे इंजीनियर—फील्डवर्कर ठहरे—वस्तुतः काम में लगे रहने वाला व्यक्ति व्यक्तियों से दूर नहीं हट सकता। पद की कुर्सी उसे चाहे जितना ऊंचा उठा ले जाए !

दो दिन तक मुझे उनके यहां ही रहना पड़ा। सोमदत्त बड़ा ही मनोज्ञ लगा, सुन्दर, सुशील और सुसंस्कृत—जिस बात ने मेरा ध्यान सबसे अधिक आकर्षित किया, वह थी उसकी गम्भीरता, अपनी उमर से कहीं अधिक ! शीघ्र ही मैंने कारण की कल्पना भी कर ली।

कपूर साहब स्वयं ही जाना चाहते थे, किन्तु एक तो ठहरी नौकरी की मजबूरी, दूसरे मिसेज़ कपूर का अस्वास्थ्य। मिसेज़ कपूर की अब भी मानसिक चिकित्सा चल रही थी। मेरे सामने भी उन्होंने प्रस्ताव रखा कि वे एक नौकर को साथ दे दें, और किसी अच्छे होटल का प्रबन्ध कर दें। मैंने उन्हें आश्वस्त किया कि सोमदत्त को किसी प्रकार का कष्ट न होगा; कि मैंने बहुत अच्छा प्रबन्ध कर लिया है, मेरी एक दूर की बहन भी साथ होंगी ; सब सुविधाएं वहां पर उपलब्ध होंगी, नौकर, कोठी, मोटर—किसी बात की कोई कमी न होगी। लड़का मानो घर पर ही अपने मां-बाप के पास जैसा ही महसूस करेगा। तब भी, मेरे मना करने पर भी, कपूर साहब ने चार सौ रुपये का एक चेक काटकर मुझे पकड़ा दिया। यह भी कहा कि यदि और आवश्यकता हो, तो मुझे झिझकना नहीं होगा, और उन्हें लिख देना होगा। हंसकर मैंने कहा कि शायद इस चेक को भुनाने की भी जरूरत नहीं पड़े। कहना

न होगा कि नटनागर मेरे साथ ही थे, उनके अभाव में शायद कपूर साहब मुझे इतनी बड़ी ज़िम्मेदारी न सौंपते।

कपूर साहब, अपने क्षेत्र की अन्तिम सीमा तक सैलून (अधिकारियों का डिब्बा) में पहुंच गए। रात को साढ़े आठ बजे गाड़ी आबू रोड पहुंचती है, वहां से डेढ़-दो घंटे का पहाड़ी रास्ता है। मोटरें जाती हैं। शायद रेलवे की बसें भी हैं। आज होगा नवां दिन। मुहलत है मुझे दस दिन की! तब कमला को तार करने की ज़रूरत नहीं है। अकस्मात् वहां पहुंचकर उसे चौंका देना ही उत्तम होगा। तार देने से बहुत सम्भव है कि वह खुद भी स्टेशन पर पहुंच जाए।

रात को ठीक समय पर स्टेशन पहुंच गए। मार्ग में कोई कष्ट नहीं हुआ। इस गाडी में वातानुकूलित (एअरकण्डीशण्ड) डिब्बा नहीं लगता; किन्तु डिब्बे में बर्फ रखकर गरमी से बचाव कर लिया गया था। सोमदत्त बड़े आदमी का लड़का ठहरा—उसके साथ जाने में यदि जन्मपत्री को ठेंगा बताया जा सकता हो, तो क्यों न कर लिया जाए!—खाना-पीना भी स्टेशन पर रेलवे के रेस्टरां में सम्पन्न कर लिया गया, और तब बाहर आकर माउण्ट आबू के लिए सवारी की तलाश की।

रास्ता पहाड़ का है इसलिए रेलवे की बसें केवल दिन ही को चलती हैं।—अपनी गाड़ी हो तो वह रात को किसी भी समय जा सकती है। भूल महसूस हुई, यदि तार दे दिया जाता तो रातभर खराब न होती।

सोमदत्त साथ था, मुझे अंकल कहने लग गया था, बोला, 'अंकल, क्या टैक्सी नहीं मिल सकती?'

'भई सोम! बात तो खूब सुझाई! अच्छा तलाश करते हैं; पर समय तो देखो साढ़े दस बज गए है! तुम्हें जो नौ बजे ही सोने की आदत है! अगर तुम्हें नींद का ख्याल हो, तो सवेरे चलेंगे, तब एक रात वेटिंग-रूम में कट जाएगी! क्या कहते हो?'

'ट्रेवलिंग में क्या कोई आदत की सोचता है?—देखिए, कैसी ब्यूटीफुल मूनलाइट है?—आपने ही तो कहा था कि पहाड़ी रास्ता

बड़ा ही सुन्दर है।'

'सुनी हुई बात कही थी सोम ! देखूंगा तो तुम्हारे साथ ही !'

'पर अंकल, आपने तो कहा था कि आपकी सिस्टर गाड़ी भेज देंगी?'

'पर उनको तो हमने खबर दी ही नहीं !'

'दे दी होती, तो अच्छा होता ! क्यों नहीं दी ?'

अब क्या कहता उससे ?—इतस्ततः करके बोला, 'पहुंचते-पहुंचते रात के बारह बज जाएंगे ! सोचा उन्हे क्यों तकलीफ दी जाए ?'

सोम ने अपनी बड़ी-बडी आंखों से मेरी ओर देखा, 'तो फिर पहुंचने पर भी तो उन्हें तकलीफ देनी ही पड़ेगी। रहिए फिर—सवेरे ही चलेंगे!'

—पर तभी एक युवक ने आकर पूछा, 'साहब, टैक्सी चाहिए ?

सोम ने कहा, 'नो अंकल—दिस इज नॉट गुड टाइम टु डिस्टर्ब एनीवन !' (किसीको तंग करने का यह समय नहीं है।)

मैंने मानो उसकी बात को नहीं सुना, और टैक्सी वाले से तै कर लिया।

टैक्सी में बैठते ही सोम ने कहा, 'आपकी सिस्टर भी क्या सोचेंगी!—मेरे लिए ही तो आप यह सब इनकन्वीनिएंस (असुविधा) खुद भी उठाएंगे, और दूसरों को भी देंगे।—अच्छा, एक काम कीजिए न ! रात को किसी होटल में ठहर लें—सवेरे चल देंगे वहां ?'

मैंने प्यार से उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा, 'नहीं सोम !—इतना घबराने की जरूरत नहीं है ! तुम देखोगे कि वे तो हमारी प्रतीक्षा कर रही होंगी !—खबर तो इसलिए नहीं दी कि एकाएक रात को इस तरह देखकर थोड़ी चौंकें तो ?—मजा रहेगा न ?—कल तक अगर मैं नहीं पहुंच पाता तो जानते हो वे क्या करतीं ?'

'कहिए !'

'खुद मुझे लेने के लिए वहां से लौट आतीं।'

'लेकिन आपको वहां कहां से पातीं वे ?'

'बिल्कुल ठीक कह रहे हो—इसीलिए तो ज़रा उन्हें डरा देना

चाहिए।—जानते हो मुश्किल से वहां चार दिन रही होंगी कि पांच पत्र एक्सप्रेस डिलीवरी मुझे मिल चुके थे। मेरे वहां से चले आने पर कितने और पहुंचे होंगे सो क्या पता !'

'और आपने जवाब कितने का दिया ?'

'एक का भी नहीं।'

'तब तो वे आपपर बड़ी नाराज होंगी अंकल !'

'तुम कैसे जानते हो ?'

लड़का कुछ उत्तर नहीं दे सका—बुद्धि और प्रतिभा उसमें है, किन्तु इस उमर में यह तो नहीं जानता कि उसकी बुद्धि और प्रतिभा किस तरह काम करती है !

कुछ समय नीरव ही बीता कि सोमदत्त ने कहा, 'वे आपको बहुत चाहती हैं न !'

'वे कौन ?'—मैंने शायद कांपकर पूछा।

'आपकी सिस्टर ?'

मैं पूछने वाला था, तुमने कैसे जाना ?—पर चुप हो गया—एक क्षण के बाद ही सोमदत्त ने मेरी ओर देखकर कहा, 'नहीं तो इतनी रात को कोई किस अधिकार से डिस्टर्ब करेगा।—और कोई दूसरा क्यों परेशान होना पसन्द करेगा !'

'यू आर ए वेरी इण्टेलीजेण्ट बॉय !' (तुम बहुत बुद्धिमान लड़के हो)—कहकर मैं सोचने लगा कि यदि यह लड़का इसी सूत्र को पकड़कर चलता रहा, तो इसकी कल्पना जाने कहां से कहां चली जाएगी। इसलिए बोला, 'सोम, बाहर का दृश्य देखो···'

सचमुच सोम ने और मैंने गाड़ी के बाहर जो दृष्टि डाली, तो आंखों पर विश्वास नहीं हुआ। हम पहाड़ पर चढ़ रहे थे। पूर्णिमा या उसके आसपास की तिथि रही होगी, चन्द्रमा माथे पर चढ़ आया था। छाया और चांदनी में होड़ मची हुई थी। जहां छाया थी, वहां कहा नहीं जा सकता कि झाड़ थे, चट्टानें थीं, या एकदम शून्य, जिसमें नीचे गढ़े थे, या

नदी थी, या क्या था ?—और दूसरी ओर मानो चांदनी की मलमल के नीचे हरियाली अपनी कमनीय सौंदर्य राशि को छिपाकर, आकाश के अधरों को चूमने मचल पड़ी हो ! ठीक सामने सांप के समान बल खाती हुई सड़क, जिसपर मोटर की दो आंखों का सफेद प्रकाश मानो उसके उठे हुए फन को पकड़ना चाहता था, और वह भागी जा रही थी—मोटर में बैठे हुए हमें अपनी गति की अपेक्षा, क्षण-क्षण में मोड़ों को उपस्थित करने वाली सड़क ही चलती हुई प्रतीत हो रही थी। एक अपूर्व दृश्य था। कितनी देर तक अचेत होकर मैं उसे देखता रहा, इसका कुछ ख्याल ही न रहा। ख्याल हुआ तब, जब सामने शायद पुलीस या कस्टम की किसी चौकी पर सड़क के पार लगी हुई अर्गला के कारण कार को रुक जाना पड़ा। देखा कि थका हुआ सोमदत्त गाड़ी में मेरी जांघ पर सिर रखकर लेट गया है।

जिस मकान का मैंने पता दिया, मालूम पड़ता है, ड्राइवर उसे खूब जानता है। किन्तु, यह क्या, सारी बस्ती पीछे छूटती जा रही है—एक दूसरी पहाड़ी का मार्ग—मन में शंका हुई !

मैंने पूछा, 'क्या मकान बड़ी दूर है ?'

ड्राइवर ने कहा, 'बस अब आ गया सरकार !—इस तालाब के उस पार—वह जो छोटी-सी पहाड़ी दिखाई देती है। बड़ी लाजवाब जगह पर बसा हुआ है।'

डेढ़ बजने में पांचेक मिनट रहे थे, जब गाड़ी उस सुन्दर कोठी के फाटक पर आकर खड़ी हुई, दूर से कोई कुत्ता बड़ी तेजी से भौंका। मोटर की बत्ती के प्रकाश में फाटक पर लगा हुआ बोर्ड देखकर जी में जी आया।

बूढ़ा दरबान और उसके पीछे-पीछे कुत्ता—अलसेशियन कुत्ता दरबान की छाया में, और दरबान अपनी आंखों पर हथेली की आड़ से मोटर के प्रकाश को बचाता हुआ फाटक खोलने लगा, दुविधा तब भी उसके मुंह पर थी।

मैंने मुंह बाहर निकालकर कहा, 'श्रीमती कमला नटनागर यहां ठहरी हुई हैं न ?'

दरबान ने कहा, 'जी हां ! एक मेम साहब आई हुई तो हैं—हमारी रानी बिटिया की मास्टरनी जी ।'

'हम उनके मेहमान हैं । खबर कर सकते हो, ओझा साहब आए हैं ।'—इस ठाठ-बाट को देखकर लज्जित तो हो ही रहा था । इससे अच्छा होता कि तार ही दे देता, तो यह झंझट तो न होती । पर तब किसे पता था, कि इस ठाठ-बाट के बीच श्रीमती कमला नटनागर सुप्रतिष्ठित होंगी ।

—कि तभी दूर एक अंधेरी खिड़की से नारी-कण्ठ की आवाज़ आई ।

'मैं आ रही हूं गोपाल ! फाटक मत खोलना—ओझा साहब पक्के चोर हैं !'—और आवाज़ के शेष होते ही मानो एक गुप्त हास्य का आभास भी हुआ । दरबान गोपाल पीछे की ओर देखने लगा, फाटक खोले या न खोले ।

गाड़ी का फाटक खोलकर मैं बाहर निकल आया । अरे ! यहां तो सरदी मालूम पड़ रही है ।—एक स्वेटर बदन पर रखे बिना तो यहां अच्छे होने की अपेक्षा बीमार ही होना पड़ेगा । पर अभी तो कुछ नहीं किया जा सकता । ड्राइवर ने रोशनी बन्द कर दी । आकाश से बरसती हुई चांदनी स्फीत हो उठी । यह दाहिनी ओर नीचे बड़ा भारी तालाब, जिसमें चांद झिलमिला रहा है—शांत, नीरव पड़ा हुआ मानो अर्धरात्रि के इस व्यापार को समझने के लिए हमारी ओर देख रहा है । सुन्दर-स्वप्नलोक-सी यह भूमि और मध्य रात्रि का यह नीरव वशीकरण—कि तभी सामने से नारी-मूर्ति ने कहा :

'अरे गोपाल ! फाटक भी नहीं खोला ?—चोरों से इतना डरता है ? —खुद चलकर घर पर चोर आए, और तुम पकड़ भी नहीं सकोगे—भाग जाने दोगे ?'—खुले हुए फाटक पर खड़ी होकर कमला ने कहा—

'बिना सूचना दिए इस रात्रि को चोर के सिवा आता ही कौन है ?'

मैंने कहा, 'यदि गिरफ्तार करना हो, तो आज्ञा दो—इस तालाब में कूदकर मर जाने के समान सुख और दूसरा नहीं है।'

कमला ने कहा—अवश्य ही गाड़ी के ड्राइवर को—'भीतर ले आओ गाड़ी !—और गोपाल, जा एकाध नौकर और बुला ला, सामान जो पहुंचाना पड़ेगा।'

ड्राइवर ने पुनः बिजली जलाई, और कमला की छवि पहली बार आंखों से टकराई। चमकते हुए रेशम का गाउन उसके सारे शरीर को ढंके हुए, नीचे जमीन को चूम रहा था—बिजली की लहर उसकी सलवटों में उलझकर रह गई। मैंने आंखें बन्द कर लीं।

जब गाड़ी आगे बढ़ी, तो कमला ने पास आकर मेरा हाथ पकड़ लिया और कहा—

'सूचना भी नहीं दी ?—और इतनी रात कैसे हो गई ?'

मैंने कहा, 'हाथ मत पकड़ो। गाड़ी में एक और छोटा मुसाफिर बैठा हुआ है। देखेगा तो कहेगा कि यह चोरी-चोरी क्या मामला है ?'

'छोटा मुसाफिर ?'

'अभी देखोगी—नाराज नहीं हो सकोगी लेकिन, बल्कि खुश ही हो जाओगी....'

कमला, मालूम दिया, एक क्षण के लिए कहीं खो गई, पर बोली—'यह तो बताया ही नहीं इतनी देर कैसे हो गई ?—दो बज रहे होंगे।'

'रास्ते में कोई दुर्घटना नहीं हुई—अवश्य स्टेशन की एक छोटी-सी को छोड़कर।'

'क्या ?'

'यही कि खाना-पीना शेष कर लेने से तुम्हें भी थोड़ा नाराज़ करना मिल जाएगा—और जब तुम्हारा आतिथ्य भोगना है तो उसका आनन्द पाने के लिए थोड़ी स्टेशन के खानसामा की अरुचिकर सामग्री पेट के हवाले कर दी जाए !'

हंसकर कमला बोली--'यह अच्छा ही किया। देखती हूं लेखकों में कुछ अक्ल भी कभी-कभी हो आती है ! पर यह खबर क्यों न भेजी—बेकार टैक्सी का किराया देना पड़ेगा !'

'सो मैं दे चुका हूं, तुम्हें घबराने की जरूरत नहीं है।'

'चलो, यह भी अच्छा ही किया। हिसाब देने से बच गई।'

'यानी ?' मैं नहीं समझा।

'आखिर मुझे देना होता, तो भी पैसा तो तुम्हारा ही है। ऊपर से हिसाब की मुश्किल····'

तभी चलते-चलते हम पोर्टिको में आ खड़े हुए। गोपाल और एक और नौकर मिलकर पीछे से सामान उतार रहे थे। सोमदत्त उठ चुका था, नीचे बरामदे में उनींदी आंखें लिए खड़ा था। मोटर के पीछे आते हुए हम दिखाई न दिए, किन्तु शायद हमारी आवाज़ का कुछ अंश वहां तक पहुंच गया था।

वहीं से कुछ आगे बढ़ने का उपक्रम करके उसने कहा—'अंकल ! ह्वाइ डिडन्ट्यू वेक मी अप ?' (मुझे आपने उठा क्यों न दिया ?)'

कमला ने मेरा हाथ छोड़कर कहा, 'कोई अंग्रेज़ बच्चा है क्या ?'—और हम सामने प्रकाश में आ खड़े हुए—अजनबी को देखकर आगे बढ़ता हुआ सोमदत्त एक क्षण को रुक गया और एक बार कमला को देखकर और दूसरी बार मुझे देखकर बोला—'गुड इवनिंग आण्टी—ऑर मस्ट आइ से गुड मार्निंग ?—हाउ डू यू डू ?' (मंगल संध्या आण्टी—या कहूं मंगल प्रभात ? आप कैसी हैं ?)—फिर एक ही क्षण में लजाकर बोला—'एक्स्यूज़ मी—मुझे माफ कीजिए—मुझे हिन्दी में बहुत बात करने की आदत नहीं है।'

मैं एक ओर खड़ा-खड़ा तमाशा देखने लगा। कमला ने देखा, उसके मुंह पर उल्लास की एक चमक फैल गई !—बड़ा सुन्दर लड़का है, सात-आठ वर्ष से अधिक उमर नहीं, ऊंचाई ढाई फुट के आसपास, दुबला-पतला शरीर, बड़ी-बड़ी आंखें नींद के कारण सिकुड़ी तथा थकी

हुई, पतली नाक, पतले बारीक अधरों में मुंह छिपाहुआ, चौड़ी पेशानी, जिसपर सिर के बालों की घुंघराली लच्छियां फैली हुई—क्लांति और थकावट की झाईं से श्यामल रंग। नीली बुशशर्ट, और नीचे पूरा पैंट पहने हुए ! कमला ने आगे बढ़कर हाथ फैला दिए—

'गुड इवनिंग बेबी—' और उसे ऊपर उठाकर उसका मुंह चूमते हुए कहा, 'व्हाट इज यूअर नेम ?' (तुम्हारा क्या नाम है ?) फिर मेरी ओर देखकर कहा—'हाउ नाइस ऑफ यू ? बड़ा सुन्दर लड़का है !—क्या नाम है ?'

जवाब सोमदत्त ने दिया—'मुझे सोमदत्त कहते हैं। आइ एम नॉट ए बेबी (मैं बच्चा नहीं हूं।)—आप उतार दीजिए, आपको तकलीफ होगी।'

सोमदत्त ने इस ढंग से कहा, कि कमला को उसे उतारना ही पड़ा। सोमदत्त ने आकर मेरा हाथ पकड़ लिया।

भीतर जाकर कमला ने कहा—'सोम !—कुछ खाओगे ?'

'नो प्लीज, थैंक्यू !—लेकिन सोने से पहले मैं कपड़े जरूर बदलूंगा। मेरे अटैची केस में स्लीपिंग सूट हैं। सामान कहां रखा है ?—मैं निकाल लूंगा।'

'चलो मैं बता दूं····' और कमला तथा सोमदत्त दोनों पुनः दूसरे कमरे में चले गए। एक लम्बी सांस लेकर कुर्सी पर बैठा हुआ मैं कमरे की सज्जा को देखने लगा।

'दस मिनट बाद कमला ने अकेले ही प्रवेश किया तो मैंने पूछा—'सोम कहां है ?'

'उसे सुला आई हूं।'

'सो गया ?'

'नहीं; लेकिन शीघ्र ही लेट जाएगा····आंखें बड़ी थकी-थकी लगती थीं।'

मैं उठ खड़ा हुआ, बोला, 'कहां सोया है जरा बता दो !'

'क्यों ?····क्या मेरे ऊपर विश्वास नहीं होता ?'

'तुम्हारे ऊपर विश्वास न होता तो लाता ही क्यों ?···परन्तु इस लड़के के विश्वास के लिए उसे देख लेना चाहती हूं।'

'चलो !' कहकर कमला उत्साह के साथ आगे चलने लगी।

बोली, 'यह कमरा तुम्हारे ही लिए तैयार करवा रखा था। सोम कहता था कि वह अकेले कमरे में मजे में रह सकता है। अब तुम्हें इस कमरे में रहना पड़ेगा। सब ठीक है; केवल चादर बदलनी पड़ेगी। कुछ किताबें, जो उस कमरे में है, सवेरे इस कमरे में आ जाएंगी।···मेरा कमरा यह रहा उस साइड में; अगर सवेरे तुम्हें पसन्द न आए तो मेरा कमरा ले लेना ! मैं तुम्हारा ले लूंगी।'

कमला ने तीसरे दरवाज़े पर हाथ रखा, धीरे से बोली, 'सोम ! क्या सो गए ?'

भीतर से आवाज आई, 'बस सो रहा हूं।'

'तो देखो····ज़रा खोलना····तुम्हारे अंकल 'सेटिसफाई' होना चाहते हैं।'

'ओ. के.' और किवाड़ खोलकर मुस्कराते हुए सोमदत्त ने कहा 'डोण्ट यू वरी अंकल ! आई एम वेरी-वेरी कम्फर्टेबुल (मैं बहुत आराम में हूं), यह तो बहुत सुन्दर कमरा है।'

भीतर जाकर मैंने देखा सारी व्यवस्था बहुत सुन्दर है। मैंने कहा :

'बड़ी जल्दी 'चेंज' करके तैयार हो लिए सोम ! मुझे तो शायद दूना समय लग जाता।'

सोम ने कहा, 'ऑण्टी मानी नहीं···इन्होंने अटैची केस खोलकर जल्दी ही कपड़े निकाल दिए।'

मैंने कहा—'ना-ना—इन्हें अटैची केस-वेस में हाथ न लगाने देना ! —कोई चीज़ कम-ज्यादा हो गई तो मैं नहीं जानता।'

कमला ने कहा, 'क्यों डराते हो बच्चे को, सोने दो ! चलो—देखो सोम, यह पानी रखा है; यह है, तुम्हारे बाथ-रूम का दरवाज़ा !—अच्छा

सवेरे बेड-टी लेते हो ?'

'नहीं···मैं नहीं लेता—पर अंकल लेते हैं।'

कमला ने कहा, 'वह मैं जानती हूं !···गुड नाइट···टाटा।'

और हम पुनः बाहर निकल आए। भीतर से चिटखनी की आवाज़ हुई। सोम सो गया। मुझे सोचते देखकर बोली—'घबराओ मत ! तुम्हारे कमरे में से एक सीधी खिड़की इस कमरे के लिए है। खुली रखोगे तो लड़का आंखों के सामने रहेगा। इतना मोह—खैर, लड़का है ही मोह के लायक—पर है किसका ?'

'पूछ नहीं लिया तुमने ?'

'पूछती कब ?····और फिर तुम्हारी धरोहर ठहरी, तुमसे बिना पूछे कैसे कोई सवाल कर सकती हूं ?'

मैंने कहा, 'क्या एक मित्र की सन्तान कहने से काम नहीं चलेगा ?'

'क्यों नहीं चलेगा ?····पर इतना डरते क्यों हो ?···यदि कह दोगे तुम्हारी ही सन्तान है, तो मैं क्या ईर्ष्या से जल मरूंगी ?'

'इससे तो अच्छा है तुम यही समझ लो कि तुम्हारी ही सन्तान है, बेचारे को जितने दिन ठहरेगा कुछ लाभ ही हो जाएगा।'

कमला ज़ोर से ठठाकर हंस पड़ी—रात्रि की नीरवता में सारा कमरा मानो मुखरित हो गया। बोली—'यह विडम्बना भी तुम मेरे भाग्य में थोपना चाहते हो ?···लेकिन महाराज, मैं तुम्हारी दुरभि-सन्धि खूब पहचानती हूं···पर मानती हूं कि तुम्हारा छल साधारण नहीं है ! हथेली पर सरसों उठाना चाहते हो महाशय ! पर कह तो चुकी हूं, यदि यह मेरी खुद की ही वह परित्यक्त सन्तान भी होता तो भी मुझे पकड़ना सम्भव नहीं होता—हाऽऽ हाऽऽ हाऽऽ हाऽऽ····क्या खूब !' और वह स्प्रिंग वाले सोफे की बाहुओं पर हाथों को टेककर मानो हंसी में झूलने लग गई। फिर उसने उठकर कहा—'चलो, अपना कमरा भी देख लो। न हुआ, वहीं बैठकर बातें कर लेंगे। थके हुए तुम भी कम नहीं दिखाई

देते। आंखें ही कैसी लाल हो रही हैं।'

मैंने कहा, 'यहीं बैठो—आखिर कमरे को तैयार तो हो लेने दो।'

'वह तैयार ही है। केवल एक चादर ही तो बदलनी थी। वह भी हो गई होगी।'

'वह किसके लिए तैयार करवा रखा था तुमने ?'

'लो, सभी पूछ लोगे ! उठो न ?....' और उसने मेरा हाथ पकड़कर मुझे कुर्सी पर से उठा लिया, फिर बोली—'वह कमरा था मेरे लिए ही। अब मुझे दूसरे कमरे में जाना पड़ेगा। खिड़की जो बीच में है, उससे बड़ी सुविधा रहती; पर खैर—कमरा फिर भी पास ही सटा हुआ है। चलो !'

मैंने कहा, 'यदि अभी सोम सोया न होगा तो मेरे कमरे में बैठकर बात करना ठीक न होगा, बल्कि यदि चाहती हो कि यहां न बैठें तो चलो तुम्हारे ही कमरे में चला जाए !'

हाथ छोड़कर कमला ने कहा—'नहीं, वहां नहीं; अभी वह बिल्कुल ही तैयार नहीं है। मैं तो किसी तरह आंखों ही आंखों में रात बिता लूंगी। आखिर इतना सो चुकी हूं···पर अब बातें ही क्यों ?....उनका क्या कभी अन्त होगा ! चलो तुम्हें सुला आती हूं। बातें सवेरे होंगी।'

कमला की सरलता पर मुग्ध होकर मैंने कहा, 'मुझे सुला दोगी ! —मैं क्या कोई सोमदत्त जैसा छोटा बच्चा हूं ?'

'उसे तो भी ज्ञान है कि उसका स्लीपिंग सूट कहां रखा है; तुम्हें तो उतनी भी तमीज न होगी। चलो। तंग न करो।'

'स्लीपिंग सूट ?···पर कहां होगा यह सवाल तो तब उठता है जब वह कहीं हो। स्लीपिंग सूट और यह गाउन तुम जैसे बड़े लोगों को शोभा देते हैं। हमारा क्या—यह कुरता खोला कि बस सोने के लिए तैयार !···पर ठहरो कमला, सचमुच तुमसे कुछ जरूरी बातें कर लेनी हैं।'

'बहुत जरूरी ?···क्या तुम्हारे इस समय सोने की अपेक्षा भी···?'

'सचमुच ।'

हंसकर कमला ने कहा—'तो कह डालो···पर इस मध्य रात्रि की निविड़ वेला में, इतनी ज़रूरी बात—प्रणय-निवेदन तो नहीं है न ?'

'वह तो तुम्हारे लिए बासी चीज़ है कमला ।···लो बैठो ।'····और मैं पुनः बैठ गया ।

'तो बैठना भी पड़ेगा ?···अच्छा लो, बैठ गई ।'····और वह मेरे ही पास सोफे पर बैठ गई नितान्त सटकर ।

मैंने अधिक भूमिका बांधना उत्तम नहीं समझा और कहा, 'इस लड़के के परिचय के सम्बन्ध में कुछ कहना है ।'

'तो कह क्यों नहीं देते ?···'

मैंने यथासाध्य अपने आपको स्वाभाविक बनाकर कहा, 'यह तुम्हारा ही पुत्र है कमला !'

किन्तु कमला ने मानो 'तुम्हारा' शब्द न सुनकर कोई और ही शब्द सुना हो, ऐसा भाव जतलाकर कहा, 'यानी तुम्हारे उन कपूर साहब का । ···बात जंचती दिखाई देती है । इतना शील, बुद्धि सब बड़े घराने में ही तो मिलते हैं । पर इसमें ऐसी ज़रूरी बात क्या थी ?'

'जरूरी बात कुछ नहीं ?'

'क्यों ! मैंने तुम्हें पहले ही तो कह दिया था कि मैंने एक सन्तान को जन्म दिया था, और वह सन्तान सौंप दी गई कपूर-दम्पति को ।··· नाम उनका भूल गई थी, सो उस दिन तुमने याद दिला दिया । पर ले क्यों आए इसे यहां ?···सोचा होगा, मुझे कमजोर बनाकर मेरा गर्व तोड़ दोगे ?'

कमला का यह आरोप सुनकर मैंने कमला की ओर देखा, किन्तु उसकी दृष्टि तब भी ज़मीन की ओर थी । मैंने कहा :

'कमला !—क्या तुम मुझे इतना ही ओछा समझती हो ?'

'तो फिर क्यों ले आए तुम इसे, सब कुछ जान-बूझकर ?—क्या तुम यही चाहते हो कि मैं सारी मनुष्यता से घृणा करने लग जाऊं, जहां

सारी मनुष्यता की श्रेष्ठतम अनुभूति होती है, उस निश्छल शैशव से विरोध करने लग जाऊं ?—' और आवेश में दोनों हाथों से अपने मुंह को ढांपकर उसने अपने चेहरे को मेरे घुटनों पर टिका दिया !

एक क्षण तक चुप रहकर मैंने उसके सिर पर अपना हाथ रखा, फिर बोला :

'तुम तो व्यर्थ ही उत्तेजित हो जाती हो कमला !—मैं क्या चाहकर इसे अपने साथ ले आया ? तमाशा जरूर देखना चाहता हूं, पर एकदम हृदयहीन होकर तो नहीं ! बल्कि तुम्हारी ही बात सोचकर तो मैं चाहता था कि इसके परिचय से तुम्हें अवगत करा दूं, ताकि तुम भी सावधान रहो ! और—खैर, जो कुछ हो; पर मैं सोचता हूं यदि बच्चा यह न समझे कि तुम ही उसके जन्म देने वाली मां हो, तो शायद उसके लिए अच्छा ही होगा । ले क्यों आया उसे साथ-साथ, सो मेरी यह मजबूरी थी—' और मैंने उसी तरह पड़ी हुई कमला के सिर में हाथ फेरते हुए वह सारी कहानी कह सुनाई, जिस तरह कमला के जाने के बाद नटनागर का तार, मेरा वहां प्रस्थान, मिसेज़ कपूर का अस्वास्थ्य आदि, जिनके बीच से गुजकर मुझे यहां तक पहुंचना पड़ा ।

सिर उठाकर कमला ने एक लम्बी सांस ली, और कहा—'सो यह प्रतारणा नटनागर के भाग्य में भी लिख गई, कि जिस दुर्भाग्य से वे बचना चाहते थे, उसीका संरक्षण उन्हें करना पड़ा । यदि उन्हें एक निमिष के लिए भी मालूम हो जाए कि यह लड़का वास्तव में कौन है, तो क्या हो ?'

मैंने कहा, 'तुम्हें जब मालूम हुआ, तो तुम्हें कैसा लगा ?'

'विशेष कुछ नहीं, केवल यही लगा कि तुम मुझे कसौटी पर कसना चाह रहे हो, और इसीलिए मैं उत्तेजित हो उठी थी । लो चलो—बहुत रात गई, उठो, कुछ सो लो—निश्चय समझ लो कि इस परिचय को वह बच्चा ही नहीं, यह मां भी कभी वास्तविक न समझेगी !'

सवेरे जब दरवाजे पर थपथपाहट हुई तो नींद खुली, जम्हाई लेकर

आंखें मसलीं, एक क्षण समझने में लगा कि यह जगह कौन-सी है, फिर दरवाजे की ओर देखकर बोला, 'धक्का दो, दरवाजा खुला हुआ ही है।' —और भीतर प्रवेश किया श्रीमती कमला नटनागर ने, बिल्कुल नये रूप में; स्नान कर चुकी थी, बिखरे हुए बाल बंगाली लड़की की तरह पीठ पर झूल रहे थे, जिनको सिर के पृष्ठ-भाग पर एक लट से बांध रखा था। घनी निविड़ केश-राशि कमर तक पहुंच रही थी। सफेद जॉर्जेट की साड़ी, जिसके नीचे नीले रंग का ब्लाउज़—बड़ी सुन्दर मालूम दे रही थी, आते ही हाथ जोड़कर हंसते हुए कहा, 'नमस्कार!'

मैंने हंसकर कहा, 'तुम्हारा मुंह देखा है आज···'

'मैं भी सवेरे से ही सोच रही हूं कि महाभारत का सूत्रपात कैसे किया जाए—सारी महाभारत को मन के परदे पर देख गई—नाना निगम, आगम, पुराण, किन्तु कहीं पर इस घटनावली से मेल नहीं मिला—' तभी बूढ़ा दरबान गोपाल, उसके पीछे वही अलसेशियन कुत्ता एक ट्रे में चाय की केतली और एक प्याला तथा प्लेट लिए हुए भीतर आया, कोने में से एक स्टूल खींचकर बिस्तर के पास उसने ट्रे रख दी। आते ही अलसेशियन सबसे पहले कमला के पैरों को सूंघने लगा, फिर मेरी ओर एक बार सरसरी निगाह से देखकर पुनः गोपाल के पास जा खड़ा हुआ।

गोपाल ने कहा, 'मैं बाहर ही बैठा हूं बीवीजी! आवाज़ दे दीजिएगा।'—और दोनों ही बाहर चले गए।

कमला ने प्याले में चाय उड़ेलकर मुझे देते हुए कहा, 'मालूम है कितने बज गए?'

चाय को मुह लगाकर मैंने कहा, 'तुम्हीं बता दो न।'

कमला ने इशारा किया। मैण्टल पीस पर एक सुन्दर चौकोर घड़ी में आठ बजने वाले थे।

'जरा जल्दी उठा दिया होता। तुम्हारे ये दरबान वगैरा क्या सोचते होंगे?'

'यही कि रात को एक बजे तो आए ही थे, और सोते-सोते दो-तीन

बज जाना कोई ताज्जुब की बात नहीं !'

तभी मुझे सोम की याद आई। पूछा 'अरे सोम ?'

'वह भी सो रहा होगा !'

'तुमने पता नहीं लगाया ?'

'उसे डिस्टर्ब करने से क्या लाभ ?—बच्चा है, अपनी मरजी से उठे···'

'ज़रा देखो—वह तो बहुत जल्दी उठने का आदी है।'

'तुम्हीं उठकर देख लो न !—यह जो खिड़की है !'—और कमला उठी, सामने दीवार में एक खिड़की है, जो इधर से बन्द है, कमला ने दरवाजे के पीछे खड़े होकर उसके पल्ले खींच लिए ! उस ओर खिड़की के ऊपर पर्दा फैला हुआ था, इसलिए एकाएक कुछ दिखाई नहीं दिया।

मैंने कहा, 'पर्दा हटाओ न !'

'न' कमला ने केवल गर्दन हिला दी।

किन्तु मालूम दिया, मेरी आवाज उधर उस कमरे में पहुंच गई थी, इसलिए एक ही क्षण में परदे को हटाकर सोम ने अपना मुंह खिड़की में डाला और कहा, 'गुड मार्निंग अंकल' और तभी उसे कमला भी दिखाई पड़ गई, 'ऐण्ड गुड मार्निंग आँण्टी !····'

मैंने कहा, 'भीतर आ जाओ सोम !—कूद आओ खिड़की से।'

सोम कमरे में हिचकिचाते हुए एक क्षण मेरी ओर दूसरे क्षण कमला की ओर देखते हुए कूदकर इधर आ गया। मानो आंखों ही आंखों में कहना चाहता था कि इस तरह खिड़की कूदकर उस कमरे से इस कमरे में आना बन्दर का काम हो सकता है, किसी सभ्य आदमी का तो नहीं ? मैंने कह दिया है सो मैं तो ठीक, किन्तु यह नारी मन से सोम को क्या सोचेगी ! पर कमला ही उसके निकट इतनी नई और मैं इतना पुराना हो उठूंगा कि इस असमंजस के बावजूद उसने मेरा कहना मान लिया।—उसके अभिवादन का हम दोनों ने ही उत्तर दे दिया।

देखा कि सोम न जाने कब से नहा-धोकर कपड़े बदल चुका है, और

जाने क्या कर रहा था !

मैंने पूछा, 'रात को ठीक नींद आई ?'

'बहुत अच्छी ! इट्स ए लवली प्लेस (बड़ा प्यारा स्थान है) पापा ने कहा था कि इन हिल प्लेसेस (पहाड़ी स्थानों) पर स्वास्थ्य का पूरा लाभ उठाने के लिए चार बजे ही उठकर घूम आना चाहिए। मुझे आज तो उठने में कुछ देर हो गई ! यों पांच बजे उठ जाता हूं—पर आँण्टी, एक अलार्म पीस का प्रबन्ध हो सकेगा क्या ?'

'ज़रूर !'

'बस तो कल से अंकल, आपको भी चार बजे उठा दूंगा !'—फिर वह पश्चिम की ओर खिड़की पर जाकर उसका परदा हटाकर बोला—'देखा आपने इधर क्या है ?'

मैंने सिर हिला दिया 'नहीं।'

'माइ गॉड ! आपने देखा नहीं ?—इट्स ए वण्डर फुली प्रेटी साइट (आश्चर्यजनक रूप से सुन्दर दृश्य)—मैंने अपने कमरे की खिड़की से देखा है ! नीचे ही एक बढ़िया तालाब है—खूब लम्बा-चौड़ा, उसमें यह पहाड़ी एक आइलैण्ड जैसी बसा हुई है। आइ से वण्डरफुल....'

सोम का उत्साह उसकी आंखों और चेहरे पर बरस रहा था। मैंने खिड़की से बाहर की कौन कहे, कमरे की साज-सज्जा, बनावट-चुनावट किसीपर ध्यान नहीं दिया था। अब अपने चारों ओर नजर डालकर तथा हाथ के प्याले को स्टूल पर रखकर मैं सोम के पास जा खड़ा हुआ। उसकी सहायता से खिड़की खोली। उसकी ऊंचाई खिड़की की ऊंचाई के बराबर थी, इसलिए मैंने उसे गोद में उठा लिया।

पल्ले खोलते ही मानो रुद्ध हवा का एक अप्रतिहत रेला सारे कमरे में घुस पड़ा, किसी तीसरे दर्जे का दरवाज़ा खुलते ही जिस तरह यात्रियों की भीड़ डिब्बे में पिल पड़ना चाहती है।—और बाहर तालाब की मनोहारिणी छटा के उसपार सघन वृक्ष-राजि से छाई हुई तटभूमि जो उदय होते हुए सूर्य की इस कोठी को उलांघकर आती हुई किरणों को

चूमने के लिए उदग्र हो रही थी। ऊपर आकाश एकदम से शुभ्रनील नीचे की झील का तरंगहीन प्रतिबिम्ब जैसा दिखाई दे रहा था। वास्तव में अपने बंगले के लिए जिसने यह स्थान चुना है, उसकी सूझबूझ को दाद देनी ही पड़ेगी।

कमला ने पास आकर कहा, 'देखती हूं तुमने तो स्नान वगैरा सब कर लिया है।'

'यस आँण्टी—आज नींद ज़रा देर से उड़ी—छः बजे, बस उठकर फिर 'प्रेयर'···'

'प्रेयर ?' कमला ने आश्चर्यान्वित होकर पूछा।

मैंने कहा, 'सोम मिशन स्कूल में पढ़ता है, वहां तो 'प्रेयर' प्रतिदिन करनी पड़ती है न !'

सोम ने कहा, 'बाइबिल भी पढ़नी पड़ती है स्कूल में तो।—पर हम तो हिन्दू हैं। पापा ने कहा, यों बाइविल पढ़ने में भी कोई नुकसान नहीं है, पर प्रेयर से तो आदमी का मन साफ होता है। आप 'प्रेयर' नहीं करतीं आँण्टी ?'

कमला ने मुस्कराकर कहा, 'मुझे सिखा दोगे ?'

सोम ने लजाते हुए कहा, 'आप तो मज़ाक करती हैं।'

कमला ने दोनों हाथों को उसके गालों पर लगाकर कहा—'मज़ाक नहीं, सच कहती हूं, प्रेयर-वेयर मुझे नहीं आती। बोलो—ब्रेकफास्ट मंगवा दूं ?'

'अभी से ?'—ब्रेकफास्ट हम साढ़े आठ बजे खाते हैं। पर अंकल जब तक तैयार न हो जाएं ! कोई बात नहीं—नौ बजे तक तो आप तैयार हो जाएंगे न अंकल ?'

मैंने कहा—'मैं न भी होऊं, तो तुम्हारी आँण्टी है, साढ़े आठ बजे तुम ब्रेकफास्ट लगा देने को कह दो कमला।'

'नहीं-नहीं, मैं आपके बिना नहीं खाऊंगा।'

'अच्छी बात है, तो मैं ही साढ़े आठ के पहले तैयार हो लेता हूं।

तुम कमला तैयारी के लिए कह दो।—हां, सोम, तुम भी आण्टी के साथ चले जाओ तब तक। इनसे गप लड़ाना।'

'वाह! गप लड़ाकर इनका समय क्यों बरबाद करूंगा?—मैं किताब पढ़ता हूं, आप अपना काम कीजिए आण्टी! ऐण्ड अंकिल यू टू—(और आप भी)'—और सोमदत्त पुनः उस खिड़की से कूदकर अपने कमरे में पहुच गया, खिड़की के किवाड़ उसने भिड़ा दिए, शायद फिर परदा भी खींच दिया। हम दोनों एक दूसरे की ओर मुंह बाए खड़े देखते रहे।

मौन कमला ने ही भंग किया, 'देख क्या रहे हो?—यों देखते रहोगे तो साढ़े आठ क्या सभी कुछ बज जाएंगे।'

मैंने कहा, 'तुम्हारी आंखों से उसकी आंखों में कितना साम्य है।'

'चलो हटो।'

'अच्छा कमला, क्या एक क्षण को भी तुम्हारी यह कामना नहीं होती, कि यह तुम्हारा पुत्र होता।'

कमला ने मेरे गाल पर एक चिकोटी काटी और झपाटे के साथ कहा, 'तुम जैसा असाध्य शठ जो मेरे मातृत्व को छाए हुए है—देखो देर न हो····' और वह किवाड़ बन्द करके बाहर हो ली।

इसी तरह अमन्द उत्साह, निश्चिन्त अवकाश और अशेष सुविधाओं के बीच दिन बीतने लगे। सोम तीसरे-चौथे दिन अपने पिता को चिट्ठी लिख देता था, सप्ताह में एक बार मैं भी। मिस्टर कपूर की चिट्ठी भी सप्ताह में एक बार आ पहुंचती थी। पुत्र के पत्रों से उन्हें विश्वास हो गया था कि सोम बहुत ही अच्छे आदमियों के संसर्ग में आ गया है, और यह संगति उसके शारीरिक तथा मानसिक विकास की दृष्टि से बड़ा सहायक होगी, मानो इसका भी उन्हें विश्वास हो गया है।

उस दिन देलवाड़ा विमलशाह के जैन मन्दिर देखने गए। वहां का शिल्प देखकर प्राचीन भारत की समृद्धि की कल्पना की जा सकती है। आज जीवन में यदि मनुष्य कला का ऐसा चरम रूप नहीं देख पाता तो हम युग के संघर्ष का बहाना लेकर अपने अभाव से समझौता कर लेते

हैं। उस युग में स्वयं इन मन्दिरों का निर्माता विमलदेव शाह महमूद गजनवी से संत्रस्त होकर सोमनाथ की पवित्र भूमि से खदेड़ा जाकर इस प्रान्त में आ बसा था, और यहां आकर उसने कला के जिस नयनोत्तेजक संसार की अभिराम सृष्टि में योग दिया, वह क्या केवल यह कहकर भुला दी जा सकती है कि वह केवल मात्र दिमागी ऐयाशी थी ?—या वह केवल श्रमवर्ग का अहेतुक शोषण था ?

सोम का ग्रहणशील मस्तिष्क भी इस सौंदर्य-सृष्टि को देखकर बड़ा प्रभावित हुआ। प्रभावित न हुई केवल कमला। इतिहास वह भी खूब जानती है, बल्कि कहूंगा इतिहास का मेरा ज्ञान तो सतही ही है, किन्तु कमला ने उसका विधिपूर्वक अध्ययन किया है, और अध्यापन कर रही है। वह कहती है कला का यह लीला-विलास रचयिता के अभावशील मानस का द्योतक तो है ही, वह उसकी विद्वेष भावना को भी प्रतिपादित करता है। विमलदेव शाह जैन मतावलम्बी था, उन दिनों जैन मत तथा शैव मत में बनती न थी। सोमनाथ के प्रभूत ऐश्वर्य को नीचा दिखाने के लिए ही विमलदेव शाह ने इन मन्दिरों का निर्माण कराया था, उसके सौभाग्य से महमूद ने पहले ही सोमनाथ को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया था। अतः ऐश्वर्य के एकाकी अधिकारी होने के नाते इनका खूब प्रचार हुआ। क्या पता शैव मत को पदस्थ देखने की विमलशाह के मन की दबी वासना ही महमूद गजनवी की विजय का कारण न बनी हो ! तब सारे इतिहास को ही दूसरे दृष्टिकोण से देखना पड़ेगा।

बहस खाने के बाद भी चलती रही। नौ बजे के पहले ही थका हुआ सोम सो गया। मैंने कहा, 'अच्छा, अब इस बहस को बन्द करो। यदि करना ही हो, तो दूसरी बातें करें—वरना इतना थक गया अनुभव करता हूं कि सो जाऊं।'

'तो ठीक है—सोना ही चाहते हो, तो दूध ले आऊं ?'

'भिजवा देना, पी लूंगा।'

'मैं लेकर आती हूं—' और वह उठकर जाने लगी।

मैंने कहा, 'बैठो···' कमला बैठ गई तो मैंने कहा, 'मेरे लिए दूध का तुम्हारा इतना आग्रह है, पर सोम के लिए तो तुमने कभी आग्रह नहीं किया ?'

'वह तुम्हारे जैसा अबाध्य थोड़े है।—वह कुलीन है, अच्छे संस्कारों को लेकर बढ़ रहा है। वह तुम्हारी तरह छिपाता नहीं। नहीं पीना है तो साफ कह देगा—पर जब निश्चित हो गया है तो ठीक समय पर बिना किसीके कहे दूध भी पी लेगा, कपड़े भी बदल लेगा, और ठीक समय पर लेट जाएगा—और जानते हो ?—कितना साफ मन है उसका—लेटते ही सो भी जाएगा।'

'पर कमला ! एक बात कहूं ?'

'कहो।'

'तुम उससे डरती क्यों हो ?'

'मैं ?—उस छोटे-से बच्चे से डरती हूं ?—कहते क्या हो !'

'सो ही तो ! जब तक मैं नहीं होता, तब तक तुम कभी उसके पास भी नहीं जातीं। यदि कभी उसे किसी छल से तुम्हारे पास भेजता हूं तो या तो तुम उसे लौटा देती हो, या खुद ही उसे लेकर मेरे पास टपक पड़ती हो। या मुझे गवाह बनाए रखना चाहती हो ?'

कमला मानो आश्वस्त होकर मेरे पलंग पर पैरों के पास बैठ गई, फिर बोली—'न तो मैं उससे डरती हूं, न तुम्हें ही गवाह बनाए रखना चाहती हूं।'

'तो फिर तुम शायद अपने ही से डरती हो !'

'अपने से भी किसलिए ?'

'सो तो तुम्हीं जानो ! शायद डरती हो कि दिल के कोने से कहीं मां न जाग उठे !'

कमला के मुंह पर मन्द हंसी छा गई, वह बोली, 'एक घटना याद पड़ गई। हमारे यहां जो दूध दे जाया करता था, उस ग्वाले का बछड़ा मर गया। गाय बड़ी दुःखित हुई, और सबसे बड़ी बात जो उसने की, वह

थी दूध बन्द कर देने की। ग्वाला अभी ही काफी रकम खर्च करके उसे खरीद लाया था, नुकसान कैसे बर्दाश्त करता ? उसने बछड़े के मुंह और पीठ की खाल को सुरक्षित करवाया, और उसमें भूसा भरकर नीचे पैरों की जगह चार लकड़ियां लगा दीं। बस, उस गाय को उसका बछड़ा मिल गया। पहले तो उसे गाय के स्तनों के पास खड़ा कर दिया जाता, फिर उसे मुंह के सामने—बस गाय उसकी पीठ चाटती जाती, और ग्वाला आवश्यकतानुसार दूध दुहता जाता। आज की दुनिया शायद नारी को उस गाय से तनिक भी ऊंची अनुभव नहीं करती। वात्सल्य या ममता का मुर्दा उसके सामने रखकर वे उसे मनमाना दुहते चले जा रहे हैं, और गाय है कि उस मुर्दे के पीछे-पीछे दौड़ती है, रंभाती है, अपना सर्वस्व निछावर कर देती है—देखने वाले तुम्हारे जैसे दर्शकों को, अनायास ही हंसने के लिए मसाला मिल जाता है।'

कमला की बात को सुनकर कुछ क्षणों के लिए निरुत्त हो जाना पड़ा।

कमला ही कुछ देर चुप रहकर, ज़रा हंसती हुई बोली :

'माता की बेगार मैं ही क्यों पालूं ! उससे लाभ ही क्या है ? लड़के की ओर देखती हूं तो पाती हूं कि मां बनकर भी मैं उसे विशेष क्या दे सकूंगी ? उसे मां की जरूरत है ही कहां ?'

'सो उस बेचारे ने अनुभव नहीं की है। देखती तो हो, यह उमर है उसकी खाने-खेलने की, निश्चिन्त, बेफिकर—किन्तु अपनी फिक्र उसे खुद ही करनी पड़ती है, इस दिशा में वह इतना आगे बढ़ गया है कि दूसरों को दखल देने का साहस नहीं होता। उसकी मां होती तो क्या उसपर इतना भार लाद दिया जाता ?'

'शायद यह भार नहीं, पर समाज उसपर ऐसा भार लाद देता, कि उसके पैर ही पंगु हो जाते। और मां का प्यार भी तो एक दिन उसे छोड़ना ही पड़ता है, मां के कन्धे पर बैठकर कोई माई का लाल दुनिया के क्षेत्र में अग्रसर नहीं होता—तुम्हारा मनोविज्ञान भी तो कहता है।

उसे अपने पैरों खड़े रहने की शक्ति यदि जल्दी आ गई है तो यह उसके लिए शुभ ही है। उस दिन सेकण्ड शो देखकर जब देर से लौटे थे, तो सुनोगे उसने क्या कहा था ?'

'कहो।'

' 'उसे बड़ी जोरों से नींद आ रही थी। कपड़े बदलने के लिए जब वह कपड़े उतारने लगा तो नींद के मारे उसके हाथ इधर-उधर पड़ रहे थे। मैंने कहा—'मैं खोल दूं।'

उसने कहा, 'नहीं मैं बदल लूंगा, आप तकलीफ न करें।'

मैंने कहा, 'तुम्हें नींद आ रही है, मैं जल्दी खोल दूंगी—उसमें हर्ज ही क्या है !'

'हर्ज है ! पापा ने कहा था कि लड़कियों के सामने कभी कपड़े नहीं बदलना चाहिए।'

मैंने कहा, 'मां के सामने भी नहीं ?'

उसने कहा, 'मां के सामने तो खैर बदलने ही पड़ते हैं, बल्कि मां होती है, तो वह खुद बदल देती है।'

'सो ही तो, लाओ मैं बदल देती हूं।'

'पर आप तो मां नहीं हैं।'

'अच्छा, यदि मैं तुम्हारी मां होऊं तो ?'

'जब हैं ही नहीं, तो क्यों उसे मान लिया जाए ?'

'अगर मैं होती तो ?'

सोम हंस दिया, और बोला, 'यों तो आप मां के बराबर हैं ही आण्टी, लेकिन मां तो आप अपने ही बेटे की हो सकती हैं, दूसरे के बेटे की नहीं ! लीजिए मेरी नींद भी उड़ गई और यह कहकर वह बाथरूम में चल दिया।'

मैंने एक लम्बी सांस ली और कहा, 'कह नहीं सकता, यदि इसे प्रकृत मां मिली होती, तो इसका विकास और कितना अधिक हुआ होता।'

'कुछ न होता महाशय, मैं कहती हूं। सोचती हूं कि समाज इससे शिक्षा ले ! किसका बीज, कहां अंकुरित हुआ, किसने पाला—यदि समाज सभी शिशुओं का दायित्व अपने सिर पर ले ले तो मां-बाप को भी छुट्टी मिले, और बच्चे योग्य नागरिक हो जाएं, उसी तरह जिस तरह भ्रम्यमाण (सरक्यूलेटिंग) सिक्के की कीमत बढ़ जाती है। और फिर मां को छुट्टी मिल जाए तो नारी वास्तव में स्वतन्त्र हो सकेगी।'

'मैं तुम्हारी इस बात को नहीं मानता। मातृत्व की भावना पर ही तुम कुल्हाड़ी चला रही हो। हो सकता है कि यह सामाजिक गुण न हो, पर व्यक्तिगत गुणों में तो इसका खास स्थान मानना ही पड़ेगा। पर आज अधिक बहस नहीं। थक गया हूं। थक तुम भी गई हो। चलो जाओ, सोओ।'

'ना, सोना अभी नहीं। मैं दूध लेकर आती हूं।'

एक दिन रात्रि को खाने के बाद लाउंज में बैठे गपशप करते ही रात बीतने लगी, और एकाएक ही जब घड़ी ने नौ बजाए, तो सोमदत्त ने उठकर कहा :

'वेल अंकल, इट्स टाइम फॉर मी गो टु स्लीप, गुड नाइट टु यू—गुड नाइट टु यू ऑण्टी टू। (यह मेरा सोने का समय है, शुभ रात्रि—आपको और ऑण्टी को भी !)'

कमला ने कहा 'सोम ! तुम तो अंग्रेजी ऐटीकेट्स जानते हो ! सोने के पहले अंकल को 'किस' (चुम्बन) नहीं करते ?'

लड़का लजा गया, बड़ी-बड़ी आंखों को मेरी ओर उठाकर फिर उसने नीचे कर लिया, और बोला :

'मन तो बहुत करता है ऑण्टी लेकिन···'

'डर लगता है ?' कमला ने पूछा !

'नहीं, शरम लगती है।'

'शरम किस बात की ?' कमला ने ही पूछा।

'यही कि मन में क्या समझेंगे ? वे तो इंगलिश एटीकेट मानते नहीं !'

'न सही, तुमसे गुड नाइट तो करते हैं ! अच्छा मन हो तो उन्हें जरूर 'किस' कर लो। वे खुश ही होंगे।'

सोम ने फिर मेरी ओर देखा, हसरत भरी आंखों से, मैंने इशारे से हंसकर उसे पास बुलाया। और जब वह पास आ गया, तो दोनों बाहुओं में भरकर मैंने उसे चूम लिया। सोम ने भी सकुचाते हुए मुझे चूमा और जाने के लिए उद्यत हो गया।

कमला की ओर मेरी छिपी दृष्टि थी, मैंने कहा, 'और आण्टी को किस नहीं करोगे ?'

लड़का एकदम खड़ा हो गया। एकाएक ही मानो उसकी समस्त झिझक काफूर हो गई, और प्रश्न की मुद्रा में बोला—'आँण्टी को ? नो-नो-गुड नाइट' और वह प्रायः भागकर ही अपने कमरे में चला गया।

कमला ने मेरी ओर देखा, मैंने उसकी ओर—कहीं, अति दूर, आंखों की अनेक सजल परतों के पीछे कोई प्यास छिपी हो शायद, पर कमला ने कहा, 'क्यों बच्चे को तंग करते हो ? अगर अपने ही अधरों की प्यास से हिया जल रहा हो, तो साफ क्यों नहीं कह देते ! 'अधर पर अधर का मधुर साराधार वर्षण !' तुम्हारी ही लिखी हुई तो कविता है।'

'अपना कथन तो मैं शेष कर चुका हूं कमला ! रही मेरे अधरों की प्यास, वह रस ही नहीं, रक्त भी पी चुके हैं। अब तो केवल आंखों के खारे आंसुओं का सागरमात्र उलीचना शेष रहा है।'

'क्या आंसुओं की बात चलाई है ! चलो उठो, यहां शीत बढ़ रहा है, तुम्हारे कमरे में चलें।'

यों ही निरालस आनन्द में दिन बीत रहे थे कि एक दिन मानो अकस्मात् ही लौटने का दिन आ गया। इसी अवधि में सोम मानो इस सम्पूर्ण दृश्यावलि और वातावरण का एक भाग बन गया था। यद्यपि अपने माता-पिता को देखने की उसकी उत्कट इच्छा थी, किन्तु इसके

बावजूद वह कुछ-कुछ उदास-सा दिखाई दे रहा था। इस जगह रहकर हम सभीने मन का स्वास्थ्य और शान्ति जो पाई थी।

रात को ग्यारह बजे की गाड़ी से जाना निश्चय हुआ था। संध्या को यहां से लगभग ६ बजे रवाना हो जाएंगे, तब तक खाने-पीने से भी निपट लिया जाएगा। सामान सब बंध-बंधा गया है। सोम बाहर दालान में कोठी के अलसेशियन कुत्ते के साथ खेल रहा है। मैं दिवानिद्रा से उठकर चाहता हूं कि यदि एक कप चाय मिल जाए तो सुस्ती उड़े, किंतु कमला कहीं नज़र नहीं आती। शायद काम में व्यस्त हो। गोपाल को बुलाया जा सकता है, किन्तु इन कई दिनों में मानो इस दुनिया में मेरा कमला के सिवा कोई अपना नहीं है। इसपर जब कभी सोचने की चेष्टा की है, अपने ऊपर हंसी ही आई है, और समस्या को वहीं छोड़कर अपने दैनंदिन काम में लग गया हूं।

चाय लेकर जब कमला आई तो आज इसी सूत्र को ले बैठा, बोला :

'घर जाने पर मेरी तो बड़ी मुसीबत हो जाएगी।'

'क्यों ?'

'तुम्हें वहां सदैव निकट कहां पाऊंगा ? इतनी आदत खराब हो गई है कि···'

'कहो न ! रुक क्यों गए ? कोई दूसरा सुन तो नहीं रहा है।'

'तुम जो सुन रही हो।'

'अपनी कमज़ोरी नहीं पकड़ाना चाहते ? जाने दो। उपाय मैं बताती हूं।'

'क्या ?'

'मुझसे शादी कर लो !'

'तुमसे ? और नटनागर ?'

'उनकी छाप तो मिट गई है।'

'तुम्हारे मन से—पर शरीर से ?'

'तुम शरीर तो चाहते नहीं ?'

'पाने को बाकी तो वही रह जाता है ! मन तो तुम शायद कभी का दे चुकी हो।'

कमला एकाएक गंभीर हो उठी, बोली, 'तो क्या उन्हें तलाक दे दूं ? मैंने एक बार प्रस्ताव भी किया था। चरित्र-हीनता का अपराध स्वीकार करके !'

'तुम्हारा साहस तो कम नहीं है कमला, किन्तु····'

'किन्तु क्या···'

लम्बी सांस खींचकर मैंने कहा, 'पाकर भी क्या तुम्हें पा सकूंगा कमला ? तुमसे डर लगता है, जिसको अपनी पेट की सन्तान का मोह न बांध सके, पराये पुरुष की छाया उसे कब तक भुलाए रख सकेगी ? मेरे पास ऐसा है क्या जो तुम्हें दे सकूं और जिसे पाकर तुम बंधी रह सको ?'

कमला ने मेरे गले में हाथ डाल दिया और बोली, 'तुम्हारे पास कुछ नहीं है, इसीलिए तो सोचती हूं कि यदि अपने आपको तुम्हें दे सकूं तो उसे तुम रख सकोगे। और तो कोई मुझे रखना चाहता नहीं। नट-नागर ने एक तरह से मुझे निकाल ही दिया है। मेरे पुराने प्रेमी कभी से किनारा काट गए हैं—और तारीफ यह है कि देने लायक मैं अब ही कुछ हुई हूं। रूप तो कभी मेरे था नहीं—' और एक लम्बी सांस लेकर उसने अपना हाथ पुनः समेट लिया। मानो एक क्षण का सांस लेकर फिर बोली, 'फिर भी यदि किसीको दरकार हो, तो उसको प्रस्तुत करने की सज्जा मैंने सीख ली है—उसके बाद यौवन की पूंजी भी मेरे पास इस समय तो कम नहीं ! सम्बन्ध के दूसरे सीमान्त पर देखो, मैं आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर, समाज की दूसरी बौद्धिक प्रस्थापनाओं में मेरा उचित मान-सम्मान—और यदि कोई इससे भी आगे चाहे तो हृदय की गहराइयों में भी मैं कंजूस नहीं, यदि इसे कोई आध्यात्मिक मिलन ही कहे तो मेरे जीवन का शेष सम्बल भी उसके चरणाम्बुजों में उत्सर्ग है ! किन्तु फिर भी मुझे कोई नहीं चाहता—कोई नहीं चाहता ! क्यों ?

आज तुम भी कहते हो, तुम मुझसे डरते हो। ऐसा क्या है मुझमें ?' और वह उत्तेजित मेरे सामने आंखें फैलाकर खड़ी हो गई। आंखों में एक आग थी, जो मानो सब कुछ को जलाकर भी शायद शांत न होगी।

मैंने कहा, 'कमला ! बैठो, उत्तेजित मत होओ। तुममें एक आग है, जिसने तुम्हारे अन्तर के समस्त प्राचीन कूड़ा-करकट को जला डाला है, किन्तु शेष सृष्टि तो अभी उसी कूड़े-कर्कट की बनी हुई है। तुम्हारी लपटों में जो आएगा, वही जल जाएगा, तब वह बेचारा डरे क्यों नहीं ?'

'तो क्या मुझे अपनी ही आग में जल मरना होगा ? दुनिया में कोई मेरा न हो सकगा ?'

'जो हैं, उन्हींको अपना बनाने का प्रयत्न करो। अपने भीतर का तुमने सब पवित्र और नया कर लिया है, अब अपने बाहर को उसी आभा से दीप्त करो, उसका शोधन करो और उसे भी पवित्र बनाओ। जलाकर नहीं, भस्म करके नहीं—जलाओ तो इस तरह जलाओ कि अशुद्ध सब जल जाए, और शेष केवल स्वर्ण रहे, पहले से अधिक देदीप्यमान उज्ज्वल बनकर ! याद है ? उस दिन दावत की रात को मैंने कहा था कि जहां तक कोमलता के गुणों का प्रश्न है, नारी पुरुष से सदैव श्रेष्ठ रहेगी। किसीको वश में करना हो तो उसे अपने श्रेष्ठत्व से वश में करो, फिर उसके साथ कदम मिलाकर दुनिया की किसी भी मंज़िल को पहुंचना कठिन न होगा। और कोमलता के गुणों का विकास तो नारी केवल पत्नी बनकर या माता बनकर ही कर सकती है।'

'पर कोई पति और पुत्र तो बने !'

'दोनों ही तो हैं तुम्हारे ?'

'एक मानसिक सीमा से दूर, दूसरा शारीरिक सीमा से दूर।'

'चेष्टा करोगी कमला, तो दोनों मिलेंगे। और···' मैंने हंसकर कहा, 'तब तक वह पुत्र न सही, मैं तो तुम्हारा पुत्र हूं ही ! इस अपाहिज की सेवा करो और दुनिया के काबिल बनाने की चेष्टा करती रहो।'

कमला ने हलके से मेरे गालों पर एक चपत लगाकर कहा, 'बड़े शठ हो—दुनिया तो कहती है कि तुम मेरे पति का आसन हड़प बैठे हो !'

'कहती है क्या दुनिया ?'

'न हुआ, तो अब कहेगी ।'

'तो फिर इसी लड़के को क्यों नहीं पकड़ लेतीं ?'

'पराए धन को ? ना-ना—पराई पूंजी से व्यवसाय नहीं चलता ।'

'आजकल तो खूब चलता है कमला—सिर्फ ब्याज भर देना पड़ता है । और मैं क्या पराया धन नहीं हूं ?'

'हो सकते हो, किन्तु मेरी आशा तो अब तक यही है ।'

मैंने एक लम्बी सांस ली, और कहा, 'न जाने किस बुरे मुहूर्त में तुम्हारे साथ परिचय हुआ था कमला । किन्तु, यदि परम कल्याण को पाना हो, तो चेष्टा करो कि एक भी व्यक्ति तुम्हारी भावना के दरवाजे से तुम्हें कोसता हुआ न जाए, चाहे वह नटनागर ही क्यों न हो, और एक भी बच्चा तुम्हारे वरद मातृत्व से वंचित न हो, चाहे वह सोमदत्त ही क्यों न हो ?'

और उठकर मैं मुंह धोने के लिए बाथ-रूम में चला गया । कमला निर्जीव प्रस्तर प्रतिमा की तरह, मानो गले से निकालकर फेंकी हुई सूखी पुष्पमाला की तरह निस्तेज मेरे पलंग पर बैठी रही, शून्य आंखें लिए, शून्य मन लिए, शून्य भावना लिए, और कदाचित् अपना शून्य संसार लिए हुए ।

२१

इधर लौटे तो देखा कि चाय के कप में एक तूफान बरपा हो गया है। बात यह थी कि बड़ी आसानी से पाया हुआ रुपया कमल के कानों में एक हजार जिह्वाओं से बोलने लग गया था। किसी तरह उसे खबर लग गई थी कि यह रुपया मेरी ही जेब से उसकी जेब में पहुंचा था; यद्यपि इससे उसकी समस्त समस्याएं हल हो गईं, किन्तु उसके पश्चात् ही कमला की अनुपस्थिति, साथ ही मेरा भी पलायन, फिर जेब में तत्काल ही रेलवे से पाए हुए शेष रुपयों का बोझ—बहुत बड़ा साहित्यकार कमल न था, किन्तु जितना कुछ था, उससे एक कहानी तो गढ़ ही सकता था; ऐसी कहानी, जो ठल्ले से लगे हुए और निठल्ले दोनों के मनों को उलझाए रखने के लिए पर्याप्त हो। दूसरा काम उसने किया श्री नटनागर से सम्पर्क साधने का। उन दोनों के बीच पहले खाई बन चुकी थी अवश्य, किन्तु अब तो कमल भी अपने आपको अग्राइव्ड (पीड़ित) अनुभव करता था, इसलिए समानधर्मिता के आधार पर उसने नटनागर को पत्र लिखकर अपनी सूचना ज्ञापित कर दी। दूसरे कमला और उसके सम्बन्ध को लेकर सीधे नटनागर से उसकी कोई बातचीत नहीं हुई थी इसलिए आंख की शर्म का प्रश्न भी न था। अतः वह यह लिखना भी न भूला कि श्रीमती कमला नटनागर जब वहां पर उसीके भरोसे अध्ययन के लिए रखी गई थी, तो अब जबकि उसका 'वार्ड' (अभिभृत) उसके आदेश से बाहर जा रहा है, वह उनके लिए उत्तरदायी न होगा!

छुट्टी गए हुए नटनागर को यह पत्र तत्काल तो नहीं मिला, पर उस समय तक तो मिल ही गया था, जब छुट्टी से लौटने पर कपूर साहब ने सोमदत्त के सर्वांगीण विकास की चर्चा करते हुए नटनागर के निकट उसके मित्र की जी भर कर प्रशंसा की, और उन्हें अशेष धन्यवाद दिया।

यथासमय नटनागर ने मेरी और मेरी तथाकथित बहिन का आभार प्रदर्शित करने में भी कोई संकोच न किया; सब कुछ यथापूर्व होते हुए भी मुझे मानो मालूम हुआ कि उनके मन पर मुझे लेकर पुनः एक बोझ आ पड़ा है।

कुछ ही दिनों के बाद कपूर साहब दौरे पर आए, साथ में सोमदत्त को लिए हुए और चपरासी के साथ मुझे सूचना भिजवाई कि क्या वे मिलने के लिए मेरे घर आ सकते हैं ?

मैं एक छोटा-सा आदमी, कपूर साहब जैसा बड़ा सीनियर स्केल्ड अधिकारी मेरे घर आए—मै उनकी किस तरह अभ्यर्थना कर सकूंगा, आदि सोचकर बोला—'ज़रूरत क्या है भाई ?—उनको जब सुविधा हो, समय पूछ आओ, मैं स्वयं जाकर उनसे मिल लूंगा। इस समय तो देखते ही हो, बड़ा बेवक्त है। संध्या को पांच-साढ़े पांच तक शायद उन्हें असुविधा न होगी। मैं खुद स्टेशन पर पहुंच जाऊंगा। वहीं तो होंगे ? या अफसरों के रेस्ट-हाउस में ?'

'जी हां, सैलून में ही ठहरे हुए हैं।'

पांच बजे मैं जाने की तैयारी कर ही रहा था, कि दरवाज़े पर कमल की आवाज़ सुनाई दी। खिड़की में से झांककर देखा तो, कमल के पीछे ही कपूर साहब, और उनकी अंगुली पकड़े हुए सोमदत्त ! भाग्य से नौकर अभी गया नहीं था। चाय पी चुका था, किन्तु उसे पुनः पानी चढ़ाने के लिए कहा, तथा एक पांच रुपये का नोट उसे देकर बोला कि बाजार से जाकर बढ़िया नमकीन, मिठाई और ताजे फल-फूल ले आए।

दरवाज़ा खोलकर मैंने नमस्ते की। मैं कुछ कहूं उसके पहले सोमदत्त 'अंकल-अंकल' कहता हुआ मेरे पैरों से लिपट गया। मैंने उसे गोद में उठाकर कपूर साहब से कहा :

'आपने तो मुझे लज्जित कर दिया कपूर साहब। कहां आप, और कहां मैं ? बल्कि मैंने तो पियून से कहा भी था कि अगर आपकी सुविधा का समय मालूम हो जाता, तो मैं खुद वहां उपस्थित हो जाता।'

'सो मैं ही उपस्थित हो गया तो कोई हर्ज है ?—मैं बड़ा ही सही, पर आप भी क्या कम बड़े हैं ?—मुझे मालूम है कि आप कितने बड़े 'राइटर' (लेखक) हैं, फिर मैं आपके निकट कितना कृतज्ञ हूं, यह आप कैस समझ सकते हैं !'—फिर मेरी पीठ पर हाथ रखते हुए उन्होंने सोम को कहा, 'अरे सोम, नीचे उतरो बेटा, अंकल को 'इनकन्वीनिएन्स' (असुविधा) होती है !'

मेरे विरोध के बावजूद सोम नीचे उतर गया। मैंने कहा, 'सोम से इन्कन्वीनिएन्सड् होने का जितना अधिकार आपका है, उतना न हो तो भी कुछ अधिकार तो आपने मुझे दिया ही है।'

'कुछ क्यों—मेरे अधिकार से भी बहुत अधिक।—बल्कि, ओझा साहब, यदि आप कहने दें तो कहूंगा कि ऐसी ही कोई दुरभिसन्धि लेकर मैं आपके पास आया हूं।' और वे हंसने लगे।

फिर देखकर बोले—'यह आपका ड्राइंग रूम है !'

'जी, ड्राइंग रूम किसे कहते हैं, यह गरीब लेखक क्या जाने !—पर शब्द से उसका परिचय अवश्य रहता है, नाम वह कुछ दे ही लेता है।—तशरीफ रखिए !'

तीन-चार कुर्सियां रख छोड़ी हैं बीच में—और उनके बीच में एक तीन पायों का गोल टेबल ! कमला की मेहरबानी से अब इसपर एक सफेद सुन्दर फूलों से कढ़ा हुआ मेज़पोश रहता है। उसने एक फूलदान की व्यवस्था भी कर दी है। उसके स्कूल का माली प्रत्येक प्रातःकाल उसकी ओर से ताजे फूलों का एक गुलदस्ता इसपर सजा जाता है। कुर्सियां साधारण हैं, उनके ऊपर किसी जमाने में गद्दियां थीं, उसके बाद उन्हें बदलने की सुविधा न रही, और एक दिन उन्हें अधिक प्रयोग के अनुपयुक्त समझकर विदा कर देना पड़ा। कुछेक साल केन की बैठक का इन्तजाम किया, किन्तु जब वह शीघ्र ही टूटने लगी तो पुनः प्लाईवुड की सीट लगवा दी। तब से अब तक वही ठीक काम दे रही है। उधर खिड़की की ओर एक सामान्य-सा राइटिंग टेबल है, जिसपर मेरे लिखने

का काम होता है। पहले वहां भी ऐसी ही कुर्सी थी, किन्तु अब कमला के अनुरोध के फलस्वरूप एक सुन्दर गद्दी उसपर बिछी हुई है। उसके पास ही, दूसरी खिड़की से लगा हुआ पलंग रखा है। उसपर हैण्डलूम की एक गहरे हरे रंग की सादी चादर बिछी हुई है। खिड़की और दरवाज़े पर भी हरे परदे लगे हुए हैं, पर इन परदों को भी कमला के हाथ ही का वरदान कहना चाहिए। पहले ये भी न थे। एक कोने में स्टूल पर एक टेबलफ़न रखा हुआ है। दीवार पर एक ओर तस्वीर है महात्मा गांधी की, ठीक उसके सामने दो तस्वीरें हैं। एक है कविगुरु रवीन्द्रनाथ की, दूसरी उपन्यास-सम्राट् शरत्चन्द्र की। एक ओर है एक ग्रुप की फोटो, जो रेलवे से अवकाश ग्रहण करते समय मित्रों की विदाई का स्मरण दिलाती है। इतना होने पर भी दीवारें निराभरण नहीं हैं। चारों ओर पांच-छः कैलेण्डर लगे हुए हैं। यह सब मित्रों की भेंट हैं।

गादी वाली कुर्सी खींचकर मैंने कपूर साहब को बैठने का इशारा किया, हंसकर वे दूसरी सादी कुर्सी पर ही बैठे। मैं सामने की दूसरी कुर्सी पर बैठा। सोम बैठा बाईं कुर्सी पर। कमल तब भी खड़ा ही था, वह बोला, कपूर साहब को लक्ष्य करके ही :

'तो सर—मैं चलूं ?'

मैं कुछ कहूं, उसके पहले ही कपूर साहब ने कहा, 'यश जोशी, यू कैन गो। थक्यू फॉर द ट्रबल टु शो मी राउण्ड !' (तुम जा सकते हो ! मुझे मकान दिखाने का कष्ट उठाने के लिए धन्यवाद।)

कमल ने जब मुझे भी नमस्ते किया, तो मैं अपने आपको रोक नहीं सका, बोला, 'ठहरो, चाय पीकर जाना कमल ! दो मिनट में तैयार हुई जाती है।'

'नहीं भाई साहब, मुझे कुछ और काम भी है ! मेरा क्या—किसी भी दिन आकर पी जाऊंगा। थैंक्यू वेरी मच ! बाई-बाई !'

और वह उल्टे पैरों दरवाजे का परदा ठेलकर बाहर हो गया।

मैंने महसूस किया कि कपूर साहब और कमल के बीच में स्वामी-

सेवक का भाव है, और उसे दोनों ही ठीक तरह से बनाए रखना चाहते हैं ! मैं बीच का विसर्ग हूं, सन्धि होने पर भी एक विकलांग संयुक्ति दोनों के बीच अवश्य रहेगी। यद्यपि कमल के इस तरह चले जाने से मेरे मन पर एक बोझ-सा अनुभव हो रहा है, पर जहां तक कमल का प्रश्न है, वह इसे बिल्कुल स्वाभाविक समझे था, इसका भी मुझे विश्वास है।

कुछ देर इधर-उधर की बातें होती रहीं। मि० कपूर ने पूछा, 'मैंने सुना, पहले आप रेलवे में ही थे ?'

'जी हां, लगभग पन्द्रह-सोलह वर्ष इसी लाइन में बिता चुका हूं।'

'फिर छोड़ क्यों दिया ?'

'कई कारण थे कपूर साहब ! आप तो जानते ही हैं, आज के युग में आदमी के सीधे रहने से काम नहीं चलता ! सीधी अंगुली से घी निकलता भी नहीं !'

'समझा नहीं मतलब !'

'कर्मचारियों की सीनियर स्केल में था। पहले जो अफसर थे उनकी कृपा थी, काम चाहते थे वे सिर्फ, इसलिए खुश थे। तरक्की जल्दी-जल्दी मिली, तो दोस्तों के साथ-साथ दुश्मन भी होते गए। फिर एकाएक ही सिर के अफसर बदल गए। बस, दुश्मनों की बन आई। दूध की मक्खी की तरह पहले तो मुझे स्टोर्स में बदल दिया, मेरी उन्नति की जगह पर उनका एक चापलूस रिश्तेदार आ जमा। लोगों की पौ बारह हुई, वहां बहुतेरों के सितारे डूब गए। इधर मर्जर (विलयन) निकट आता जा रहा था, ऐसी-ऐसी तबदीलियां हुईं कि क्या कहा जाए ! मैंने सोचा, यहां पर सीधे आदमी का गुजारा नहीं है, बस त्याग-पत्र देकर अलग हट गया।'

'यह तो कुछ अच्छी बात नहीं हुई। आपको अपने अधिकार के लिए लड़ना चाहिए था। मेरा ही केस ले लीजिए। मैं इंजीनियर हूं, प्रारम्भ से ही यही लाइन है; जब उन्नति का मौका आया, तो एक वरिष्ठ अधिकारी का जमाई मार्ग में आ गया। सीनियर मैं था, इसलिए मुझे मण्डल

(डिस्ट्रिक्ट) के स्टोर्स विभाग में भेज दिया, और जमाई महाशय बन गए मण्डल के इंजीनियर ! षड्यंत्र की समाप्ति यहीं न थी। स्टोर्स मे मेरा पूर्ववर्ती भी उनका कोई नातेदार ही था, और उस विभाग में कई हज़ार का ग़बन कर चुका था। उनकी पोल खुल जाए, उसके पहले ही उन्हें वहां से हटाकर सुरक्षित कर दिया गया। मेरे चार्ज लेने के दो माह में ही जब पोल खुली तो बन्दर की बला तबेले के सिर ! अठारह महीने तक सस्पेंड रहा हूं मैं मिस्टर ओझा ! किन्तु मैं केस लड़ता रहा, आवश्यकता पड़ती तो कोर्ट में भी जाता; पर अपना अधिकार मैंने नहीं छोड़ा। शासन को आखिर मेरा दावा स्वीकार करना पड़ा, और मुझे अपने पूर्व स्थान पर समस्त क्षतिपूर्ति के साथ उन्हें लेना पड़ा।

मैंने मुस्कराकर कहा, 'अपने अधिकार के लिए लड़ना चाहिए यह तो ठीक बात है कपूर साहब, किन्तु अधिकार किसका और किसपर ? जिस पोस्ट पर आज आप विराजमान हैं, उसपर आपका अधिकार है, किन्तु कल जब आप किसी दूसरी उन्नति की पोस्ट पर चले जाएंगे, तब क्या इस पोस्ट का अधिकार दूसरे किसीको नहीं मिल जाएगा ? अधिकारों की इस कहानी को कहां तक खींचे ले जाइएगा ?—फिर रेलवे डिपार्टमेंट में देखा यही कि जो लिख लोढ़ा, पढ़ पत्थर हैं उनकी खूब चलती है। स्टोर्स डिपार्टमेंट में भी जो प्रधान थे, वे मुझे देखकर खुश हो गए, कहा कि मुझे उन्हींके पास काम करना पड़ेगा, जाने के लिए तैयारी भी कर ली, क्योंकि पदोन्नति कौन नहीं चाहता ?—पर बस, जाने की तैयारी धरी ही रह गई। बाद में सुना कि वे भी आखिर भरी-पूरी गृहस्थी वाले थे, कहीं साले, कहीं भानजे, कहीं भतीजे—कहां बेचारे भटकते फिरते ? कम के कम एक की समस्या का तो समाधान हो ही गया। सो कपूर साहब, आप ही कहिए, इस्तीफा देना क्या बुरा रहा ?'

'आप जो कुछ कहते हैं, वह है तो बहुत कुछ सही ! अच्छा, इस फ्री राइटिंग में कितना हो जाता है, एक्स्क्यूज़ मी फॉर दिस डाईरेक्ट

क्वेश्चन (इस सीधे प्रश्न के लिए क्षमा कीजिएगा) मेरी मंशा कोई खराब नहीं है।'

'वाह, इसमें छिपाने जैसी बात ही क्या है ?—सौ एक रुपया तो मिल जाता है फ्री राइटिंग से, और दूसरे सौ-डेढ़ सौ समझिए रॉयल्टी के मिल जाते हैं, यद्यपि उसके लिए भी कम परेशानी नहीं उठानी पड़ती। गुजर-बसर किसी तरह चल जाता है। अपने समय का आप मालिक हूं, किसीके लेने-देने में नहीं पड़ता। सही बात तो यह है कपूर साहब, कि किसी चक्कर में न पड़ना ही अच्छा है। एक मशीन है यह तो, जो आगे करता है, वह पीछे वाले को भी करना पड़ता है। भीड़ में पड़ने के बाद आप अपने पैरों पर यकीन नहीं कर सकते। धक्का मिलने पर आपको भी धक्का देना ही होगा, पीछे से रेला आने पर आपको बढ़ना ही होगा, वरना आप कुचल जाएंगे।'

'इन दो सौ-ढाई सौ में काम चल जाता है आपका ?'

'क्यों नहीं ?—देखते ही हैं आप, कोई खास कष्ट तो मुझे है नहीं ! यों चाहना या तृष्णा का तो अन्त ही कहां है ?'

'किन्तु आपका भविष्य ?—आपके बाल-बच्चे ?'

मैंने हंसकर कहा, 'बाल-बच्चों की व्यवस्था भी इससे हो जाती है, दोनों बच्चे अपनी बुआ के पास हैं अपर प्राइमरी में है एक और दूसरा है आठवीं में ! रहा भविष्य, सो वह मेरा ही क्यों, सारे विश्व का ही तो है।'

'बच्चे बुआ के पास क्यों ?'

'इसलिए कि उनकी मां नहीं है।'

'मां नहीं है ?'

'जी नहीं !'

'आपने दूसरा विवाह नहीं किया ?—उमर तो आपकी विशेष कुछ ऐसी है नहीं।'

'जी नहीं—उस समय तो और भी कम थी—पर आखिर विवाह

किया ही किसलिए जाता है !'

मि० कपूर कुछ क्षणों तक सोचते रहे। इतने में नौकर चाय-मिठाई-नमकीन-फल-फूल वगैरा ट्रे में सजा लाया और बीच की टेबल पर रख गया।

'अरे आपने तो बहुत कष्ट कर डाला।'

'कष्ट तो कहां से किया, बैठा तभी से आपके पास हूं !—हां, यदि कहेंगे तो नौकर को अवश्य धन्यवाद दे लूंगा।'

मैंने एक केला सोम की ओर बढ़ाया, बोला :

'सोम !—भूले तो नहीं ?'

'हाउ कुड आई ?—' (मैं कैसे भूल सकता ?)

कपूर साहब ने कहा, 'यह तो सदैव ही आपको याद किया करता है। ऐसा क्या जादू कर दिया है आपने ?'

'मैने ?'—फिर सोम से पूछा, 'क्यों सोम ! मैंने जादू किया है ?'

मुस्कराकर सोम ने कहा, 'यस !'

मैंने सोम को कुर्सी पर से उठाकर बाहों में भर लिया, और कहा : 'क्यों शैतान ?—जादू तूने किया है या मैंने ?—तू तो मुंह पर लाकर जब-तब कहता भी फिर सकता है, पर मैं किससे कहूं ?—कपूर साहब, इस लड़के में बांध लेने की बड़ी शक्ति है !'

कपूर साहब ने हंसकर कहा, 'और उस शक्ति में आपने इजाफा कर दिया है !'

सोम को पुनः कुर्सी पर बैठाते हुए मैंने कहा, 'नई पीढ़ी का यही ऋण तो हमपर राष्ट्र पर शेष है। किसी भी राष्ट्र की प्रगति का यही तो पैमाना है कि अपनी भावी पीढ़ी के विकास के कैसे साधन वह प्रस्तुत करता है।'

'और हमारी पीढ़ी के लिए क्या राष्ट्र पर कोई ऋण नहीं है ?'

'हमारी पीढ़ी कम से कम मंझधार तक तो आ ही पहुंची है, जिस तरह चल-फिरकर लुढ़क-पुढ़ककर, या डूबती-उतराती यहां तक पहुंची

है, उसी तरह किनारे भी लग जाएगी, यही आशा क्या कम है !'

'अच्छा मिस्टर ओझा, आप ही के बारे में मैं कुछ कहूं, बुरा तो नहीं मानिएगा ?

'बुरा ?—आप भी खूब हैं कपूर साहब, मुझ जैसे अपदार्थ के बारे में कोई कुछ कहे, यही क्या कम बात है ?'

'कम या अधिक, सो तो मैं नहीं कहता ! पर यदि आप पुनः रेलवे ही में कोई जॉब ले लें तो कैसा हो ?'

'रेलवे में फिर से ?'

'क्यों ? क्या आपत्ति है ?—इस युग में अच्छे आदमी और अच्छा घी मिलता ही कहां है ?—खासकर रेलवे में तो आप जैसे चरित्रवान, अनुभवी और बुद्धिमान व्यक्ति की बहुत आवश्यकता है।'

'किन्तु अब मुझे पुनः लेगा कौन ?'

'उसकी आप चिन्ता न कीजिए ! आपके अहसान से उऋण होने का कोई मेरा इरादा नहीं है, किन्तु सोम की भांति मैं भी आप ही के शब्दों में अनुभव करता हूं कि बांध लेने की शक्ति आपमें भी कम नहीं है। फिर रेलवे-विभाग में जिस दायित्व को मुझे सौंपा गया है, उसके लिए उपयुक्त व्यक्ति को खोज लाने का भार भी मेरा ही है !'

'मुझे आपका कृतज्ञ होना चाहिए कपूर साहब, किन्तु मैंने तो सुना है कि आजकल तो नियुक्ति का प्रश्न ही बड़ा कठिन हो गया है।'

'सो है ! चुनाव-मंडल, आयु की सीमा, योग्यता का मापदंड, वह सब हैं, और इनसे ऊपर अलिखित योग्यताओं की सीमाएं भी कम नहीं, यानी आप किसकी सिफारिश लाए हैं, किसके रिश्तेदार हैं, और कहीं-कहीं आपकी जेब की शक्ति का भी अनुमान अपेक्षित है ! फिर भी आप तो जानते हैं, रास्ता कहां नहीं है ? तीन सौ-चार सौ की अस्थायी नियुक्ति की व्यवस्था तो मैं स्वयं अपने इनीशिएटिव पर कर सकता हूं, किन्तु आप जैसे बहुशिक्षित व्यक्ति के लिए मैं किसी अधिकारी के पद के लिए प्रयत्न करूंगा। उसकी नियुक्ति यद्यपि रेलवे-मण्डल (बोर्ड) के

तत्वावधान में है, किन्तु मैं आशा करता हूं कि मुझे निराश नहीं होना पड़ेगा।'

'कह चुका हूं आपकी सद्भावना के लिए मैं आपका सदैव ऋणी रहूंगा। किन्तु मेरे लिए कोई इतना कष्ट उठाए और आउट ऑफ वे (मार्ग से बाहर) जाए, मैं यह नहीं चाहता। वैसे अपने इसी वर्तमान जीवन से मैं असन्तुष्ट तो नहीं हूं; फिर इसी बहाने साहित्य-सेवा भी हो जाती है, जो एक तरह से अब मेरे जीवन का पर्याय ही बन गई है।'

'मैं जो कष्ट उठाऊंगा यदि उसमें मुझे आनन्द प्राप्त हो तो?—और मिस्टर ओझा, यह आप ही का स्वार्थ नहीं, मेरा भी तो स्वार्थ है?'

'आपका स्वार्थ? मैं नहीं समझा!'

'एक तो यही कि मुझे अच्छा सहायक मिल जाएगा, दूसरा स्वार्थ उससे भी भारी है।'

'वह क्या?'

'मैंने आते ही जो कहा था कि किसी दुरभिसन्धि को लेकर आया हूं?'

'जी हां, और शायद वह सोम के ऊपर अधिकार के सिलसिले में कोई बात थी।'

'जी।—आपकी स्मृति भी बड़ी तेज है मिस्टर ओझा!—सचमुच मेरा स्वार्थ सोम को लेकर ही है। सोम के ऊपर आपने अधिकार की बात कही थी, मैं उसे दायित्व कहूंगा। आप उसे स्वीकार करने के लिए बाध्य नहीं हैं, पर मैं तो हूं ही। लेकिन आपने भी सोम के ऊपर अपने कुछ अधिकार की बात कही थी।'

'जी हां, कही थी, और यह भी महसूस करता हूं कि अधिकार के साथ ही दायित्व चाहे न हो, कर्तव्य तो है ही।

'सोम के भविष्य के बारे में मैं बहुत चिन्तित हूं मि० ओझा!—रेलवे की नौकरी और फिर मुझ जैसा इंजीनियरिंग लाइन का व्यक्ति; मेरा कार्यक्षेत्र दफ्तर नहीं, किन्तु खुला मैदान—ओपन लाइन—है!—

इधर दूसरी पंचवार्षिकी योजना में प्रत्येक नागरिक पर ही एक दायित्व आ गया है, तब सरकारी कर्मचारी की तो बात ही क्या है ! मतलब यह कि जितना समय मैं चाहता हू, घर पर सोम के लिए दे नहीं सकता। मेरे घर की अवस्था और भी विचित्र है। शायद कभी नटनागर ने आपको बतलाया हो। मिसेज़ कपूर, सोम की मां····' और इसके साथ ही एक लम्बी सांस भी उन्होंने ले ली, तब कहा—'वे सदैव ही से अस्वस्थ हैं, शरीर ही से नहीं, मन से भी, उनके जीवन का भी कोई ठिकाना नहीं है।'

'हां, उनके अस्वास्थ्य के बारे में सुना था मैंने !—अब कैसी तबियत है उनकी ?'

'और अधिक खराब हो गई है ! सोम को लेकर तो वे ऐसा काण्ड उपस्थित कर देती है कि डॉक्टरों की राय है कि सोम उनके सामने ले जाया ही नहीं जाए···'

मैंने सोम की ओर देखा—कपूर साहब ने टेबल पर पड़ी हुई एक पत्रिका उसे पकड़ा दी थी, वह उसीके चित्र देख रहा था। कपूर साहब इस तरह बोल रहे थे कि वह सुन न सके।

'—और सोम है कि बिना अपनी मां के एक घंटा भी घर पर नहीं बिता सकता। इसीलिए दौरे में भी मुझे उसे साथ ले आना पड़ता है। इससे इसकी पढ़ाई में तो विघ्न पड़ता ही है, इसके मन पर भी एक अव्यक्त दबाव पड़ता जाता है, जो इसके भविष्य जीवन के लिए उत्तम नहीं कहा जा सकता।'

'आप इसे कहीं बाहर क्यों नहीं भेज देते ?'

'उसके लिए सोम तैयार नहीं होता दीखता है !—आप नहीं जानते, आपके साथ जाने के लिए राज़ी करने में भी हमें बड़ी कठिनाई पड़ी थी।'

'फिर क्या सोचा है आपने !'

'सोचा क्या है ?—यदि आप किसी बहाने से मेरे दफ्तर में आ

जाएं, तो मुझे विश्वास है, इसका भविष्य बन जाएगा। जिस तरह से इसने आप लोगों को स्वीकार किया है, वह इसके पहले मैंने नहीं देखा। आप लोग उसके मन की बनावट, रुझान को पूरी तरह समझ गए दिखाई देते हैं। आपके ऊपर कोई वजन डालने का मेरा इरादा नहीं है। केवल आप इस शहर में रहेंगे। सवेरे-शाम जब आपको सुविधा हो वह आपके पास आ जाएगा, न भी आए तो भी उसे विश्वास तो रहेगा कि आप उससे दूर नहीं हैं। आशा तो मैंने इससे भी बहुत अधिक की की थी! अब आपसे क्या छिपाऊं मिस्टर ओझा। सोम जिस उत्साह से अपनी 'आण्टी' की बात करता है मैं गलत समझ बैठा था कि वह शायद मिसेज़ ओझा की बात कर रहा है। यहां आने पर और आपसे बात करने के बाद अब शायद याद पड़ता है कि आपने अपनी किसी बहन की बात कही थी। शायद ये देवी जी वही हों, पर सोम की बात से मालूम दिया था कि वे भी इसमें उतनी ही अधिक अनुरक्त दिखाई दीं, जितने आप दिखाई दिए हैं। सोचा था कि इस एक ही शस्त्र से दोनों को यदि गिरफ्तार कर सका तो फिर कहना ही क्या है, किन्तु, जो कुछ कर सकने की अब आशा रह गई है, वह भी कम नहीं है!'

मैं बड़े ध्यान से कपूर साहब की बात सुन रहा था। आशा मेरे मन में न हो, या अच्छे पद का लोभ न हो, सो बात नहीं है, हूं तो मनुष्य ही। रेलवे की नौकरी की अन्य सुविधाएं भी कम आकर्षण नहीं रखतीं, और जैसा किसीने कहा है कि रेलवे का नौकर, फिर और कोई दूसरा काम कर ही नहीं सकता, करना ही नहीं चाहता। लाल-हरी झंडियों का आकर्षण उसके जीवन की रेल को भी गति या अवरोध देता है, यह बिल्कुल ही सच है।

किन्तु कपूर साहब को यदि केवल अपने पुत्र के लिए ही मेरा आकर्षण हो—और मेरा ही क्यों?—मेरे समान ही कमला का आकर्षण भी तो है! कमला, सोम की प्रकृत मां, और फिर नटनागर से यदि उसकी खाई किसी तरह पाटी जा सके तो यह प्रयत्न क्यों न

किया जाए ?—इन दोनों के बीच शायद सोम ही पुल हो सकता है !—एक क्षण में मेरे मस्तिष्क में बिजली कौंध गई। कपूर साहब मेरे उत्तर की प्रतीक्षा कर ही रहे थे।

मैंने कहा, 'आपका कहना बहुत सही है कपूर साहब ! और सामान्य अवस्थाओं में इसे मुझे स्वीकार कर लेने से बहुत ही सुख होता। किन्तु इससे मेरी साहित्यिक गतिविधि को बड़ा आघात पहुंचेगा। पहले ही रेलवे की नौकरी छोड़ने के और चाहे जितने कारण मैंने आपको गिनाए हों, मूल में तो मेरी यही साहित्य की ओर भाग उठने की प्रेरणा थी; क्या अब आप पुनः मुझे उसी जंगल में घसीट ले जाना चाहते हैं ? पैसे के प्रति कोई मेरी वितृष्णा नहीं है, इस दुनिया का सामान्य मनुष्य यह कर ही नहीं सकता, फिर भी, देखते तो हैं आप, मेरी आवश्यकताएं ही क्या हैं ?'

'तो फिर—'

मैंने रोककर कहा, 'नहीं। मैं मार्ग भी सुझा रहा हूं आपको।—देखता हूं कि हम दो में से किसी एक को पाने से भी आपका काम चल सकता है। यदि मेरी वे बहन सोम को उपलब्ध हो सकें तो ?'

'पर वे कैसे हो सकेंगी ?'

'चेष्टा मुझे करनी पड़ेगी। किन्तु उनके राज़ी होते ही आपको कोई कठिनाई न होगी। वे यहीं आपके रेलवे स्कूल में प्रधानाध्यापिका हैं। आप उन्हें अपने यहां के स्कूल में ट्रान्स्फर करवा दीजिएगा। बस।'

'लेकिन, यह हो जाए तो बहुत ही अच्छा हो; लेकिन वे तैयार हो जाएंगी ?—ट्रान्स्फर तो उनको वैसे भी किया जा सकता है, किन्तु उनकी इच्छा के खिलाफ, और फिर वे सोम का चार्ज लेने को तत्पर हो सकेंगी ?'

'वही बात उनसे करनी होगी। आशा करता हूं कि वे तैयार भी हो जाएंगी !—क्या आप अपने स्कूल का मुआयना करने भी गए थे !'

'नहीं—इनमें मुझे—अधिक दिलचस्पी नहीं है मिस्टर ओझा। हां,

आप जैसा सहायक अफसर यदि मुझे मिल जाता तो इस प्रकार की प्रवृत्तियों में मेरी भी कुछ पहुंच होती।'—और कपूर साहब उठ खड़े हुए, घड़ी देखकर बोले, 'साढ़े सात बज गए ! आपको बहु कष्ट दिया !— तो फिर आप मुझे अपनी बहन के बारे में कब लिखेंगे ?'

'उनसे मालूम करके शीघ्र ही लिखूंगा ! आप कब जा रहे हैं यहां से ?'

'आज ही रात्रि को सवा दस बजे जो गाड़ी जाती है न, उसीसे !'

'ओह, आज ही ?— सोम से तो बात ही न हो सकी ! अच्छा ऐसा कीजिए न ! मैं नौ बजे इसे स्टेशन छोड़ आऊंगा, सोने के समय से पहले। खाना वह मेरे साथ ही खा लेगा।'

कपूर साहब ने सोम की ओर देखा। वे राज़ी हो गए।

कमला को जब सब बातें मैंने बताईं, तो उसने इतना ही कहा :

'जो कुछ तुम्हें अच्छा लगे, करो; तमाशबीन जो ठहरे तुम ! तुम्हारे लिए किसीको तमाशा तो बनना ही पड़ेगा, पर यह समझ लेना; असाध्य साधन में प्रवृत्त हो रहे हो ! यदि कुछ अन्यथा हो गया, मैं ज़िम्मेदार न हूंगी !—एक बात और, मेरे श्रीमान जी की मनोवृत्ति से तुम परिचित नहीं हो। लेखक हो, दोस्त भी हो—पर समझ जितनी पैनी नारी की होती है, उतनी पुरुष की नहीं।'

—अतः मैंने खाई के दूसरे सिरे पर भी पटाई करना आवश्यक समझकर नटनागर को पत्र लिखा। बड़े साहस के साथ मैंने लिखा कि कमल के कहने से मालूम हुआ कि श्रीमती कमला नटनागर का स्वास्थ्य ठीक नहीं है और उन्होंने मुझे बुलाया है। जाने पर मालूम हुआ कि यह बुलावा केवल नटनागर और मेरी मित्रता के कारण है। यों बीमारी विशेष कुछ नहीं है, किन्तु नारी की सबसे बड़ी बीमारी, पति का अभाव, कोई सामान्य बीमारी नहीं होती। श्रीमती नटनागर ने कोई इसकी शिकायत नहीं की, किन्तु उनका स्वास्थ्य, उनका शरीर, उनकी कांति यही

तो बताते हैं ! फिर जिस तरह उनके प्रत्येक कार्य में, कार्य की छोटी से छोटी दिशा में जैसी उनकी पति-भक्ति का परिचय पाया जाता है, उसे देखते हुए उनके इस रोग के आक्रमण का कोई औचित्य ही नहीं देख सकता। मैं नटनागर का मित्र हूं, इसलिए मुझे उनको इस बारे में दोषी ठहराने का अधिकार है, और यह भी सुझाने का अधिकार है कि वे श्रीमती नटनागर को अपने पास किस तरह बुला सकते हैं। कपूर साहब पर उनका प्रभाव है ही, उसका उपयोग करने से सब काम सरलता से हो जाएगा। आदि-आदि।

कमला को यह पत्र बतला दिया गया था। श्री नटनागर की रूमानी प्रवृत्ति को इससे बढ़ावा मिलेगा, यह मैं जानता था। एक मिथ्याभिमान नटनागर में था, उसे हटाने की ज़रूरत थी। और कमला को, मुझे प्रतीत होता है, मैं जानता हूं ! मिथ्याभिमान तो नहीं, किन्तु मिथ्या धारणा का आवरण उसपर है; उचित अवसर और परिस्थितियों के उपस्थित होने पर वह भी नष्ट हो जाएगा, तो दोनों में प्राकृतिक मेल असम्भव न होगा। फिर सोमदत्त दोनों के बीच की कड़ी बन जाए तो कमला का जीवन कैसा भरा-पूरा हो जाए। रहे कपूर साहब, सो वे भी अव्यक्त मन में तो जानते हैं कि सोम को लेकर गर्व करने का अधिकार उनका नहीं है।

नटनागर का उत्तर भी आ गया। मैं डर रहा था, कि कोई कड़ा उत्तर आएगा। कह चुका हूं कि कमल ने उनको हमारी दोनों की आबू-यात्रा सम्बन्धी घटना सूचित कर दी थी। पर नटनागर के पत्र में उसका कोई उल्लेख न था, मानो उन्होंने मेरी ही बात ध्रुव मान ली थी। यदि कमला सचमुच वहां जाना चाहती हो, तो वे कपूर साहब से कह देखेंगे बल्कि मैं ही कपूर साहब से कुछ कह दूं।—लेकिन, वे सोचते हैं, इससे कमला की असुविधा बढ़ ही जाएगी, उसको शायद पूर्ववत स्वतंत्र रहने का अवसर न मिले। इससे तो अच्छा यह है कि कमला अपने को श्रीमती नटनागर न व्यक्त करके, स्वतंत्र रूप में ही वहां चली आए। तब उसे कोई बंधन

का भय न रहेगा, और श्री नटनागर भी, जो अपनी मां को बुलाने का तय कर चुके हैं, किसी तरह की कठिनाई से बच जाएंगे।

इस पत्र को पढ़कर आगे क्या किया जा सकता था ?

किन्तु, घटनावली इतने सस्ते छोड़ने वाली न थी !—एक माह के बाद ही खबर आई कि मिसेज़ कपूर मिस्टर कपूर के समस्त प्रयत्नों को व्यर्थ करके अपनी ऐहिक लीला समाप्त कर गई। कपूर साहब का दर्द भरा पत्र आया। सोम की चिन्ताजनक स्थिति से भी उन्होंने अवगत कराया। लिखा कि बच्चे के ऊपर मां की इस मृत्यु का बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा है। भगवान ही जाने क्या होगा !—यदि मैं ही चाहूं, तो कुछ कर सकता हूं !

किसी बहाने से पत्र मैंने कमला को दिखा दिया, यह जानने के लिए कि उसपर क्या प्रतिक्रिया पड़ती है, किन्तु कमला ने किसी भी विशेष भाव को प्रकट नहीं होने दिया। हृदय की निधि को सतह फोड़कर ऊपर आने के लिए अभी और शक्ति की आवश्यकता है। मेरे किए शायद अधिक कुछ न हो सकेगा।

मैं स्वयं ही एक चक्कर क्षेत्रीय कार्यालय का काट आया। कपूर साहब के अमित आग्रह के बावजूद अतिथि रहा नटनागर का। उन्होंने कमला को लेकर एक तटस्थ वृत्ति बना ली थी। आए ठीक है, न आए ठीक है। बीमार है, उसे इलाज कराना चाहिए। पति का अभाव भी कोई रोग है—खाली भावुकता है, जिसे कमला जैसी पढ़ी-लिखी लड़की न छोड़ सके तो वह शिक्षा ही क्या—? समझ नहीं पा रहा था, क्या करूं ?

सोम की अवस्था बड़ी शोचनीय हो रही थी। मानो उसके जीवन का समस्त उल्लास कहीं खो गया था। स्वयं स्फूर्ति उसमें कहीं दिखाई नहीं देती थी। जब उससे कहा जाए, तभी उठ जाता; जब कहा जाए तभी खा लेता। यदि कोई न कहे तो खाता ही रहता। कपूर साहब की अवस्था देखकर के रोना आता था।

आखिर उनसे यथावश्यक सब हा ; मैंने कहा । कहा कि मेरी तथा-कथित बहन और कोई नहीं, किन्तु उनके आफिस के हेड क्लर्क श्री नटनागर की पत्नी कमला नटनागर ही हैं । दोनों में बहुत समय से कुछ मतभेद हैं, इसलिए दोनों अलग रहते हैं; अलग-अलग स्थानों की नौकरी ने इस अलगाव को बढ़ाने में ही मदद दी है । वस्तुतः श्रीमती नटनागर यहां पर इसलिए आने को राज़ी न हुई कि श्री नटनागर उसका गलत अर्थ लगा लें, वरना वे यहां आने के लिए तैयार हैं । हां, यदि कपूर साहब अपना व्यक्तिगत प्रभाव श्री नटनागर के ऊपर डालकर इस प्रस्ताव को ऐसा रूप दे सकें कि श्री नटनागर की इच्छा से ही उनका ट्रान्सफर यहां किया जा रहा है, तो वे प्रसन्नता से यहां चली आएंगी ।— आवश्यकता हुई तो मैं भी वहां कुछ दिन बाद आकर रह जाऊंगा; ताकि सोमदत्त अपनी नई परिस्थितियों में सामंजस्य पैदा कर सके । कपूर साहब को मैंने खास तौर से कहा कि श्री नटनागर को वे इस सम्बन्ध में सोम की भूमिका के बारे में कुछ न कहें ।

कपूर साहब ने किस तरह नटनागर को इसके लिए प्रेरित किया, यह तो मैं नहीं जानता, किन्तु कुछ ही दिनों के बाद कमला को नटनागर का पत्र मिला, कि वे कमला को वहां बुलाना चाहते हैं, और डिविजनल सुपरिन्टेन्डेन्ट से आवेदन कर रहे हैं कि उनकी पत्नी को वहीं ट्रान्सफर कर दिया जाए, जहां वे स्वयं नियुक्त हैं । प्रशासन का ऐसा नियम है कि जहां तक सम्भव हो पति-पत्नी एक ही स्टेशन पर रखे जाएं, इसलिए यह सरलता से सम्पन्न हो सकेगा । अभी फिलहाल मां को वहां बुलाने का इरादा भी उन्होंने स्थगित कर दिया है । कमला का पत्र आते ही वे अपना प्रार्थनापत्र भेज देंगे ।

ऊपर से दोनों में कोई मतभेद था नहीं । मेरे कहने से कमला ने स्वीकारोक्ति लिख दी । दूसरे ही हफ्ते कमला के स्थानान्तर की आज्ञा प्रचारित हो गई ।

शेष में मेरे लिए कहने लायक कुछ रहा दिखाई नहीं देता ।

शेष जो कुछ है, उसे आप जान ही लेंगे, या अनुमान तो कर ही लेंगे। मसलन कमल के द्वारा कमला को दी गई विदाई-पार्टी, जिसमें उसके उल्लास की गहराई का भी अन्दाज़ लगाया जा सकता है। वह अनुभव करता है कि कमला अब उसकी पहुंच से बाहर चली गई है, वह उससे कुछ-कुछ भय भी खाता है। इसके उपरान्त उसे क्षतिपूर्ति के तौर पर ही सही, आशानुरूप अर्थलाभ हो चुका है। उसकी बहिन का विवाह हो ही चुका है, अब वह अपने विवाह की बात भी कहीं चला सकता है। कमला यहां रही, तो यह सम्भव नहीं होगा! दूसरे मैं, जो कमला को पाकर उसके विश्वास में अपने आपको अफलातून मान बैठा था, इस ठोकर से पुनः अपनी ठोस जमीन पर आ बैठूंगा। उस अवस्था में वह पुनः मुझसे सौहार्द्र स्थापित कर लेगा। उसे लगता है, कि कपूर साहब पर मैंने कुछ जादू कर दिया है। तब वह मुझसे कहकर कपूर साहब की दृष्टि में आ सकेगा, और पुनः अपने बिगड़े नौकरी के भाग्य को चमका सकेगा। कहना न होगा कि दावत में मैं भी नियंत्रित था। कमल के उद्देश्य में यह बात पूरक ही थी।

पति-पत्नी के मेल की बात नई नहीं है। श्रीमान और श्रीमती नटनागरों से इतना परिचय पा चुकने पर उनके निज के या सम्मिलित व्यक्तित्व के कैसे भी जंगल में छोड़ दिए जाने पर आप पार पा सकते है। टूटा हुआ दिल चाहे न जुड़े, किन्तु दो अलग दिल तो मिलते ही रहे है, जैसा कि हर विवाह सम्पन्न करता है। और यदि दो नये दिल किसी तरह जुड़ ही जाते हैं, तो दो टूटे हुए दिल भी उसी तरह जुड़ ही जाने चाहिएं। इसमें नई बात और कौन-सी है? फिर बात आती है कमला की विदाई की। मैं चाहता हूं, इस दिशा में मैं मौन ही रहूं तो अच्छा!

मैं मानता हूं कि अभी तक कहानी तो समाप्त ही नहीं हुई। लेकिन दाल-भात में मूसरचन्द मैं क्यों अपनी टांग अड़ाए बैठा रहूं? आपका ध्यान बंटाने की मेरी तनिक भी इच्छा नहीं थी, किन्तु जब कमला ने मुझे बीच ही में घसीट लिया तो निरुपाय मैं करता ही क्या? खैर, अब

जब कि कमला को पुनः नटनागर से मैं मेल करवा सका हूं, तो मुझ-पर ऋण रह ही क्या जाता है ? ऋण किसीका मैं अस्वीकार नहीं करता, ब्याज सहित, बल्कि चढ़ी दर के ब्याज सहित चुकाने की इच्छा रहती है, इसीलिए कमला और नटनागर के पार्थक्य का कारण न होने पर भी उनका मेल कराने की उत्कट इच्छा मैंने अपने में पाई थी। किंतु अपने बारे में बस इतना ही।

जीवन की लम्बी-चौड़ी व्याप्ति में आपने श्री नरवरोत्तम नारायण नटनागर तथा श्रीमती कमला नटनागर को देखा है। निम्न मध्य वर्ग के दो सामान्य प्राणी !—फिर आधुनिक शिक्षा के द्वारा अपने जीवन के अभावों से ही खेलने वाले, उस कुत्ते की तरह जो अपने मुंह के घाव को ही रक्त के लोभ में बड़े चाव से चाटता रहता है, एक क्लर्क के जीवन की व्याप्ति ही क्या है ? कीचड़ में फंसा हुआ वह आकाश के चांद को छूना चाहता है, उसके प्रयत्न उसे और गहरे उतारते जाते हैं। मत्स्य-न्याय का यह उदाहरण जिसके श्री नटनागर केवल एक कड़ी भर हैं, सारे समाज में ही में तो छाया हुआ है, जिसमें शोषक-शोषित, मालिक-नौकर, अधिकारी-कर्मचारी आकाश-पाताल की भूमिका निर्वाहित कर रहे हैं।

नटनागर और कमला को पुनः मिलाकर यह सोचना, कि समाज का कर्तव्य शेष हो गया है, कितनी बड़ी भ्रांति है यह देखना मुझे शेष है। दो टूटे हुए दिलों को मिलाने की बात मैंने कही है !—दो टूटे हुए दिल मिलकर भी एक निर्दोष दिल नहीं बन सकते। फिर उनके टुकड़े कहीं ऐसे स्थानों पर से हुए हो सकते हैं कि मिलकर एक दूसरे में अटकने की अपेक्षा, उनकी गांस ही एक दूसरे के व्यक्तित्व को और अधिक विक्षत कर दे सकती है। यदि सहने ही के लिए मनुष्य बना हो, तो क्या आप और हम दर्शक नहीं बने रह सकते ?

२२

मुझसे विदा लेकर कमला जब अपनी नई कर्म भूमि में पहुंची तो उसके मन में केवल दो बातें गूंज रही थीं : एक तो जो अग्नि उसके अन्तर में प्रज्वलित है, वह समस्त आवर्जना को नष्ट-भ्रष्ट करके उसके भीतर के शुद्ध स्वर्ण को निखार कर चमका दे, और दूसरे अपने जीवन की पूर्णता को प्राप्त करने के लिए किसी भी व्याज से वह अपने पति और पुत्र को पुनः प्राप्त करे। मेरे आदेश को इस प्रकार बिना ननु-नच किए वह क्यों माने ले रही है, यह मेरे अन्तर के देवता शायद जानते हों, किन्तु सचमुच मैं नहीं जानता। कितनी बड़ी बात है यह मैं समझता हूं, कमला को अपना समस्त अतीत ही एक तरह से धो-पोंछ डालना होगा, उसे एक नई स्लेट से ही आरम्भ करना होगा।

यह स्कूल पहले से बिल्कुल जुदा है। नई शिक्षा की मान्यताओं के अनुसार रेलवे विभाग ने जो दो-एक महत्वपूर्ण, प्रयोगात्मक स्कूल छोटे बच्चों के लिए खोले हैं, उनमें से ही एक यह है। खुले हुए अभी एक वर्ष भी नहीं हुआ। बस्ती से दूर, किन्तु रेलवे कॉलोनी में ही एक ओर काफी लम्बे-चौड़े विस्तार में बसा हुआ है। प्रयोगात्मक है इसलिए अभी इस स्कूल में केवल ५० छात्रों की व्यवस्था है, हैं केवल तीस छात्र ही इस समय—किन्तु भविष्य में विस्तार के लिए इसकी योजना में गुंजायश रखी गई है। यद्यपि स्कूल से सम्बन्धित समस्त इमारतें सुन्दर उद्यानों और लताकुंजों से घिरी हुई हैं, किन्तु फिर भी मध्य में बच्चों के लिए एक विशेष पार्क है, जहां बच्चों के लिए झूले, फिसलपट्टी, मेरी-गो-राउण्ड आदि खेलों की व्यवस्था है। बीच में एक फव्वारा, जिसके चारों ओर एक छोटा-सा तालाब, उसमें रंग-बिरंगी मछलियां! एक ओर एक छोटा-सा अस्पताल। एक डाक्टर तथा एक नर्स की व्यवस्था है। पूर्व की ओर पाठागार, जिसमें एक बड़ा हॉल, एक पुस्तकालय, एक नर्सरी-भवन,

एक चित्रशाला तथा तीन-चार कक्षाओं की व्यवस्था है। दक्षिण की ओर हटकर पश्चिम में एक ओर है छात्रावास, उसीसे लगा हुआ है वार्डन का बंगला। श्रीमती कमला नटनागर स्कूल की सुपरिन्टेन्डेन्ट, प्रधान, तथा वार्डन भी हैं, इसलिए इसी बंगले में वे रहती हैं। कमला के कारण श्री नरवरोत्तम नारायण नटनागर भी यहीं रहते हैं। स्कूल की व्यवस्था में चाहे उनका कोई हाथ न हो, किन्तु बंगले के भीतर वे श्रीमती कमला के स्वामी हैं। घर की व्यवस्था में उनका पूरा अधिकार है, कमला ने उस अधिकार को अनायास ही नटनागर के हाथ में स्वेच्छा से छोड दिया है।

सामने की पंक्ति में काफी मैदान छोड़कर कुछ और क्वाटर्स बने हुए हैं। एक ओर एक छोटे-से बंगले में डॉक्टर रहता है, अन्य क्वार्टरों में अन्य कर्मचारी। कमला के बंगले के कुछ ही दूर एक छोटा-सा आउट हाउस या नौकरों का घर है, जिसमें दादू ने अपना डेरा डाल रखा है। कमला उसे अपने साथ ही लेती आई है। नटनागर को यद्यपि दादू से चिढ़ हो गई है, किन्तु इतनी रुचि कमला की उन्होंने स्वीकार कर ली है। घर के काम में उसका विशेष दखल है भी नहीं। वह स्कूल का दरबान है, और सुपरिन्टेन्डेन्ट का चपरासी ! नटनागर को इसमें क्या आपत्ति हो सकती थी ?

कमला के आने के पूर्व ही कपूर साहब ने सोमदत्त को मिशन स्कूल से हटाकर इस स्कूल में प्रवेश दिलवा दिया था, ताकि नटनागर को कोई बात अस्वाभाविक न लगे। सोम के इस स्कूल में प्रवेश के बाद जब कमला के स्थानान्तर का यहां प्रस्ताव हुआ तो कपूर साहब ने कहा था कि इस तरह नटनागर स्कूल की सीमा में ही रहेंगे, तथा आवश्यकतानुसार सोम के ऊपर देख-रेख रख सकेंगे। नटनागर ने भी इसे एक अच्छा संयोग ही समझा था। यदि कमला इस लड़के पर कुछ अधिक ध्यान दे सके, तो वे अनायास ही कपूर साहब के और अधिक कृपा-पात्र हो सकेंगे। आफिस-सुपरवायजर अवकाश-प्राप्ति की सीमा पर आ लगा

है। नटनागर इतने सीनियर नहीं हैं, किन्तु यदि कमला और कपूर साहब सहायता करें तो क्या नहीं हो सकता है।

कमला सर्वान्तःकरण से नटनागर की अनुगामिनी बनने का प्रयत्न करने लगी। उसकी इच्छा थी कि वह सोमदत्त का अतिरिक्त ध्यान रखे! कमला के मन में क्या आशा थी, यह तो कौन कह सकता है, किन्तु सोम के प्रति पुत्र की न हो, तो भी एक लोभनीय शिशु की आसक्ति तो जग ही चुकी थी। उसने नटनागर का यह आदेश अपने मन के अनुकूल ही पाया!

श्री कपूर साहब और कमला के साक्षात्कार का प्रश्न ही नहीं उठा। नटनागर को वे यह दर्शाना चाहते थे कि जहां तक उनकी पत्नी का प्रश्न है, कपूर साहब को कोई दिलचस्पी नहीं है। नटनागर की वजह से ही उन्होंने मिसेज़ नटनागर का ट्रान्सफर यहां किया है। इसलिए वे कमला से बचना ही चाहते थे, इधर कमला स्वयं उनसे बचने का प्रयत्न करती थी। यद्यपि उस भेंट को सात-आठ वर्ष बीत चुके हैं, कमला में भी बहुत कुछ शारीरिक परिवर्तन हो चुका है, कपूर साहब में भी। एकाएक पहचानने की सम्भावना न होगी, किन्तु फिर भी सावधानी दोनों ही पक्षों से हो रही है। कपूर साहब पहले से अवश्य कुछ अधिक निश्चिन्त हैं। सोम अपनी माता के अभाव को भूला तो नहीं दीखता, पर वह अपने आप को संयत करता जा रहा है। इसी तरह दिन बीत रहे हैं!

उस दिन रात को कमला लगभग साढ़े ग्यारह बजे अपने राउण्ड से जब कमरे में लौटी तो नटनागर एक किताब पढ़ रहे थे। उन्होंने पूछा:

'बहुत देर लगा दी?'

'बहुत देर हो गई? ध्यान ही नहीं रहा। सोए नहीं अभी तक तुम?'

'नींद ही नहीं आ रही है। दो डोज़ ले चुका हूं। सर भी दर्द कर रहा है।'

'तो किताब छोड़कर लेट जाओ ! सर दबा दूं ?····'

'नहीं-नहीं, रहने दो ! तुम भी तो थक गई दिखाई देती हो ! इतनी देर क्यों हो गई ?'

'वही तुम्हारे साहब का लड़का पेट की शिकायत कर रहा था। उनसे कहकर जरा एक्जामिन करवा लो न। कहीं लीवर तो नहीं बढ़ गया है।'

'तुम्हारा डॉक्टर क्या कहता है ?'

'बड़े आदमी का लड़का ठहरा ! कल से कुछ कम-अधिक हो गया तो उसकी भी मुश्किल है। कहता है, डर तो कुछ नहीं, पर दिखा लेने में क्या हर्ज है।'

'हर्ज तो कुछ नहीं। पर अभी तो दौरे पर गए हुए हैं। शायद परसों तक लौटें। क्या कल ही दिखाना जरूरी है ?'

'नहीं, वैसे कोई बात नहीं है। कहा न, बड़े आदमी का, और फिर अफसर का लड़का ठहरा। उसका ही सवाल नहीं, खुद की रोजी-रोटी का भी तो सवाल है।'

नटनागर को सीधा व्यंग्य नागवार लगा। 'नौकरी करते हैं, गुलामी तो नहीं ! तनख्वाह लेते हैं, तो काम भी तो करते हैं। इतना दर्दे-सर किसलिए ? कौन-से सोने के कड़े पहना देंगे !'

कमला ने कहा, 'सोने के कड़े तो नहीं, पर लोहे के कड़े तो जरूर पहना सकते हैं। और हमारा तो सारा कुनबा ही उनका नौकर ठहरा। यहां बुलाकर जब तनख्वा बढ़ा दी है, तो कसकर काम लेंगे ही। इतना बढ़िया घर, ये नौकर-चाकर, ये सुविधाएं आखिर उसी लड़के के लिए तो हैं।'

यह तो नटनागर ने सोचा ही नहीं था ! कपूर साहब ने कहा था निहायत हमदर्दी के साथ कि 'भई नटनागर, अपनी फॉमिली क्यों नहीं साथ रखते ?—खासकर तुम्हारे इस स्वास्थ्य की अवस्था में तुम्हारी देख-रेख के लिए किसीका होना बड़ा जरूरी है।' नटनागर ने बात टालने

के लिए कह दिया था कि मिसेज़ नटनागर सर्विस कर रही हैं, इसलिए दोनों का साथ रहना कठिन है ! 'सर्विस ?—कहां ?' निश्चय ही कपूर साहब मिसेज़ नटनागर के बारे में कुछ नहीं जानते थे ! नटनागर ने जब कहा कि वे रेलवे स्कूल की प्रधानाध्यापिका हैं, तो कपूर साहब ने आश्चर्य ही व्यक्त किया था, और फिर सरलता से उनके यहां स्थानान्तर की सम्भावना पर बातचीत की थी। इसके उपरान्त भी नटनागर ने अपनी इच्छा को कमला के ऊपर थोपने के किसी इरादे को प्रश्रय न देने की बात कही, तो कपूर साहब को उन दोनों के बीच किसी मनोमालिन्य की कल्पना करना स्वाभाविक था। और फिर जिस तरह कपूर साहब ने नटनागर को उपदेश दिया कि गृहस्थी की गाड़ी के दोनों चक्कों को मिलकर एक गति से समान भूमि बनाकर चलना चाहिए, ताकि जीवन अपनी मंज़िल पर सरलता तथा सुख से पहुंच जाए, तो उनकी पितृ-तुल्य हितैषणा ने नटनागर को कायल कर दिया था। तब पता न था कि कपूर साहब का उद्देश्य अपने संतान की बेगार बुलवाने से है।

यह ठीक है कि नटनागर स्वयं उस लड़के को चाहते हैं, यह भी ठीक है कि स्वयं नटनागर ने कमला को उत्साहित करके इस लड़के पर ज़रा अतिरिक्त ध्यान देकर अपनी उन्नति का मार्ग प्रशस्त करने का सुझाव दिया था। किन्तु यदि इस प्रयत्न की प्रेरणा इन्हींकी ओर से होती तो आपत्ति जैसी इसमें कोई बात न थी। यह जो एक दुरभि सन्धि-सी कपूर साहब ने उपस्थित कर दी है, इसे कौन सहन करेगा ?

नटनागर ने कहा, 'सवाल है अपनी आत्मा के मानने का। जरा उस लड़के की ओर ध्यान देने के लिए मैंने कहा ज़रूर था, लड़का वैसे सुशील भी है, मुझे भाता भी है। पर हमने अपने आपको बेच नहीं दिया है !'

माथे पर हाथ फेरते हुए कमला ने कहा—'अपने को नहीं, किन्तु अपनी सामर्थ्य को तो बेचा ही है, इससे कैसे इनकार किया जा सकता है ?—खैर, इन विचारों को गोली मारो—यदि दिमाग से कुछ न सोचोगे,

तो दो मिनट में नींद आ जाएगी ।'

'अगर तुम अपनी सामर्थ्य को बिकी महसूस करती हो, तो मैं राय दूंगा कि तुम त्यागपत्र दे दो ।'

'फिर खाएंगे क्या ?'

'क्यों ?—अब तो मैं स्वस्थ हूं ही ! कई सालों से छुट्टी तक नहीं ली । चार माह का तो अवकाश भी पड़ा हुआ है ।'

'सो तो ठीक है, किन्तु अफसर की दृष्टि और हाथ बहुत लम्बे होते हैं, यह नहीं सुना ? खाली काम को ही कौन पूछता है इस जमाने में ? अफसर चाहे जिस कारण से नाराज हो, दण्ड कर्मचारी ही को भुगतना पड़ता है !'

'समझा नहीं तुम्हारी बात !'

'समझना चाहा नहीं न तुमने !—मैं त्यागपत्र दे दूंगी, तो क्या उसमें वे तुम्हारा हाथ न समझेंगे ?—फिर तुम्हारा भविष्य ही नहीं वर्तमान भी तो उन्हींके हाथ में है !'

'कैसे ?—यदि मेरा काम ठीक हुआ, तो मुझे किसीसे डरने की जरूरत क्या है ।'

'यदि यही बात होती, तो डरने की जरूरत मुझे ही क्यों होती ?'

नटनागर ने कहा, 'तुम्हारे बारे में मैं नहीं कह सकता, किन्तु हम लोगों को इस स्वतन्त्र भारत में निकाल देना अब कोई हंसी-खेल नहीं है । हमारी यूनियन, हमारा संगठन बड़ा जोरदार है । लेकिन, एक बात वे जरूर कर सकते हैं । उन्नति का अवसर अवश्य उनके हाथ में रहता है ! वह उनके प्रियपात्र ही को मिलता है ।'

कमला ने उत्तर नहीं दिया, वह उसी तरह नटनागर का मस्तक सहलाती रही ।

नटनागर ने कहा, 'क्या सोच रही हो ?'

'कुछ तो नहीं ।'

'फिर बोलती क्यों नहीं ?'

'बोलूं क्या ?—और फिर तुम्हें सोना भी तो है ! बोलूंगी तो तुम्हें नींद कैसे आएगी ?'

'नींद जब नहीं ही आ रही है, तो क्यों न हम बातें ही करें !—फिर यह तो स्वाभिमान का प्रश्न है नींद से अधिक महत्वपूर्ण ।'

कमला तब भी न बोली । नटनागर को नींद न आए, वे अनिद्रा के रोगी हैं, पर कमला को भी तो नींद आ सकती है । उन्हें यह नहीं सूझ सकता । नटनागर कमला के प्रति केवल अपना औपचारिक कर्तव्य पालन कर रहे हैं । मन की गूढ़ विवृत्ति को समझ सकने की प्रेमी की वेदनामयी गम्भीर पैनी दृष्टि अब उनमें नहीं रही । ठीक ही तो है, कमला को भी अपने कठोर कर्तव्य-मात्र ही का पालन करना है, इसमें वह भावना को अन्तराल पैदा नहीं करने देगी ।

कमला ने कहा, 'पर इसका एक और भी तो पहलू है ।'

'क्या ?'

'सोमदत्त का ।—उस बेचारे का क्या कसूर है ! वह मातृहीन लड़का —क्या उसपर दया नहीं आती ?'

'आती है । बहुत आती है, पर इतना मोह किसलिए ?—हम उसे अपनी संतान के समान भी प्यार करें तो भी कपूर साहब का समाज क्या समझेगा, कभी सोच देखा है ?'

'नहीं तो ।'

'वह समझेगा कि हम कपूर साहब ही के नौकर नहीं, उनके लड़के के भी, बल्कि उनके पालतू कुत्ते के भी नौकर हैं, और इनकी भक्ति करना ही हमारा एकमात्र कर्तव्य है ।'

'ऐसा हो तो भी उस लड़के का क्या कसूर है ? मंजूर तुम भी कर चुके हो कि लड़का बड़ा सुहावना है ।'

विशिष्ट नारी और नर की चाहना के अभिसम्पात का एक ही बिन्दु है, कि वे एक दूसरे ही को चाहें, उन्हींकी प्रशंसा करें, उसीसे आकर्षित हों; जहां दूसरे बिन्दु से स्पर्श हुआ कि वह रेखा फिर उनके व्यक्तित्व की

परिधि को काटने वाली ही होगी। नटनागर स्वयं सोम के प्रशंसक थे, किन्तु जब कमला ने भी उसकी प्रशंसा की, तो नटनागर को सहन नहीं हो सका। उनके आहत पौरुष को आघात-सा लगा। बोले :

'उसका दोष है उस पिता की सन्तान होना।—हमारी परिचर्या को वे अपने अधिकार मानते हैं। नहीं कमला। ऐसा नहीं होगा। कल से उस लड़के के लिए खटने की जरूरत नहीं है।'

'किन्तु, इस समय तो वह तन और मन दोनों ही से अस्वस्थ है।'

'हुआ करे। मैं भी तो वैसा अस्वस्थ हूं। मुझे भी पत्नी की वैसी ही अनवरत परिचर्या की आवश्यकता है।' और नटनागर ने अपने मस्तक पर फिरते हुए कमला के हाथ को अपने हाथ में ले लिया।

कमला के अधरों पर अव्यक्त ही में एक हंसी फूट पड़ी, पर उसने उसे दबा लिया। इस अवस्था में भी ईर्ष्या ?

कुछ देर के बाद नटनागर ने पुनः पूछा, 'क्या कहती हो, बोलती क्यों नहीं ?'

'क्या कहूं ?—फिर भी सोचती हूं, जो दायित्व अपने ऊपर लिया है, उसे केवल कुछ क्षणों की भावुकता, या कुछ घण्टों के सामान्य परिश्रम के कारण ही कैसे फेंक दूं ?—इतनी बड़ी नौकरी का प्रश्न न हो, तब भी प्रतिष्ठा का प्रश्न तो है।'

'प्रतिष्ठा का प्रश्न ही तो। लोग यही तो कहेगे कि नटनागर की पत्नी कपूर साहब के लड़के की दाईगीरी करती है।'

'अध्यापिका और नर्स का तो काम ही यही है।'

'तुमसे बेकार बहस कान करे !—मैंने अपने मन की बात कह दी। अब तुम जानो तुम्हारा काम जाने। यह तो मैं बहुत पहले से जानता हूं कि तुम अपनी मरजी से काम करने वाली स्त्री हो। केवल नेवर डालने से ही पक्षी को उड़ने से रोका तो नहीं जा सकता।—अच्छा, अब, ज़रा सोने दो ! काफी रात बीत गई है।'

नितान्त औदासीन्य में उठकर कमला अपने कपड़े बदलने दूसरे कमरे में चल दी।

कमला को रात्रि को घर लौटने में प्रायः ही विलम्ब होने लग गया। नौ बजे तक सभी छात्रों के सोने का विधान था। जूनियर सिस्टर रोज़ यह कार्य समाप्त करके अपने कमरे में चली जाती। एक परिचारिका कमरों के बाहर सहन में सोती, जो समय पड़ने पर बच्चों की आवश्यकताओं को जुटाती। नौ और साढ़े नौ के बीच कमला का राउण्ड प्रारम्भ होता, यह देखने के लिए कि सब छात्र सो गए हैं, और सब कुछ यथावत है। छात्रों की अवस्था अभी ऐसी नहीं कि उन्हें स्वयं उनके ऊपर छोड़ा जा सके। कार्य बड़े दायित्व का था; और दायित्व के क्षेत्र में कमला की सजगता चौगुनी हो उठती थी।

अपने इसी शेष परिक्रमण में उसे विलम्ब हो जाता। प्रत्येक कमरे में वह प्रवेश करती, बुलाकर या हाथ लगाकर या कुछ देर खड़ी रहकर वह संतुष्ट होती कि बालक सो गया है, फिर देखती कि ठीक तरह बिस्तरा हुआ है या नहीं, चादर ठीक है, पानी ठीक स्थान पर रखा हुआ है, खिड़की खुली हुई है—आदि सभी व्यवस्था स्वयं देखकर ही अपने घर लौटती थी। और सब छात्र उसे ठीक प्रकार से सोए हुए मिलते, किन्तु सोम के कमरे में उसे रुक ही जाना पड़ता।

कमला को मालूम हो गया था कि मिस रोज़ सोम के चकमे में आ जाती थी। आंखें बन्द करके सोम पड़ा रहता था और उसे सोया समझकर रोज़ चल देती थी। उसके पीठ फेरते ही, पहले ठीक नौ बजे सो जाने वाला सोम अपने पलंग पर उठ बैठता, और अंधेरे कमरे की शून्य छत में अपनी बंद आंखों को गड़ाकर नीरव कंठ से अपनी मां की स्मृति को रोया करता, कभी-कभी एकाध आंसू पलकों से टकराकर गालों पर सूख जाते। यदि कभी नींद आ जाती, तो स्वप्नों में वह उसी चित्र को देखकर पुनः आंखें मसलता हुआ जाग उठता। वही निद्राहीन रात्रि का नीरव व्यापार

तिल-तिल करके उसकी शिशु-छाती पर जमा होता रहता, किन्तु वह इतना अधिक भावुक और आत्मस्थ हो चुका था कि कभी उसने रोज़, कमला या परिचारिका को अपनी चोरी न पकड़ने दी। यदि कभी बैठा हुआ दिखाई दे गया, तो कह देता 'प्रेयर (प्रार्थना) कर रहा हूं।' और फिर नितांत नीरव भाव से लेट जाता, मानो गहरी नींद में खो गया हो। जब तक पहरेदारी करने वाली दो आंखों की सजग दृष्टि वहां से हट न जाती, वह उसी तरह सांस रोके पड़ा रहता।

उस दिन कमला को किसी अन्य छात्र की उचित व्यवस्था करने में कुछ देर हो गई। सोम समझा शायद 'आॅण्टी' आज न आ सकेगी। आज वह विशेष रूप से बोझिल अनुभव कर रहा था। दिन को कपूर साहब ने उसके शरीर की समस्त स्वास्थ्य-परीक्षाओं की व्यवस्था की थी। किसी विशेष शारीरिक रोग के चिह्न न थे। मानसिक आघात ही उसके अस्वास्थ्य का कारण बतलाया गया था। कपूर साहब इतने घबरा गए थे कि सोम स्वयं डर गया था। फिर इन परीक्षाओं के विचित्र तरीकों से वह और भी ऊब गया था, आखिर बच्चा ही तो था। अपने आपको अकेला पाते ही उसका मां का अभाव उसके भविष्य और वर्तमान में फैले हुए चारों ओर के अन्धकार को उसकी आंखों में और भी कदाकार करने लगा। उसकी शिशु-आत्मा रो उठी।

बैठे-बैठे थककर वह लेटा ही था, कि दरवाजा खुला और अर्द्ध-निमीलित आंखों से उसने देखा कि दबे पांव कमला ने भीतर प्रवेश किया है। उसने अपनी आंखें बन्द कर लीं, चादर भी वह अपने बदन पर नहीं डाल सका।

एक क्षण तक कमला नीरव खड़ी टोह लेती रही। नीरव अन्धकारमय प्रकोष्ठ में कहीं कुछ सुनाई नहीं देता था। यदि सुनने का प्रयत्न करती तो स्वयं कमला को अपनी सांस की क्षीण ध्वनि सुनाई दे जाती।

कमला ने देखा कि लड़का सो गया है, उसने आहिस्ता से पैंताने पड़ी

हुई चादर को उठाकर गले तक सोम को ओढ़ा दिया। फिर सहज ही उसके मुंह की ओर देखने की चेष्टा में कमला ने पाया कि बालों की लट उसकी आंखों पर फैल गई है। सहज ही उस लट को हटाने के लिए उसने सोम के चेहरे पर हाथ रखा—यह गीला-गीला—गाल पर क्या है ? ···पानी ?

कमला ने आहिस्ता से पुकारा, 'सोम !'

जवाब नदारद।

कमला ने परिचारिका को आदेश दिया, उसने दरवाजे के पास जाकर स्विच दबा दिया। कमरे में उजाला फैल गया। कमला ने देखा कि सोम के गालों पर आंसू की धाराएं सूख रही हैं, उनमें उलझे हुए आंसू बता रहे हैं कि अभी कुछ देर पूर्व तक वह इन मोतियों को बराबर बिखेरता रहा है। कमला का हृदय अचानक ही धड़क उठा।

उसने नौकरानी से पूछा, 'कुछ हुआ था ?'

'कुछ नहीं बहन जी !···सिस्टर रोज़ सभी को ठीक तरह सुलाकर गई हैं। उन्हींसे पूछ लीजिएगा।'

'अच्छा ! तुम बाहर जाओ।'··· नौकरानी बाहर चली गई।

कमला ने भीतर से दरवाजा बन्द कर लिया और सोम के पलंग के पास आकर बैठ गई और पुनः बड़े प्रेम से बोली, 'सोम !'

सोम फिर भी कुछ न बोला।

उसके सिर पर हाथ फिराते हुए प्रायः उसके ऊपर झुककर मुंह के पास मुंह लाकर कमला ने कहा, 'आँण्टी से नहीं छिपाते सोम ! मैं जानती हूं, तुम जाग रहे हो; और यह रो क्यों रहे हो ?···अरे···'

—क्योंकि सांत्वना का स्वर पाकर उसका अवरुद्ध शोक एकाएक ही फूट पड़ा, और मिली हुई पलकों को फोड़कर वन्य प्रपात की तरह आंसुओं में गालों पर लुढ़कने लग गया था।

कमला ने कुछ और आगे सरककर उसके सिर को अपनी गोदी में ले लिया। विद्युत के प्रकाश में उद्भासित अश्रु की धाराओं में स्फीत उसके

मुंह को निर्निमेष ताकते हुए कुछ क्षण उसन बिता दिए। यह मुखमण्डल, ये आंखें, यह पतली नाक, यह सुन्दर घुंघराले बाल, ये पतले विद्रुम अधर, ये नन्हीं-नन्हीं गौर बाहुंएं, यह सारा शरीर उसीके शरीर का एक भाग है, यदि समाज की क्रूर आंखों का भय न होता, तो इसी धड़कती हुई छाती के रक्त से इस बालक के विकास को वह सम्पन्न करती। आज उसके सुख-दुःख में उसकी केवल एकेडेमिक (औपचारिक) दिलचस्पी है। वह मां नहीं, वह है इस स्कूल की अध्यक्षा, केवल अध्यक्षा, इस जैसे तीस छात्र और हैं उसके संरक्षण में। पर क्या उनका शरीर भी इसके शरीर की तरह उसका एक भाग है ?

—मालूम दिया, सोम की रुलाई तीव्र हो उठी, वह अवरोध को पाकर जैसे सब कुछ को फोड़ देना चाहती हो। एकाएक ही उसके ओठ हिले, खुले, तड़फड़ाकर रह गए, और एक बंधी हुई हिचकी उनके पार हो गई।

कमला ने अपने गालों को उसके गालों पर लगा दिया, और बोली, 'बेटा !'

यह कैसा सम्बोधन ?···कमला स्वयं मानो चौंक पड़ी। उसने अपना मुंह उठाकर देखा—सचमुच सोम भी इस शब्द या इस स्वर के विचित्र कम्पन से मानो चौंक उठा था। उसने एक क्षण के लिए आंखें खोलकर कमला को देखा, और फिर उसकी गोद में से उतर पुनः तकिए में मुंह छिपा उल्टा लेट गया।

एक ही क्षण में कमला प्रकृतिस्थ हो गई। बोली, 'सोम ! तुम रो क्यों रहे हो ?'

कमला के स्वर में इस बार स्वाभाविकता थी। सोम ने उसी तरह लेटे हुए कहा, 'कहां, अब तो नहीं रो रहा हूं।'

'पर अब तक क्यों रो रहे थे ?'

'पता नहीं आॅण्टी। यूं ही, जाने क्यों रुलाई आ जाती है।'···और

उसने कमला की ओर मुंह फिराया, देखा कि रुका हुआ प्रवाह फिर मुक्त होना चाहता है।

'रुलाई आ जाती है।···क्या···'

लड़का समझ गया, बोला, 'अक्सर आ जाती है आॅण्टी, जब से ममी मर गई, तभी से।'

'क्या इसीलिए नींद भी नहीं आती ?'

'नहीं।····' और मानो कमला की इस बात से आश्वस्त होकर वह उठकर कमला के पास ही बैठ लिया।

'ममी तुम्हें बहुत प्यार करती थीं सोम ?'

'ममी तो अक्सर बीमार ही रहती थीं आॅण्टी ! उनके पास मुझे अधिक रहने ही कहां दिया जाता था ?'···फिर उसने मानो शून्य दीवार में से खोज लाकर अपनी बात रखी, 'मुझे उनकी बहुत याद आती है। ऐसा मालूम पड़ता है मानो पास के कमरे में बीमार पड़ी वे मुझे पुकार रही हैं।'

'सोम !'

'सचमुच आॅण्टी !—अच्छा बताओ, क्या मरा हुआ आदमी वापस कभी नहीं आता ?'

कमला ने भी उत्तर खोज लाने के लिए उसी शून्य दीवार का सहारा लिया, पर उत्तर कहां था वहां ?

उसे निरुत्तर देख सोम ने पुनः पूछा, 'अच्छा, मरकर आदमी कहां चला जाता है, यह तो बता सकोगी ?'

कमला ने निरतिशय शून्य आंखों से सोम की ओर देखा, उसकी तरल आंखें उसीकी ओर देख रही थीं। वे ही आंखें, जिन्हें वह नित्य ही कांच में देखा करती हैं, कांच से बाहर देखने वालों को क्या उनमें भी इसी तरह भावना का समुद्र छलछलाता दिखाई देता है ?

लड़के ने आंखें नीची कर लीं, और धीरे-धीरे बोलने लगा, 'यदि वहां तक जाने का कोई रास्ता बता दे, तरकीब बता दे !'

कांपकर कमला ने पूछा, 'तो क्या करोगे ?'

'मैं जाऊंगा ऑण्टी, मैं सिर के बल भागा जाऊंगा ! तुम जानती हो वह रास्ता ?'

'नहीं सोम ! मैं ही क्या, कोई नहीं जानता !—किन्तु, क्या ममी के सिवा तुम्हें और किसीकी याद नहीं आती ?'

'जो अपने पास हैं, उनकी कहीं याद आती है क्या ?'—सचमुच जो प्राप्य हैं, उन्हें पाना ही क्या !

'पर तुम तो कहते हो सोम, ममी के पास तो तुम्हें अधिक जाने ही नहीं दिया जाता था !'

'तो क्या हुआ ?—वे बीमार जो थीं। पर मुझसे छिपा थोड़े है ऑण्टी !—मुझे सदैव अपने पास देखने के लिए वे कितनी बेचैन रहती थीं। और जब कभी मैं उनके पास होता, उनकी आधी बीमारी भाग गई होती ! मुझे इस तरह से अपने से चिपटाकर सो जातीं मानो कोई मुझे उनसे छीन लेगा !'—और सोम ने इस तरह कमला को देखा, मानो मां की छाती पर सिर रखकर सो जाने की उसकी भूख एकाएक ही जाग उठी हो !

'फिर ?'

'उस तरह चिपटकर सोना इतना अच्छा लगता ऑण्टी, कि मुझे नींद आ जाती। बाद में पापा या डॉक्टर आकर देखते तो बड़े नाराज होते ममी पर—किन्तु ममी को यह बड़ा अच्छा लगता और मुझे भी।'

'पर जब ममी बीमार थी तो हमेशा तो तुम उनके पास रह नहीं सके थे !'

'हमेशा कहां ?—उसके बाद ही तो मुझे मिशन स्कूल में भेज दिया गया था। जब कभी ममी से मिलता, तो वे बहुत रोती थीं। लेकिन इसके पहले तो कभी उनकी गोद से उतरा ही न था।'

'तुम उनके बहुत दुलार के लड़के थे सोम !'

सोम ने कमला के हाथ की अंगुलियों से मानो खेलते हुए कहा, 'मां

के लिए कोई बिना दुलार का लड़का भी होता है क्या ऑण्टी ?'

भावपूर्ण दृष्टि से सोम की ओर देखकर कमला ने कहा, 'क्यों नहीं सोम ! बहुतेरी माताएं अपने बच्चों को बिल्कुल प्यार नहीं करतीं, ऐसी ही माताओं को सौतेली माता—स्टेप मदर—कहते हैं !'

'स्टेप मदर ऐसी माता को कहते हैं ऑण्टी ?···'

'हां····'

'मेरा तो ख्याल कुछ दूसरा ही था !···'

कमला ने अपने पूर्व कथन का सूत्र ही जारी रखते हुए कहा, 'और बहुतेरी नारियां, मां न होकर भी बच्चों को इससे अधिक प्यार करती है !'

'उसको कौन-सी 'मदर' कहते हैं ऑण्टी ?'—सोम ने सहज भाव से पूछा।

कमला के मन में आया, कह दे उसे 'पत्नी' कहते हैं—पर प्रबोध-शून्य बालक यह उसे क्या समझेगा ! तो उसने कहा :

'उसे 'मदर' ही कहना पड़ता है। और तो कोई शब्द बनाया नहीं गया उसके लिए !'

सोम ने पूछा, 'अच्छा, क्या 'पापा' में भी ऐसे भेद होते हैं ?'

कमला ने कहा, 'पहले यह बताओ, तुम्हें तुम्हारे पापा कैसे लगते हैं ?'

'बहुत अच्छे !'

'ममी जैसे ?—या उससे भी अच्छे ?'

सोम ने कुछ इतस्ततः करके कहा, 'ममी तो सदैव बीमार ही रहा करती थीं। मुझे अधिक उनके पास रहने नहीं दिया जाता था। शायद इसलिए कि उनको भी 'स्ट्रेन' (जोर) हो, और मैं हमेशा उन्हींकी न सोचूं ! इसलिए रहना मुझे पापा के पास ही पड़ता था, लेकिन पापा के पास मैं सदैव ही ममी के पास जाने के लिए जिद किया करता था, वैसे उन्हें भी 'ड्यूटी' पर अक्सर बाहर जाना पड़ता, इसलिए मुझे मिशन में

भरती करवा दिया गया। ममी के बाद तो पापा ही मेरे सब कुछ हैं न आँण्टी ?'

'हैं तो, पर यह तो तुम उन्हें वैसा मानो तब है !'

'मानूंगा क्यों नहीं ?—तुम कहती हो कि ममी को पाने का अब कोई उपाय ही नहीं है तब उनके सिवा और किसे मानूं ?'

'पर क्या तुम्हारा मन भी उन्हें वैसा ही मानता है ?'

'मानता है आँण्टी ! पापा नहीं होते, तब भी मन वैसे ही खोया-खोया-सा रहता है। स्कूल जाने से पहले जब ममी के पास मैं नहीं सो पाता था, और जब मैं उनके पास जाने के लिए मचलकर रो उठता था, तो पापा भी मुझे छाती से लगाकर रोने लग जाते थे। उन्हें मेरी वजह से बड़ा दुःख होता था आँण्टी !—तब सहमकर मैं चुप हो जाता, और उनकी छाती पर सिर रखे ही मुझे नींद आ जाती थी। लेकिन अब तो बड़ा हो गया हूं, अब वैसे सोना क्या अच्छा लगता है ?'

'अब भी, अगर पापा तुम्हें अपने पास लेकर सोएं, तो क्या तुम्हें नींद आ जाएगी ?'

सोम कुछ फीके भाव से मुस्कराकर बोला, 'नींद तो पापा के बिना भी आ ही जाती थी। स्कूल में यही तो सीखा था। पर आजकल रात को बिस्तर पर पड़ता हूं तो ऐसा मालूम पड़ता है कि यह बिस्तर ही कहीं न काट खाए। बड़ा डर लगता है आँण्टी !'

'डर किसका लगता है ?'

'यों तो किसीका नहीं ! पर फिर भी दिल धड़कता है !'

कमला ने मानो समस्त साहस संचित कर इस तरह कहा कि वह स्वयं कहीं उसकी बात न सुन ले, 'अच्छा सोम, अगर कोई तुम्हें कहे कि जो मर गई वह तुम्हारी ममी न थी तो ?'

सोम ने कहा, 'वह यह भी तो कहेगा कि तब मेरी ममी कौन है ?'

'अच्छा, मान लो, वह कहे कि तुम्हारी ममी मैं हूं।'

सोम ने ललचाई आंखों से कमला की ओर देखा, वही फीकी हंसी

फिर उसके अधरों पर फैल गई, बोला, 'सो कैसे हो सकता है आँण्टी ?'

'क्यों, कैसे नहीं हो सकता ?'

'तुम अपनी ही सन्तान की तो 'ममी' हो सकती हो ! चाहे जिसकी कैसे हो सकती हो ?'

'चाहे जिसकी क्यों ?—तुम क्या कोई गैर हो ?'

'गैर तो नहीं—पर तुम्हारी सन्तान कहां हूं आँण्टी ? तुम्हारे दिल में मेरे लिए वैसी बेचैनी कहां होती है ?—ममी तो ममी, मेरे पापा तक मेरी आंखों में आंसू नहीं देख सकते !'—और फिर उस बच्चे की आंखें जब छलछला उठीं तो उसने लजाकर तकिए में ही मुंह छिपा लिया।

कमला ने बलपूर्वक अपनी आंखों के विद्रोह को दबा लिया। तकिए पर औंधे पड़े हुए उसने सोम को देखा—वह जानती है कि भोले बच्चे का आंसुओं पर अधिकार नहीं रह गया। वह कैसी मां है कि उसको बाहुओं में भरकर छाती से नहीं लगा लेती ?—क्यों नहीं स्पष्ट रूप से कहकर विश्वास दिला देती कि वही उसकी मां है, यदि वह अर्द्ध पागल जन्मरोगिणी औरत मर गई, तो उससे सोम का क्या आता-जाता है; जब तक कमला जीवित है, तब तक उसे क्या डर है ?—किन्तु क्या सचमुच उसे डर नहीं है ?—सोम भी समझता है कि कमला उसकी ममी नहीं हो सकती। कैसे हो सकती है वह ?—उसको कपूर साहब जैसा समर्थ और स्नेहिल पिता मिला हुआ है। कहां कपूर साहब और कहां नटनागर ? ईर्ष्या की आग अभी से उनके मन को गरमी पहुंचाने लग गई है। यदि उन्हें यह मालूम हो जाए कि यह कमला की वही सन्तान है तो जाने क्या वे कर गुजरें ?—नहीं, वह यदि अभागिनी है तो है, न वह पति ही को पा सकती है, न पुत्र ही को ! उसे अपने हाहाकारमय निरवधि शून्य हृदय को और ही किसी उपसर्ग से भरना होगा। उसके व्यक्तित्व के इस विहित मार्ग को समाज ने, परिस्थितियों ने रुद्ध कर दिया है, वह उसे नहीं पा सकती ?

किन्तु यह अबोध बालक ?—जिसकी ममता की प्यास उसके खारे

आंसुओं को उलीचकर भी तृप्त नहीं होना चाहती। इस अर्ध रात्रि के स्पन्दनहीन वक्ष पर चिपटा रहकर कैसे यह आत्मलाभ प्राप्त करे ?—कमला ने हाथ पर लगी हुई घड़ी को देखा, बारह बजने में पांच मिनट शेष थे।

कमला ने सोम को बाहुओं में भरकर उठा लिया। देखा कि उसका सारा मुंह आंसू की सिक्त-लिपि में घुल-मिलकर एकाकार हो उठा है। कमला रोक न सकी अपने आपको अधिक। उसकी आंखों ने अधिक नियंत्रण न माना, और जब सोम ने भी मां के उस छल को देख लिया, तो कमला ने मानो अपनी चोरी को छिपाने के लिए उसके मुंह को अपनी छाती पर छिपा लिया। बहुत देर तक इसी तरह अवसन्न बैठे दोनों प्राणी मूक भाव से अपने हृदय का भार कम करते रहे। रात्रि दबे पांव कदम-कदम सरकती रही, कुछ देर बाद सोम ने सिर उठाया और कहा, 'आण्टी ! तुम जाओ अब ! मैं सो जाऊंगा, सच कहता हूं !'

—और उठकर वह एक भले बच्चे की तरह चादर को मुंह तक खींचकर लेट गया।

कुछ क्षणों तक कमला नीरव-निस्पन्द बैठी, न जाने किस अन्धकार में खोई रही, फिर एकाएक ही चादर को उसने मुंह पर से हटा दिया —सोम आंखें बन्द किए सोने का प्रयत्न कर रहा था।

उसके सिर पर हाथ रखकर कमला ने कहा, 'नींद नहीं आती ?'

'अब आ जाएगी आण्टी। तुम जाओ !'

किन्तु कमला ने जाने की अपेक्षा जो कुछ किया उसकी सोम को भी कल्पना न थी। उसने पुनः सोम को अपने भूखे वक्ष से सटा लिया और वह भी उसके पास ही लेट गई। सोम के नन्हे हाथों को उसने अपने गले पर डाल लिया, उसके नन्हे पैर उसने बलपूर्वक अपनी कमर पर डाल लिए। उसके मुंह को उसने अपने दोनों स्तनों के बीच में छिपा लिया, और उसके कोमल सुनहले बालों के बीच अपनी पतली नाक को टिकाकर आंखें बन्द करके अवश भाव से वह लेट गई, मानो विश्व के

समस्त विरोध को उसने उस प्रकोष्ठ के बाहर ढकेल दिया, सोम ने कुछ विरोध न किया। उसकी भटकती हुई आत्मा को मानो नीड़ मिल गया। उसने मातृ-रूपिणी आँण्टी को—या आँण्टी-रूपिणी मां को हाथों और पैरों से ही नहीं, मानो मन के समस्त अंकुशों से कसकर, जकड़कर और उसके मसृण मांस में भिदकर बांध लिया। उसी जड़ भाव में कुछ ही क्षणों में उसे नींद आ गई और उसके कसे हुए हाथ-पांव शिथिल हो गए। कमला ने उसे इतना कसकर छाती से लगाया हुआ था, कि सोम के सारे बदन में पसीना हो गया। तब उसने उठाकर उसका सिर तकिए पर रख लिया। उसके गाल पर अपने गाल रख दिए, उसके गले पर अपने हाथों का बन्धन डाल दिया, और दोनों पृथुल जांघों के बीच उसके नन्हे पैरों को दाबकर वह पुनः लेट गई। जीवन में आज मानो पहली बार उसे तृप्ति का कण प्राप्त हुआ। समय और स्थान की सीमाएं उसके लिए नगण्य हो गईं।

आंखें बन्द थीं, पर नींद उनमें न थी। समय की गति मानो रुक गई थी, काल का समस्त प्रवाह रात्रि से भरे हुए इस नीरव प्रकोष्ठ में आकर मानो पंगु हो गया था। केवल सांस की प्रक्रिया दोनों ही प्राणियों में शेष थी, उसीसे दोनों के वक्ष एक दूसरे पर दबाव डालते, और दूर हो जाते। यह दबाव भी उनकी गंभीर निष्ठा को घनीभूत ही करता जा रहा था।

क्या यही क्षण अमर जीवन नहीं हो जाता? यदि नहीं, तो क्यों न यही क्षण अमर मृत्यु हो जाए? और क्या पाना शेष है कि जिसके लिए जीवित रहने की स्पृहा हो! पति को वह पा नहीं सकती। चाहे जैसी गंभीर निष्ठा हो उसमें नटनागर के लिए, वे उसे सहन नहीं कर सकेंगे, कभी नहीं! आज जब वह अनायास ही पुत्र को पा गई है—क्या हुआ यदि वह अपनी मां को न पा सका हो? यदि उसने पा लिया है तो वही क्या उसे उसकी मां को पाने में सहायक न होगी। मां—क्या दुनियां में नारी के लिए इससे आगे कुछ भी नहीं है? सचमुच कुछ नहीं है?

हो भी, तो भी कमला अब उसकी इच्छा न करेगी। शायद जब तक कोई मां नहीं बन जाती, तभी तक उसकी दृष्टि अन्य अनेक उपलक्ष्यों में उलझी रहती है। शायद वह प्रेमी या पति की भी खोज इसीलिए करती है कि वह उसे मां बनाने में सहायक होता है। यदि कमला को मातृत्व प्राप्त हो गया है, तो नटनागर की भी परवाह क्यों करने लगी ?

कितना सुख है इस बच्चे को छाती से लिपटाए सो रहने में ! इन गुदगुदे गालों का स्पर्श, इन पतले मांसल अधरों की यह रस-राशि, रेशम के तार जैसे ये मुलायम कृष्ण-स्वर्ण बाल, ये नन्हे गोरे-गोरे नरम हाथ, ये पैर—शरीर के रूप में प्रकट यह मां के वात्सल्य का मूर्त जादू—इससे बढ़कर संसार में है क्या ? कमला ने सोम के सभी अंगों को बारी-बारी से छूआ, और आंखें बन्द करके स्पर्श की उस अभूतपूर्व अनुभूति को मानो वह स्मृति की मंजूषा में गहरे आबद्ध करने लगी।

—तभी परिचारिका ने कमला के बाजू पर हाथ रखकर कहा, 'बहन जी।'

स्वप्न-भंग हो गया अकस्मात् ! एक तीव्र आघात-सा पाकर मुंदी आंखों से ही कमला ने कहा कुछ रोष के साथ, 'क्या है ?'

'बड़े साहब !'

'बड़े साहब ?' कहकर शीघ्र ही कमला उठ बैठी, अपनी अस्त-व्यस्त साड़ी को ठीक करने की चेष्टा में जैसे ही उसने दरवाजे की ओर देखा —मिस्टर कपूर दरवाजे में ही खड़े थे। बोले :

'एक्स्क्यूज़ मी मैडम। मुझे साढ़े तीन की गाड़ी से ही बाहर जाना पड़ रहा है—एक दुर्घटना हो गई है। जाने से पहले सोचा कि सोम को देखता चलूं। द होल डे द पूअर बॉय हैज बीन इनटेंशन (सारे दिन बच्चा परेशानी में रहा) लेकिन अभी तक आप यहां हैं, क्या कुछ विशेष बात है ?'

कमला ने अपने आपको सम्हाल लिया था। वह उठ खड़ी हुई। इस परिस्थिति के लिए वह तैयार न थी, किन्तु अब क्या हो सकता था ?

सामने आकर उसने कहा, 'गुड इवनिंग सर !' और दोनों हाथ जोड़कर उसने नमस्कार किया।

कपूर साहब ने कमला को देखा, और वे नमस्कार का उत्तर देना भी भूल गए।

'आप ?'

'जी हां····' कमला ने स्थिति को हाथ से बाहर न जाने दिया, बोली—'सोम के बारे में आप चिन्ता न करें। रात को वह सो नहीं पा रहा था, पर अब वह सो गया है, स्वस्थ है। आइ सपोज यू वोण्ट लाइक टु डिस्टर्ब हिम एनी मोर (मैं आशा करती हूं आप उसे किसी तरह परेशान करना नहीं चाहेंगे)'

'जी नहीं—लेकिन····'

'तो चलिए—आफिस में चलिए—लड़का जाग न जाए !' फिर परिचारिका की ओर देखकर कहा, 'चादर ठीक कर दो, और वह सामने की खिड़की बन्द कर दो। ठंढी हवा आ रही है।'

आगे-आगे कमला, और पीछे-पीछे कपूर साहब, दोनों सुपरिंटेंडेंट के दफ्तर में पहुंच गए। कमला ने स्विच लगाकर प्रकाश कर दिया। कमला ने कपूर साहब को अध्यक्ष की कुर्सी पर बैठने के लिए कहा, तो मिस्टर कपूर ने कहा :

'वह आपका आसन है। मैं यहां बैठता हूं।' और वे सामने की कुर्सी पर बैठ गए। कमला अपनी कुर्सी पर।

कमला ने कहा, 'अब कहिए, जो कुछ आप कहना चाहते हैं। वहां शायद लड़का जाग जाता, शायद आप भी न चाहेंगे कि उसपर किसी तरह का 'स्ट्रेन' पड़े, कम से कम उसके स्वास्थ्य की इस नाजुक अवस्था में !'

'आपका कहना ही ठीक है मैडम ! लेकिन यदि मेरी आंखें मुझे धोखा नहीं देतीं तो आप···'

मिस्टर कपूर कुछ झिझके तो कमला ने कहा, 'जी हां, आप मुझे पहले देख चुके हैं। न आपकी आंखें आपको धोखा दे रही हैं, और शायद

आपकी स्मरण-शक्ति भी नहीं। डॉक्टर पोर्शिया ने जिसका परिचय आपको अपनी एक मित्र के रूप में दिया था।'

'और मिसेज़ नटनागर ?'

'जी हां, दोनों एक ही हैं !'

कुर्सी के बाज़ू पर कुहनी के सहारे खड़े हाथ की हथेली पर अपना मस्तक रखकर मिस्टर कपूर ने एक क्षण के बाद कहा :

'वहां से लौट आकर मैं प्रायः भूल ही गया था कि सोम हमारा लड़का नहीं है....'

'यह आप क्या कह रहे हैं मिस्टर कपूर ? सोम आप ही का लड़का है....'

एक फीकी हंसी हंसकर कपूर साहब ने कहा, 'वैसा ही सही, किंतु मिसेज़ कपूर के मरते ही सबने यही समझा, उस लड़के ने भी कि उसकी मां अब नहीं रही। आज अकस्मात् आपको पहचानकर एक आघात लगना स्वाभाविक ही है !'

'आघात ? आघात क्यों कहते हैं आप इसे ?'

'तो और क्या कहूं इसे ?'

'तब तो मेरा बड़ा दुर्भाग्य है मिस्टर कपूर !'

'आपका नहीं, मेरा कहिए ! उस घटना को प्रायः भूल ही गया था, कि किसी समय कहीं सोम का कोई दावेदार उठ खड़ा होगा। उस समय आपने मेरी 'वाइफ' की प्राणरक्षा की; किन्तु अब वह नहीं है, फिर भी सोम के दावे की बात तो सोच ही नहीं सका—हालांकि स्वाभाविक तो यही था।'

कपूर साहब की आवाज़ में एक कंपकंपी, एक दर्द स्पष्ट मालूम दे रहा था। इतना बड़ा अधिकारी, जिसकी किसी भी प्रकार की विषम परिस्थिति में भी पराजित न होने की ख्याति थी, आज स्पष्ट ही, अनायास ही मानो एक क्षणभर में वृद्ध और निर्बल हो उठा था।

कमला ने कहा, 'किन्तु अपने दावे के लिए मैंने आपसे कभी याचना तो नहीं की।'

मिस्टर कपूर ने एक लम्बी सांस ली और कहा, 'याचना नहीं की, यह तो मैं जानता हूं! पर जो आपका दावा है, उसके लिए याचना कैसी? हम उसके मां-बाप न होकर भी जो बात भूल गए, वह मां बनकर आप ही कैसे भुला देंगी।'

'फिर भी मिस्टर कपूर, विश्वास कीजिए कि इसे मैं बिल्कुल ही भूल गई थी?'

'विश्वास करने को कहती हैं आप, कि बिल्कुल ही भूल गई थीं?'

'विश्वास नहीं होता?'

'कैसे हो मिसेज़ नटनागर? यदि ऐसा न होता, तो आप हमारे पीछे क्यों पड़तीं?'

'पीछे पड़ी मैं?—ज़रा समझाकर नहीं कहिएगा?' और उसने टेबल पर रखे हुए पेपरवेट को दोनों हाथों में घुमाना शुरू कर दिया।

'पता नहीं किस छल से मिस्टर ओझा को फांसकर आप आबू गईं, एक माह तक वहां आपने अपने लड़के का पीछा किया! फिर यहां पर अपना ट्रान्सफर करवाकर···'

कमला को रोष हो आना स्वाभाविक था, कपूर साहब को बीच ही में रोककर उसने कहा, 'देखिए मिस्टर कपूर! अपने आपको धोखा देने का प्रयत्न मत कीजिए। आप खूब अच्छी तरह जानते हैं कि मेरे आबू जाने का सोम के आबू जाने से कोई सम्बन्ध नहीं है। आपने खुद मिस्टर ओझा को प्रार्थना करके यहां बुलाया और सोम को उनके साथ कर दिया। आप विश्वास न करेंगे, किन्तु जब तक मैंने सोम को उनके साथ देखा नहीं, मैं जानती भी न थी कि उनके साथ कोई लड़का भी होगा! रहा मेरे ट्रान्सफर का प्रश्न, उसके बारे में भी आपसे अधिक और कौन जानता है कि वह मेरी इच्छा का नहीं अनिच्छा का कारण हुआ है। इसके मूल में आपकी इच्छा और प्रार्थना का प्रमाण भी पाया जा सकता है, यदि आप

चाहें !—पर यह कैफियत किसलिए दूं [मिस्टर कपूर।—'और उसने आंखों को नीचा करके एक हाथ से सिर को पकड़ लिया, फिर बोली—'मैं जानती हूं मेरे दावे को प्रमाणित करने के लिए मेरे पास कोई आधार नहीं है, यह भी नहीं जानती कि डाक्टर पोशिया आजकल कहां है। इस बाजार में, जहां दूसरों के अधिकारों को, दावों को, हड़प जाना ही धर्म है, कौन एक बार अपना दावा विसर्जन करके पुनः उसके लिए याचना करेगा ?—और कौन उसे स्वीकार करेगा, जबकि उसके पास प्रमाण ही नहीं हैं !—आपका मुझे यहां से स्थानांतरित करने का या पदच्युत करने का अधिकार भी तो कहीं गया नहीं है ?' और उसने कपूर की ओर दृष्टि उठाकर देखा।

मिस्टर कपूर ने हतप्रभ होकर कहा, 'क्या आप मुझे इतना ही ओछा समझती हैं ?'

कमला की आंखों में रोष तब भी दीप्त था, उसने कहा, 'मेरी यही गलती है मिस्टर कपूर, कि मानव को मैंने कभी ओछा नहीं समझा। यदि समझ सकती तो मुझे प्रायः धोखा न खाना पड़ता'—और वह अपनी कुर्सी पर से उठ खड़ी होकर बोली—'आप अपने पुत्र को सम्हालिएगा ! मेरे लिए क्या आदेश है ?'

मिस्टर कपूर ने घड़ी देखी, फिर उसी धीर भाव से कहा, 'मिसेज़ नटनागर ! आप व्यर्थ ही उत्तेजित हो गई हैं। बैठिए कुछ देर और ! पता नहीं आज आप सो सकेंगी या नहीं, पर आपके मन पर जो भार हो, मैं उसे उतार देना चाहता हूं। व्यर्थ ही आप कष्ट पाएं, यह मुझसे सहन नहीं होगा।'

कमला पुनः अपनी कुर्सी पर बैठ गई।

इस बार मिस्टर कपूर ने कांच के एक दूसरे पेपरवेट को अपने हाथ में ले लिया, और उससे खेलते हुए धीरे-धीरे वे कहने लगे :

'देखिए, आपने मुझे एकदम से अपराधी बना दिया। जो बात मैंने स्वप्न में भी नहीं सोची थी, वह आपने मुझपर आरोपित कर दी। मैं

पचास के उस पार पहुंच गया हूं—सारे भविष्य में अपना कहने को कुछ भी नहीं है, बिल्कुल एकाकी इस दिगन्तहीन महासागर में यदि सहारे के लोभ में किसी तिनके को पकड़ बैठा, तो क्या मेरी दुर्बलता एकदम ही अक्षम्य रह जाएगी ?—यह तो कोई भी जानता है कि केवल तिनके का सहारा लेकर कोई महासागर नहीं तैर लेता; फिर भी उसका मोह ही तो है !—इच्छा या अनिच्छा से गत कुछ महीनों की घटनाओं के आवर्त में जिस तरह आप आ फंसी हैं, उससे यदि मैंने यह निष्कर्ष निकाल ही लिया कि मां का आपका दिल आपको विवश बनाता रहा हो तो मैंने क्या अस्वाभाविक सोच लिया ?—फिर भी मैं कहता हूं, सोम के ऊपर आपका अधिकार है, आप जब चाहेंगी, उसे मैं आपके सुपुर्द कर दूंगा। किन्तु····'

'कहिए रुक क्यों गए ?'

'सोचता हूं, पूछूं या न पूछूं !—आप नाराज़ तो न होंगी ?'

'अगर हो भी जाऊं तो आपकी बला से ! आप पूछिए !'

'तो नहीं पूछूंगा।—देखता हूं कि आपका क्रोध अभी तक गया नहीं है। खैर आपका पुत्र है, आपकी धरोहर है। भविष्य में उसका क्या होगा, क्या न होगा इसके बारे में चिन्ता करने का मुझे अधिकार ही क्यों हो ?—पर मुझे आपने बहुत कड़ाई से परखा है मिसेज़ नटनागर !—मुझे इसका बड़ा अफसोस रहेगा !—' और अबकी बार मिस्टर कपूर उठ खड़े हुए।

कमला ने कहा, 'किन्तु अभी तक तो आप ही की बात हुई। मेरी बात तो आपने सुनी ही नहीं ?'

'उसकी ज़रूरत रह जाती है क्या ?'

'उसकी ज़रूरत कब नहीं थी—पर क्या आप बैठेंगे भी नहीं ? अभी तो आपकी गाड़ी को खूब देर है।

मिस्टर कपूर पुनः बैठ गए और बोले, 'लीजिए मैं बैठ गया !'

कमला ने कहा, 'कपूर साहब, मैंने यदि कड़ाई के साथ आपको परखा है, तो उससे कम कड़ाई मुझे परखने में आपने काम में नहीं ली।

पहले की बात जाने दीजिए, जिन कई महीनों से मैं सोम के साथ घटनाओं के आवर्त में आ घिरी हूं, क्या मैंने कभी किसी छल से अपने दावे को, मांगना दरकिनार रहा, कभी प्रमाणित करने की भी चेष्टा की है ? किसी डाक्टर पोशिया से आपने सुना होगा कि कोई कमला नाम की नारी अपने पुत्र को आपको दे सकती है, और आपने उसे ध्रुव मान लिया; यदि वही डॉक्टर पोशिया मुझे कहे कि मेरी सन्तान होते ही मृत हो गई, तो क्यों न मैं भी उसे ही ध्रुव मान लूं ? आपके मन का चोर आपको मुबारक रहे ! मैं किसी भी छल से आपकी सन्तान की मां बनने के लिए तैयार नहीं हूं।'

मिस्टर कपूर ने कमला की ओर देखा—'मिसेज नटनागर····'

'जी !'

'मैं आपके पिता की उमर का नहीं, तो भी उमर में आपसे काफी बड़ा हूं। दुनियां भी देखी है, और किस्से भी बहुत सुने हैं। आपकी आंखों को देखकर, आपके व्यवहार देखकर भी यदि मैं कहूं कि आप उसकी मां नहीं हैं, तो मुझ जैसा मूर्ख आपको और कोई न लगेगा। मेरी सन्तान कह रही हैं !—यानी आपने पुनः उसे मुझे लौटा दिया। उस दिन आपने एक गरीब दुखिया औरत पर दया की थी, आज आप एक सर्वस्वहीन बूढ़े पर दया कर रही हैं !—आप उसका भार नहीं लेना चाहतीं, तो मेरे कन्धे काफी मज़बूत हैं ! पर मां न बनी हों, अभिभावक तो आप उसकी बन ही गई हैं।'

कमला ने लम्बी सांस ली, चेहरे को मानो अपनी ही छाती में छिपाकर उसने कहा, 'सो भी कपूर साहब, अब कठिन दीखता है। यह बेकार की बेगार ढोते नहीं बनती।'—और कपूर साहब को अनुभव हुआ मानो उसकी वाणी गीली हो उठी है।

कपूर साहब बोले, 'मैं आपकी पीड़ा को समझ सकता हूं मिसेज़ नटनागर !—मैं एक प्रश्न और पूछना चाहता था, पर अब न पूछना ही अच्छा होगा। फिर भी मैं आपको आश्वस्त करना चाहता हूं कि सोम

मुझे प्राणों से प्यारा है, उसका अपने जीवन में तो कोई अनिष्ट न होने दूंगा बल्कि प्रयत्न ऐसी व्यवस्था करने का करूंगा कि मेरी मृत्यु के बाद भी उसे किसी तरह का कष्ट न हो। जैसे आप अब तक निश्चित रहती आई हैं, उसी तरह निश्चिन्त रहने का प्रयत्न कीजिए।'

'पर आप पूछना क्या चाहते थे ?—न पूछने से तो मेरे मन का बोझ हटेगा नहीं।'

'शायद पूछने से भी न हटे !'

'देखिए, आप ही ने स्वीकार किया है, कि आप मेरे पिता के तुल्य हैं।'

मिस्टर कपूर कुछ क्षण चुप रहे, फिर बोले, 'नटनागर में और आप-में बनती नहीं, यह सुना था।—क्या यह लड़का ही उसका कारण है ?'

कमला सिर पकड़कर चुपचाप बैठी रही। क्या उत्तर दे—किस स्त्री को अपने मुंह स्वीकार करना पड़ा है कि वह पुंश्चली है।

मिस्टर कपूर ने उत्तर की अधिक राह न देखी और कहा—'आप उत्तर न दीजिए !—अच्छा शायद नटनागर तो नहीं जानता कि सोम आपका पुत्र है ?'

कमला ने केवल मस्तक हिला दिया।

कपूर साहब ने हाथ की घड़ी देखी, और बोले—'नहीं, अब अधिक नहीं ठहर सकूंगा।—सोम की तरफ से एक तरह से निश्चिन्त हो गया। आपसे बढ़कर और किन हाथों में उसे दे सकता था ?—मैं तो मात्र अब आपके आदेश का भिखारी रह गया। जो आप आदेश देंगी, वही बजा लाना मेरा कर्तव्य रहेगा—' और वे उठ खड़े हुए—दरवाजे पर क्षीण पदध्वनि के साथ ही देखा गया कि मिस्टर नटनागर वहां आ खड़े हुए हैं। शायद कपूर साहब के आखिरी शब्द भी उन्होंने सुन लिए हैं।

दरवाजे के भीतर का दृश्य देखते ही नटनागर को काठ मार गया। इतनी रात गए मिस्टर कपूर कमला के आफिस में। क्यों कमला को देर हो गई ?—और वह सिर झुकाए बैठी हुई है, जब कि कपूर साहब

कह चुके हैं, 'जो आदेश देंगी उन्हें बजा लाना मेरा कर्तव्य रहेगा।'

कपूर साहब भी इस परिस्थिति के लिए एकाएक तैयार न थे। पर तभी नटनागर ने हाथ उठाकर कहा :

'गुड मार्निंग सर !....' और कमला की मूर्च्छा भंग हो गई, वह अपनी कुर्सी पर से उठ खड़ी हुई।

'गुडमार्निंग नटनागर ! गुडमार्निंग !—मैं इसी गाड़ी से जा रहा हूं। एक्सीडेंट (दुर्घटना) हो गई है !—यह अच्छा हुआ कि तुमसे भेंट हो गई। सोम को जरा देखने आया था। उसे आज बुखार हो आया...' कमला चौंकी क्या यह वृद्ध पुरुष उसके लिए झूठ भी बोल सकता है ?

मिस्टर कपूर कह रहे थे, 'इट वॉज सो नाइस ऑफ मिसेज़ नटनागर टु बी लुकिंग आफ्टर हिम इवन ऐट् दिस लेट अवर ! (मिसेज़ नटनागर की कितनी कृपा है कि वे इतनी रात तक उसका ध्यान रख रही थीं)—मैं शायद दो-एक दिन तक बाहर रहूं। कोई इम्पोर्टेन्ट पेपर्स (जरूरी कागज) हों तो लाइन पर भिजवा देना। अच्छा बाई-बाई।'—और मानो मुक्ति की सांस लेकर कपूर साहब कमरे से बाहर निकल गए।

नटनागर ने कमला की ओर देखा, कमला ने नटनागर की ओर। जब कुछ क्षण बीत गए तो नटनागर ने कहा :

'सोम की परिचर्या कर रही थीं या मिस्टर कपूर की ? विशेष कोई देर नहीं हुई, केवल ढाई बजकर दस मिनट हुए हैं।'

कमला ने कमरे से बाहर आकर कहा, 'घर में प्रवेश करने दोगे, या सारी कैफियत यहीं पूछ लोगे। जो आदमी रात भर बिना कारण ही सोता नहीं, वह चाहे जो सोच सकता है; किन्तु नौकरों के सामने मैं कोई कैफियत नहीं दूंगी।'

'घर तो तुम्हारा है, मेरा कहां ?—मैं तुम्हें वहां से विरत करने वाला हूं कौन ? बिना कारण रात भर न सोने वाला यदि कुछ कर सकता है तो केवल मात्र सोचना; किन्तु जो सकारण रात भर नहीं सोता, उसके कारणों को जानने की इच्छा पति ही को नहीं, किसी भी

व्यक्ति को हो सकती है। पर चलो, घर पर ही सही।'

और आगे-आगे मिस्टर नटनागर, पीछे-पीछे मिसेज़ नटनागर रात्रि के शेष प्रहर में अपने सोने के कमरे की ओर चले, अवश्य ही एक नये दिन का प्रारंभ करने के लिए।

२३

शेष रात्रि के उस व्यापार को अक्षरशः लिखने में विशेष कोई लाभ नहीं है। मिस्टर नटनागर को आप भी जानते हैं, और मिसेज़ नटनागर को भी, बल्कि ऐसे ही नाजुक अवसर भी वे अपनी आंखों देख चुके हैं, अतः यहां पर सारांश कह देने भर से काम चल जाना चाहिए।

नटनागर को विश्वास हो गया, कि कमला का श्री कपूर से सम्बन्ध है और इस संबंध के सूत्रों को मिलाने वाला पाखंडी, धूर्त और धोखेबाज है ओझा। उसकी दुरभिसन्धि भी नटनागर जानते हैं। तब मिस्टर कपूर ही से उन्होंने सुना था कि वे ओझा के लिए एक गजेटेड पोस्ट की भी व्यवस्था कर सकते हैं, यदि ओझा चाहे।—इसी बहाने वह कमला को बहकाकर आबू ले गया था। कमल ने ठीक ही लिखा था, यद्यपि उस समय उन्होंने उसपर पूरा विश्वास नहीं किया था। और यह सोम बनाया गया कमला और कपूर के बीच एक पुल ?—उपन्यासों में कथा की सृष्टि करते-करते अब हजरत जीवन में भी वही कलाबाजियां खाना चाहते हैं ! फिर पति-पत्नी को मिलाने के छल से लिखी हुई वह चिट्ठियां, जिनके बहकावे में आकर स्वयं नटनागर ने कुछ का कुछ समझ लिया था। उधर कपूर का कमला को यहां बुलाने का प्रस्ताव, क्या खूब नाटक रचा गया है ! फिर यह लड़के का उपलक्ष्य !—नहीं, नटनागर समस्त जाल को समझ गए हैं, वे अब बुद्धू बनकर नहीं रहेंगे। निश्चय ही इस पार या उस पार

कुछ करके ही रहेंगे। उन्हें और क्या प्रमाण चाहिए ?—आधी रात तक श्रीमती जी घर से गायब हैं, पूछने पर कहा जाता है लड़का यों है, वो है—बल्कि शिकायत तक की जाती है कि सन्देह न हो। किन्तु जब देखा जाता है तो लड़का नहीं, लड़के का बाप, एक अलग कमरे में, श्रीमती जी की अनुनय-विनय करता हुआ—श्रीमती जी की, जो कि उसकी नौकर है। और क्या प्रमाण चाहिए उन्हें प्रमाणित करने को ?

सचमुच कमला अपनी निर्दोषिता का क्या प्रमाण दे ?—दागी आसामी तो वह है ही ! यदि सच बात कह दे तो क्या हो ?—क्या वह कह दे कि सोम उसका वही लड़का है जिसे नटनागर पर वह मृत प्रभाणित कर चुकी है ? इसके परिणाम क्या होंगे ? यदि सोम को यह सब मालूम हो गया कि वह एक दुश्चरित्रा मां की संतान है, जिसके पिता का कोई ठिकाना नहीं।—नटनागर कभी उसे स्वीकार नहीं करेंगे; और यदि कभी स्वीकार कर भी लिया, तो क्या वे उसे उसी भाव से ग्रहण कर सकेंगे, जिस भाव से मिस्टर कपूर ने किया है ? द्वापर युग में इसी तरह एक मां की सन्तान दूसरी मां को सौंप दी गई थी, कई वर्षों बाद भी श्रीकृष्ण के लिए अपनी प्रकृत मां के निकट लौटने का मार्ग खुला हुआ था, सोम के लिए क्या वह मार्ग खुला हुआ है ?—उसका भविष्य अभी उसके सामने है, क्या मां बनकर केवल अपनी निर्दोषिता प्रमाणित करने के लिए वह उसका भविष्य नष्ट कर देगी ?—अतः उस रात्रि को घटी सच बात कहकर ही उसने अपनी निर्दोषिता प्रमाणित करने का प्रयत्न किया, और कहना न होगा कि नटनागर उसे स्वीकार न कर सके !

कमला के यह पूछने पर कि आखिर नटनागर कमला से चाहते क्या हैं, नटनागर ने कहा कि कमला से नटनागर का विवाह हुआ है, और नटनागर ने इस विवाह की कीमत चुकाई है। उन्हें अब इस विवाह से वसूल करने का सामाजिक और नैतिक अधिकार है। उसी अधिकार को काम में लेकर अब वे अपना प्राप्य वसूल करना चाहते हैं। वे अब कमला

के ऊपर पूरा नियंत्रण रखेंगे। सर्विस अभी वह जारी रख सकती है, एकाएक ही उसे छोड़ देने से आर्थिक स्थिति के विषम हो जाने के अलावा समाज में जिस दुर्वाद के फैल जाने का डर है, वह उन्हें ध्यान में रखना ही होगा।—पर अन्त में कमला को यह सर्विस छोड़नी ही होगी, शीघ्र ही वे अपनी मां को अपने पास बुला लेना चाहते हैं। कमला ने अपने वैवाहिक जीवन में सदा ही उनका अपमान किया है। अब उसे अपने पूर्व कृत्यों का प्रायश्चित करना पड़ेगा।—जब तक वह सर्विस कर रही है, तब तक उसकी स्वतन्त्रता पर अंकुश रहेगा। दफ्तर के समय के अतिरिक्त बाहरी किसी व्यक्ति से वह किसी भी तरह का सम्पर्क नहीं साध सकेगी। नटनागर पांच बजे बाद दफ्तर से लौट आते हैं। संध्या के समय आवश्यकतानुसार वे भी कमला के साथ ही रहेंगे, खासकर कमला के रात्रि के नौ बजे वाले राउण्ड पर वे साथ ही रहेंगे। आवश्यकता से अधिक घर से बाहर वह नहीं रह सकेगी। नटनागर कमला के पति तो थे ही, अब स्वेच्छा से उसके चौकीदार भी बन गए। स्वतन्त्र भारतवर्ष में बीसवीं शती के छठे दशक में एक अत्यन्त बुद्धिमती सुशिक्षिता रमणी ने ये सभी शर्तें सुन लीं, एक तरह से मान भी लीं—केवल इसलिए कि कुछ ही समय पूर्व उसका हाहाकारमय प्रबल बाढ़ के अनवरुद्ध प्रवाह वाला मातृत्व उसके समस्त नारीत्व को सिक्त ही नहीं, डुबो भी गया था, और रह-रहकर उस विनाश में एक ध्वनि उसे सुनाई दे रही थी, 'पुत्र को नहीं पा सकी ?—उसीके लिए यदि उसे छोड़ना ही कल्याणकर हो, तो शेष सम्बल पति ही को क्यों खो देना चाहती है ?'

कपूर साहब के लिए भी नटनागर के मन में अश्रद्धा उत्पन्न हो गई, यद्यपि उसे प्रकाश करने की सुविधा नहीं थी। सोम के प्रति अवश्य उनकी विरक्ति सतह पर आने लगी, और उसे कमला ही नहीं, अति भाव-प्रवण स्वयं सोम समझ गया; किन्तु अब वह अपनी आँण्टी की ओर खिचता जा रहा था, और भाग्य का परिहास देखिए, आँण्टी अब चाहकर भी उसपर अपने स्नेह का अतिरेक नहीं व्यय कर सकती थी—दो आंखों

की दृष्टि और एक कठोर मानस का ठोस निषेध सदैव ही उसकी पीठ पर खड़ा उसकी वृत्तियों की रास खींचे रहता था। सबसे अधिक निगरानी थी कमला की डाक पर, कहीं फिर से उसे धूर्त, पाखंडी ओझा के साथ खतो-किताबत न जारी हो जाए !

मिस्टर कपूर भी एक अजीब परिस्थिति में थे। नटनागर की मनोस्थिति को वे ताड़ गए थे। दुनियां देखे हुए थे, यह भी वे समझ गए कि पति-पत्नी के बीच की खाई गहरी ही नहीं, चौड़ी भी है, और दोनों में स्थायी तो स्थायी, अस्थायी मेल भी सम्भव नहीं है ! निश्चय ही इसका सम्बन्ध कमला के चरित्र से भी है, जिसकी कि उपज है सोम ! वह केवल कमला की दया-भावना न थी, किन्तु विवशता थी कि उसे अपने पुत्र का विसर्जन करना पड़ा। यह तो संयोग था कि मिसेज़ कपूर वहां कमला को सहायता दे सकने की स्थिति में पहुंच गई थी।

किन्तु कमला में यह चारित्रिक स्खलन क्यों हुआ ? अवश्य ही यह उनका आज का पाप नहीं है, किसी अतीत में यदि कोई गलती भी उससे हो गई हो, तो कमला जैसी अशेष बुद्धिशालिनी के लिए क्या उसे छिपाए रखना सम्भव न था ? कमला के स्वभाव का जितना कुछ कपूर साहब पर प्रकट हुआ है, उससे वह एकदम से तेजस्विनी, निर्भीक, किसी भी अपराध की भावना से शून्य, स्वस्थ व्यक्तित्व की विशाल भूमि में अधिष्ठित मालूम दी है। पाप करके उसे छिपाए और उसके अभिशाप से तिलतिल अपने व्यक्तित्व का क्षरण करती रहे, ऐसी दुर्बल नारी वह दिखाई नहीं देती। नटनागर एक क्षुद्र व्यक्तित्व है, सामान्य क्लर्क, उसके चारों ओर लोहे का घेरा डालकर भी क्या उसे बांधे रह सकेगा ?

सोम की वह मां है। भावना की बाढ़ को वह नियंत्रित कर सकती है, पर अपत्य की भूख क्या किसी नियंत्रण को मान सकती है ?— मातृत्व की बाढ़ भी क्या अन्य बाढ़ों जैसी साधारण बाढ़ ही होगी ?— अवश्य यदि वह सोम का कभी दावा करे, तो वह सोम के भविष्य के लिए अहितकर होगा, यह वह जानती भी है; किन्तु पति को खोकर

कभी किसी असहाय क्षण में मां का मन यदि अवश हो जाए ?—पति को खोकर यदि वह पुत्र ही को पाना चाहे तो अस्वाभाविक तो न होगा ! वह सोम के पिता हैं, कमला सोम की माता !—एक क्षण के लिए उनके अधरों पर एक मुस्कान फैल गई। इस अवस्था में यह प्रवंचना भी विचारणीय हो गई। किन्तु यदि कमला को देखा जाए तो इस तरह बिना सोम के भविष्य को अनिष्ट पहुंचाए क्या वह उसे माता बनकर सर्वान्तः-करण से पा नहीं सकती ?—जहां तक उनका प्रश्न है स्वयं का, वे कमला को अपने हृदय की समस्त साध से, आशा और विश्वास से स्वीकार करेंगे। वह अशेष बुद्धिमती, अचंचल, शिक्षिता, संस्कृता, स्वरूपा और सबसे बढ़कर उनके सोम की आदर्श मां बन सकती है। सोम का भविष्य उज्ज्वल कर सकती है।

किन्तु, वाह श्रीमान कपूर साहब, आप भी क्या आखिर अपने मन के चोर के हाथों ही पकड़े जाएंगे ?—आप एक क्षेत्र के अधिपति, जिम्मेदार अधिकारी, अपने ही किसी क्लर्क की पत्नी को अपने घर में ला बिठाकर क्या दुनियां के सामने और अपने उसी भाव-प्रवण पुत्र के सामने मुंह दिखा सकेंगे ?—और ऐसा आपमें है ही क्या कि कमला ही आपको पसन्द कर लेगी ?—पुत्र का लोभ उसे हो सकता है, पर उसके लिए वह आपका अभिशाप क्यों वहन करेगी ?—क्या पुत्र का दावा वह नहीं कर सकती ? वह तेजस्विनी है, जगत की लांछना का, मनुष्य की भर्त्सना का उसके सम्मुख क्या महत्व है ? और यदि तब सोम भी उसे पहचान कर उसके पास जाने के लिए उन्मुख हो उठे ?—क्या रह जाएगा आपके संसार में ?—नहीं, इसका निदान करना ही होगा। मन के चोर को अब अधिक शह नहीं दी जानी चाहिए। वह देख चुके हैं कि किस तीव्र आसक्ति से कमला सोम को छाकर उसके मातृत्व के अभाव को पूर देना चाहती है, यह भी वह देख चुके हैं कि किस तरह सोम उसके आंचल की छाया में अपने समस्त अभावों को भूलकर विवश हो जाता है। यदि उन्हें अपने पुत्र को बचाना है, तो शीघ्र ही अभी ही

कुछ उपाय करना पड़ेगा, और वह उपाय है सोम को वहां से हटा देना। यद्यपि अभी किसी अन्य पाठशाला में वे उसे कहीं भेज नहीं सकते, किन्तु उसके अस्वास्थ्य का बहाना तो लिया ही जा सकता है। इससे सचमुच सोम को कदाचित् राहत मिल सके। नटनागर को भी सन्देह के लिए अधिक क्षेत्र न रहेगा। दूसरे सत्र तक अवश्य ही वे उसके लिए कहीं बाहर व्यवस्था कर लेंगे।

अतः लगभग एक सप्ताह के भीतर ही जब सोम उस स्कूल से निकाल लिया गया, तो तीनों ही सम्बद्ध व्यक्तियों को मुक्ति मिली, अवकाश मिला और मिला मानसिक क्लेश। तीनों ही इस चीज़ को चाहते थे, और तीनों ही नहीं चाहते थे। नटनागर सोम से नफरत करने लग गए थे, फिर भी एक बार उससे सचमुच उन्होंने प्यार किया था। कपूर साहब का तो स्वप्न ही था कि कमला सोम को संस्कारशील बनाकर न केवल उसके मातृत्व के अभाव को ही दूर कर दे, प्रत्युत् अपने सुदूर अन्तर की किसी दुर्बोध्य साध को भी सहारा दे दे, किन्तु जब उसकी कोई आशा नहीं हो, तो सोम को उसकी छाया से भी दूर हटा लेना ही उन्हें सर्वोत्तम लगा। रही कमला, सो चाहकर भी सोम को न चाह सकना ही उसका दुर्भाग्य रहा है।

किन्तु सोम स्वयं इस अभिसन्धि को किसी भी प्रकार सहन नहीं कर सका, यह स्पष्ट है। अपनी पीड़ा को मुंह पर लाकर समाप्त कर देने की शिक्षा उसे नहीं मिली। मां के सम्मुख तो वह रो भी नहीं सकता था, किन्तु इधर कुछ दिनों से कमला उसके मन पर जैसा कुछ अधिकार जमाती जा रही थी, उसका पता ही उसे तब लगा, जब कमला की शीतलतामयी छाया से उसे विरत कर दिया गया। मां के प्यार और संरक्षण की उसके अचेतन मन ने इस तीव्रता से अपेक्षा की कि वह शरीर की सतह पर अपनी अभिव्यक्ति करने लग गई। कपूर साहब के पहले बाहर के दौरे छूटे, धीरे-धीरे दफ्तर छूटने लगा, और अब खान-पान छूटने लगा। बस, जुटने लगे डॉक्टर, और तीमारदारों का तांता! न गए

तो जानकर भी नटनागर, और न जानकर कमला। पर कपूर साहब के लड़के की बीमारी ऐसी साधारण बात नहीं कि उनके ही मातहत कर्मचारी न जान सकें। देर-सवेर कमला को भी खबर लगी ही, किन्तु तब भी जाने का कोई उपाय न था।

उस दिन रात्रि को अपने राउण्ड से लौटकर सोने का उपक्रम करते हुए कमला नटनागर से पूछा :

'क्या सोम की तबियत बहुत खराब है ?'

'तो तुम्हें क्या ?'

'मुझे नहीं, तो भी तुम्हें तो कुछ होना चाहिए।'

'क्यों ?'

'सुना है, उनके मातहत सभी व्यक्ति उनसे जाकर उसके बारे में देख-भाल कर आए हैं। तुम उनके हेड क्लर्क हो। कुछ दिनों से सुनती हूं, दफ्तर भी नहीं आते ! क्या एक बार देख आना अच्छा न होता ?'

'यह मेरे सोचने की बात है, तुम्हारे सोचने की नहीं। नौकरी उनकी मैं करता हूं—और करता हूं उनकी, उनके लड़के की नहीं।'

'मैंने लड़के से मिलने के लिए तो कहा नहीं। उन्हींसे मिलकर लड़के के बारे में पूछ आने को कहा है।'

'तुमने कहा और मैंने सुन लिया। करना न करना मेरे हाथ की बात है ! तुम्हें सिरदर्द करने की ज़रूरत नहीं।'

'ज़रूरत तो खैर मुझे भी है। उनके मातहत नौकर तुम्हीं नहीं हो, मैं भी हूं।'

'यह भी मैं जानता हूं। किन्तु इसके आगे की जो बात है, वह तुम्हें भूलनी नहीं चाहिए कि तुम मातहत नौकर किसीकी हो सकती हो, पर पत्नी तुम मेरी ही हो !'

—सो तो कमला जब से यहां आई है, जानने-मानने का प्रयत्न कर ही रही है। इसमें नई बात क्या है ?

कमला ने लाइट बुझा दी, और उस कोने में पड़े हुए अपने बिस्तर

पर लेट गई। वह जानती है, नटनागर को अनिद्रा का रोग है। कई रात बीत जाने पर भी उन्हें नींद नहीं आती। करवटें बदलते रहते हैं, ओषधियों का प्रयोग भी व्यर्थ हो गया है। फिर भी उसका मन न हुआ कि वह अब आगे अधिक बात करे।

कुछ क्षण बीत गए। कमला को अनिद्रा का रोग नहीं है, तब भी नटनागर जानते थे कि कमला सोई नहीं है। अतः उन्होंने ही कहा :

'नौकरी की चिन्ता करना तुम्हारे लिए बिल्कुल ही अस्वाभाविक है। आखिर विवाह से पहले तो शायद यह तुमने कभी सोचा भी न था। अतः नौकरी के बारे में, चाहे वह मेरी हो या तुम्हारी चिन्ता करने का अधिकार मेरा है, यह तुम काफी अच्छी तरह जानती हो ! तब सोम के बारे में तुम्हारे इस दर्देसर का मतलब क्या है ?'

कमला कुछ न बोली, तो नटनागर फिर कहने लगे, 'वैसे जानता तो मैं हूं ही ! केवल तुम्हारे मुंह से सुनना चाहता था। देखना चाहता था कि कौन-सी नई कहानी गढ़कर तुम इसका प्रतिवाद करती हो। आखिर दोस्ती भी तो तुमने की थी उस कहानी-लेखक भांड से ! तारीफ तो करनी ही पड़ेगी उस भांड की कल्पना-शक्ति की ! आखिर किस ठाठ से उसने एक ही ढेले से दो चिड़ियों का शिकार किया है ! नहीं उपमा ठीक नहीं रही। कहना चाहिए चक्रवृद्धि ब्याज वसूल किया—ब्याज पर ब्याज; अपने कौशल से पहले तुम्हें फंसाया, फिर तुम्हारे जाल पर कपूर को ! लेकिन, उत्तर क्यों नहीं देतीं ? क्या सो गई हो ?'

'उत्तर चाह रहे हो क्या ? सुन तो रही हूं !' और यह कहकर उसने करवट बदलकर, नटनागर की ओर पीठ कर ली।

'उत्तर तुम दोगी ही क्या ? प्रारम्भ से ही तो तुमने धोखा देना सीखा है। ऊफ, विवाह के तुरत बाद के उन दिनों की याद करके आज भी कंपकंपी छूटती है। किस तरह मुझे भरमाए रखा, मैं सोचता था मेरी कबूतरी बड़ी सीधी है, पर मारना भी नहीं जानती। मेरे सिवा किसी को पहचानती ही नहीं। मेरा मुंह देखकर उठती है और मेरा मुंह देख-

कर सोती है, कल्पना में भी पति के सिवा कोई नहीं; सेवा, आदर, सत्कार, भक्ति मानो पति के लिए कुछ भी अदेय नहीं है ! मानता हूं उस नाटक को, कि मैं पैरों में सुरक्षा के लिए नेवर भी न डालना चाहूं। यदि कभी हाथ से धक्का देकर उठाऊं भी तो दरीबे की छत से फिर आए। लेकिन उसके बाद ? वे चौकड़ियां भरी जाने लगीं कि देखकर हिरन भी अपनी चौकड़ी भूल जाए ! पति बीमार हैं, मृत्यु के मुख में हैं, और देवी जी मां बनने के लिए उधार चली जा रही हैं। पति का कलेजा फाड़ा जा रहा है, और आप एक और छोटे-से गिद्ध को पाप के पेट में छिपाए उसके कलेजे पर उत्सव मनाने दूर देश तक पीछा नहीं छोड़तीं।'

नटनागर ने कुछ क्षण की चुप्पी साधी, कि शायद उत्तेजित होकर कमला कुछ उत्तर दे, किन्तु कमला उसी तरह नीरव, निस्पंद, मृतवत पड़ी रही। यदि निद्रा के देश में उसका मन खो न गया था, तो वह और किसी अन्य दुर्गम अन्धकार में गुम हो गया था; इसमें संदेह नहीं। किंतु नटनागर ने यही समझा कि कमला सब सुन रही है, कहने को उसके पास कुछ है नहीं। कह ही क्या सकती है वह ? अपराधिनी जो है ! उन्हें उसकी विवशता और तज्जन्य मौन से पैशाचिक उल्लास अनुभव हो रहा था। वे कहने लगे :

'नौकरी का भी क्या बढ़िया बहाना निकाला। सोचा होगा कि आर्थिक अभाव की परिस्थिति में चन्द चांदी के टुकड़ों से ही देखने वाली आंख को आड़ की जा सकती है। आखिर पढ़ाई-लिखाई का अन्तर न देखा जाए तो चौक बाजार में खिड़की की ओट बैठकर राह गुजरने वाले छैलों से आंखों ही आंखों में बात करने में, और दफ्तर की कुर्सी पर बैठकर पुत्र की स्वास्थ्य-कामना के छल से आए हुए अपने ही अफसर को आंखों ही आंखो में अटकाए रखने की कला में और क्या अन्तर देखा जा सकेगा ?'

फिर कमला की ओर से किसी उक्ति की अपेक्षा, किन्तु उत्तर में वही नीरवता पाकर नटनागर का रेडियो चलने लगा, पूर्ववत् :

'किन्तु कब तक ? काठ की हंडिया, दुबारा चूल्हे पर नहीं चढ़ती,

समझकर भी जो दुराशा पाले रहते हैं, उन्हें हाथ दो चुटकी राख के सिवा लगता ही क्या है ? बड़ी सरलता से उस रात्रि को कह दिया, मुझे तलाक दे दो। चरित्रहीनता का अपराध मैं स्वीकार कर लूंगी।—सोचती हो मुक्ति इतनी सस्ती मिल जाए तो क्यों न हथिया ली जाए। लेकिन नहीं। अब तक तुम मेरे साथ खेलती रही हो, अब मेरी बारी है, मेरी बारी ! मैं तुमसे, तुम्हारे जीवन से, तुम्हारे भविष्य से खेलूंगा, देखूंगा कि तुममें कितनी शक्ति है ? तुम्हारा विष का दांत कितना गहरा है ? तुम मेरी पत्नी हो, तुमपर मेरा अधिकार है। देखता हूं क्या खाकर तुम मुझे उच्छेदित कर सकती हो। उस जैसे दस सोम आ जाएं, ओझा जैसे पचास तुक्कड़ हों, कपूर जैसे पांच सौ आशिक आ जुटें—मैं तब भी पति हूं, तन-मन और धन का मालिक ! देखता हूं कौन मुझे मेरे प्राप्य से विरत करता है।'

तब से नटनागर बिना रुके बके चले जा रहे थे। उत्तर नहीं पाने से उनका आवेश उठ-उठकर मरता जा रहा था। इससे थकावट ही बढ़ती जा रही थी। बोलते-बोलते कंठ सूख गया। आप ही आप थककर चुप रह गए।

कुछ क्षणों तक चुप पड़े रहने के बाद उन्हें लगा कि पानी से तर किए बिना कंठ सूखा जा रहा है, तो वे उठे, बत्ती जलाकर उन्होंने सुराही से उंडेलकर जल पिया, एक उड़ती हुई नज़र कमला के पलंग पर डाली। छाती तक चादर डाले वह करवट फेरे उसी तरह अवसन्न पड़ी थी ! तो क्या सचमुच सो गई ?—जितना कुछ नटनागर बकते रहे, वह सब क्या बट्टे खाते ही गया ? स्विच पर रखे हुए हाथ को उन्होंने विरत कर लिया। वे धीरे-धीरे चलकर आगे बढ़े, जिधर कमला की पीठ थी। जिस बत्ती ने उजेला कर रखा था, वह कमला के मुंह की ही दिशा में थी, उससे उसके सामने का हिस्सा, मुंह सब साफ दिखाई दे रहे थे। नटनागर आकर उसके सिर के पीछे खड़े हो गए।

सिर के बाल दो चोटियों में गूंथे हुए विभाजित थे। ऊपर की चोटी कन्धे के ऊपर से होती हुई उरोजों के सहारे नीचे उतरकर चादर के

भीतर कहीं खो गई थी, नीचे की चोटी सिर के भार से खिसक-खिसककर शिथिल होती-होती खुल गई थी, और मसृण-स्निग्ध केशों का एक निविड़ भाग सिर और पीठ के नीचे तकिए के ऊपर फैला हुआ था। पीछे खुले गले के ब्लाउज़ से गर्दन के नीचे पीठ का काफी भाग अपनी पुष्ट गौर मांसलता में देखने वाली आंखों को पकड़े रहना चाहता था। एक बांह नीचे कहां रखी हुई थी, दिखाई नहीं देती, दूसरी अपने यौवन की रक्षा करती हुई उरोजों को घेरकर अवश पड़ी हुई थी। गहरी सांसों से उठती और पड़ती हुई छाती का उन्नतोवनत भाग समुद्र तट से लगी हुई पार्वत्य उपत्यका में भूकम्प पैदा कर रहा था। पीठ की ओर खुली खिड़की से ठण्डी हवा आकर उसकी बंधी हुई वेणी के बालों की कुण्डलियों में उलझ-उलझकर बालों के एक-एक, दो-दो गुच्छों को बंधन-मुक्त करना चाह रही थी। नटनागर की दृष्टि अटक गई। झुककर उन्होंने उसके मुंह के भाव को देखना चाहा।

ऐं यह क्या आंसू ?—नीचे तकिए के ऊपर बालों की एक परत पर अब भी कुछ बूंदें चमकती हुई देखी जा सकती हैं। आंख की भीतर वाली कोर से निकलकर एक धारा ठीक नाक के ऊपर तक आकर सूख गई है। काजल का चुराया हुआ कुछ अंश अब भी आंखों के कोश से कुछ आगे तक फैल गया है। मुंदी हुई पलकों के भीतर मानो अब भी निविड़ दृष्टि का वह सोया हुआ उल्लास छलछला पड़ना चाहता है। उसे देखकर भी कौन अपना पात्र खाली रखना चाहेगा ? और वे अधर ?—जो शायद किसी मूक रुदन के भावोच्छवास में अर्द्धस्फुट होकर ही स्थिर हो गए हैं !—यह कमला, यही कमला, शरीर और मन के समस्त ऐश्वर्य को अपनी सम्पुटि में भरकर नटनागर के उत्सुक भाव को समर्पित हुई थी ! उनकी पत्नी, अर्द्धांगिनी, जहां उसकी पूजा की जाए, वहां देवताओं का रमण हो। एक लम्बी सांस ही नटनागर के मुख से निर्गत हो सकी। बुझती हुई आंखों को पुनः खोलकर उन्होंने उस ओर देखा, देखा कि पवन के अभिचार से एक लम्बा दुराग्रही केशगुच्छ मुक्त होकर उसकी पलकों

का रस पीना चाह रहा है। लालसादग्ध मन से उन्होंने अपने हाथ को उठाया और उसके तप्त-शिथिल कपाल पर से उन्होंने बालों के उस गुच्छे को हटा दिया। वह मुंह वैसा ही नीरव, निस्पन्द, कठोर, भावशून्य, स्थिर पड़ा रहा! मालूम पड़ा न जाने क्या सोचकर नटनागर की थकी आंखें भी गीली होना चाहने लगीं। नटनागर ने अपने आपको रोकने का प्रयत्न किया, पर रोक न सके। अपने दग्ध अधरों को झुककर उन्होंने कमला के कपोल पर रखा, रख दिया—यह क्या?—वहां पर सूखे आंसुओं ने उनके अधर पर नमक मल दिया, और तभी कमला ने मुंह फिराकर तकिए में छिपा लिया।

एक लम्बी सांस लेकर नटनागर ने पुनः लाइट बुझा दी, और अपने पलंग पर आकर लेट गए। और कुछ कहने का अब उन्हें उत्साह नहीं रहा था। शारीरिक और मानसिक थकावट भी कम न थी। इधर रात भी बीत चली थी—धीरे-धीरे नटनागर नींद के गहरे जाल में घिरते-घिरते सो गए, बेसुध हो गए। अब सवेरे नौ बजे तक उन्हें शांति है, यदि सपने उन्हें न सताएं!

कमला सोती रही, इस दुनियां से बहुत दूर खोई हुई। नटनागर की कुछ बातें उसने सुनी थीं, किन्तु अधिक सुनने से कोई लाभ न था, इसलिए बलपूर्वक वह उनकी बातों की अनसुना करती गई; यहां तक कि नटनागर बकते रहे और वह अपने आप में खोई हुई सचमुच ही नींद में खो गई। नटनागर द्वारा दिए हुए अपमान को तो वह लेकर सो गई, पर शेष में दिए हुए उनके सम्मान की उसे खबर भी न लगी।

किन्तु एक भयानक दुःस्वप्न देखकर वह एकाएक उठ बैठी। छाती पर हाथ रखकर देखा, वह अभी भी बड़ी तेज़ी से धड़क रही थी। ठंडी हवा के बावजूद सारे बदन में पसीना छूट आया था। आंखें मसलकर उसने देखा कि अपने कमरे में पलंग पर वह बैठी हुई है, कमरे में अंधेरा है, पर वैसा नहीं कि कुछ दीख ही न पड़े। खिड़की से तारों की मन्द रोशनी आ रही है। बाहर दूर चौक में जलने वाली बिजली का क्षीण

प्रकाश खिड़की के किवाड़ों से प्रतिफलित होकर कमरे में भी छा गया है। उधर सोए पड़े हैं पलंग पर नटनागर, निश्चय ही अब वे गहरी नींद में हैं। सब कुछ यथापूर्व है, फिर हुआ क्या ?—हां नटनागर कमला को लक्ष्य करके मनमाना कीचड़ उछाल रहे थे, किन्तु वह तो सोने के पूर्व ही उसके प्रभाव को मन से बलपूर्वक हटा चुकी थी। फिर क्या बात है ? कलेजा अभी मुंह को आ लगा है।

—सोम—हां, याद आया, कोई मानो सोम को उसकी गोदी से झपट रहा है, वह उसे अपनी छाती से चिपटाए हुए है, भीत-किंकर्तव्य-विमूढ़ सोम दोनों हाथों से उसे घेरकर अधिकाधिक सटता जा रहा है, किन्तु उसे झपटने वाला दुष्ट इन अवरोधों की चिन्ता किए बिना उसका पैर पकड़कर खींचे चले जा रहा है। यह क्या—एकाएक मानो सोम की टांग उसके शरीर से अलग होकर उस दुष्ट के हाथ में रह गई। सोम दर्द से चीख उठा, रक्त की धारा बह निकली; उसने दूसरी टांग पकड़कर खींचना शुरू किया, वह भी अलग हो गई, फिर एक-एक कर दोनों हाथ ! हाय राम ! सोम अब केवल बिना हाथ-पांव का, मांस का एक पिण्ड मात्र रह गया। कमला उसे देखकर रो रही है, वह दुष्ट उसकी ओर देख-देखकर हंस रहा है। और अब तो वह उसकी गर्दन पकड़कर खींच रहा है, यदि उसकी गर्दन अलग हो गई ? नहीं अब कमला से नहीं सहा जाएगा। उसने लपककर उस दुष्ट के हाथ को जोर से काट खाया—अब उसने सोम की गर्दन छोड़ दी, किन्तु कमला की गर्दन को पकड़कर वह उसे दबोचने लगा। कमला का दम घुटने लगा, बस अब उसके प्राण आंखों में आ लगे—निकलना ही चाहते हैं, शेष दृष्टि वह सोम पर डाल ले—कि सोम उसकी गोद से छूटकर निर्जीव होकर जमीन पर गिर पड़ता है, और कमला की आंख खुल जाती है। स्वप्न की बात याद आते ही एक बार और उसके बदन में कंपकंपी छूट गई। फिर से शरीर पसीने में भीग गया, और हृदय की धड़कन पुनः बढ़ गई। गनीमत है कि वह स्वप्न ही था।

किन्तु सोम बीमार तो है। कल तक तो खबर थी कि उसकी अवस्था उत्तरोत्तर बिगड़ती जा रही है। क्या करे वह ?—इधर उसका पति उसे उसकी छाया भी स्पर्श नहीं करने देता ! कैसी विवशता है ?—उसने एक बार और अपने पलंग पर बेसुध पड़े नटनागर के ऊपर दृष्टि डाली। ओछी प्रवृत्ति का यही आदमी उसका पति है—उसका पति !

कुछ क्षणों तक नीरव बैठी रहकर कमला एकाएक कुछ संकल्प-सा करके नीचे उतरी। अंधेरे ही में जाकर सुराही से गिलास में जल उंडेला —छलछल की आवाज़ हुई, खिड़की में जाकर उसने जल को मुंह पर छिड़का, फिर नटनागर के पलंग के पास आकर टोह लेने लगी। सांस में समरस गति थी, गम्भीर निद्रा, जो बड़े कष्ट के बाद उन्हें मिली थी, उनकी संचित निधि की तरह सांस के तार-तार से लिपटी हुई थी। कमला को विश्वास हो गया कि वे अब काफी देर तक नहीं उठेंगे। उधर टेबल पर जाकर टाइमपीस को देखा; रेडियम के अंकों पर रेडियम की सूइयां चमक रही थीं। दो बजकर दस मिनट हुए थे।

यदि इस समय निकलकर वह सोम से मिल आ सके, केवल उसे देख आ सके तो विशेष कोई कठिनाई नहीं होगी। कपूर साहब का बंगला वह जानती है, सोम के साथ दो बार जा चुकी है। सोम कहां सोता है, कपूर साहब कहां सोते हैं, नौकर-चाकर कहां सोते हैं, सब उसे मालूम है, बड़े उत्साह से सोम ने सब कुछ उसे बताया था। तब कपूर साहब वहां न थे ! रात को दरबान जागता रहकर पहरा देता है, किन्तु वह प्रायः ही सोता रहता है, उसकी कोठरी ठीक मुख्य फाटक की बगल में है, हां उसका कुत्ता अवश्य जागता रहता है, उससे बचना बड़ा कठिन है। किन्तु यदि पीछे के 'विकेट गेट' से जाया जाए, और नीरवता बनाई रखी जा सके तो कोई खतरा नहीं है। दीवार के पास मेंहदी की घनी कटी हुई बाड़ लगी है, उसके सहारे-सहारे पीछे की ओर ठेठ सीधे सोम के कमरे में पहुंचा जा सकता है। उसके दरवाजे पर ही उसका नौकर शिब्बू सोता है। कमरे का दरवाज़ा बन्द तो रहता है पर कुण्डी

नहीं लगाई जाती। यदि होगी भी तो शिब्बू कमला को जानता है, उससे कहने में कोई हानि नहीं है। बस आध घण्टे में वह वापस लौट आएगी। इसमें कोई खतरा नहीं है, कोई जान भी नहीं सकेगा।

दादू को साथ ले चले ?—वह विश्वासी भृत्य है, बड़ा सहारा रहेगा, बल्कि वही समस्त व्यवस्था कर देगा। किन्तु, नहीं—मूर्ख भी है वह ! समझकर काम करने की शक्ति उसमें नहीं है, जितना कहा जाएगा उतना ही कर सकेगा। बनने की अपेक्षा उससे काम बिगड़ेगा ही। बात ही क्या है ? केवल आध घण्टे-पौन घण्टे में तो वह लौट ही आती है !

उसने अपने कपड़ों को ठीक किया, बदलने की ज़रूरत ही क्या है ? अभी ही तो वह चली आ रही है, किसीसे भेंट होने का प्रश्न ही नहीं है, बल्कि ऐसी हर सम्भावना को उसे बचाना है। अतः अलगनी पर पड़ी हुई एक गहरी नीली चादर को उसने अपने ऊपर डाल लिया और धीरे से दरवाज़ा ठेलकर वह उस गम्भीर मध्य रात्रि में बारह निकल गई। एक क्षण के लिए झिझककर भी उसने पीछे नहीं देखा। शीघ्र ही लौट जो आना था उसे। और झिझक क्यों हो ?—वह कोई अभिसार करने तो जा नहीं रही थी। जा रही थी केवल अपने बीमार पुत्र को देखने के लिए; छिपकर इसलिए कि उसका पति ऐसा नहीं चाहता था।

शुक्ल पक्ष की चतुर्थी का चांद अस्त हो चुका था। जिन प्राणियों के जागने की सम्भावना हो सकती थी, वे सब भी गम्भीर निद्रा में सो चुके थे, यहां तक कि जिन्हें रात्रि में ही कार्यरत रहकर अपनी जीविका जुटानी पड़ती है, उनके प्रयत्न भी शेष हो चुके थे, और वे भी विश्राम कर रहे थे। रात्रि का तीसरा प्रहर प्रारम्भ हो गया था, अतः जैसे ही कमला घर से बाहर निकली, और तो किसीने उसे नहीं देखा, किन्तु शीतल पवन ने अवश्य उसका स्वागत किया।

लेकिन बरामदे में दादू सोया हुआ था। कमला की पदध्वनि सुनते ही उसकी आंखें खुल गई। आंखें मसलकर जब तक वह परिस्थिति को समझने की चेष्टा करे तब तक कमला बरामदे की सीढ़ियां पार कर

चुकी थी। मालकिन अपने बदन पर एक चादर डाले हुए हैं, निश्चय ही कहीं जा रही हैं। कहीं पर भी बाहर वे उसके बिना साथ के नहीं जातीं। फिर आज इस मध्य रात्रि में बिना उसे कहे धीर पदों से कहां जा रही हैं वे ? क्या वैसी ही कोई अभिसार-यात्रा है ?—अभी तक उनकी पुरानी आदत गई नहीं ? जब आज अनायास ही वह जाग गया है, तो क्यों न जाकर देख आए ?—खासकर इस गम्भीर रात्रि में यदि कोई खतरा ही उपस्थित हो गया तो ? यदि वे उससे छिपकर गई हैं, तो वह भी छिपकर उनके पीछे-पीछे चला जाएगा—केवल उनपर नज़र रखेगा, इसीमें उसकी उत्सुकता और कर्तव्य दोनों ही निभ जाएंगे। कुछ ही क्षणों में ये सभी विचार उसके दिमाग में कौंध गए।

शीघ्र ही वह उठा, अपनी गन्दी चादर को उसने भी अपने शरीर पर डाल लिया। अंधकार में आगे जाती हुई छायामूर्ति का अनुसरण कर उसने देखा कि कमला स्कूल के मुख्य फाटक के लगभग पहुंचकर बाईं ओर मुड़ गई हैं। अवश्य ही मुख्य फाटक को उन्होंने बचाना चाहा है। बाईं ओर कुछ दूर हटकर दीवार में एक 'विकेट गेट' है, जहां क्रॉस की तरह एक दूसरे को काटती हुई दो लकड़ियां एक घूमने वाली चर्खी पर लगाकर उस छोटे-से फाटक को बन्द कर दिया गया है। लकड़ियों की फांक में फंसकर पार करने वाला व्यक्ति लकड़ियों को ढकेलता है, चर्खी घूमती है, और उस फांक के साथ ही व्यक्ति दीवार के बाहर निकल जाता है। इस फाटक से कोई जानवर भीतर-बाहर नहीं जा सकता। साधारणतया नौकर इसी फाटक का प्रयोग करते हैं। अधिकारियों के लिए मुख्य फाटक है, जो रहता तो सदैव बन्द है, किन्तु एक दरबान वहां नियुक्त है, किसी अधिकारी को देखते ही वह फाटक खोल देता है, और पुनः बन्द कर देता है। विकेट गेट तथा मुख्य फाटकों की यह व्यवस्था सभी कोठियों में है, इसे सभी रेलवे कर्मचारी जानते हैं, और इनका उचित प्रयोग करते हैं।

अवश्य ही मालकिन ने दरबान को बचा जाना चाहा है। दादू भी

बाईं ओर मुड़ गया। विकेट गेट की चर्खी ने साधारण-सा कुछ शोर किया पर किसीका ध्यान आकर्षित करने के लिए वह पर्याप्त न था। बाहर निकलते ही अंधेरी रात्रि के क्षीण धुंधलके में दादू ने देखा कि कमला उस ओर बढ़ती जा रही हैं, जिधर बड़े साहब की कोठी का विकेट गेट है—बड़े साहब की कोठी की तरफ ?—दादू के दिल की धड़कन दूनी हो गई ! तो मालकिन इतने बड़े अफसर पर डोरे डाल चुकी हैं ? ज़रूर बड़े साहब पहले इसीलिए स्कूल आते-जाते रहते थे, यह अब वह समझ पाया है। और आजकल वे इसीलिए नहीं आते कि अब पहाड़ ही मुहम्मद के घर पहुंच जाता है।

पर बड़े साहब के यहां तो एक कुत्ता भी है, यदि वह भौंकने लग गया तो ?—शायद इसका बन्दोबस्त पहले ही कर लिया गया हो !—कब से ये यहां आने लगी हैं ?—कुछ कहा नहीं जा सकता। जिस ढंग से चली जा रही हैं, उससे तो मालूम देता है, जैसे आज पहली बार जा रही हों—पर चोरी से जाने वाले चाहे पहली बार हो, या हजारवीं बार, चोरों की तरह ही जाने के लिए मजबूर हैं। जो हो, फाटक के भीतर वह नहीं जा सकेगा। यदि कोई उसे देख ले तो उसकी जान बचेगी नहीं। चोर कहकर हवालात में धर दिया जाएगा। नटनागर साहब पहले ही उसपर खार खाए हुए हैं, मालकिन भी मदद नहीं कर सकेंगी। और वह सिखाया हुआ कुत्ता ही अंधेरे में कहीं उसकी पिण्डली का मांस नोच ले ? देख भर ले, तो यहां ठहरने का उसका प्रयोजन ही क्या है ? सीधा लौट आकर अपने बिस्तर पर पड़ रहेगा। लौट आकर देखें कि हमेशा की माफिक इस बार भी उनकी चोरी पकड़ी नहीं गई है।

लो, मेम साहब, उस फाटक के भीतर घुस भी गई। फाटक ने कोई आवाज़ तक नहीं की। दादू जानता है, ठीक फाटक के भीतर दीवार के साथ-साथ चारों ओर मेहंदी की घनी रेलिंग लगी हुई है। इसके अलावा मुख्य भवन तक जाने वाले पथों के दोनों ओर भी ऐसी ही रेलिंग लगी हुई है। इस रेलिंग के सहारे-सहारे यदि कोई सावधानी से इस रात्रि के सुनसान

में आगे बढ़ता जाए तो वह किसीकी आंखों का शिकार न होगा, शायद कुत्ते को भी एकाएक टोह न लगे, और यदि सब इन्तज़ाम पहले ही से हो, तो बाधा ही क्या हो सकती है ? ठीक तो है, मेम साहब भीतर पहुंच गई हैं। विकेट गेट के पास आकर एक वृक्ष की छाया में पंजों पर खड़े होकर उसने दीवार के भीतर देखने की चेष्टा की। दूर भवन के पीछे कमरे की दीवार के पास मानो वह छाया-मूर्ति कुछ झिझककर रुकी, मानो डरी हुई-सी दृष्टि से उसने कुछ खोजना-सा चाहा, या केवल आने-जाने वालों की टोह ली ? नहीं, उस हरकत में निश्चय की दृढ़ता तो नहीं दिखाई देती ! आखिर चोर का जो मन ठहरा, और चोरी की जो घटना ठहरी!—एक क्षण भर को आंखें बन्द कर दादू ने पुनः उस ओर देखने का प्रयत्न किया तो घनीभूत अंधकार के सिवा उसे कुछ दिखाई न पड़ा। उसके मुंह से एक लम्बी सांस निकल गई।

वितृष्णा से मुंह बिचकाकर वह पुनः मुड़ा, किन्तु पुनः रुक गया। पतन के मार्ग में बड़ी फिसलन होती है, मानो दादू के अव्यक्त मन में इसी तथ्य की घोषणा हो गई ! लौटते समय भी तो कुछ हंगामा हो सकता है ?—तब तो चोर की चोरी भी प्रमाणित हुई होती है। चोरी के पहले तो पकड़ने वाले की कल्पना का ही प्रमाण है, किन्तु चोरी के बाद ?—नहीं, मेम साहब चाहे जैसी हों, वे उसके लिए मां के समान साबित हुई हैं। उसे तो उनसे हमेशा मुहब्बत ही मिली है। दादू इतना कृतघ्न नहीं हो सकता कि खुद ही उनके कामों की आलोचना करने बैठ जाए, और फैसला सुना दे ! उसका फर्ज़ साफ है, वह जान देकर भी उसे पूरा करेगा। आपद-विपद में जो काम न आए, वह नौकर कैसा ?

दादू मुड़ा, धीरे-धीरे वृक्ष की छाया ही का अनुसरण करता हुआ विकेट गेट पर पहुंचा, धीरे से फाटक की लकड़ी पर उसने हाथ रखा, चर्खी की चूल में काफी मात्रा में तेल पड़ा हुआ था, इशारा पाते ही बिना किसी प्रकार की आवाज़ किए चर्खी घूम गई, और दूसरे ही क्षण दादू दीवार के भीतर अहाते में था। बस इस रेलिंग की घनी छाया में

रास्ते से काफी दूर छिपकर वह बैठ जाएगा, और मेम साहब के लौट आने की प्रतीक्षा करेगा। अधिक से अधिक मेम साहब आध घंटे में तो लौट ही आएंगी। बस उनके लौटकर आते ही वह भी उनके पीछे-पीछे चल देगा, जैसे आया वैसे ही। मेम साहब को पता भी न लगेगा।

दादू का ही तो दिमाग ठहरा! उसने सोचा कि मेम साहब को पता भी नहीं लगेगा, और वह उनके पीछे-पीछे लौट जाएगा। इस तरह लौटने पर बरामदे में पहले मेम साहब ही पहुंचेगी, और, वहां दादू तो बिस्तर में होगा नहीं ?—पर दादू के सोचने के लिए वही तो जिम्मेदार है।—दादू अपनी योजना के अनुसार छिपकर बैठ गया मेम साहब की प्रतिक्षा में।

भवन के पीछे तक तो कमला सुरक्षित पहुंच गई। अब क्या हो ?···· इधर बरामदे में ही सोम और कपूर साहब के कमरे के पीछे के दरवाज़े खुलते हैं। दाहिनी ओर जो दरवाज़ा है, उसीमें सोम की व्यवस्था है, पहले मिसेज़ कपूर की व्यवस्था थी उसी कमरे में। दाहिनी ओर हटकर बाहर जो दरवाजा खुलता है वह है उसका गुसलखाने का दरवाज़ा। ऐसी ही व्यवस्था बाईं ओर भी है, जो मिस्टर कपूर ने अपने प्रयोग के लिए रख छोड़ा है। दोनों कमरों के बीच में दो दरवाजे हैं, जिनसे एक दूसरे में आया-जाया जा सकता है। पर यह व्यवस्था तो तब थी जब सोम ने काफी पहले उसे बतलाया था। बीमार है सोम आजकल, काफी चिन्ता-जनक रूप में। क्या पता अब क्या व्यवस्था है ?···बहुत सम्भव है दोनों एक ही कमरे में हों। वह नहीं चाहती कि कपूर साहब से उसका साक्षात्कार हो जाए। लेकिन यदि हो ही गया तो घबराने की कोई विशेष बात नहीं है। आखिर कपूर साहब उसके कमजोर पहलू को जानते ही हैं। सहानुभूति की उसे आशा है ही। हो सके तो वह उनकी नज़र में नहीं पड़ना चाहती। सोम उसे एकाएक देखकर क्या कपूर साहब को जगा न देगा ? सोम को भी वह जगाएगी नहीं; खाली उसे देखकर, उसके सिर

पर हाथ फिराकर ही सन्तोष कर लेगी। सम्भव हुआ और यदि कपूर साहब दूसरे कमरे में हुए तो वह पहले दरवाजों को भीतर बन्द कर लेगी। यह तो कपूर साहब भी जानते हैं कि मुझे मेरे पति से डरने का पर्याप्त कारण है, और इसमें वे मुझे सहयोग देंगे ही।

छाया में कमला आगे बढ़ी। बरामदे में यह क्या ?—ओह, वह भूल ही गई थी, शिब्बू सोया हुआ होगा। यदि दरवाजा बन्द हुआ तो उसकी सहायता उसे लेनी ही पड़ेगी। यों सोम ने कहा था, दरवाज़ा खाली अटकाया हुआ रहता है, उसके हत्थे को घुमाकर ही खोला जा सकता है। बात यह है कि शिब्बू ज़रा गहरा सोता है, एकाएक जागता नहीं, उसे जगाने के लिए कभी-कभी उसके बदन को पकड़कर झकझोरना पड़ता है। सोम ठहरा बालक, अपनी छोट-मोटी आवश्यकता आप ही पूरी करने की उसे शिक्षा मिली है, और बड़ी आवश्यकता पड़ने पर, सोम ने बताया था, किस तरह उसकी नाक पकड़कर वह सरलता से उसे जगा देता है।··· यदि ज़रूरत हुई तो कमला को भी वही उपाय काम में लाना पड़ेगा। कमला आगे बढ़ी।

दोनों कमरों के आगे पहले जाली के किवाड़ हैं, जिससे कमरे में मच्छर, मक्खी आदि प्रवेश न कर पाएं। कमला ने दबे पांव आगे बढ़कर दाहिने दरवाजे के चमकते हुए पीतल के हत्थे पर हाथ रखकर धीरे से उसे घुमाया। हत्था कुछ सख्त था, सरलता से उसे फिराए जाने के कारण वह हिला भी नहीं। कमला एकदम निराशा के खड्डे में गिर पड़ी। क्या आखिर इस कुम्भकर्ण को जगाए बिना काम नहीं चलेगा ? कितनी सरलता से अब तक सारा काम निपट गया है। और इसके उठने के पहले ही यदि भीतर के प्राणी जाग उठें ?···या और भी कोई, दरबान ही आ टपके ?···कमला का दिल धड़कने लगा, बदन पर पसीना हो गया। एक बार वह पीतल के हत्थे की ओर देखती तो एक बार सोए हुए शिब्बू की ओर। शिब्बू को जगाने के सिवा कोई रास्ता नहीं; अतः समय नष्ट करने की अपेक्षा, जिसे करना ही है उसे करने के लिए कमला ने उधर पैर

बढाया—एक बार ललचाई दृष्टि से उसने पुनः निराश करने वाले हत्थे की ओर देखा—दूसरा पैर बढ़ाने के पहले एक बार और उसके हाथ उस हत्थे पर पहुंच गए, जरा दूर हो गई थी इसलिए अनायास ही इस बार पकड़ जरा मजबूत रही—और अरे ?—यह घूम भी तो गया। हाथ अपनी ओर खींचा तो किवाड़ का पल्ला भी उसकी ओर बाहर निकल आया। अवश्य ही शिब्बू को जगाने के लांछन से बच गई, किन्तु एकदम मानो बाघ की मांद का ही दरवाजा खुल गया। कमला के हृदय की धड़कन दूनी हो गई, पसीना और भी तेज़ी से बदन से छूटने लगा। कांपते पैरों से उसने भीतर प्रवेश किया, फिर धीरे से खींचकर किवाड़ के पल्लों को अटका दिया।

दूसरे किवाड़ खुले हुए हैं, यह तो जाली के किवाड़ों के खुलते ही मालूम हो गया था। पर उसके आगे ही दरवाज़े पर रेशम का भारी परदा खिंचा हुआ है। कमला एक मिनट वहीं खड़ी रहकर अपनी दुविधा से लड़ती रही, फिर समय की कमी का ध्यान आते ही उसने परदे को हाथ से अलग हटाया। कमरे में बहुत धीमी नीली रोशनी फैली हुई थी। कमरे के ठीक बीचोंबीच दो पलंग एक दूसरे से सटे हुए पड़े थे।···सो भीतर कोई है अवश्य, कपूर साहब या सोम; बाईं ओर के कमरे का दरवाजा भी खुला मालूम दे रहा है, यद्यपि वैसा ही रेशम का भारी परदा उसे भी ढांके हुए है। परदे को और थोड़ा हटाकर कमला कमरे के भीतर बढ़ आई। दो कदम रखने में उसे मानो बहुत ही परिश्रम करना पड़ता था। हृदय तो धड़क ही रहा था, उसकी सांस भी फूलने लग गई थी।

सामने के पलंग पर ही उसका लक्ष्य है। चूड़ान्त थकावट, लज्जा, झिझक आदि के बावजूद उसे और कुछ नहीं दिखाई दिया। वह कमरा कैसा है, प्रकाश कहां से आ रहा है, कोई कहीं छिपा हुआ उसे देख तो नहीं रहा, यदि किसीको आहट हो गई तो वह किस मार्ग से बाहर जा सकेगी, आदि किसी बात की उसे सुधि न रही, और वह सीधे मन-मन के भारी पैरों से चलकर छन भर में पलंग के पास आ खड़ी हुई।

सांस रोककर उसने धीमी रोशनी में पलंग पर लेटे हुए प्राणियों को परखना चाहा।—पर, जैसा कि पहले लगा था, एक नहीं, दो ही प्राणी हैं।—घुट-मुटकर सोए हैं, इसलिए एक जैसे लगते हैं। थोड़ा और ध्यान से देखने पर कमला पहचान गई। स्वयं कपूर साहब सोम को अपनी छाती से लगाए सोए हुए हैं। कमर तक दोनों के ऊपर चादर पड़ी हुई है। कपूर साहब का दाहिना हाथ सोम की कमर के ऊपर से होता हुआ पलंग के किनारे तक आ लगा है, सोम का बायां हाथ कपूर साहब के गले को जकड़े हुए है। एक ही तकिए पर दोनों के सिर रखे हुए हैं। दोनों के नासाग्र एक दूसरे को छूते हुए-से, उनकी सांस मिलकर उनके जीवन की अच्छेद्यता को प्रतिपादित कर रही है।

कमला और पास चली आई। दोनों ही बाप-बेटे धारी वाले रेशमी कपड़े का सूट पहने हुए हैं। कपूर साहब के चेहरे पर यद्यपि स्नेह की कोमलता छाई हुई है, किन्तु पुत्र के अस्वास्थ्य के कारण या और किसी कारण से वेदना मिली हुई थकावट की छाया भी देखी जा सकती है। सोम का चेहरा और अधिक उतर गया है, रंग और भी फीका हो गया है। शारीरिक पीड़ा की छाप सरलता से उसके चेहरे पर देखी जा सकती है।

जिन पलंगों पर ये सोए हुए हैं, वे दोनों एक जैसे हैं, लम्बाई, चौड़ाई, ऊंचाई, आकार-प्रकार, डिज़ाइन सब में एक। सिर और पैर की ओर लगे हुए पटियों पर सुन्दर कारु कार्य किया हुआ है। आवश्यकता पड़ने पर इन्हींके सहारे क्लिप्स में डण्डे लगाए जा सकते हैं ताकि मसहरी का प्रयोग संभव हो। कमला आकर सिरहाने खड़ी हो गई।

कपूर साहब को उसने बडे सतृष्ण नेत्रों से देखा। इस व्यक्ति को उसने पास से भी देखा है, और दूर से इसके विषय में उसने कथाएं भी सुनी हैं। मिसेज़ कपूर को उसने स्वयं अपनी आंखों देखा है। कितना त्याग इन्होंने किया था अपनी उस सदारुग्ण पत्नी के निमित्त! किस गहरी आसक्ति से उसके अभाव और दुःखों को ये अपना समझकर बंटाते रहे।

उस प्यार की गहराई का कुछ दूरी तक वह स्वयं गवाह रह चुकी है। और यों उसमें कपूर को लुभाने लायक था क्या ? सफल हो गया उसका तो जीवन ! पति के निःस्वार्थ सच्चे प्यार के दो क्षण पा जाने के बाद और क्या विशेष साध किसीकी रह सकती है ?—और वह ?···रात ही को अपने पति से उसके विश्रब्ध आलाप की उसे सुधि हो आई।···· कमला ने कपूर की ओर देखा।

कैसी निरीह मुद्रा है।····चिन्ता की छाया है केवल सोम के कारण। सोम जो मिसेज़ कपूर की अन्तिम इच्छा का परिणाम भर है, नहीं तो वे तो जानते ही हैं कि वे केवल बेगार ढो रहे हैं। इस बेगार के लिए ही सही, कमला को उनका कृतज्ञ होना चाहिए। उसके धन की इतनी अधिक सतर्कता से कौन रखवाली करता।···उस दिन रात्रि को स्कूल में कितने कातर, कितने विवश हो उठे थे वे। कौन स्त्री ऐसा स्नेह-परवश पति नहीं चाहेगी ?····वह नटनागर की पत्नी है, क्या सार्थकता हुई उसकी ? उसे न पति का सम्मान मिला, न पुत्र की भक्ति मिली ! मिली केवल आत्मप्रतारणा, छल की निरर्थक साधना और भ्रम की तुष्टि ! यदि इसके विपरीत कहीं वह मिसेज़ कपूर होती ? क्या अभाव है उसमें ?···क्या वह पति को प्यार नहीं कर सकती ? नटनागर ही को क्या उसने कभी प्यार नहीं किया था ?···रूप ···पर रूप को क्या सचमुच पुरुष चाहता है ?···खासकर तब, जब स्त्री की आसक्ति में वह अपनी आंखें ही खुली नहीं रखता !····रूप की प्यास भी क्या उसकी कभी बुझी है ?···फिर भी कोई ऐसी बदसूरत भी तो नहीं वह ! मिसेज़ कपूर से तो बीस ही है, पढ़ी-लिखी, सुसंस्कृत, सब कुछ न भी हो तो भी अशेष श्रद्धा-भक्तिसमन्वित उसके मन का समस्त सौरभ, जो किसीके चरणों पर उत्सर्ग होने की राह ही देख रहा हो। यदि नारी का जीवन कभी धन्य हो तो वह और कौन-सी परिस्थिति में होगा ?···तब उसे पति मिलता, पुत्र मिलता, वह मां के असीम सौभाग्य से अपने पुत्र को अपनी छाती से लगाकर सौ जीवनों की मृत्यु को चुनौती दे सकती थी। किन्तु आज !—आज उसका पुत्र भी उसका नहीं है।

वह बीमार है, और वह उसे देख भी नहीं सकती। और यदि वह अपने हृदय की आकुलता पर विजय नहीं पा सकती, तो यह दस्यु-वृत्ति अंगीकार करे! चारा ही क्या है।

पुनः उसकी दृष्टि सोम की ओर चली गई। वह उसी तरह कपूर साहब की नाक से नाक मिलाकर सोया हुआ था। साहस करके कमला ने झुककर सोम के कन्धों को धीरे से छुआ, उसके शरीर का वह स्पर्श नहीं पा सकी। यदि वह उसके कपोल को छुए, और एकाएक जाग उठे तो!—हाथ उसका कपूर साहब के गले में है। वह यह भी तो नहीं देख सकती कि कहीं उसे ज्वर तो नहीं है।

पीछे ही आड़ में खड़ी होकर साहस करके कमला ने सोम के कपोल पर हाथ रखा, उसे ज्वर तो था ही, किन्तु तभी चौंककर उसने हाथ को अपने कपोल पर छाई हुई कमला के हाथ की बाधा को हटाना चाहा किन्तु तब तक कमला का हाथ ऊपर उठ गया था। गाल को खुजलाकर सोम ने अपना हाथ पुनः कपूर साहब के गले में डाल दिया। सोम की हरकत से कपूर साहब की नींद भी एकाएक खुल गई किन्तु वे आंखें बंद किए रहे और जैसे ही सोम ने पुनः अपना हाथ उनके गले पर रख दिया, वे सोने की चेष्टा में लग गए।

बुखार तो है सोम को, यह तो उसकी सांस भी बता रही है। स्पर्श में जितना उसे लग सका उत्ताप भी उसे अनुभव हुआ है। चेहरा इन्हीं कुछ दिनों में कैसा उतर गया है, मानो कहीं रक्त ही न हो। बाप के गले को इस तरह जकड़े हुए है मानो उसे कोई छीने जा रहा हो! बाप के सिवा अब दुनियां में उसे सहारा ही किसका है? मां है वह, किन्तु वह तो उसके जीवन में वरदान बन नहीं सकती, केवल अभिशाप ही बन सकती है! दावा प्रमाणित कर सकती है वह अपना! अभी-अभी ही देश में कानून बन चुका है, जिसके अनुसार नटनागर को मजबूर होकर सोम का दायित्व लेना ही पड़ेगा। हां, सोम पांच वर्ष से ऊपर का हो चुका है, संरक्षण का अधिकार चाहे उसे न मिले, किन्तु कपूर साहब किसी भी छल से उसे अपना नहीं रख सकते। पर क्या यही वह चाहती

है ? माना कि वह मां है, किन्तु क्या अपने मन की किंचित् तुष्टि के लिए ही अपने सन्तान के जीवन में वह अभिशाप बन जाएगी ?

नया कानून मां के स्वत्व की रक्षा तो करता है, परवश, कातर, निर्बल, पतिव्रतानुगता पत्नी की स्वत्व-रक्षा के बहाने उसकी दासता की भी रक्षा करता है, किन्तु मुक्त नारी की निरपेक्ष भावधारा का सम्मान करना यह समाज कब सीखेगा ?—पति की इच्छा के विपरीत उसे तलाक नहीं मिल सकता, जिन परिस्थितियों में वह है, केवल एक ही उपाय है कि कमला अपने व्यभिचार का ढिंढोरा पीटे, और नटनागर उससे असहिष्णुता व्यक्त करें, उस असम्मान को सिरपर रखकर इस समाज में कौन नारी जीवन-यापन कर सकती है ?—तब उसकी जीविका की रक्षा करने वाली यह नौकरी भी रहेगी ? फिर भी जिसके लिए उसका मन शून्य होकर अतल हाहाकार में क्षत-विक्षत, आहत हो गया है, उसकी रक्षा वह केवल मिसेज़ कपूर होकर ही कर सकती है ! मिसेज़ कपूर होकर ?—कपूर साहब उसे स्वीकार करेंगे, इस समस्त कीचड़ और लांछना में भरी हुई, फेंकी हुई जूठी पत्तल को अंगीकार करके ?

सिरहाने के पटिए के पीछे से सिर निकालकर कमला ने देखा कि घनी शीतल अमराई के सदृश अपने आश्रय की गंभीर छाया से कपूर साहब सोम के समस्त भाव को समस्त मन-प्राण से छाए हुए हैं। उस आश्रय में मानो स्थान का अभाव नहीं है। केवल साहस चाहिए।—और सोम कैसा आत्मशून्य होकर नितान्त निर्भरता से उस आश्रय में सोया हुआ है, मानो जन्म से ही नहीं, जन्म-जन्मान्तरों से वह इस आश्रय का अधिकारी रहा है, इस आश्रय के सिवा और कुछ नैसर्गिक उसके लिए है ही नहीं !—उसने एक लम्बी सांस ली। जो नहीं हो सकता, उसके बारे में विशेष सोचने से वितृष्णा ही बढ़ती है। यही उसका संतोष कम नहीं है कि सोम इससे उत्तम हाथों में जा नहीं सकता था, उसके बाद भी यदि उसे कुछ हो जाए तो उसे भवितव्य के सिवा वह और क्या कहेगी; हां, अपने आपको वह कभी क्षमा नहीं कर सकेगी, अपने साथ ही

समाज को भी, जो उसके व्यक्तिगत अधिकारों को सदा कुचलता रहा है !

निर्वेद के इस अन्यतम क्षण में एक और विचार उसके मस्तिष्क में आया। सचमुच व्यर्थ ही तो हो गया है उसका जीवन !—और किसलिए इस व्यर्थता को मानकर ही वह पति-भक्ति का या अपत्य स्नेह का नाटक कर रही है ?—दुनियां में केवल एक व्यक्ति ने उसे समझा था, पर वह भी कठोर अनासक्ति के साथ केवल दर्शक के निरपेक्ष मूल्यमानों के आधार पर !—क्या हुआ यदि वह उसके अन्तरतम के वासी को पा नहीं सकी, वह क्या किसीको सरलता से पकड़ाई देता है ?—फिर भी सचमुच ही उसने सदैव ही कमला की एकान्त हितैषणा ही की कामना की है। आज इस गम्भीर कालरात्रि में यदि अपने उस प्रतारणापूर्ण बन्दी-जीवन का किसी भी बहाने से उच्छेद कर सकने में वह समर्थ हो सकी है, तो क्या पुनः स्वेच्छा से उसी कीचड़ में वह लौट जाए ?—नहीं ! यह नौकरी, यह जीविका, यह नरवरोत्तम नारायण की छाया, यह शिक्षा, संस्कार—क्या करेगी इन्हें चाटकर वह, यदि ये उसकी प्रकृत तृष्णा का एक क्षुद्रांश भी नहीं मिटा सकते ?—और सोम की यह ममता-माया न उसके उपयोग की है, न सोम के ही। तब फिर इस अवास्तविक भ्रम के जाल को मकड़ी की तरह अपने चारों ओर लपेटे रहने में, प्रत्युत् और भी अधिक बुनते रहने में क्या सार्थकता है ?—चले वह, छोड़ चले इस मायालोक को ! इस समस्त अरक्षणीय अवास्तविक मधु-भार के बाहर भी यदि कहीं जीवन हो तो उसीका संधान करे।—उसका मार्ग जब तक नारी को नहीं मिल जाएगा, तब तक वह सदैव ही भटकती रहेगी। मार्ग पाने के लिए आंखें बन्द करके उसे सदैव ही अपनी अंगुली पति को या पुत्र को थमा देनी पड़ेगी, और जब वह देखेगी कि वह एक गड्ढे में गिरने जा रही है तो कोर्ट के सम्मुख कानून की शरण लेकर तलाक की या संरक्षण की भीख मांगनी पड़ेगी। नहीं यह मार्ग उसकी स्वाधीनता का नहीं है, उसके कल्याण का नहीं है। वह उसी व्यक्ति के पास लौट जाएगी, शायद वही उसे मार्ग दिखा सकेगा।

और कमला आड़ में से बाहर निकली। एक सतृष्ण दृष्टि से पुनः उसने सोम की ओर देखा, उसी पर-निर्भर भाव से वह सोया हुआ था—नाक कपूर साहब की नाक के पास, दोनों के स्पंदन एक दूसरे में उलझे हुए, एक का हाथ दूसरे की गर्दन से उलझा हुआ, दूसरे का पहले के शरीर को अपने दृढ़ आलिंगन में आबद्ध किए हुए।—बस, अन्तिम दृश्य—और उसने आंखें बन्द करके दरवाज़े की ओर पैर बढ़ाए!

किन्तु पैर बढ़ा नहीं! सोम को ज्वर है, कितना है, वह भी नहीं जान सकी, जीवन में फिर कभी उसके साथ देखा नहीं होगा। ओझा से वह प्रार्थना करेगी कि कहीं अत्यंत दूर ले जाकर उसे पटक आए—न हो तो भारतवर्ष की सीमा से बाहर नितान्त आत्म-परिजनहीन किसी देश में, जहां वह सभी को भूल जाने का प्रयत्न कर सके—सभी को, सोम-ओझा-कपूर सभी को। हृदय उसका सचमुच ही टूट जाएगा पर यह कमज़ोर हृदय टूट ही जाए तो अच्छा, इस तड़के दिल को लेकर वह उस कठिन यात्रा पर जा ही कैसे सकती है?

उसने पुनः सोम की ओर देखा, उसकी ओर बढ़ी—आंखें उसकी सजल, डबडबाई हुईं; नीचे झुकी—शेष बार में क्यों न उसके अधरों की प्यास बुझा ले—कि तभी मानो कमला को सुविधा देने के लिए ही सोम ने अंगड़ाई ली, और कपूर साहब की गर्दन से हाथ निकालकर चित हो गया। कपूर साहब का हाथ तब भी उसकी कमर पर आवेष्टित रहा।

कमला ने सुयोग देखकर अपने अधर उसके अधर पर रख दिए, और शीघ्र ही अपने गालों को उसके कोमल कपोलों पर रख दिया, मानो सोम को नींद ही में कुछ ऐसी अनुभूति हुई कि इधर करवट बदलकर उसने अपने हाथ को कमला की गर्दन में आवेष्टित कर दिया। कपूर साहब का हाथ अलग हट गया। कमला उस पाश में बंधकर आधी उस पलंग पर हो रही। नीचे फर्श पर घुटने टेककर वह शिथिल हो गई।

हाथ के अलग हटते ही मानो कपूर साहब कोई सपना-सा देखने लगे। सोम की उष्ण सांसों का बादल उनके गालों पर छा रहा था, अब

मानो किसीके स्निग्ध स्पंद की मुग्ध वाष्प उनके नासाग्र को आपूरित कर रही थी। सोम के सामीप्य की उष्णता में शैशव की हृदयोन्मेषिणी घनता थी, इस उष्णता में यौवन की मादक गन्ध है। यह स्वप्न क्या है ? ऐसे स्वप्न वे बीच-बीच में देखते रहे हैं मिसेज़ कपूर यदा-कदा स्वप्न में उनकी मूक वेदना को शांति देने का प्रयत्न करती हैं, किन्तु जागते ही उनकी वह अतृप्त वेदना शतगुण हो जाती है। यह स्वप्न भी अभी शेष हो जाएगा, तब केवल इसकी अतृप्ति ही उनके पास रह जाएगी। सोम को पुनः कसकर अपने हृदय से लगा लेने स्वप्न में ही उन्होंने हाथ फैलाया, पर उनका हाथ एक बड़े मांसल-कोमल स्पर्श से एकाएक चौंक उठा—हाथ में चूड़ियां जैसी कुछ, मिसेज़ कपूर—सचमुच स्वप्न ही तो है ! किन्तु उस स्पर्श को पाकर कमला एकदम घबड़ाकर उठ बैठी, कोई उपाय नहीं था, पलंग की सतह से नीचे वह झुक गई।

मिस्टर कपूर की आंखें खुल गईं, स्पष्ट ही मालूम दिया कोई था। धीरे से उनके मुंह से निकल भी गया 'कौन ?'

कोई उत्तर नहीं ! क्या भ्रममात्र था—या स्वप्नमात्र ?—क्या अभी भी वे स्वप्न देख रहे हैं ?—नहीं, यह सोम सोया हुआ है। रात को बहुत देर बाद बड़ी कठिनाई से सो सका था। अभी भी ज्वर है, यद्यपि कम हो गया है। पर यह इसके गाल पर तप्त बूंदें कैसी ?—क्या हो रहा था ?—पर मुद्रा वैसी दिखाई नहीं देती। अभी भी बड़ी गंभीर शांति तथा तृप्ति के साथ सोया दिखाई दे रहा है। गाल का यह भाग अपेक्षाकृत अधिक गर्म, मानो किसीके स्पर्श का उत्ताप हो !—नहीं-नहीं, यह स्वप्न नहीं है।

कपूर साहब उठ बैठे, मालूम पड़ा पलंग के नीचे किसीकी फूली हुई सांस दबाने की चेष्टा में रह-रहकर फूलती जा रही है। कोई चोर तो नहीं ?—अबकी बार पुनः ज़रा कड़ककर कपूर साहब ने दुहराया 'कौन है ?—पलंग के नीचे कौन है ?' और उन्होंने सिरहाने रखे हुए किसी लाइट के स्विच को दबा दिया। कमला ने एकाएक देखा कि कमरे में

तीव्र प्रकाश फैल गया है। यह सन्तोष की बात है कि चारों ओर परदे पड़े हुए हैं। किन्तु यदि कहीं कपूर साहब और चिल्लाए तो उसकी कुशल नहीं है। वह धीरे-धीरे पलंग के नीचे से बाहर निकली और साड़ी के पल्ले को अपने दोनों हाथों से चुन्नट काटती हुई खड़ी हो गई, नीचे दृष्टि किए हुए, मुंह दीवार की ओर, पीठ कपूर साहब की तरफ!

'कौन हो तुम?'—एकाएक बिना उस ओर देखे कपूर साहब ने कहा।

'मैं हूं, सोम को देखने आई थी!'

कपूर साहब ने पुनः आंखों को मसला, स्वप्न नहीं है—वही कमरा है, स्विच दबाकर अभी उन्होंने प्रकाश किया है। सोम पलंग पर सोया हुआ। सोम को देखने के लिए—तो श्रीमती नटनागर हैं—सोम बीमार है न, इसलिए देखने के लिए आई हैं! बीमार—कपूर साहब ने व्यग्रतामयी निष्ठा के साथ सोम के बदन को स्पर्श करके देखा, ज्वर के साथ काफी रात तक उसका संघर्ष चलता रहा है। ज्वर अभी भी है, पर उतना तीव्र नहीं। कमला नटनागर हैं बच्चे की मां, स्वाभाविक ही है। चोर की तरह आने की ज़रूरत क्यों पड़ गई? यह भी वे सोच सकते हैं, तभी उधर ही मुंह रखे हुए कमला ने कहा, 'कृपा करके इस तेज़ रोशनी को बन्द कर दीजिए! कोई देख लेगा—चोरी से आई हूं, और जब पकड़ ली गई हूं, तो रक्षा के लिए और किसे कहूं!'

कपूर साहब ने यंत्रचालित की भांति स्विच दबा दिया, मानो सर्कस के खिलाड़ी ने इशारे भर से खूंखार शेर को पुनः पिंजरे में बन्द कर दिया। कपूर साहब फिर भी खोए हुए-से सोचना चाह रहे थे कि आखिर यह सब सत्य है तो हो कैसे सका?

चुप्पी को अस्वाभाविक समझकर कमला ने ही पूछा, 'क्या तबियत बहुत खराब है?'

'सारी रात परेशान रहा। करीब दो बजे सो पाया है। अभी त ज्वर भी उतना तेज नहीं मालूम पड़ता।'

'डॉक्टर क्या कहता है ? आप तो जानते हैं, मुझे कितनी चिन्ता हो गई है।'

कपूर साहब ने परिस्थिति को ठीक तरह से समझ लिया। कमला की बात का उत्तर न देकर उन्होंने कहा, 'चिन्ता की बात हो, फिर भी इस तरह चोरों की तरह आने का प्रयोजन तो समझ में नहीं आया मेरी।'

कमला ने मुंह फिराया। तीव्र प्रकाश के बन्द हो जाने के बाद प्रकाश पहले जैसा साफ न था, फिर भी एक दूसरे की आकृति तो देखी ही जा सकती थी। कमला ने कहा, 'पति के डर से !'

'यानी पति की इच्छा के विपरीत !'—फिर एक क्षण तक चुप रहकर उन्होंने कहा, 'देखिए बड़े स्ट्रगल (संघर्ष) के बाद सोम सो सका है, कहीं यह जाग न जाए, इसकी सावधानी हमें रखनी होगी। यहीं पास में मेरा कमरा है। चलिए, वहीं बातें की जाएं।'

'करने को अब बातें ही क्या हैं !—सोम को देख हो चुकी हूं—आज्ञा हो तो जिस तरह आई हूं, उसी तरह चल दूं।'

'आने का मार्ग सुगम होने पर क्या जाने का मार्ग भी उतना ही सुगम है कमला देवी ?'

कमला ने पुनः कपूर की ओर देखा। कपूर ने कहा, 'पति की इच्छा के विपरीत, चोर की तरह छिपकर, इस शेष रात्रि में आप यहां तक आ सकी हैं, अद्वितीय है साहस आपका। उस कमरे में जाने से ही आप डर उठेंगी, क्या मैं इसका विश्वास कर लूं ?'

'जहां डरने में भला है, वहां डरना ही चाहिए। किन्तु यहां यदि सोम के जाग उठने का डर हो तो चलिए, आपके कमरे में ही चलकर कैफियत दे लूं !'

मिस्टर कपूर उठे, चादर से उन्होंने सोम को गले तक उढ़ा दिया, बाजुओं में दोनों ओर तकियों को ठीक किया, कमला सतृष्ण नेत्रों से केवल देखती रही। उसके बाद आगे-आगे कपूर साहब और पीछे कमला

बीच के दरवाजे को पार करके बगल वाले कमरे में पहुंचे। मिस्टर कपूर ने आगे बढ़कर एक बटन दबाया, वैसा ही हलका नीला प्रकाश इस कमरे में भी फैल गया। एक ही क्षण में कमला ने देखा कि इस कमरे में भी सब वैसी ही व्यवस्था है। केवल पलंग एक ही है।

कमला ने कहा, 'यदि यह प्रकाश भी बन्द कर दें तो बहुत अच्छा हो, यह परदा हटा देती हूं। इससे सोम भी दिखाई देता रहेगा, और आवश्यकतानुसार थोड़ा प्रकाश भी कमरे में रहेगा ही।'

'जैसी आपकी इच्छा' कहकर कपूर ने पुनः स्विच दबाया। अंधकार हो गया, पर धीरे-धीरे उस कमरे के प्रकाश की छाया इस कमरे को भी स्पर्श करने लग गई। कोने में पड़ी हुई एक आरामकुर्सी को अपने हाथ से उठाकर पलंग के पास रखते हुए मिस्टर कपूर ने कहा, 'बैठिए।'—और वह पलंग पर ही पैर लटकाकर बैठ गए।

कुर्सी पर बैठते हुए कमला ने कहा, 'पर अधिक देर तक मुझे रोक न रखिएगा मिस्टर कपूर।'

'मेरे रोकने से आप रुकेंगी ?'

'मज़ाक नहीं कपूर साहब, आप नहीं जानते कितनी जोखिम उठाकर मैं यहां आ पाई हूं।'

'पर इच्छा करते ही आप इस जोखिम से छुटकारा पा सकती हैं !'

'यानी ?'

कपूर साहब के मुंह से अचानक ही उनके मन का भाव प्रकट हो गया था। पर अब तो उसका प्रतिविधान संभव नहीं है।

कहा उन्होंने, 'आपकी इस अमानत की रक्षा का भार अब मुझसे अकेले नहीं ढोया जाता।'

कमला ने एक क्षण के लिए कपूर की ओर देखा, जिस तरह कपूर सोम को घेरे हुए उसे दिखाई दिए हैं, क्या यह बात उन्हींके मुंह की है ?—यदि है तो क्या उसके ऊपर विश्वास करना चाहिए ? उसने कहा :

'सचमुच नहीं ढो सकते ?'

'देख तो रही हैं ! अकेला आदमी—करे तो क्या ?'

'अकेली तो मैं भी हूं कपूर साहब !'

'क्यों ? आपके तो पति हैं—जीवन-साथी; मुझ जैसी निस्संग कहां हैं आप ?'

कमला ने लम्बी सांस ली, पर मुस्कराकर कहा, 'ऐसा साथी, जो ऊपर चढ़ते हुए का पैर पकड़कर नीचे खींच ले; साथ चलते हुए को धक्का देकर खड्ड में गिरा दे। तभी तो मुझे इस रात को चोरों की तरह आना पड़ा है। ऐसे साथी की अपेक्षा निस्संग होना बुरा है ?'

'लेकिन यदि दो अलग-अलग बढ़ने वाले यात्रियों का लक्ष्य एक हो ?'

'फिर भी रास्ते तो अलग-अलग हैं।'

'इसलिए कि वे अलग-अलग खड़े हैं। यदि दोनों साथ हो लें ?—मैं जानता हूं कमला देवी, सोम आपको प्राणों से प्यारा है—और आप भी उसी तरह जानती हैं, सोम ही में मेरे प्राण अटके हुए हैं। आप कहेंगी, आप अकेली इस बोझ को उठा सकती हैं, मेरे कन्धे कमजोर हों, किन्तु यह तो मेरे सिर ही का बोझ है। इसे उतारकर मैं ही कैसे रख दूं ?'

कमला ने उठकर कहा, 'मुझे विदा दीजिए कपूर साहब, नारी का हृदय बड़ा कमज़ोर होता है। मैं चली—आपका बोझ आप जानें !' और वह दरवाज़े की ओर बढ़ी। मिस्टर कपूर ने उठकर जाती हुई कमला का हाथ पकड़ लिया। कमला ने छुड़ाने का प्रयत्न किया, किन्तु मिस्टर कपूर से वह अधिक पेश न पा सकी।

मिस्टर कपूर ने कहा, 'कुछ देर और बैठिए। बेअदबी मैं नहीं करूंगा। इतना विश्वास यदि आपको न होता, तो इस रात्रि में आप इस निर्जन कक्ष में नहीं आतीं !—चलिए, बैठिए !'—और उन्होंने प्रायः जबर्दस्ती ही कमला को अपने पलंग पर बैठा दिया, स्वयं वे आरामकुर्सी पर बैठे।

कहना मिस्टर कपूर ही ने प्रारम्भ किया : 'अपने लिए मैं कुछ नहीं कहता आपसे !—मेरे कुछ आशा-विश्वास ही नहीं हैं, इस सोम को छोड़कर। कोई यौवन का उन्माद कहे तो मैं क्या करूं, किन्तु सच कहता हूं, मिसेज़ कपूर के साथ ही मेरे हृदय का समस्त रस सूखकर पत्थर हो गया है।'

कमला ने बीच ही में कहा, 'यदि आप चाहें तो किसी सुन्दर पढ़ी-लिखी लड़की से विवाह कर सकते हैं। उस पत्थर को फोड़कर रस का शीतल झरना बहने लग जाएगा।'

कपूर साहब ने हंसकर कहा, 'मुझ बूढ़े से यदि कोई विवाह कर भी ले, तो मेरे वह किस उपयोग की ?—सोम तो कभी अपनी मां को नहीं पा सकेगा ?'

'क्यों ?—उस अवस्था में मैं आपसे प्रार्थना करूंगी कि सोम को मुझे लौटा दें।'

'लौटा लेंगी आप ?'

'उपाय ही क्या है ?'

'क्या नटनागर उसे स्वीकार कर सकेंगे ?'

'न करें ! मैं तो उसे त्याग नहीं सकूंगी।—मां जो हूं।'

'और उसका भविष्य ?'

कमला ने लम्बी सांस ली—'पुत्र के भविष्य के लिए बहुत बड़ी कीमत मांग रहे हैं कपूर साहब !—पर सोचिए, जब सोम बड़ा होगा, और सारी बातें समझ सकेगा, तब मैं ही क्या उसे मुंह दिखाने लायक रह सकूंगी ?'

कपूर साहब ने कहा, 'मेरा दुर्भाग्य है कि आप इसे मेरा स्वार्थ मान रही हैं कमला देवी ! मैं विवाह नहीं करना चाहता—मरकर भी नहीं। नारी का मोह मुझे नहीं है, वह मेरी उमर नहीं रही। मन तो मेरा कोई क्या समझ सकेगा !—रहा सवाल सोम का—मैं जानता हूं कि आपका उसपर पूरा अधिकार है। आप प्रमाणित कर सकती हैं कि वह

आपका पुत्र है। कानून आपका सहायक है। मैं एकदम निरवलम्ब हूं, फिर भी सोम जैसे मेरे हृदय का ही एक अंग हो गया है। यदि आप इसे मुझसे छीन लेंगी, तो मुझे पंगु ही बना देंगी।—इतना होने पर भी मैं महसूस करता हूं कि उसका जीवन चाहे मैं बना सकूं, किन्तु उसका मन और उसकी आत्मा तो मैं नहीं बना सकता। वह तो मां ही कर सकती है। इसीलिए बच्चे के जीवन में मां का भी महत्व है, पिता का भी—और वह भी उनका अलग-थलग रह कर नहीं, एक दूसरे की अन्योन्यता, अनुकूलता, परिपूरकता के साथ। क्या मेरी और क्या आपकी आशाएं, कामनाएं होंगी ? हम तो अपना जीवन जी चुके, जो कुछ करना था, कर चुके, देख चुके, भोग चुके। किन्तु जिस तथ्य में इस जीवन की सारवत्ता निहित है, जिसमें इस शरीर-क्रम की, नाशवान की धारावाहिकता, अमरता अक्षुण्ण रह सकती है, वह है सन्तान की सत्ता को बल देने की, वही दायित्व आपका भी शेष है, मेरा भी है। उद्देश्य की इस एकता, बल्कि साधन और सिद्धि की इस एकता के कारण ही मैं आपके निकट याचना करता हूं कमला देवी। आप मुझे बल देंगी, मैं आपको सहारा दूंगा, और हम दोनों आंखों ही आंखों में सोम के कल्याण का मार्ग प्रशस्त कर सकेंगे। क्या आपने अनुभव नहीं किया, आपके शरीर के स्पर्श मात्र में सोम के लिए कैसा अव्यर्थ संजीवन है ? वह कैसी शांति की नींद सो गया है ?'

जाने कबसे कमला की आंखें डबडबा आई थीं, कमला खुद न जान सकी। रुंधे हुए कण्ठ से उसने कहा :

'किन्तु समाज क्या कहेगा ?—आपके यश, प्रतिष्ठा ! आपके क्लर्क, नौकर-चाकर सभी तो मुझे पहचानते हैं। वे क्या मुझसे घृणा न करेंगे और फिर मेरे पति ?'

कुछ क्षण तक सोचते-से सहकर मिस्टर कपूर बोले, 'आपके पति से तो आपकी बनती नहीं। शायद बनाने के लिए आप चेष्टा भी कर चुकी हैं। वैसे वे अकेले रहने के आदी भी हैं। मैं शीघ्र ही उनका कहीं दूसरी

जगह ट्रान्स्फर कर दूंगा, एक ऊंची पोस्ट देकर ताकि यदि वे जान भी लें तो मुंह न खोलें !—यों, एकाएक उन्हें जानने देने की जरूरत भी न होगी।—रहा सवाल नौकरों का—उन्हें भी एक-एक करके मैं सबको बदल दूंगा जो हमें पहचानते हों।'

'किन्तु यहां का सारा ही समाज तो मुझे जानता है।'

'उसके लिए भी उपाय किया जा सकता है।'

'क्या !'

दुष्टता की हंसी हंसकर कपूर ने कहा, 'सबसे पहले तो तुम्हारा ही यहां से ट्रान्सफर करूंगा, ताकि सभी समझें कि तुम यहां हो ही नहीं। वहां से तुम्हें छिपाकर ले आना मेरा काम होगा ! उसी बीच यहां का स्टाफ बदल दिया जाएगा। कुछ दिनों तक तुम बाहर न निकलोगी तो सभी भूल जाएगे !'

'किन्तु सोम क्या समझेगा यह तो आपने सोचा ही नहीं।'

'वह ठीक ही समझेगा। जिस तरह के संस्कार हम देंगे, बड़ा होने पर वे ही उसके सोचने की क्रिया को संचालित करेंगे।'

कमला पलंग के सिरहाने के पटिए पर सिर टिकाए जाने किस लोक में काफी देर तक खोई रही, उसने कपूर साहब की ओर दृष्टि फिराई, वे उसकी दृष्टि की ही प्रतीक्षा कर रहे थे। बड़े आकुल कण्ठ से उसने कहा, 'किन्तु मुझे लेकर क्या आप सुखी हो सकेंगे ?'

कपूर साहब ने देखा कि उसकी आंखों से आंसुओं की धारा बह रही है, जिससे उसकी वाणी भी कंपित हो उठी है। उठकर वे कमला के पास ही आ बैठे, उसके आंसुओं को तकिए के ऊपर पड़े हुए नैपकिन से अपने हाथों से पोंछकर उसके हाथों को उन्होंने अपने हाथ में ले लिया। कमला ने इस बार कोई बाधा न दी, केवल उसके आंसुओं का प्रवाह और भी तीव्र हो उठा।

मिस्टर कपूर ने कहा, 'और मेरे जीवन का एक सबसे बड़ा सुख यह होगा कि मैं तुम्हें सुखी बना सकूं !'···कमला ने कपूर से हाथ छुड़ा

लिए, और विद्युद्वेग से उठकर उसने कहा, 'नहीं, नहीं, मेरा सुख नहीं—सुख नारी के लिए नहीं बना, उसे संतोष ही दे सकें, यही काफी है। आपने मेरी समस्त शक्ति को नष्ट कर दिया कपूर साहब !—समझ नहीं पाती, क्या मुख ले जीवित रहूंगी ?—क्या लेकर अपने आत्म-परिजनों के बीच खड़ी रह सकूंगी।—मुझे जाने दीजिए।—मरने दीजिए, दुःख की आग में।—सोम मेरा क्या लगता है ?—वह आपका पुत्र है, आप जाने और वह जाने।—मैं चली। जीवन में बहुत विडम्बना झेल चुकी हूं, अब नहीं, अब अधिक प्रतारणा-छल नहीं।—'और कमरे के दरवाजे पर जाकर उसने परदा हटाया। उस कमरे की तरह इसका केवल जाली का दरवाजा ही बन्द नहीं था, दूसरा आधे कांच और आधी लकड़ी का दरवाजा भी बन्द था। पर जैसे ही परदा हटाया गया —दोनों ने आश्चर्य से देखा कि बाहर उनके अनजाने ही दिन का काफी प्रकाश फैल गया है। शीघ्र ही कमला ने पुनः परदा फैला दिया।

कपूर साहब भी तब तक उठकर कमला की ओर ही आ रहे थे। विक्षिप्त-सी कमला उसी रोरुद्यमान मुखमण्डल को लिए हुए कपूर साहब के चरणों में गिर पड़ी, बोली—'कपूर साहब मेरी रक्षा कीजिए।'

दोनों हाथ पकड़कर कमला को उठाते हुए उन्होंने कहा, 'माफ करना जिस आवेश में मैं तुम्हें 'तुम' कहने लग गया हूं, उसे अब लौटा न सकूंगा !'

'चूल्हे में जाए आपका 'आप-तुम' ! अब मैं क्या करूं ? मैं कैसे जाऊंगी ?'

'शिब्बू को साथ भेज दूं ?'

'शिब्बू को ?—पर सारी रात गायब रहकर प्रातःकाल आपके घर से आपके नौकर के साथ निकलूं ?'

'तो मैं चलूं ?'

कमला ने अपने दोनों हाथों को एकाएक ही कपूर साहब के कंधे

पर पटककर उनकी आंखों में आंखें डालकर कहा—'मेरी लाज आपके हाथ है।—मजाक छोड़िए।'

कपूर ने कहा, 'तो ठहरिए ! सोम को जगाए देता हूं। वही आपको घर पहुंचा आएगा।'

'किन्तु मेरे घर पर भी तो नौकर-चाकर हैं।'

'तो फिर यहीं ठहरिए !'

'और घर के लोग मुझे न पाकर क्या करेंगे ?'

'कुछ न कुछ कल्पना कर ही लेंगे। पर शायद नटनागर तो नौ बजे से पहले उठते नहीं ?'

'नहीं।'

'तो फिर, दफ्तर से जब तक वे लौटे नहीं, तुम्हारा उन्हें खयाल ही नहीं होगा बल्कि दफ्तर से वे काफी देर से लौटें, इसकी व्यवस्था मैं कर दूंगा। अंधेरा होने पर शाम को लौट जाना।—इधर सोम यदि तुम्हें देख लेगा, तो उसे बहुत प्रसन्नता होगी। आज यदि परिस्थितियों ने सहायता दी है, तो तुम्हीं न क्यों उसका भार लेकर अपने प्रभाव को जांच लेती हो।'

'किन्तु स्कूल का क्या होगा ?'

'एक अप्लीकेशन लिख दो, अस्वास्थ्य की, स्वीकृति करके मैं उसे लौटा दूंगा, किसीको सन्देह भी न होगी।'

कमला ने एक लम्बी सांस ली, बड़े ही विवश पैरों से वह पलंग पर आकर इस तरह बैठ गई, जैसे उसे अपने ऊपर कोई अधिकार ही न रहा हो। उसने केवल यह कहा :

'किन्तु शिब्बू को छोड़कर और किसीको भी मेरा पता नहीं लगना चाहिए।'

'बल्कि शिब्बू को भी नहीं। उसे यही कहा जाएगा कि तुम अभी बुलाई गई हो।'

उसी समय पास के कमरे से सोम ने पुकारा 'पापा !'—कपूर साहब

कमला को वहीं छोड़कर सोम के कमरे में चले गए।

कमला आंखें बन्द करके अपने अदृष्ट को देखने लगी।

२४

दादू विकेट गेट से ज़रा दूर हटकर ही झाड़ी में अपने आपको छिपाए कमला की राह देखता बैठा रहा। बहुत समय बीत जाने पर भी जब वह नहीं लौटी, तो वह उद्विग्न हो उठा। क्या करे? कहीं आफत में फंस गई उसकी मालकिन तो? कितनी अच्छी है उसकी मालकिन, यदि सिर्फ यह कमज़ोरी उसमें न होती। दादू जानता है कि इसी तरह उसकी आंखों के सामने कमला का कमल से अभिसार चलता था, फिर बड़े बाबू धर्मप्रकाश से—उसका नौकर रामू तो इसी चर्चा को चलाकर उसके हाथ का प्रसाद भी पा चुका है! फिर—जाने कौन-कौन और रहे होंगे, जिन्हें दादू नहीं जानता; और यह भी तो वह बन्द आंखों तभी देख सका है, जब वह जागता रहता। सचमुच सो जाने पर क्या कुछ होता रहा है, उसे वह कैसे जान सकता है! और अब आज यह क्या कर बैठी वह? पूरब में उधर प्रकाश फैलना चाह रहा है, लोगों की आवाजाही शुरू हो गई है। किसीने अगर उसे वहां इस तरह चोर की भांति दुबका बैठा देख लिया, तो क्या होगा? उसे पुलिस में न पकड़ा देंगे लोग? और तब क्या सारी बात खुल न जाएगी? लौटकर आती क्यों नहीं? ऐसा भी क्या गाफिल हो जाना, कि किसी तरह का होश ही न रहे। क्या करे वह?

तभी बड़े साहब का ग्वाला दूध दुहने के लिए फाटक में घुसा। चक्कर ने घूमकर कुछ शोर किया, दूर से साहब का कुत्ता भौंक उठा, उधर से दरबान ने आवाज़ लगाई 'कौन?'

'ग्वाला !' दरबान ने कुत्ते को शायद कुछ कहा, उसका भौंकना बंद हो गया। ग्वाला आगे बढ़ गया।

दादू के पहाड़ जैसे बदन में कंपकंपी छूट गई। जिस समय कमला गई, न तो यह फाटक ही बोला था, न कुत्ता ही। शायद कहीं सोया पड़ा होगा। दरबान तो कुत्ते के भरोसे खर्राटे लेता रहता ही होगा। पर यदि कुछ जरा-सी भी असावधानी से वैसा कुछ हो गया होता तो ? और तभी, इसके पहले कि दादू उसके फलाफल की कल्पना करे, उसने देखा कि दूर से वह कुत्ता किसीको सूंघता हुआ दरवाजे की ओर ही बढ़ा चला आ रहा है। क्या उसे दादू की गंध लग गई है ? यदि वह पास आकर भौंके नहीं और केवल सूंघने के बहाने उसका पैर ही पकड़ ले ? नहीं, नहीं, वह अब नहीं ठहर सकता। और एक क्षण की भी देरी न करके वह उठ खड़ा हुआ, और कटी हुई झाड़ी की रेलिंग के सहारे झुका हुआ विकेट गेट पार करके वह अपने घर की ओर चला, अवश्य ही रुक-रुककर पीछे देखते हुए—पता नहीं मन में कमला के लौटने की आशा को स्थान देकर या उस कुत्ते के डर को ! और जब स्कूल की चहार-दीवारी के भीतर उसने कदम रखा तो एक लम्बी सांस उसकी छाती को दबाकर ऊपर उठ गई। जाने क्या होगा उसकी मेम साहिब का ! भय के मारे वह उनके बंगले पर भी नहीं गया। वह जानता है नटनागर साहब नौ-दस बजे से पहले कभी नहीं उठते। उसके पहले ही मेम साहब अपना सारा प्रातःकालीन कार्य निबटाकर स्कूल पहुंच जाती हैं। अभी वहां जाने से उसे कोई भय नहीं है। फिर भी वह वहां नहीं जा सका। गया और दूर एक कोने में बनी हुई अपनी एकान्त कोठरी में जाकर पड़ रहा। शायद बहुत देर तक करवटें बदलने के बाद, उसकी थकी हुई आंखें गम्भीर निद्रा में मुंद गईं।

नटनागर सचमुच नौ से पहले नहीं उठते। रात्रि को वे बारह-एक बजे से पहले कभी सो नहीं पाते, उन्हें अनिद्रा का रोग है। रात को तो वे और भी क्लान्ति के बाद सोए थे। मिस्टर कपूर को यह विदित था,

अतः उनके लिए एक घंटा लेट तक उपस्थित होने की रियायत थी। यों भी आफिस में अपने विभाग के बड़े बाबू थे। शनिवार की रात को छोड़कर प्रायः प्रत्येक रात्रि को नौ बजे का अलार्म भर दिया जाता। नौ बजे जब नटनागर उठते तो कमला स्कूल जा चुकी होती। वह सवेरे पांच बजे ही उठ जाती है। निबटकर अपनी चाय अकेली ही शेष कर लेती है। सात बजे उसे स्कूल पहुंचना होता है। वह स्कूल की सुपरिण्टेण्डेण्ट है, समय की उसपर वैसे खास पाबन्दी नहीं, किन्तु कमला ने एक तरह से नियम बना लिया है। कभी-कभी नौ-साढ़े नौ बजे तक वापस आ जाती है, तो नटनागर के साथ चायपान कर लेती है, कभी नहीं आ पाती तो नटनागर स्वयं ही अपनी चाय शेष कर लेते हैं। साढ़े दस, पौने ग्यारह तक वे दफ्तर के लिए तैयार हो लेते हैं। जब सवेरे कमला के साथ जलपान नहीं होता, तो कमला के साथ साक्षात्कार पुनः साढ़े पांच के पहले नहीं होता। साढ़े पांच बजे नटनागर दफ्तर से लौटते हैं। साथ ही चाय पीते हैं। कभी कमला स्कूल चली जाती है, बच्चों के खेल का कार्यक्रम देखने, कभी दूसरी व्यवस्था देखने। सात बजे तक लौटकर संध्या का भोजन दोनों साथ करते हैं। फिर उसके बाद दोनों को अपना-अपना काम !

उस दिन नियत समय पर जब सुपरिण्टेण्डेण्ट स्कूल नहीं पहुंची तो अध्यापिकाओं ने संतोष की सांस ली। आराम से पैर फैलाकर उन्होंने चाय-पान किया, फिर छात्रों की प्रार्थना में योग दिया, खेल-कूद, परेड, हुआ सब कुछ यथाक्रम ! न जाने कब वह आ टपके, पर फिर भी वह तनाव नहीं था, जो उनकी उपस्थिति में रहा करता है। सुपरिण्टेण्डेण्ट कर्तव्य-क्षेत्र में बड़ी अनुशासन-प्रिय और दृढ़ हैं। जब नौ बजने तक भी नहीं आई हैं, तो हो सकता है, सामान्य-सा कहीं ज्वर वगैरा हो गया हो। या भोजन के बाद दुपहर की कक्षा तक वे आ जाएं ! खैर जब वे हैं नहीं, तो आराम से ही सारा काम होना चाहिए। उनके लिए सिर-दर्द की जरूरत ही क्या है ?

दुपहर के बाद में प्रधान कार्यालय से आई हुई डाक में सुपरिण्टेण्डेण्ट का एक प्रार्थनापत्र है, अस्वास्थ्य के कारण अनुपस्थिति के लिए क्षमा का, और उसपर स्वीकृति के हस्ताक्षर हैं क्षेत्रीय-निरीक्षक के। चलो आज तो आराम से कटेगा।

कपूर साहब नौ बजे ही दफ्तर पहुंच गए। चपरासियों को भी आश्चर्य हुआ। साहब इतनी जल्दी दफ्तर आते नहीं, वे अभी दफ्तर साफ भी नहीं कर पाए थे, यद्यपि उनको आठ बजे ही साफ कर रखने की हिदायत थी। एक चपरासी, जो अभी तक आया भी नहीं था, बरतरफ कर दिया गया, दूसरे पर दो रुपये जुरमाना हो गए, वह रोता ही रहा कि बेचारा अकेला कैसे समय के भीतर सारे दफ्तर की सफाई सम्पन्न कर सकता है। अधिकारी के सामने जीभ हिलाना भी नीति शास्त्र के प्रतिकूल है, अतः दो रुपये के साथ उसे तबदील भी कर दिया गया। गुनाह उसने नहीं किया तो उसकी मां ने तो किया ही था; आज न हो तो कुछ बरस पहले, बहाव के ऊपर नहीं तो नीचे—पर व्यवस्था भेड़िये की जो ठहरी, मेमना बेचारा क्या करे ?

दस बजे तक, जब तक कि आफिस ठीक तरह से शुरू हो, कपूर साहब ने कई केसों को निपटा दिया। आज वे मानो किसी बेलगाम घोड़े पर बैठे किसी शून्य में पैठे उड़े जा रहे थे; यह कहना कठिन है कि वह शून्य आकाश की ऊंचाई थी, या पाताल का गम्भीर निविड़ खोखलापन्। दस बजे के पहले-पहले सामान्य डाक के साथ कपूर साहब ने कमला की अर्जी भी जेब से निकालकर तथा उसपर आवश्यक आदेश लिखकर स्कूल भिजवा दी। उधर से मुक्ति की सांस लेकर उन्होंने घंटी बजाई, और चपरासी को आदेश दिया कि बड़े बाबू को भेज दे ! कपूर साहब खूब जानते थे कि नटनागर अभी आए न होंगे। यही खबर लौटे आकर चपरासी ने दी। चपरासी को आदेश मिला कि जैसे ही वे आएं साहब से मिल लें।

ठीक समय पर नटनागर दफ्तर आ पहुंचे, तो चपरासी ने हाथ

उठाकर सलाम किया, और साहब का आदेश सुना दिया। नटनागर पहले अपनी सीट पर गए, और अपने प्रथम सहायक वर्मा से पूछा, बात क्या है।

वर्मा ने कहा, 'बात तो कुछ मालूम नहीं। पर साहब बड़े नाराज़ मालूम देते हैं। नौ बजे से ही दफ्तर में डटे हैं, खलासी नेतराम को डिसमिस कर दिया है, और पियून हरीराम को जुर्माने के साथ तबादला!'

'अच्छा!' नटनागर एक बार तो अपनी कुर्सी पर बैठकर सुस्ताने-से लगे। खैर इसमें घबराने की क्या बात है, उन्होंने पहले ही अपने हेल्थ के ग्राउण्ड पर लेट अटेण्डेन्स की परवानगी ले रखी है। जरूरत पड़ने पर पांच के बाद बैठते ही हैं, और छुट्टियों में भी अटेण्ड करते हैं, कभी ओवर टाइम का दावा नहीं किया। डरने की क्या बात है? कोई सर थोड़े उड़ा देंगे? और वे उठकर दर्प के साथ चले। सभी क्लर्कों ने, चपरासियों ने उनकी भावभंगी को देखा और मन ही मन उनके साहस की तारीफ की।

किन्तु साहब के कमरे के सामने आते-आते चाल में वह हेकड़ी न रही, न मुंह पर वह साहस का भाव रहा। पैरों में थोड़ी-थोड़ी कंपकंपी भी महसूस की जा सकती थी, दिल की धड़कन भी बढ़ गई थी।

स्प्रिंग के दरवाजे को ठेलकर नटनागर कमरे में पहुंचे, और बोले, 'गुड मार्निंग सर!'

साहब ने टेबल पर कागजों में दृष्टि गड़ाए हुए कहा, 'गुड मार्निंग!'

कुछ क्षणों तक नटनागर प्रतीक्षा करते रहे, बड़ी टेबल के उस किनारे खड़े-खड़े। चश्मे की छाया के भीतर से फाइल पढ़ते रहने का बहाना करते हुए कपूर साहब ने नटनागर के चेहरे को पढ़ने का प्रयत्न किया। देखा कि पत्नी-विषयक कोई परेशानी उनके चेहरे पर नहीं है, कमला ने जो कहा था, वही सच है।

कुछ देर तक प्रतीक्षा करते रहने से नटनागर में कुछ आत्मविश्वास बढ़ गया। उन्होंने साहब का ध्यान आकर्षित करते हुए कहा, 'इट्स मी

सर, नटनागर, यू वाण्टेड मी सर ?' (यह मैं नटनागर हूं महाशय, क्या आपने मुझे बुलाया था ?)

'यस !'—और फिर कुछ पल उन्होंने सामने रखी हुई फाइल को पढ़ने में लगा दिए। फिर सिर उठाकर उन्होंने कहा, 'तुम दफ्तर प्रायः कब आते हो ?'

'ग्यारह बजे। आपसे मैंने इसके लिए परमिशन भी ले ली थी।'

'यस, यस, आई नो दैट !'—(मैं जानता हूं) क्या तुम्हारी वह बीमारी अभी भी चल रही है ?

'बल्कि बढ़ ही गई है सर।'

'सौरी नटनागर !—लेकिन देखते हो न, तुम हो यहां पर हेड-क्लर्क, तुम्हारे समय पर न आने से क्या होता है, सो सोच देखा है ? दफ्तर आठ बजे साफ हो जाना चाहिए। आज नौ बजे तक फर्राश का तो पता ही न था ! समझ नहीं पाता, ऐसी समस्याओं का हल क्या होगा, यदि हेड क्लर्क ही समय पर न आए।'

नटनागर ने साहस बटोरकर तथा थूक निगलकर कहा, 'मैं मजबूर हूं सर, इस बीमारी से। एक्स्ट्रा टाइम (अतिरिक्त समय) भी मैं डिवोट (समर्पित) करता ही हूं।'

'सो तो है, किन्तु उससे तो समस्या हल नहीं होती। हेड क्लर्क का पद केवल कागज लिखने इतना ही नहीं है नटनागर, यह तो तुम जानते ही हो; यह है एक एडमिनिस्ट्रेटिव पोस्ट, जहां इनीशिएटिव (पहल) की आवश्यकता होती है।'

'यस सर !—अगर मेरे ट्रान्सफर से समस्या का हल निकल सकता हो तो....'

कपूर साहब ने सीधे नटनागर की ओर देखा, नटनागर की आंखें नीचे झुक गईं। बलिहारी है इस व्यवस्था की कि चोर शहजोर होकर साहूकार को डांटे, और साहूकार उससे आंख भी न मिला सके।

कपूर साहब ने कहा, जरा कड़ककर, 'ह्वाट डु यू मीन ? (तुम्हारा

मतलब ?) दाएं हाथ में तकलीफ होने पर डॉक्टर उसे बाएं हाथ में भेज देने को समस्या का हल नहीं मानता। अगर मुझे लगता हो कि मेरे यहां एक बुराई है, तो समझते हो मैं उसे दूसरे दफ्तर में भेज देने से संतुष्ट हो जाऊंगा ? आई नो हाउ टु डील विथ ऐन ईविल' (एक बुराई से पेश पाना मैं जानता हूं।)

नटनागर के मन के एक पहलू में रात की कमला की बात का अंश बिजली की तरह चमक उठा, और वे चाहने लगे कि कहें, 'यह त्याग-पत्र लीजिए सर ! इसके अधिक आगे शायद आप 'ईविल' को 'डील' करना जानते न हों !' किन्तु उनके मन का दूसरा पहलू एक सामान्य क्लर्क का कायर संस्करणमात्र था; कायर होते हुए भी अपने ही प्रति-द्वन्द्वी मन पर उन्होंने उस क्षणांश में ही विजय पा ली। नटनागर ने कहा, 'मुझे अफसोस है यदि मैंने आगको कष्ट पहुंचाया हो, यह मेरा इरादा नहीं था। मैं सिर्फ अपने एक ऐसी हैण्डीकैप (अभाव) की ओर आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता था, जिसके ऊपर मेरा कोई नियंत्रण नहीं है। आपने स्वयं इस दिशा में मुझसे सहानुभूति दिखाई है, जिसके लिए मैं आपका कृतज्ञ हूं, और आपकी उसी कृपा के लिए ही फिर प्रार्थना कर सकता हूं।'

कपूर साहब ने कहा, 'वेल आई विल ट्राइ टु अकॉमोडेट यू ! (मैं तुम्हारे इस अभाव से आदी होने की चेष्टा करूंगा) अभी तुम अपने सेक्शन क्लर्क से हिदायत कर दो कि उसे यहां साढ़े नौ बजे उपस्थित हो जाना चाहिए, नहीं तो उसके हक में अच्छा न होगा।'

'वेरी वेल सर !' और नटनागर ने जाने के लिए मुंह फिराया।

मिस्टर कपूर ने, जैसे ही वे दरवाज़े तक पहुंचे, कहा, 'ऐण्ड सी ! (और देखो) इन कागजों पर मुझे नोट्स चाहिएं। जल्दी से जल्दी कब दे सकते हो ?' नटनागर ने फाइलों के ढेर पर निगाह डाली और कहा :

'सर, मुझे अध्ययन करना पड़ेगा, फिर भी इसी हफ्ते के भीतर ही भीतर···'

'नो-नो आई वाण्ट इट आल बिफोर टुमारो ! (मैं सब यह कल के पहले चाहता हूं ।) परसों बड़े सवेरे की गाड़ी से मुझे बाहर जाना हो सकता है । डू यू अण्डरस्टैण्ड ?' (समझे ?)

'यस सर, आई विल ट्राई !' (मैं चेष्टा करूंगा ।)

'नो, आई मस्ट हैव ईट सर्टेन बाई टुमारो मौर्निंग ।' (मैं कल निश्चित चाहता हूं ।)

यानी यदि नटनागर काम में व्यस्त रहे, तो आज दुपहर का खाना क्या, रात्रि का खाना भी ऑफिस ही में मंगाकर खाना होगा ।

नटनागर ने पीठ मोड़ी, और मिस्टर कपूर के अधरों पर एक शैतानी-भरा हास्य फैल गया, जिसे तत्काल ही आए हुए चपरासी ने भी लक्ष्य कर लिया, यद्यपि मिस्टर कपूर को उसके आने का ध्यान भी न था ।

जब उसने टेबल पर रखे कागजों को इधर-उधर किया तो कपूर साहब की चेतना जागी । उन्होंने हृदय-भेदी दृष्टि से चपरासी की ओर ताका । कागज लेकर वह दरवाज़े से बाहर हो गया ।

कपूर साहब फिर गत रात्रि के व्यापार में खो गए । कमला की समस्या को किस प्रकार पार लगाया जा सकता है ?—यह तो स्पष्ट है कि वह सोम के लिए सब कुछ छोड़ सकती है । नटनागर के लिए उसके हृदय में भय हो सकता हो, पर घृणा भी कम नहीं है । किन्तु भय किस लिए हो ?—नटनागर एक तुच्छ क्लर्क, वह उससे अधिक शिक्षिता, बुद्धिमती—आर्थिक दृष्टि से सर्वथा स्वतन्त्र, फिर शायद नटनागर की अपेक्षा उसे समाज ही का भय कहना अधिक उत्तम होगा । कमला को यहां सभी पहचानते हैं, यद्यपि उसे आए कुछ ही समय हुआ है । मिसेज़ नटनागर इतनी जल्दी मिसेज़ कपूर बन जाएं, यह कमला के लिए ही नहीं, कपूर साहब के लिए भी एकाएक आश्चर्यकर मालूम देगा । यहां से भागा नहीं जा सकता । इतनी बड़ी पोस्ट, इतना दायित्व और यह कर्म ?—यहां रहकर कमला उनके घर नहीं रह सकती । वह बहुत बड़ी बदनामी होगी । केवल एक ही उपाय है, नटनागर कमला को तलाक

दे दे, और फिर कपूर साहब उससे विधिवत विवाह कर लें, किन्तु यदि दोनों नटनागर तलाक के लिए तत्पर भी हो जाएं, तो भी इसमें झमेला बहुत है, और समय की भी बहुत अपेक्षा करनी पड़ेगी। फिर क्या किया जाए ?

नटनागर का यदि यहां से ट्रान्स्फर कर दिया जाए, तो कमला को उनसे मुक्ति मिल सकती है, और तब साधारण तौर पर उनके मिलन में कोई बाधा नहीं उपस्थित होगी। तब समय की पृष्ठभूमि में उनके सम्बन्ध को विच्छिन्न करने में शायद अधिक कठिनाई न हो। इसके सिवा और तो कोई मार्ग दिखाई नहीं देता। अच्छा उनके ट्रान्स्फर की भूमिका तो तैयार करनी ही होगी। आभास वे स्वयं दे गए हैं, उनका सुझाव ही सही।

एक और उपाय हो सकता है !—पर उसकी क्षुद्रता का ध्यान आते ही उन्हें अपने ही ऊपर घृणा की एक हंसी-सी आई। कमला विधवा होकर सरलता से बिना अधिक समय की प्रतीक्षा किए उनकी हो सकती है। नटनागर बीमार तो हैं, टी० बी० जैसी बीमारी का उनका उपचार हो गया है, किन्तु यदि एकाएक उन्हें कुछ हो जाए तो किसीको सहसा अविश्वास तो नहीं होगा। उनको अनिद्रा का रोग है, किन्तु यह समाचार किसीने नहीं दिया कि वे रात्रियों का जागरण शहर के बदनाम मुहल्लों में व्यतीत करते हों। यदि ऐसा होता, तो गुण्डों की सहायता ली जा सकती थी। अच्छा, क्या कोई व्यक्ति लगाकर उन्हें वहां का रास्ता नहीं सुझाया जा सकता ?—कौन व्यक्ति है ऐसा ?—उनका क्या ऐसा कभी कोई क्षेत्र रहा है ?—अच्छा क्या ओझा इसमें कुछ सहायता कर सकता है ?—नहीं-नहीं, वह इस बात की गन्ध भी पा लेगा, तो विरोधी हो उठेगा।—पर क्यों ?—आखिर कमला से उसका सम्बन्ध और कौन-से अन्य प्रकार का था ?

यों, कई तरह के विष हैं कि पता भी न लगे, और काम समाप्त ! पर विष दे कौन ?—कमला ? वह क्या इसके लिए तत्पर हो सकती है कभी ?—घृणा करने से ही कोई किसीके प्राणों का ग्राहक नहीं हो

जाता। किन्तु····

अधरों पर एक क्षीण हंसी का अनुभव करके उन्होंने अपने आप से कहा—'वाह मिस्टर कपूर ! कमला के जादू-से स्पर्श पाकर ही तुम इतना नीचे सोचने लग गए ? उस समय तो बड़े दर्प के साथ कमला के सामने तुमने कहा था, मुझे कुछ नहीं चाहिए, केवल मेरे इस बीमार लड़के के लिए मां की जरूरत है। यह गरज मेरे अकेले की नहीं, तुम्हारी भी है कमला देवी !—मेरे से अधिक यह तुम्हारी सन्तान है। मैं तो केवल तुम्हारी बेगार ढो रहा हूं। क्या इतनी सहायता भी तुम मुझे नहीं दोगी ?'

किन्तु सोम ?—सचमुच वह बीमार है, उसे निश्चय ही मां चाहिए। कमला से बढ़कर और कौन उस स्थान को पूर्ण कर सकता है। यदि कमला उन्हें नहीं मिली तो क्या सोम को वे बचा सकेंगे ?—तब क्या होगा ? उसके सन्तान की रक्षा न कर सकने के कारण क्या कमला ही उनसे घृणा नहीं करने लग जाएगी ?—कौन-सा तथ्य अधिक ओछा, अशोभनीय और असहनीय है ? एक ओर स्वेच्छा से अपनी सन्तान की हत्या करना, दूसरी ओर नटनागर को रास्ते से अलग हटाना।—नहीं-नहीं, इतने नीच तो वे कभी न थे। अब भी नहीं बन सकेंगे ; और फिर कमला को यदि मालूम हो जाए, तो वह क्या सोचेगी ?····

कपूर साहब ने मन लगाने के लिए एक और फाइल सामने रख ली।

चाय पर चाय के प्याले शेष करके, जमुहाई लेते-लेते जब नटनागर ने आखिरी फाइल पर से कलम उठाई तो दफ्तर की घड़ी साढ़े नौ बजा रही थी। इतना परिश्रम उन्होंने कभी नहीं किया था। सारा शरीर थककर चूर-चूर हो गया था, और मन उबल-उबल पड़कर न केवल इस दफ्तर के अधिकारियों को, प्रत्युत् सारे रेल मंत्रालय को, भारत सरकार को—नहीं सारी इस ऊंच-नीच वाली समाज-व्यवस्था को झुलस देना चाहता था। चपरासी दरवाजे के पास दूर एक स्टूल पर ऊंघ रहा था,

क्रोध में भरे हुए नटनागर ने उस फाइल को वहीं से फेंका, कि उसके कागज पानी के टब में स्नान के लिए उतरी हुई कबूतरी के पंख की तरह डोरी के बंधन से हाथ-पैर छुड़ाकर चारों ओर झांकने लगे, और उन्होंने कहा :

'यह लो—करो इससे कपूर साहब के श्राद्ध का तर्पण।'—और वे उठ खड़े हुए, घर जाने के लिए।

कमला के ऊपर उनका क्रोध रात्रि को ही नष्ट हो गया था। उसे मान करने का हक था, सवेरे वह उनसे शायद इसलिए जानकर नहीं मिली। चलो, इतनी देर करके जाने से बदला पूरा हो गया। चिन्तातुरा वह उन्हें दरवाजे पर मिल सकती है। अपना आखिरी राउण्ड उसने शेष कर लिया होगा। अब वे उस राउण्ड में कमला के साथ नहीं जाते। सोम वहां से हटा लिया गया है, कमला के वहां अधिक अटके रहने का प्रयोजन ही नहीं है।

लेकिन घर पर पहुंचते ही उन्होंने अनुभव किया कि उनकी कल्पना को मानो कभी सच होने का सौभाग्य ही नहीं है। इस समय तक दादू भी बरामदे में अपना बिस्तर लगा लेता है, आज उसका भी पता नहीं। शायद कमला अभी तक अपने राउण्ड से लौटी नहीं है। रात्रि के शेष राउण्ड के समय दादू उसके साथ पहरेदार की तरह रहता है ! खैर, अब आती ही होगी। यदि उनके हाथ-मुंह धोने तक भी न आई तो वे स्वयं जाकर उसे लिवा लाएंगे। नौकरी की इस जिल्लत में जब तक कमला भी शरीक नहीं हो जाती, उन्हें खाना रुचेगा नहीं। यदि कमला उन्हें कुछ थोड़ा साहस बंधा दे, तो वे इस अन्याय को कदापि नहीं सहेंगे। आवश्यकता पड़ने पर त्यागपत्र देने के लिए तो वे यों भी तैयार हैं।

भिड़े हुए दरवाजे को नटनागर ने धक्का दिया, वह बिना आवाज किए सरलता से खुल गया। उधर रसोईघर से रोशनी आ रही है, रसोई-दारिन अवश्य अब तक बैठी होगी। बस शीघ्र ही कपड़े बदलकर वे आए।

किन्तु तब तक भी कमला जब न आई, तो कपड़े बदलकर जाने के पहले नटनागर ने रसोईघर में जाकर देख आना आवश्यक समझा। भीतर गए, तो देखा, कि फर्श पर रसोईदारिन लेटी हुई सो गई है। चूल्हे पर खाना बना हुआ पड़ा है। मालूम देता है अभी किसीने खाया नहीं—शायद कमला ने भी नहीं। तो फिर दोनों आज साथ खाएंगे।

नटनागर पुनः अपने कमरे में आ गए। उन्हें सब कुछ अजीब-सा, नया-सा लग रहा था। क्या था, यह वे समझ नहीं पा रहे थे। उन्होंने चारों ओर दृष्टि दौड़ाई। लगभग बारह घण्टे हुए वे दफ्तर गए थे, तब उन्होंने यह घर छोड़ा था। यद्यपि घर की सफाई आदि हुई है, फिर भी ऐसा मालूम देता है, मानो सभी कुछ बासी हो। किसीने किसी वस्तु को हाथ तक लगाने की आवश्यकता अनुभव नहीं की है। ऐसा तो प्रायः होता नहीं। कमला कभी निष्क्रिय बैठी नहीं रह सकती, कुछ न कुछ करती ही रहती है। इसके अलावा, हर वस्तु को किसी प्रकार से सुरुचिपूर्ण तरीके से स्थान-विशेष पर रखने का उसका ढंग है, उसमें भी बासीपना कभी नहीं रहता। आज इस तरह तो कल उस तरह—नहीं, मालूम देता है, आज इस घर को वह जादुई स्पर्श जैसे लाभ ही नहीं हुआ। तो क्या कमला भी उन्हींकी तरह आज दिन भर स्कूल में व्यस्त रही ?—ऐसी लाचारी किस काम की ?—यदि ऐसा हुआ तो सबसे पहले कमला को ही त्यागपत्र दे देना चाहिए।

चाबुक खाया हुआ नटनागर का उत्पीड़ित मन आज कमला के लिए सहानुभूति से उमड़ा पड़ रहा है। वह उनकी पत्नी ही तो है, एक दिन सचमुच ही उन्होंने उसे प्यार भी किया था सर्वान्तःकरण से। प्यार आज भी उनका कम नहीं हुआ है। केवल कमला की दृष्टि में कुछ दोष उत्पन्न हो गया है, समय का व्यवधान आप उस दोष को दूर कर देगा। जो भी हो, फिर भी वे पति-पत्नी हैं। उनकी बात वे ही न समझेंगे, तो समझेगा कौन ?

उन्होंने रसोईघर के दरवाजे पर जाकर कुण्डी खटखटाई। रसोई

बनाने वाली मिसरानी हड़बड़ाकर उठ खड़ी हुई, साहस कर बोली :

'कौन—मेम साहब ?'

'नहीं—मैं हूं नन्नू !—क्या मेम साहब अभी तक स्कूल से लौटीं नहीं ?'

मिसरानी ने घूंघट निकालकर सामने आते हुए कहा, 'मेम साहब का तो सवेरे से ही पता नहीं है ! शाम को वहां से एक बाई आई थीं उन्हें पूछने के लिए, वे भी कह रही थीं कि मेम साहब वहां नहीं हैं।'

'कहती क्या हो ?—पता नहीं लगाया तुमने उनका ?'

'मैं कहां से लगाती ?—' और फिर मानो अपने ढंग से यह बताते हुए कि वह केवल खाने-पकाने जितनी ही नौकरी करती है, पता लगाने की नहीं, उसने कहा—'मुझे बहुत देर हो गई। घर पर बच्चे रो रहे होंगे। खाना चूल्हे पर रखा है।'—और वह कमरे से बाहर होती हुई मकान से बाहर हो गई।

घर और बर्तन साफ करने वाली नौकरानी प्रातः और सायंकाल आती है। घर में एक नौकर और है—दादू, उसका इस समय कोई पता नहीं। अवश्य ही वह कमला के साथ होगा। किससे पूछा जाए ?

नटनागर पुनः अपने कमरे में आए। मालूम दिया, कमरे का यह विद्युत प्रकाश मानो कहीं हो, पर उनकी आंखों में नहीं है। सभी ओर एक भयानक अन्धकार-सा छाता चला आ रहा है। जहां उन्हें कुछ भी दिखाई नहीं देगा।

नटनागर ने हाथ के इशारे से दरवाज़ा भिड़ाया और स्कूल की ओर चल दिए। स्कूल में नीरव शांति छा रही थी। सुपरिण्टेण्डेण्ट के आफिस के दरवाज़े पर ताला लगा हुआ था। स्कूल की रात की ड्यूटी वाली परिचारिका छात्रों के कमरों के सामने बरामदे में एक चटाई बिछाकर गंभीर निद्रा में पड़ी हुई थी। उसकी नाक की आवाज़ बता रही थी कि उसे जगाना सरल काम न होगा।

नटनागर ने 'शिश-शिश' कर उसे जगाने का प्रयत्न किया, किन्तु

वह तो उसके नाक के खर्राटों में स्वयं नटनागर को ही नहीं सुनाई दिया। तब उन्होंने 'ऐ-ऐ' कहकर उठाना चाहा, पर तब भी जब वह न उठी तो उन्हें इतना क्रोध आया कि वे ठोकर मारकर उसे उठाने के लिए व्यग्र हो गए। किन्तु तभी उनकी आवाज सुनकर पास के एक कमरे से सिस्टर रोज़ बाहर निकली, और नटनागर को देखकर बोली—

'गुड इवनिंग मिस्टर नटनागर! ह्वाट कैन आई डू फॉर यू? आई होप मिसेज़ नटनागर इज नाउ ओ. के.' (मैं आपकी क्या सेवा करूं?——मैं आशा करती हूं श्रीमती नटनागर अब ठीक हैं।)

'आई केम टु इन्क्वायर अबाउट हर' (मैं उन्हींके बारे में पूछने आया हूं।)

'क्या, आपका मतलब?'

'यही कि मिसेज़ नटनागर घर पर नहीं है। वह वहां सारे दिन से नहीं है!'

'लेकिन, वे तो बीमार थीं न?'

'यह आपको किसने कहा?'

उनकी लीव-अप्लीकेशन ने।' (छुट्टी के आवेदन ने)

'लीव अप्लीकेशन?'

'जो आज सवेरे आफिस से स्वीकृत होकर आई थी?'

'आफिस से स्वीकृत होकर?—मैं उसे देख सकता हूं?'

'शूअर' (निश्चय ही) कहकर सिस्टर रोज़ ने अपनी जेब में पड़ी हुई एक चाबी निकाली, और सुपरिण्टेण्डेण्ट के दफ्तर की ओर चली, श्री नटनागर उसके पीछे-पीछे! रोज़ ने दरवाज़ा खोला, भीतर जाकर उसने लाइट लगाया, नटनागर भी भीतर आ गए। सिस्टर रोज़ ने आज के आए हुए कागज़ों की ट्रे में से एक अप्लीकेशन निकालकर नटनागर के हाथ में थमा दी। नटनागर ने देखा, पढ़ा कि अप्लीकेशन कमला ही के हाथ की लिखी हुई है, आज ही की तारीख है, लिखा है कि वह बीमार है, जब तक अच्छी न हो जाए तब तक का उसे अवकाश स्वीकृत किया जाए।

अप्लीकेशन की बाईं ओर नीचे कपूर साहब ने लिख रखा है 'स्वीकृत', और नीचे उनके नामाक्षरों के साथ आज की तारीख लिखी हुई है।

नटनागर ने पूछा, 'किस समय यह अप्लीकेशन आपको मिली ?'

'वेल—दस-साढ़े दस के करीब !'

'कौन लाया इसे ?'

'दफ्तर का चपरासी, सदैव के अनुसार डाक के साथ।'

'आई सी !'—और अप्लीकेशन फॉर्म को वापस ट्रे में पटकते हुए भावशून्य-से नटनागर दरवाज़े की ओर मुड़े। रोज़ ने पूछा, 'क्या आप कुछ टोह पा सके हैं ?'

'बिल्कुल ठीक तो नहीं !'

'क्या मैं किसी उपयोग में आ सकती हूं ?'

'थैंक्यू सिस्टर फॉर योर काइन्डनेस ! (तुम्हारी दयालुता के लिए धन्यवाद)—ऑलराइट गुड नाइट !' और नटनागर स्कूल के लम्बे बरामदे में धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगे। सिस्टर रोज़ फिर भी कुछ समझ न सकी, उसने आफिस का दफ्तर पुनः बंद कर दिया, ताला लगाकर उसने पुनः बरामदे में देखा। श्री नटनागर की साढ़े चार फुट ऊंची देह दरवाज़े की ऊंचाई में छोटी से छोटी होती हुई अंधकार में अदृश्य हो गई।

सो मिस्टर कपूर कमला के अस्वास्थ्य की खबर जानता है, फिर भी सवेरे जब नटनागर उससे मिले, तो उसने उनसे कोई सहानुभूति नहीं जताई, उसका उल्लेख तक नहीं किया, और यही नहीं अनावश्यक रूप से उनपर इतना बोझ लाद दिया कि रात के नौ बजे तक उन्हें मुक्ति नहीं मिल सके ! क्या इसमें कुछ रहस्य नहीं हो सकता ? कपूर साहब पहले तो कभी इस तरह उनसे पेश नहीं आए थे। लड़के की वजह से ही कुछ अहसान तो उन्हें मानना ही चाहिए था।

घर पर आए तो बरामदे में दादू की खाली जगह ने उन्हें फिर सावधान किया। दादू नहीं है, कमला नहीं है— दोनों ही साथ गायब हो गए हैं ?—अगर वह स्वेच्छा से गायब हुई है, तो दादू को साथ ले जाने का

तो कोई प्रयोजन नहीं था।—रात के लगभग बारह बजने वाले थे। स्कूल का दरबान इधर हलचल अनुभव करके भागा हुआ आया। नटनागर को देखकर उसने फर्शी सलाम किया।

नटनागर ने आदेश दिया, 'देखो! दादू क्या अपनी कोठरी में है?'

'जी सरकार' कहकर दरबान उल्टे पैरों भागा। नटनागर ने एक कुर्सी कमरे से खींची, और बरामदे ही में बैठ गए, दरबान की राह देखते हुए।

चन्द्रमा अस्त हो चुका था। सामने भीषण अंधकार फैला हुआ था, उससे भी अधिक अंधकार था नटनागर की आंखों में! शून्य आकाश की ओर देखते हुए वे कब तक बैठे रहे, उनको स्वयं इसका ज्ञान न रहा, किन्तु तभी दरबान ने दादू के साथ आकर उनकी जड़ता को झकझोर दिया। देखते ही नटनागर ने कहा :

'दादू?—कहां था तू तब से?'

मरे हुए चेहरे को किसी तरह उनके सामने करके दादू ने कहा, 'हजूर, मेरी तबियत ठीक नहीं है। मैं अपनी कोठरी में ही पड़ा हुआ था।'

'जानता है, मेम साहब कहां हैं?'

दादू ने नीची आंखें करके गर्दन हिला दी, वह नहीं जानता।

'नहीं जानता?—झूठ बोलता है?'—कड़ककर नटनागर ने कहा, उसी क्षण उन्हें चेत आया कि दरबान भी वहीं खड़ा हुआ है। उन्होंने दरवान को उद्देश्य करके कहा, 'जाओ तुम—खड़े-खड़े क्या देख रहे हो?—अपना काम करो!'

दरबान ने फिर वैसा ही फर्शी सलाम किया, और जान बची सोचकर उल्टे पैरों भागा।

दादू ने नटनागर की ओर देखा, उनकी आंखों में शैतानी नहीं थी, किन्तु थी एक करुण सजल कठोरता। उसे उस रात का स्मरण हो

आया, जब नटनागर ने छुरे से उसपर हमला किया था। वह शैतानियत वहां नहीं थी !

नटनागर ने कहा, 'झूठ बोलने से काम नहीं चलेगा दादू ! मैं तेरी सब कारस्तानी जानता हूं। तू सब जानता है।'

दादू ने कहा, 'हुज़र, सच कहता हूं—दुपहर से ही बिस्तर से उठा नहीं गया। अभी उठकर आ रहा हूं।'

'लेकिन दुपहर के पहले ?'

'जी, तब भी घर पर ही था !'

'स्कूल गया था आज सवेरे ?'

'जी नहीं !'

'क्यों नहीं ?—तबियत तो तेरी दुपहर के बाद खराब हुई थी।'

'जी—पहले भी कुछ वैसी ही थी।'

'सवेरे यहां से जब तू गया, तो मेम साहब से कहकर गया था ?'

'जी—जी नहीं—वे स्कूल चलीं—नहीं; मैं सवेरे बहुत जल्दी घर चला गया था।'

'क्यों ?—रोज तो तू उनके साथ ही स्कूल जाता है।'

'जी—पर आज तबियत ठीक नहीं थी।'

'हूं।'—नटनागर ने देखा कि दादू से सख्ती के द्वारा कोई बात उगलवा लेना कभी सम्भव नहीं होगा।—और यह भी सत्य है कि वह इस राज़ को पूरा नहीं, तो भी कुछ-कुछ अवश्य जानता है।

उन्होंने अपनी आवाज़ को यथासाध्य मुलायम करके कहा, 'दादू।'

'सरकार !'

'तुझको मेरे साथ कुछ हमदर्दी है ?'

'यह क्या बात करते हैं हज़ूर ! मैं तो आपका गुलाम हूं।'

'कोई किसीका गुलाम नहीं दादू ! सब अपने-अपने मालिक हैं ! क्या सचमुच तू मेम साहब के बारे में कुछ नहीं जानता ?'

दादू इस स्वर से चौंक उठा। सहानुभूति हो आई उसे नटनागर से।

जो कुछ कमला ने किया है, उसे उसका मन भी क्षमा नहीं कर सका था, शायद उसके मन की प्रतिक्रिया ही उसके शरीर का ज्वर बनकर उसपर छा गई थी !

उसने गर्दन झुकाकर केवल कहा, 'सरकार···'

'कहो दादू !'

लेकिन दादू कुछ न बोला। नटनागर को वह जानता है, कमला ने जो कुछ भी किया हो, इस आदमी के हाथ उसको सौंप देना सुरक्षित नहीं है।

नटनागर ने कहा, 'दादू !—तू अपनी मेम साहब को मुझसे अधिक जानता है। उनपर किसी तरह का अधिकार जताने की मेरी नीयत नहीं है। मुझे अपनी फिकर भी नहीं है। आखिर तू जानता ही है, इन कई बरसों तक मैं अकेला ही रहा हूं। अकेला रहने की मुझे आदत हो गई है। मुझे चिन्ता है तो केवल उन्हींकी तरफ से है। यह मैं जानता हूं कि वे यहां सुखी नहीं हैं। इस अवस्था में गृहस्थी में कुछ कहा-सुनी हो ही जाती है ! कहीं यदि बचपना करके वे कुछ का कुछ कर डालें—मेरा मतलब समझ रहे हो दादू ?—कुछ का कुछ—इन स्त्रियों का मन तो बड़ा भावुक होता है न।—बात-बात पर कुएं-बावड़ी में गिर पड़ना, रस्सी लगाकर छत से लटक जाना, या न हो तो तेल छिड़ककर जल मरना—सभी कुछ ये औरतें बड़ी सरलता से कर गुजरती हैं।—'

दादू का मन चौंक उठा। तो क्या उस बंगले में जाकर कहीं उसकी मेम साहब की हत्या तो नहीं कर दी गई ?—कहीं उसे जबर्दस्ती रोक तो नहीं लिया गया ?—ऐसी ही कोई बात हुई हो तो ?—उसकी मेम साहब का तब क्या दोष हो सकता है ? जरूर ऐसी ही कोई बात हुए बिना वे वहां कभी नहीं ठहरतीं। यदि ऐसा है तो उसने उनकी खबर न देकर भूल ही की है। नटनागर क्या कह रहे थे, यह उसने नहीं सुना, उनको बीच ही में रोककर बोला, 'सरकार···'

'कहो।'

'मेम साहब···रात को···'

'हां-हां, बोलो, डरो मत। जो सच बात हो बता दो। मैं तुमको जमादार बनवा दूंगा—एक साल की तरक्की तुम्हें मिल जाएगी।'

किन्तु दादू ने मानो यह सब नहीं सुना। वह बोला, 'लेकिन आप···'

'कहो—मैं क्या ?—जल्दी कहो दादू ! अगर किसीने मेम साहब का कुछ किया है, तो मैं उसका खून पी जाऊंगा। बोलो—क्या हुआ है ?'

'लेकिन मेम साहब के ऊपर अगर कोई आफत आ गई ?'

'कौन-सी आफत है ?—वही तो जानना चाहता हूं। कहो दादू, मैं उसे ज़िन्दा न छोड़ूंगा, मुझपर खून सवार है।'

—सचमुच नटनागर पर खून सवार है। वे हांफने लग गए थे, टी० बी० के बीमार—न उनसे इतना दुःख सहन हो सकता था, न क्रोध ही। यदि अपमान की मात्रा भी मिल जाए तो ?—नटनागर को आंखों के सामने रक्त ही नहीं काले-पीले भी दिखाई दे रहे थे। मारे उत्तेजना के वे कुर्सी पर से उठ खड़े हुए, किन्तु तत्काल ही सिर पकड़कर उन्हें फिर बैठ जाना पड़ा।

दादू ने कहा—'बड़े साहब के यहां···'

'बड़े साहब ?—कौन कपूर साहब ?'

—तीर छूट चुका था, दादू ने केवल मस्तक हिला दिया। नटनागर के क्रोध को लक्ष्य तो मिल गया, किन्तु बेध नहीं मिल सका। मिस्टर कपूर डिवीजनल सुपरिण्टेण्डेण्ट, उनकी रोज़ी और रोटी के मालिक ! —किन्तु वह दुर्बलता केवल एक ही क्षण रही। केवल उनकी शंका ही को तो समाधान मिला है। यह बात तो प्रकारान्तर से उन्हें पहले ही मालूम हो जानी चाहिए थी। कितनी स्पष्ट बात है !—कपूर साहब द्वारा स्वीकृत उसकी छुट्टी का आवेदन, और इसकी पृष्ठभूमि में सोम-ओझा-कपूर सबका वह ज्वलंत नाटक, क्या उनकी आंखों को छू नहीं सका था ? उन्होंने दादू से कहा :

'अच्छा जा दादू ! तेरी तबियत खराब है, तू जाकर सो !'—और कुर्सी से उठकर वे शीघ्र ही कमरे में घुस गए। कुर्सी बाहर पड़ी रही, बरामदे की बत्ती भी जलती हुई।

दादू किंकर्तव्यविमूढ़-सा, क्या करे, क्या न करे; कहकर उसने अच्छा नहीं किया शायद ! बड़े क्रोध में भरकर नटनागर साहब कमरे में गए हैं। कहीं खुदकशी न कर लें !—खुदकशी ?—दादू ने बाहर बरामदे की लाइट बुझा दी, और कुर्सी उठाकर वह भी कमरे में दाखिल हो गया।

कुर्सी उसके हाथ में ही थी। भीतर के कमरे में घुसते ही दादू ने देखा कि नटनागर साहब पागल की तरह कपबोर्ड की दराजें खोलकर कुछ देख रहे हैं। क्या देख रहे हैं ? कुछ ज़हर ?—सांस रोके कुर्सी हाथ में लिए दादू दरवाजे में खड़ा-खड़ा देखता रहा।

दादू ने देखा कि एक ड्रावर से नटनागर ने एक छुरा निकाला, शायद वही छुरा, जिसका प्रसाद एक ऐसी ही रात्रि में पहले भी वह नटनागर के हाथों पा चुका है ! तो क्या करेंगे वे इसे लेकर ?—क्या किसीकी हत्या करना चाहते हैं ?—किसकी ? जिस हालत में वे हैं, क्या इस हालत में उन्हें छोड़ देना अच्छा होगा ?—ड्रावर बन्द करके जैसे ही नटनागर उधर मुड़े, दादू खिसककर परदे के पीछे हो लिया, कुर्सी तब भी उसके हाथों में थी, उसे जमीन पर रखना भी शायद वह भूल गया था। फिर उस जैसे स्थूलकाय व्यक्ति के लिए एक कुर्सी का बोझ ही क्या था !

नटनागर ने नीचे ही नीचे का ड्रावर खोला, और उसमें से एक बोतल निकाली। माथे का पसीना पोंछकर उन्होंने बड़ी हसरत से बोतल की ओर देखा ! दादू जानता है कि नटनागर कभी-कभी पी लिया करते हैं, किन्तु आज जब कि उनके पास एक छुरा है, और मन में खूब गुस्सा, गले से उतरकर यह शराब क्या करेगी ?—तभी नटनागर ने उसी ड्रावर से एक गिलास भी निकाला। कार्क खोलकर उसमें उन्होंने शराब उंडेली,

पास से एक और छोटी बोतल, शायद सोडे की बोतल, उससे सोडा उसमें मिलाया। रात्रि की उस नीरव गम्भीरता में उस आपानक की छलछल छलछलाहट सारे कमरे में गम्भीर रूप से व्याप्त हो गई। नटनागर ने आपानक समाप्त भी कर लिया, पर दादू के कान में उस छलछलाहट का गुंजन कम न हुआ। भय के मारे उसने एक क्षण के लिए आंखें बन्द कर लीं।

जब नटनागर ने ड्रावर को बन्द किया और पुनः ताला लगा दिया तो दादू की तन्द्रा भंग हुई। चोरी ही से वह धीमे पदों पहले कमरे में चला आया। प्रायः इसी समय भीतर के कमरे की बत्ती बुझाकर नटनागर दरवाजे पर आकर दादू को देखकर चौंक उठे।

'अरे! दादू!—तू अभी तक यहीं है?'

'सरकार—यह कुर्सी बाहर ही रखी थी। सोचा शायद आप सो गए हैं, दरवाजा खुला था—'

बीच ही में नटनागर ने कहा—'हां हां—ठीक है। रख! और जा, अब कुछ काम नहीं है, सो जा!'

'कुछ काम हो तो बुला लीजिएगा। मैं बाहर ही सोया हुआ हूं।'

'ना ना, बाहर क्यों?—अपने घर जाकर सो रह। बीमार भी तो है।'

बाहर जाते हुए दादू ने कहा, 'जी नहीं, अब तो बुखार भी नहीं है!—और दरवाजा भिड़ाकर दादू बरामदे में पहुंच गया। ओढ़ी हुई चादर उसने फर्श पर डाल दी, और लेटने का बहाना करके पड़ रहा।

दस मिनट के बाद ही दरवाजा खुला, और नटनागर का सिर दिखाई दिया। एक मिनट खड़े रहकर उन्होंने आहट ली। देखा कि दादू सो गया है, और बाहर सब कुछ नीरव है, तो वे बाहर आए। दरवाजे को बन्द किया। बरामदे के किनारे तक आकर फिर दरवाजे पर लौटे। जेब से एक तालियों का गुच्छा निकाला, और जाने क्या सोचकर उन्होंने दरवाजे को ताला लगा दिया। छुरा कहां छिपाकर रखा गया, यह दादू

नहीं देख सका। उनके हाथ में नहीं था, पर रहा अवश्य उनके पास ही होगा! वे बरामदे की सीढ़ियां उतर कर चले, दादू ने देखा कि यद्यपि चाल में कोई अन्तर नहीं है, किन्तु शराब अवश्य उनपर असर कर रही होगी।

जब नटनागर काफी दूर चले गए, तो दादू उठा, चादर उसने वहीं कोने में पटक दी, और वह भी उसी दिशा में आगे बढ़ गया। कल रात्रि को ही लगभग इसी समय—इस समय के काफी बाद, वह इसी तरह की जासूसी कर चुका है। कल पत्नी थी, आज पति है। दोनों के मन में क्या था, उसे वह नहीं जानता, सोचने की शक्ति उसकी बड़ी सीमित है! सहज बुद्धि से जितना वह समझ-सोच लेता है, कर लेता है। उसके मन में केवल कुछ प्रशस्त मार्ग हैं, चक्करदार, टेढ़ी-मेढ़ी अंधकार-प्रकाश वाली गलियां नहीं! वह नौकर है, पति-पत्नी दोनों का ही। दोनों ही की कल्याण-कामना उसके हृदय में है। नटनागर की अपेक्षा कमला की वह अधिक भक्ति करता है, बस इसी प्रेरणा से वह कल भी रात में अपने बिस्तर में नहीं सो सका, और आज भी उसके मन में शांति नहीं है! जिनका पीछा वह कर रहा है, या कर चुका है, उनके मन की गलियों से उसे परिचय नहीं, वे एक दूसरे की पृष्ठपोषक हैं या विरोधी, यह भी वह नहीं जानता। फिर भी किसी मार्ग के सहारे जब किसी मंजिल पर वह पहुंचता है तो, आलोचनात्मक निर्णय करने की शक्ति न रहने पर भी कुछ प्रभाव वह ग्रहण करता ही है। उस प्रभाव में भी कहीं मोड़ नहीं होता, अच्छा या बुरा इसके सिवा वह अन्य कुछ की विवेचना नहीं कर सकता। आज जिसका वह पीछा कर रहा है, वह उसकी भक्ति का पात्र है, या क्रोध का, या घृणा का, वह नहीं जानता—फिर भी मानो सुदूर भविष्य में बिना कारण ही उसे कहीं खतरे के चिह्न दिखाई दे रहे हैं। इसीलिए वह नटनागर का पीछा करता हुआ चला जा रहा है!—शायद वह भावना यदि उसके अन्तर में न होती, तो इसी बीमार मन

और बीमार शरीर को कल का आघात पाकर वह विश्राम देना ही अधिक अच्छा समझता।

नटनागर ने भी प्रमुख फाटक बचाना ही उचित समझा। विकेट गेट से निकलकर मेंहदी की झाड़ी के सहारे-सहारे वे सामने की ओर बढ़ने लगे। चोर की तरह या कमला की भांति सावधानी बरतने की उन्हें आवश्यकता न थी, इसलिए आहट पाते ही मिस्टर कपूर का अलसेशियन कुत्ता एकाएक भौंक उठा। नटनागर इस कुत्ते की बात जानते थे। कई बार रात्रि में भी उन्हें यहां आना-जाना होता था। अपने विभाग के मुख्य क्लर्क थे; गाड़ियों की दुर्घटनाएं रात-दिन किसी समय भी हो सकती हैं। दुर्घटना की सूचना सबसे पहले उन्हींके पास जाती थी, आवश्यक हुआ तो नटनागर कपूर साहब को उसी समय सूचना भिजवाते थे। कुत्ते को भौंकता हुआ देखकर नटनागर एक झाड़ी का सहारा लेकर खड़े हो गए; तभी चौकीदार रामजीवन ने आवाज़ लगाई, 'कौन ?'

'मैं हूं रामजीवन !'—नटनागर ने कहा।

रामजीवन ने कुत्ते को चुप रहने का इशारा किया, और वह आगे बढ़ा। हाथ में उसके कण्दील था, रोशनी को नटनागर के मंह पर डालकर, पहचानता हुआ बोला, 'जय रामजी की बड़े बाबू !—मगर साहब तो यहां नहीं हैं।'

'यहां नहीं हैं ?'

'आपको नहीं मालूम ? आठ बजे की गाड़ी से बाहर चले गए !'

'आठ बजे की गाड़ी से ?'—तो उन्हें खबर भी नहीं दी गई ?—यों हमेशा उनके लिए सैलून का प्रबन्ध स्वयं नटनागर ही करता है। आज उन्हें जताना भी उन्होंने आवश्यक नहीं समझा !—और इस तरह कमला को भी साथ उड़ा ले गए ?—निष्फल क्रोध से उनके ओठ कांपकर रह गए, उन्होंने नीचे का ओठ दांतों से दबा लिया।

रामजीवन ने कहा, 'आपको भी मालूम नहीं था ?—यों साहब का दौरा होता है, तो बहुत पहले खबर दे देते हैं, पर आज तो एकाएक ही

चले गए !—क्या कहीं कोई एक्सीडेण्ट हो गया बड़े बाबू ?'

'नहीं, मुझे नहीं मालूम—'

'मगर इस रात को आप ?....'

'तब की नहीं मालूम, पर अभी एक एक्सीडेण्ट की खबर आई थी—अच्छा, क्या साहब बीमार सोम को भी अपने साथ ले गए हैं ?'

'जी नहीं—सोम बाबू तो यहीं है, साहब गए तो अकेले ही हैं। ताज्जुब यही है कि सोम बाबू की तबियत आज कुछ ज्यादा खराब थी, तब भी साहब चले गए।'

हूं !—तो मालूम देता है, कमला को ही घर का इन्चार्ज बना गए हैं। यह तो बड़ा ही अच्छा अवसर है। यों कपूर की बड़ी भारी बाधा थी, यद्यपि उस बाधा से ही निबट जाने का उनका संकल्प था।

'तो मैं ज़रा सोम बाबू को ही देख लूं ! शिब्बू तो है न ?'

'जी हां ! बाहर बरामदे में ही पड़ा होगा !—रामजीवन जानता है कि नटनागर सोम के अभिभावक जैसे रह चुके हैं। सोम बीमार है, यह तो वह जानता है, पर इस बीमारी में ही साहब किसके भरोसे उसे छोड़ गए, यह वह नहीं जानता। रेलवे की कुछ नौकरी ही ऐसी होती है कि इच्छा होने पर भी अपने-परायों के ख्याल को बाला-ए-ताक रख देना पड़ता है, यह मजबूरी छोटे कर्मचारियों ही की नहीं, कपूर साहब जैसे बड़े अफसरों की भी है !—यही सोचता हुआ वह अपनी फाटक की ओर रवाना हो गया।

सोम की तबियत आज कुछ अधिक ही खराब थी, किन्तु जैसे ही उसे मालूम हुआ कि आण्टी आज उसके पास रह सकेंगी, तो उसे बड़ा सन्तोष हुआ। कमला भी प्रातःकाल ही से बिना नहाए-खाए सोम के पास ही बैठी रही। कपूर साहब ने व्यवस्था कर दी कि सोम की तबियत खराब है, इसलिए कोई भी उसके कमरे में न जाए, जब तक कि किसीकी आवश्यकता न हो। केवल शिब्बू ही वहां पर तैनात था, उसे भी हिदायत दे दी गई थी कि वह कहीं जाए नहीं, कोई पूछे तो कह दे रात से ही

सोम की देख-रेख के लिए एक नर्स की व्यवस्था की गई है। उसके खाने-पीने सबकी व्यवस्था सोम ही के कमरे में कर दी जाए! स्कूल की प्रधान अध्यापिका को सभी पहचानते हैं, यदि शिब्बू उनका सच्चा परिचय किसी-को देगा तो सम्भव है, कोई जान-पहचान वाला नौकर ही उनसे बात करने के लिए पहुंच जाए, और इस तरह सोम की निगहबानी में तथा उसकी शांति में अड़चन पैदा हो।

कमला ने हाथ-मुंह धोकर किसी तरह एक कप चाय तो पी, पर खाना-वाना उससे कुछ भी खाया नहीं गया। सोम को लेकर आज के दिन उसे अपने समस्त जीवन की साध मिटा लेनी है, फिर संध्या को ही अंधेरा होते ही किसी तरह वह आठ की गाड़ी पकड़ लेगी—उसका भविष्य अब उसके हाथ में नहीं है।—उसे एक नये जीवन का शिलान्यास करना है।

दिन भर वह उसी कमरे में कैदी की तरह बैठी रही। सवेरे और शाम डॉक्टर आया, तब वह पास के कमरे में जा बैठी, ओषधि की व्यवस्था के बारे में शिब्बू को समझाकर वे चले गए, तो पुनः सोम का छाती से लिपटाकर वह वहीं सो गई। बुखार में ग्रस्त सोम मां की उस वात्सल्यमयी अपरिचित छाया को पाकर बड़े संतोष में सो गया। शरीर से बीमार रहकर भी मन से वह बड़ा हल्का-फुल्का हो गया। सवेरे उसने कल्पना भी नहीं की थी कि अमित विडम्बना से भरा हुआ आज का यह दिन वह किसी तरह बिता सकेगी, किन्तु इसी व्यस्तता में जब संध्या होने लगी तो उसका हृदय फिर धड़कने लग गया; चाहे जितनी क्षणिक रही हो, प्रेम की इस परिव्याप्ति का अनुभव करने के बाद एक निविड़ अनिश्चय में उसे अपने आपको प्रवाहित कर देना है, इसके सिवा कोई चारा भी तो नहीं। सोम बीमार है, पर वह क्या कर सकती है?—कपूर साहब ने जन्म से ही उसका भार सम्हाला है। उसके लिए तो वह बात एक स्वप्न की बात से अधिक नहीं है, फिर सोम की दुश्चिन्ता करने से उसके लांछन की तो सीमा नहीं रहेगी। नहीं, अब अधिक सह सकना

उसके लिए सम्भव नहीं है।

संध्या को साढ़े पांच बजे कपूर साहब लौटे तो देखकर उन्हें आश्चर्य हुआ कि मां-बेटे दोनों गम्भीर निद्रा में इस दुनियां की सारी चिन्ताओं को भुलाकर बेसुध हैं। किन्तु कमला के मुंह पर एक म्लान छाया भी उनकी दृष्टि से छिपी नहीं रही। वह उन्हीं रात्रि के कपड़ों ही में थी, शृंगार-प्रसाधन की कौन कहे उसने स्नान भी नहीं किया था। सवेरे केवल एक कप चाय सोम के अनेक अनुरोधों के कारण अवश्य उसने पेट में किसी तरह डाल ली थी—उसके इस दिशाहारा रूप को देखकर कपूर साहब का मन भी भर आया। जब उन्होंने सोम का ज्वर देखने के लिए उसका हाथ अपने हाथ में लिया तो उन्हें डर-सा लगा। तभी एक अव्यक्त प्रेरणा-सी पाकर उन्होंने अपना हाथ कमला के भाल पर भी रखा—कमला चौंककर उठ बैठी।

'आपने मुझे जगाया नहीं ?—कब से आए हुए हैं आप ?'

'घबराओ नहीं—अभी ही आया हूं। देखता हूं तबियत तो तुम्हारी भी ठीक नहीं है।'

कमला ने उत्तर नहीं दिया, वह पलंग पर से नीचे उतर गई, और दूसरे कमरे की ओर जाते हुए बोली, 'मुझे धोखे में डालने का कोई प्रयोजन नहीं है मिस्टर कपूर।—हां, सोम की तबियत अवश्य खराब है; पर अब आप आ ही गए हैं—मेरा दायित्व अब शेष हो गया। आप जाने, आपका पुत्र जाने। मैं आज आठ की गाड़ी से चली जाऊंगी—दूर, जहां मेरी किस्मत मुझे ले चली जाए !—' कपूर साहब सोम की ओर सतृष्ण नेत्रों से देखकर उसकी ओर बढ़े, तो वह बोली, 'नहीं—मुझे मत छूइए ! मुझे छोड़ दीजिए—मेरे मार्ग से दूर हट जाइए, मुझसे आप कुछ नहीं पा सकेंगे—कुछ नहीं !'—और कमला ने उस कमरे में जाकर भीतर से दरवाजा बंद कर दिया।

मस्तक को हाथ में थामकर मिस्टर कपूर सोम के पास आ बैठे। नींद ही में सोम ने कहा, 'मम्मी !' पर वहां था ही कौन ?—कपूर ने

एक बार सोम की ओर देखा, बंद आंखों पीड़ा से हिलते हुए चेहरे को देखा, और दूसरी बार उस कमरे के रुद्ध दरवाजे पर ! उनका दिल भीतर ही भीतर फफक-फफककर रोने लगा; सारी दुपहरी उन्होंने कमला के रंजित ऐश्वर्य को अपनी पत्नी के रूप में पाने की कल्पना की है, इस समय वे सोच रहे हैं, पत्नी न सही, अब इस उतरती अवस्था में उन्हें चढ़ती जवानी का आधार न भी मिले तो क्या ?—किन्तु क्या इस निरीह बच्चे को मां भी नहीं मिलेगी ?—अवश्य ही कैसी शांति है इसके चेहरे पर मां का आश्रय पा जाने के कारण !—दो घंटे और हैं, फिर जाने कहां होगी वह हतभागिनी, और जाने क्या होगा इस मातृ वत्सल लड़के का !—मां का अपराध हो, बाप का हो, पर इस अबोध बालक का क्या अपराध है कि इसे यह दुःख देखना पड़ रहा है।—क्या करें वे ?

तभी उन्हें एक विचार आया। यदि इस लड़के को इसी अवस्था में कमला के भरोसे छोड़कर वे बाहर चले जाएं, तो क्या कमला को इसके प्रति कुछ ममता न होगी ? क्या इसी हालत में इसे छोड़कर कमला चल देगी ?—मां है आखिर—बेटा इस तरह घने अस्वास्थ्य में निस्सहाय-निरुपाय पड़ा हो, तो राह चलता भी उसे अपने भाग्य पर नहीं छोड़ देता। अभी ट्रॉली से वे जा सकते हैं, फिर यदि कमला चली गई, तो सूचना उन्हें मिल ही जाएगी। किसी भी दूसरी ट्रेन से वे शीघ्र ही लौट आ सकते हैं। इसके सिवा और कोई उपाय उन्हें नहीं दिखाई देता।

लम्बी सांस लेकर कपूर साहब उठे, और रुद्ध दरवाज़े के पास खड़े होकर उन्होंने कहा :

'तुम्हें मुझसे भय हो रहा है, देखकर बड़ा दुःख होता है कमला ! तुम्हारी इच्छा के विपरीत तो मैं कुछ करना चाहता नहीं हूं। तुम जाना ही चाहो, तो तुम्हें कौन रोक सकता है ?—यदि तुम्हारा बीमार पुत्र भी तुम्हें नहीं रोक सके तो मैं तो एकदम अन्य पुरुष हूं ! पर मेरी असहायता को तुम नहीं जानतीं शायद ! मैं अभी जा रहा हूं, इसी समय—एक भयानक दुर्घटना की सूचना मिली है। जाने के पहले सोम को देख जाना

चाहता था। आशा थी कि तुम्हें उसके निकट पाकर निश्चिन्त होकर कर्तव्य-मार्ग में जा सकूंगा। जाना तो पड़ेगा ही, मन चाहे निश्चिन्त हो या न हो! सोम के बारे में चिन्ता करके भी क्या कर सकूंगा?—यदि परमात्मा ने उसके भाग्य में कोई गूढ़ लेख लिख ही दिया है, तो उसे कौन अन्यथा कर सकता है!—और आज ही का क्या—कई रात्रियां तो उसे शिब्बू के भरोसे ही काटनी पड़ी हैं। फिर भी जिस आनन्द और सन्तोष के साथ अभी-अभी वह 'मम्मी' पुकार कर तकिए को छाती से लिपटाए सो गया है, उससे मोह जाग जाना स्वाभाविक है।—यदि रह सको तो आज की रात और किसी तरह रह लेना—मुझे शायद एकाध दिन से अधिक भी लग जाए। पर बाध्य करने का मुझे अधिकार ही क्या है!—अच्छा चलता हूं, पर चलने से पहले तुमसे क्षमा मांग लेना शेष रह जाता है! आशाओं को सभी पालते है! मैंने भी पाली थीं, इन्हीं कुछ घण्टों के लिए! आशाओं के सपने रेत के महल से कम नहीं होते, उससे केवल बनाने वाले की बुद्धिहीनता का ही परिचय मिलता है!—तो मैं जा रहा हूं—परमात्मा तुम्हें प्रसन्न रखे!'

दरवाज़े के पास ही खड़ी-खड़ी कमला ने सब कुछ सुना, यद्यपि उत्तर उसने कुछ नहीं दिया—उसने अनुभव किया कि बोलते-बोलते ही कपूर साहब की वाणी बाद में रह-रहकर कांपने लग गई थी। पर उसने अपने मन का दरवाज़ा और भी शक्ति से बन्द रखा। कपूर शायद चले गए, अब कोई आहट उस कमरे से नहीं आती। वह वहीं दरवाज़े पर बैठ गई बल्कि कटे हुए वृक्ष की शाखा के समान निरवलम्ब गिर पड़ी। आंखों में उसकी अश्रु छलछला आए।

कुछ समय इसी तरह बीता कि सोम ने पुनः आवाज़ लगाई। इस बार वह जाग उठा था, उसने कहा, 'आॅण्टी?' कमला उठ बैठी, पर उसने कोई उत्तर नहीं दिया। शायद कपूर साहब उसके पास पहुंच गए हों। जाने का उन्होंने केवल उसे फुसलाने के लिए कहा है, कौन बाप अपने इकलौते लड़के को इस हालत में छोड़कर बाहर चल देगा?—पर,

आश्चर्य क्या है ?—उस जैसी मां उसे छोड़कर जाने को बैठी है, तो बाप ही क्यों अपवाद हो ?—पर नहीं, कोई दुर्बलता उसे नहीं घेर सकती !—वह तो सब कुछ त्यागे बैठी है।

'पापा ?' फिर सोम की करुण आवाज सुनाई दी—तो क्या सचमुच कपूर साहब चले गये ?—या कहीं छिपकर उसकी परीक्षा ले रहे हैं ?—वह क्या इतनी जल्दी हार खा जाएगी ?—नहीं-नहीं,—उसने कुछ नहीं सुना। शायद वह उसके कानों का भ्रममात्र था।

किन्तु तभी मानो सोम पलंग से नीचे उतरकर पुकार उठा—'शिब्बू ?'—आवाज़ ज़रा जोर से दी गई है, किन्तु उससे गले की शक्ति का उपहास ही प्रतिपादित होता है। सचमुच कपूर साहब नहीं हैं, और लड़का पलंग से नीचे उतर आया है। वह कमज़ोर, चलने-फिरने की मनाही है उसे, यदि कहीं गिर पड़ा ?—और कमला ने मानो सुना सचमुच ही कोई उस कमरे में फर्श पर गिर पड़ा है। उसकी कराह भी उसे सुनाई दे गई है। वह उठी—वह नहीं रोक सकी अपने आपको, उसने दरवाजे की चटखनी खोली।—उधर से भी इसी तरह शिब्बू ने दरवाजा खोला। दोनों ही भागे हुए-से आगे बढ़े। सचमुच सोम नीचे गिर पड़ा था, और अपनी हथेली में मुंह को छिपाए अपनी सिसकियों को दबाना चाह रहा था।

कमला ने उसे उठाकर गोद में ले लिया, बोली—'क्या हुआ सोम ?' मैं हूं—आॅण्टी !'

'आॅण्टी, तुम कहां थीं ? मुझे बड़ा बुरा सपना दिखाई दिया है।'

'घबराओ मत बेटा। सपना तो झूठा हुआ करता है। मैं तुम्हारे पास हूं।'—और उसने उसे अपनी छाती से चिपटा लिया। दोनों की आंखों में आंसू थे।

शिब्बू केवल खड़ा देखता रहा।

तभी कमला की दृष्टि उसपर पड़ी। उसने पूछा—'साहब कहां गए ?'

'कह नहीं गए आपसे ?—उन्हें तो बहुत जरूरी काम से अभी दौरे

पर जाना पड़ा है। गाड़ी का समय नहीं है, इसलिए ट्रॉली लेकर गए हैं।'

'हूं।'—कहकर कमला ने शिब्बू को बाहर जाने का इशारा किया। शिब्बू बाहर चला गया।

—सो, आठ बज गए, और कमला सोए हुए सोम का सिर अपनी गोदी में लिए बैठी रही, उसे समय का ध्यान भी नहीं रहा। और फिर नौ भी बजे, दस भी बजे—समय बीतता रहा।—वहीं फर्श पर उसे कब नींद आ गई, यह भी वह नहीं जान सकी।

एकाएक किसीके पुकारे जाने की आवाज़ सुनकर वह चौंक उठी। कमरे में पूर्ण अन्धकार छाया हुआ था, कहीं पर भी रोशनी का नाम नहीं था। सोम उसके पास ही फर्श पर सोया हुआ था। शायद रात को कभी वह जाग उठा है और आकर उसके गले से चिपटकर लेट गया है। नीचे दरी है और उसपर काफी मोटा गलीचा! बिछौने की ज़रूरत नहीं है, फिर भी बेचारा सोम नीचे ही सो गया है, देखकर उसे कष्ट हुआ। हाथ बढ़ाकर देखा, पलंग अधिक दूर नहीं है। उसने सोम को बाहों में उठाकर पलंग पर लिटा दिया, चाहती थी कि सिरहाने कहीं स्विच की खोजकर हो सके तो हलका प्रकाश कर दे, किन्तु तभी बाहर से पुनः आवाज़ आई 'शिब्बू!' आवाज़ जरा कठिन थी, कमला का हृदय एकाएक कांप उठा—आवाज़ तो पहचानी हुई है! वह सोम को पलंग पर सोया छोड़कर, दरवाजे के पास परदे के पीछे जाकर सुनने लगी!

शिब्बू की नींद बड़ी गहरी है। एकाध आवाज से उसे जगाना सभव नहीं है। नटनागर को यह भी इष्ट नहीं था कि हल्ला करके भीड़ जमा कर लें। इससे उनके उद्देश्य की सिद्धि न होती। शिब्बू सोया हुआ तो है ही यदि केवल वे यह जानते होते कि वह पापिनी कुलटा कहां है, तो शिब्बू की यह गहरी नींद उनके लिए वरदान ही हुई होती।—यों, शायद इन्हीं-में से एक कमरा है, यह वह जानते थे, किन्तु दरवाज़ा बन्द भी तो होगा! शिब्बू ही तो जागकर दरवाजा खुलवा सकता है! नटनागर ने कन्धों से

पकड़कर शिब्बू को जगा दिया। शिब्बू ने आंखें मसलते हुए कहा—'कौन ?'

'मैं हूं।'

शिब्बू ने अंधेरे में पहचाना नहीं। बोला—'कौन रामजीवन ?'

'रामजीवन नहीं, मैं नटनागर ···'

'बड़े बाबू ?—' और फिर हड़बड़ाकर उठ बैठते हुए बोला—'सलाम बड़े बाबू—साहब तो शाम ही को···'

'वह मैं जानता हूं ! मैं सोम को देखने के लिए आया हूं।'

'सोम बाबू इस कमरे में हैं—और—' शिब्बू को याद आया कि स्कूल की मास्टरनी बाई भी तो यहीं है। मास्टरनी बाई यानी नटनागर साहब की बीवी !—सो उनका नर्स कहकर परिचय तो दूसरों को देना है, ये तो अपने ही आदमी हैं।—इनसे क्या छिपाव ? इसलिए उसने कहा, 'और, मेम साहब भी इसी कमरे में हैं।'

'हूं।'—नटनागर का दिल धड़कने लगा, आंखें उस अंधेरे में ही सुर्ख होकर चमकने लगीं। उधर परदे के पीछे खड़ी कमला को पैरों तलों धरती खिसकती मालूम दी।

किन्तु जैसे न जानते हुए नटनागर ने फिर पूछा—'मेम साहब ?'

'जी—आज स्कूल भी नहीं गईं, सवेरे से यहीं हैं ?'

'सवेरे से ?—या रात····अच्छा, दरवाज़ा खोल !—साहब मुझसे कह गए हैं कि सोम की खबर लेता रहूं।'

दरवाज़ा खोलकर शिब्बू ने कहा, 'ठहरिए जरा, मैं उन्हें जगाकर लाइट लगा देता हूं।'

नटनागर दरवाजे पर आकर खड़े हो गए, ताकि कोई भीतर से निकलकर बाहर न आ सके। शिब्बू भीतर चला आया, और वहीं से बोला, 'मेम साहब !'

कमला पीछे हट गई थी, अपने पलंग के पास आकर धीरे से उसने कहा, ताकि नटनागर सुन न सकें···

'जा हल्की लाइट लगा दे, और उन्हें भीतर आ जाने दे। दरवाज़ा बन्द कर देना, ठण्डी हवा न लग जाए सोम को। उनसे कह देना शोर न मचाएं।'

शिब्बू ने हल्की नीली रोशनी का स्विच दबा दिया। फिर परदे के बाहर जाकर जो कुछ सूचना कमला ने दी थी, उसे उसने नटनागर से कहकर परदे को जरा हटा दिया। नटनागर भीतर प्रविष्ट हुए। शिब्बू ने दरवाज़ा बन्द किया, तो नटनागर ने चिटखनी भी बन्द कर देनी चाही, पर उसे एकाएक दिखाई नहीं दिया तो फिर परदे ही को ठीक तरह से खींचकर वे मध्य कमरे तक बढ़ते चले आए।

कमला नीची गर्दन किए हुए सोम के पास बैठी थी, सोम घनी नींद में बेसुध था।

पास आकर नटनागर ने कहा, 'सो अपने यार का मोह छोड़ा नहीं जा सका! पर आज जब कि पंछी ही कहीं उड़ गया है, तब भी तुम्हें घर जाने की फुरसत नहीं? या अब यहीं रैन-बसेरा करना है?'

'तुम मुझे गलत समझ रहे हो।'

'ओह! शायद कपूर साहब की गोद में तुम्हें लेटी हुई देखता'···

कमला उठ खड़ी हुई। उसने कहा, 'शिब्बू ने नहीं कहा कि तुम्हें शोर नहीं मचाना है?'

'मैं शिब्बू का नौकर नहीं हूं···'

कमला दूसरे कमरे की ओर बढ़ी, नटनागर ने लपककर उसका हाथ पकड़ते हुए कहा, 'चली कहां? भाग नहीं सकेगी मुझसे····'

'भागना नहीं चाहती! उस कमरे में जा रही हूं, तुम्हें जो कुछ पूछना हो वहीं पूछना।'

'गुण्डों को छिपा रखा है वहां?'

कमला ने हाथ छुड़ा लिया, 'वह तो मेरे पीछे ही है।' तभी वह पास के कमरे के दरवाजे पर पहुंच गई। दरवाजा बन्द न था, परदे को

नटनागर ने कहा, 'देखता हूं कि परसों—या कल ? जिस साड़ी को पहनकर सोई थी, उसीमें भागी चली आई हो। सिंगार का भी मौका नहीं मिला ! क्या ऐसी मुरली सुनाई पड़ गई थी ?'

कमला पलंग के ऊपर बैठकर बोली, 'इस कुर्सी पर बैठ जाओ—धीरज के साथ जो कुछ पूछोगे उसका जवाब दूंगी।'

'देखता हूं—सारे घर की मालकिन बन गई हो।' नटनागर कुर्सी पर नहीं बैठे। आए और पलंग की पीठ का तख्ता पकड़कर खड़े हो गए ! बिल्कुल कमला के शरीर से सटकर। कमला ने नटनागर के चेहरे की ओर देखा। साढ़े चार फुट की ऊंचाई, कमला पलंग पर बैठी हुई। दोनों की सांस आपस में टकरा गई। कमला ने कहा—'क्या पीकर आए हो ?'

'क्यों नहीं ? तुम अपने यार की मतवाली आंखों की शराब पियो, और मैं बोतल की शराब भी न पी सकूं ?'

'क्या ऊलजलूल बक रहे हो ! होश है तुम्हें, तुम कहां हो ?'

'मुझे बहुत होश है बीवी जान ! मैं हूं मेरी बीवी के यार के घर में ! मैं यह जानने के लिए आया हूं कि तुमने इतने दिनों तक मुझे धोखे में क्यों रखा ?'

'मैंने तुम्हें कभी धोखे में नहीं रखा ! जो कुछ तुमने पूछा उसका ठीक जवाब मैंने सदैव ही दिया है। बल्कि यदि याद हो तो मैंने यह भी प्रस्ताव किया था कि यदि तुम तलाक चाहते हो तो मैं हर तरह से तुम्हारी सहायता करूंगी, चरित्रहीनता का आरोप स्वीकार करके भी। और क्या चाहते हो मुझसे ?'

'बहुत कुछ ! मैंने तुमसे शादी इसलिए नहीं की, कि तुम इस तरह मुझे अंगूठा दिखाकर जिसपर मन ललचाया, उसके घर में बैठ जाओगी। मेरी भी प्रतिष्ठा है, चार आदमी मुझे भी जानते हैं।'

'मैं किसीके घर में नहीं बैठी।'

'ओह ! तो यह तुम्हारे बाप का घर है शायद।'

'अफसर बाप के बराबर ही होता है।'

'पति से छिपाकर बाप से मिलने के लिए आना होता है ?'

'मैं सोम से मिलने के लिए आई थी।'

'सोम से मिलने के लिए ? भला क्यों ? वह पीहर के पक्ष में तुम्हारा क्या लगता है ?'

'वह मेरे पुत्र के समान है।'

'पुत्र के समान ! हाऽ हाऽ हाऽ—इसीलिए तो कि वह कपूर साहब का पुत्र है ! है न ? कपूर साहब के पास काफी ऐश्वर्य है, धन है, प्रतिष्ठा है, और अभी-अभी मिसेज़ कपूर ने मरकर सुविधा भी पैदा कर दी है ! इतना कहने पर भी मुझे विश्वास करने को कहती हो ?'

'सोम मेरा पुत्र है।'

'प्रकारान्तर से वह हुआ है। यह मैं भी कहता हूं—मैं तुम्हें दुनिया के सामने चौचन्द करके दिखा दूंगा।'

'तुम नहीं जानते, वह सचमुच मेरा पुत्र है। बम्बई में मैंने जो कहा था कि मुझे मृत संतान हुई है, वह बात मिथ्या है ! मृत सन्तान हुई थी मिसेज़ कपूर के !'

'और एक मिथ्या का आश्रय लेना चाह रही हो ? मैं अधिक भुलावे से आने वाला नहीं हूं। मैं जानता हूं कि तुम कहानी गढ़ने वाले की भी अंकशायिनी रह चुकी हो।'

'तुम्हें लज्जा नहीं लगती मिथ्यापवाद लगाते हुए—अपनी ही पत्नी के ऊपर ?'

नटनागर हंस पड़े—'अपनी ही पत्नी के ऊपर ? पत्नी, जो अपने ऊपर निज के सत्यापवाद लगाने में लजाती नहीं। मुंह पर लगी हुई इस कालिख को अपनी ही आंखों नहीं देखा जा सकता, तो क्या दूसरों की जबान सुन भी नहीं सकतीं ?'

'कह चुकी हूं कि सोम मेरे पेट की संतान है। शायद अपने दोस्त

कुछ नहीं कहना है, यदि तुम मुझे चौचन्द करना ही चाहते हो तो वह रास्ता तुम्हारे लिए खुला हुआ है।'

'मेरा रास्ता तो बहुत खुला हुआ है श्रीमती जी! मेरा रास्ता खोलने की स्पर्द्धा तुम्हारी नहीं हो सकती। पर अगर यह छोकरा सचमुच ही तुम्हारी सन्तान है! शायद सच ही हो—उसकी आंखों में तुम्हारी आंखों की झलक शायद पकड़ी भी जा सकती है। लेकिन कपूर की झलक को भी तो वह अपने चेहरे में छिपाए हुए है! तो क्या तुम्हारे ताल्लुकात इतने पुराने हैं?'

कमला उठ खड़ी हुई, बोली 'तुम इतने नीच हो जाओगे, इसकी मैंने कल्पना भी नहीं की थी। मैं तुमसे बात करना नहीं चाहती।' और वह वहां से जाने के लिए उद्यत हो उठी।

नटनागर ने उसका हाथ पकड़ लिया, 'जाती कहां हो परी?'

'छोड़ो मेरा हाथ, नहीं तो मैं चिल्लाती हूं।'

'गैर मर्द नहीं हूं। फिर भी हाथ छोड़ देने से ही क्या होगा। जानती हो, आज मैं अन्तिम फैसला करने के लिए तैयार होकर आया हूं।'

'पर अन्तिम फैसला अभी नहीं हुआ क्या?'

'कहां....'

'कल ही, जब उस शून्य रात्रि में मैंने उस घर की देहलीज से बाहर पैर रखे।'

'पर मेरे मन की देहलीज के बाहर तो पैर नहीं रखे।'

'मैं तुमसे नफरत करती हूं।'

'मगर मैं नहीं...'

तभी मालूम दिया पास के कमरे से आवाज़ आई 'ऑण्टी?'

'आई सोम!' कहकर कमला ने हाथ को झटका दिया, वह छूट गया, और वह आगे बढ़ी, इसी बीच उसकी साड़ी उसके सिर से खिसक गई थी। नटनागर ने उसे पकड़ने के लिए हाथ बढ़ाया। कमला की वेणी उनके हाथ में आ गई। कमला रुक गई।

कमला ने दर्प के साथ कहा, 'छोड़ो मुझे !'

'इधर देखो। फिर कहना मुझसे छोड़ने के लिए।' कमला ने तनाते हुए बालों को किसी तरह सहकर गर्दन मोड़ी। पास के कमरे में से आती हुई हलकी रोशनी के प्रायान्धकार में कमला ने देखा कि नटनागर के हाथ में छुरा तना हुआ है। वह घबरा अवश्य उठी पर उसने चेत न खोया। बोली, 'तो यह करना चाहते हो ? लो, इतना समय क्यों व्यर्थ बर्बाद किया ?'

'आँण्टी ! तुम किससे बातें कर रही हो ?' उस कमरे से सोम ने कहा।

'कुछ नहीं सोम ! तुम सोए रहो····' फिर नटनागर से कहा, 'लो, अपनी साध पूरी कर लो, शीघ्र, ताकि वह निरीह बच्चा एकाएक समझ न पाए।'

'इतने सस्ते कैसे छूट जाना चाहती हो ?' और कमला ने देखा कि उधर सोम पलंग पर से नीचे उतर रहा है, और इधर नटनागर की आंखों में एक शैतानी चमक रही है। वे बोले, 'तुम्हारी आंखों के सामने तुम्हारे पाप का यह फल पहले नष्ट होगा, फिर तुम !' और कमला को छोड़कर वे सोम की ओर बढ़े !

कमला चिल्लाई, 'सोम ! शिब्बू के पास भाग जाओ। मेरे पास न आओ। यह हत्यारा है !' और उसने बढ़ते हुए नटनागर की पैंट को कमर से पकड़कर खींचा, साथ ही वह चिल्लाई 'शिब्बू, शिब्बू--बचाओ !'

नटनागर ने रुककर कमला को एक लात मारी, उनका पैंट छूट गया। सोम किंकर्तव्यविमूढ़-सा सकते की हालत में जहां खड़ा था, वहीं खड़ा रहा, पर तभी शिब्बू ने परदा ठेलकर भीतर प्रवेश किया। नटनागर इस कमरे में आ चुके थे। कमला दरवाज़ा पकड़कर खड़ी हो गई, चोट उसके कोमल जगह पर लगी, उसे चक्कर आने लग गए थे।

नटनागर ने कहा, शिब्बू को लक्ष्य करके, 'तुम बाहर चले जाओ --यह मियां-बीवी का झगड़ा है। यदि शोर-गुल किया तो तुम्हारे साहब

की इज्ज़त मिट्टी में मिल जाएगी।' छुरे वाला हाथ उन्होंने पीठ के पीछे छिपा लिया था।

शिब्बू रुक गया, बात तो सच है, मियां-बीवी की लड़ाई में उसे बोलना नहीं चाहिए। और बीवी ऐसी भी क्या कि रात-रात भर दूसरों के घर पड़ी रहे। पर उसे रुका हुआ देखकर सोम ने कहा, 'नहीं शिब्बू, इन्होंने आॅण्टी को मारा है।'

नटनागर ने कहा, 'तू ठहर कुतिया के पिल्ले !' और वे उसकी ओर लपके, पर तभी पीछे से कमला सम्हलकर आगे बढ़े, उसके पहले ही शिब्बू ने उनका इरादा समझकर नटनागर को पकड़ लिया। दोनों ही आपस में उलझ गए—सोम भागकर दरवाजे में आॅण्टी के पास खड़ा हो गया।

नटनागर ने कहा, 'शिब्बू ! मेरे पास छुरा है, मौत के मुंह में जाना चाहता है ? यह देख····' और उन्होंने छुरे वाला हाथ ऊपर उठाया, किन्तु तभी सोम को एक ओर धकेलकर कमला आगे बढ़ी, सोम चिल्लाया लेकिन शिब्बू और कमला दोनों ही जानते थे कि चिल्लाने की आवाज़ से कोई लाभ नहीं है। बंगले के कुछ नौकर साहब के ट्रॉलीमैन थे। चूंकि साहब ट्रॉली से गए थे, इसलिए शिब्बू और रामजीवन को छोड़ कोठी में और कोई न था। रामजीवन को भी सिवा उसके कुत्ते के कोई नहीं जगा सकता, यदि वह सोया हुआ हो। अभी वह सोया नहीं है, पर वह और दादू दोनों ही उसकी कोठरी में बैठे बातें कर रहे हैं। आगे बढ़ने के प्रयत्न में इस बार दादू कुत्ते की पहुंच से न बच सका। रामजीवन उसे जानता था, बोला, 'क्या बड़े बाबू के साथ आए हो ?'

'हां !' के सिवा दादू कह ही क्या सकता था ?

'वे सोम बाबा को देखने गए हैं ! लो आओ, यहीं बैठें !'

दादू नटनागर का पीछा करना चाहता था, पर अब क्या बहाना करे ? उसने कहा :

'उधर कोई है ?'

'शिब्बू है न ! वही तो बाबा की देखरेख करता है।'

—तो कोई है ज़रूर ! यदि कुछ बात हुई तो शिब्बू सहायता करेगा ही। फिर रामजीवन शायद कुछ जानता हो, उससे बातें करके दादू कुछ कमला के बारे में मालूम कर सकेगा। इसके सिवा और दादू के लिए चारा ही क्या है ? कम से कम, रामजीवन की बात से उसे यदि खतरे जैसा कुछ लगा तो वे एक से दो तो हैं ही !

कमला ने सोम से कहा, 'सोम ! तू उस कमरे में चला जा !' पर सोम गया नहीं, वह देखता रहा उसी ओर सांस रोके। पर कमला ने आगे बढ़कर नटनागर का छुरे वाला हाथ पकड़ लिया था।

छुरे की बात सुनकर शिब्बू का डर जाना स्वाभाविक था। प्राणों का मोह किसे नहीं होता ! और फिर नटनागर ठहरे बड़े बाबू ! कुछ झिझक उसके मन में पहले ही थी। कमला ने जैसे ही नटनागर का हाथ पकड़ा, नटनागर का क्रोध और भी बढ़ गया, 'बोले, ओह ! तो यह रण्डी भी अब चण्डी बनना चाह रही है !'

उन्होंने हाथ को झटका दिया पर कमला ने हाथ नहीं छोड़ा। शिब्बू को ढीला पड़ा देखकर नटनागर ने कसकर उसके एक लात मारी, नटनागर को लिए शिब्बू जमीन पर आ रहा, पर तभी उनके छुरे वाले हाथ को कमला ने जोर से काट खाया। कलाई पर दांत गड़ने से खून उभर आया। छुरा छूट गया—नटनागर शिब्बू से छूटकर उठे, उसके पहले छुरा लेकर कमला दूर हट गई, शीघ्रता से उसने छुरे को पास ही अन्धेरे में पड़ी हुई एक अलमारी के नीचे छिपा दिया।

शिब्बू को छोड़कर नटनागर कमला पर दौड़े, कहते हुए 'अपने यार को बचाने का मजा चख ! जो जिन्दगी में कभी नहीं किया, वही आज करूंगा, तू भी समझ ले कि आदमी यदि माफ कर सकता है, तो वह बदला भी ले सकता है।'

कमला ने आशा नहीं की थी कि नटनागर, टी० बी० से आक्रान्त, साढ़े चार फुट का आदमी, इतना खूंखार हो सकता है। जाने कहां से

आज उनमें शैतान की ताकत आ गई थी। मालूम पड़ता था मानो सारी सृष्टि को शेष करके वे स्वयं भी शेष हो जाएंगे। इसी बीच आगे बढ़कर विमूढ़ खड़ी कमला के मुंह पर ढीले हाथ का एक भयानक तमाचे का आघात लगा। उसे चक्कर आने लगे, केवल उसने यही सुना :

'कहां है छुरा हरामजादी ?'

फर्श पर गिरती हुई कमला का हाथ पकड़कर उन्होंने अपनी ओर खींचा, कमला उनके वक्ष से जा टकराई ! 'कहां छिपाया ? बोलती है या नहीं ?' कहकर उन्होंने उसकी ओर देखा, उसके चेहरे पर जो भी कुछ हो, नटनागर को मालूम दिया कि वह बोलेगी. नहीं, तो उन्होंने उसे धक्का दिया, वह फर्श पर आ गिरी। यदि फर्श पर गलीचा और दरी बिछे हुए न होते तो उसका सिर फूट जाता।

'क्यों रे शैतान ! तू जरूर जानता है बता—' कहकर नटनागर सोम की ओर दौड़े।

'अंकिल, डोण्ट हिट मी (मुझे मत मारिए) मैं बीमार हूं।' और वह रोने लगा।

इसी बीच शिब्बू उठ बैठा, उसने देखा और समझा कि बड़े बाबू होश में तो अवश्य नहीं ही हैं, पर हत्या करने पर भी तुले हुए हैं, और यदि उसने शीघ्र ही कुछ नहीं किया तो अभी किसीका खून हो जाएगा। सारी बात तो वह समझ नहीं सका, मियां-बीवी का झगड़ा भी हो, तो भी साहब के लड़के, इस बीमार सोम का क्या कसूर है ? तभी उसने देखा कि कमला को जमीन पर गिराकर नटनागर सोम की ओर बढ रहे है, वह उठा, और उस ओर बढ़ा।

'बता, कहां रखा है तेरी चुड़ैल मां ने छुरा ?' और उन्होंने एक तमाचा कसकर उस बीमार निरीह बालक के मुंह पर भी जड़ दिया, फिर दोनों बाजुओं से डरे हुए उस बच्चे को पकड़कर उन्होंने ऊपर उठा लिया। शायद उसे नीचे गिरा देने का उनका तात्पर्य रहा हो, शिब्बू ने पीछे से जाकर उनकी टांगों को इस तरह खींचा कि वे गिरते-गिरते

बचे। सोम उनके हाथ से छूटकर फर्श पर गिर पड़ा—गिरते ही बेहोश हो गया।

शिब्बू और नटनागर पुनः उलझ गए। शिब्बू नौकर था, किन्तु केवल बच्चे की देखरेख भर के लिए था, लड़ने-झगड़ने के लिए नहीं। नटनागर बीमार थे, तब भी इस समय उनपर शैतान सवार था। वे मरने के लिए ही घर से बाहर निकले थे, पर मरने के पहले सब कुछ शेष कर देना चाहते थे। प्रारम्भ में उनका लक्ष्य था कि चोर की तरह भीतर घुसकर कपूर तथा कमला दोनों ही को नींद ही नींद में खत्म करके स्वयं भी वहीं आत्महत्या कर लेंगे। यहां आने पर कपूर साहब गैरहाज़िर मिले, तो कमला ही सही—और भीतर जाने पर यह रहस्य भी जब उन्हें मालूम दिया कि यह सोम और कोई नहीं, कमला ही का वह पुत्र है, जो गर्भावस्था से ही उन दोनों के बीच में आ गया था, तो उनकी पुंजीभूत घृणा उसीके ऊपर उमड पड़ी। एक बार जिसको उन्होंने सचमुच प्यार किया था, आज उसीके प्राणों का ग्राहक होते उन्हें एक क्षण को भी असमंजस नहीं हुआ। जो सिर को कन्धे पर से उतारकर हथेली पर लिए घूमता है, उसके कन्धे काफी मज़बूत हो जाते हैं, वह किसी भी दूसरे के कन्धे का बोझ हलका कर सकता है। नटनागर में आज अशेष शक्ति है।

कमला अर्ध बेहोशी में पड़ी थी। उसने यह भी देखा कि नटनागर ने सोम को उठाकर फर्श पर पटक दिया है, उसे जब होश आया तो सबसे पहले उसे अनुभव हुआ कि सोम मर गया—वह उठी, विक्षिप्त-सी वह सोम की लाश के पास पहुंची और उसे अपनी गोद में उठा लिया। इसी बेहोशी में सोम ने अपने हाथों को कमला के गले में डालकर कहा—'ममी!'

तो सोम जीवित है! हे भगवान्! अब कमला को कोई भी चाहे तो मार सकता है, वह तैयार है। अभी उठकर वह नटनागर से कहेगी कि उसे मार डाला जाए! यदि वह नहीं मारते, तो वह स्वयं उस छुरे

को लेकर अपने सीने में भोंक लेगी। यदि उनका बदला समाप्त हो जाए तो वह सोम को छोड़ देंगे।

कमला को अब अधिक देर नहीं करनी चाहिए। यदि नटनागर की दृष्टि इधर पड़ गई तो बड़ा कठिन होगा। उसने सोम को नीचे सुला दिया, और उठी, अलमारी के नीचे छुपाए हुए छुरे को उसने उठाया, और एक हसरतभरी दृष्टि सोम के ऊपर डालकर वह उधर बढ़ी, जिधर नटनागर और शिब्बू मल्लयुद्ध में उलझे हुए थे। जीवन की विडम्बना तो देखो, कमला आत्महत्या को सबसे बड़ी कापुरुषता समझती थी, वही आज आत्महत्या करने जा रही है।

'गों-गों—ऽऽ'—यह क्या ?—कमला ने देखा कि शिब्बू नीचे पड़ा हुआ है, और नटनागर उसकी छाती पर पड़े हुए उसके गले को दोनों हाथों से दबाए जा रहे हैं, शिब्बू का दम घुट रहा है, उसकी आंखें फट गई हैं, जिनमें तारे ऊपर चढ़े चले जा रहे हैं। खुले हुए मुंह से जीभ कुत्ते की जीभ की तरह बाहर निकलती जा रही है। और शिब्बू की शिथिल पड़ती जा रही देह को लक्ष्य करके नटनागर कह रहे हैं :

'मर तू—कुत्ते की मौत।—देखता हूं अब कौन उस छोकरे को बचाता है।—छुरा न सही, यही तरीका क्या बुरा है।—देखे वह चुड़ैल—उसके पाप की सन्तान किस तरह कुत्ते की मौत मरती है और फिर मैं देखूंगा किस तरह सन्तान की हत्या को देखकर कांपे-सहमे हुए उस चुड़ैल के चेहरे से प्राण की आखिरी रोशनी बुझती है—मर तू···'

एक बार और गों-गों की ध्वनि-सी हुई, किन्तु नटनागर के मुंह से तभी—'ओह !' की ध्वनि हुई, और उनका हाथ शिब्बू के गले पर शिथिल हो गया—वे पीछे मुड़कर देख भी न सके, गिर पड़े फर्श पर, उनकी पीठ में छुरा और गहरे घुस गया—सीधे हृद्-यंत्र को छेदकर—कराहने का अवकाश भी उन्हें नहीं मिला। उनकी निर्जीव देह मात्र रह गई।

कमला ने देखा—यह क्या हुआ ?—उसके हाथ का छुरा कहां गया ?—उनकी पीठ पर, क्या यह उसीने किया है ?—उसीने उसके

पति की पीठ में छुरा भोंक दिया है ?—नहीं-नहीं, वह तो अपने ही सीने में छुरा भोंकना चाहती थी—फिर यह क्या हो गया ?—क्या हो गया ? —और वह भी बेहोश होकर नीचे गिर पड़ी, नटनागर की लाश के पास ही !

दादू ने कहा, 'रामजीवन !—बहुत देर हो गई बड़े बाबू को, ज़रा देख आएं न ?'

'अरे देर क्या हो गई, छोकरा बीमार जो है। सवेरे से एक नर्स बैठी हुई है।'

'नर्स ?—देखी है तूने ?'

'देखी किसने—वही शिब्बू कह रहा था।—बड़े साहब तो हैं नहीं, बड़े बाबू रात शायद यहीं रहें।'

'तो मैं पूछ आऊं ?'

'सो रह न, यहीं पर !—आएंगे तब जगा दूंगा ?'

'नहीं, मेरा मन नहीं मानता !....'

'तो जा देख आ—मैं यहीं बैठा हूं।—या मैं भी चलूं ?'

'क्या करेगा तू चलकर ?—मैं अभी आया।....'

—कहकर दादू उठा—और जैसे ही कमरे के आगे बढ़ा, उसके पैर कांपने लगे। सब कुछ शून्य मालूम दे रहा है। कहीं कोई हरकत नहीं मालूम देती। रात मानो स्वयं सोकर मृत्यु का वेश धारण कर चुकी है। कहीं साहब ने सब कुछ खतम तो नहीं कर दिया ? छुरा शायद वे वहीं रख आए थे। हाथ में तो उसने देखा नहीं था। फिर क्या हुआ ? इतनी मनहूसियत क्यों छाई हुई है ?'

बाईं ओर के दरवाज़े की सेंध में से हल्का-सा प्रकाश आ रहा है। ऊपर हवादान से भी मालूम दे रहा है कि रोशनी इसी कमरे में है ! उसने दरवाज़े पर कान लगाकर आहट लेनी चाही। फिर उसने दरवाज़े को ज़रा-सा खोला, वह सरलता से खुल गया। भीतर परदा ढंका हुआ था। कुछ और आगे बढ़कर दादू ने परदे को हटाया। भीतर बहुत हल्की

रोशनी थी। एकाएक दूर से दिखाई दिया कि फर्श पर सभी सोए हुए हैं। पर इस तरह बेतरतीबी से—उधर दूर—वह तो हिल रहा है—अरे कोई प्राणी, शायद साहब का लड़का—दादू परदे को ठेलकर आगे बढ़ा—अरे खून !—यह क्या ?—नटनागर साहब—यह पीठ में—आह वही छुरा है जिसे लेकर वे घर से निकले थे !—वह उसे खूब पहचानता है। अपने इकलौते हाथ को उठाकर उसने देखा, इसी छुरे की पहचान तो इस हाथ पर भी लिखी हुई है। इसीसे मारे गए ! दूसरों के लिए कुआं खोदकर खुद ही उसमें गिर पड़े। लेकिन मारा किसने ?—यह—यह तो शिब्बू है—क्या यह भी मर गया ?—दादू ने उसके नाक पर हाथ रखा—सांस चल रही है।—और—यह मेम साहब ?—ऐं—क्या ये भी मर गईं ?—मालूम देता है इन्होंने सबको मारकर—पर पीठ में उनकी छुरा, यह खुद वे कैसे मार सकते थे ?

दादू ने मेम साहब के नाक पर हाथ रखा। उनकी सांस भी ठीक तरह चल रही थी। तो क्या मेम साहब ने नटनागर को खत्म कर दिया ? क्यों ?—छुरा उनके पास कैसे पहुंचा ?

दादू ने आगे बढ़कर सोम को देखा, वह फर्श में मुंह छिपाए जाग रहा मालूम देता था। दादू ने देखा कि जीवित वह भी है, पर होश में नहीं है।

—एकाएक दादू को मानो होश आया ! यदि कोई अभी यहां आ जाए तो सिवा उसके किसे हत्यारा समझेगा ?—वह निर्दोष है, पर कौन सुनेगा उसकी बात ?—फांसी पर लटका देंगे उसे सहज ही !—नहीं, बड़े लोगों की बड़ी बातें ठहरीं। कोई आए, उसके पहले ही उसे भाग जाना चाहिए। आग जाने, लुहार जाने—और दादू मानो भागा—भागकर शीघ्र ही वह कमरे से बाहर निकल जाएगा। रामजीवन से कुछ कहने की ज़रूरत ही क्या है ?—यदि मौका मिला तो चोर-फाटक से वह बाहर निकल जाएगा—जल्दी में जैसे ही वह चला, रास्ते में नटनागर का शव और पास ही शव बनी कमला की देह पड़ी हुई थी।

दादू उन्हें उलांघ कर निकल जाता, पर उसका पैर छाती पर पड़े हुए कमला के हाथ से टकरा गया। शायद कमला जाग भी रही थी। उसने धीरे से कहा :

'दादू !'

—दादू के बढ़ते हुए पैर रुक गए, इस प्रकार की वह उपेक्षा नहीं कर सकता था।

'डरे मत दादू ! खून मैंने किया है ! पर देख तो—मेरा बच्चा—वह सोम····'

'वह ज़िन्दा है मेम साहब।'

'ज़िन्दा है ?—सोम मेरा !—दादू ज़रा मुझे सहारा देकर उठा दे। एक बार उसे देख लूं, फिर पुलीस को खबर कर दे ! खून मैंने किया है। और वह शिब्बू ?'

दादू ने कमला को हाथ का सहारा देकर बिठा दिया, और बोला 'सांस उसकी भी चल रही है।'

'तो डॉक्टर को भी बुलाता ला।···'

'मगर—आप जानती हैं !—अच्छा, मेरे कन्धे पर बैठ जाइए, अभी तो बहुत अंधेरा है।'

'भाग जाऊं ?—मगर किसलिए—किसलिए दादू ?—मुझे सोम के पास ले चल ! फिर पुलीस को खबर कर दे। देर मत कर।'

'लेकिन पुलीस वाले···'

'हां; फांसी की सजा देंगे।—मैंने खून जो किया है।'

दादू ने कमला के बढ़ाए हुए हाथ को पकड़ा, किन्तु कमला ने कुछ सोचकर पुनः अपना हाथ छुड़ा लिया। नटनागर की ओर देखकर उसने आंखें बन्द कर लीं, मानो उसके हृदय के भीतर से एक ज्वालामुखी फूट पड़ना चाहता था !

वह सरकती हुई आगे बढ़ी। नटनागर के सिर को अपनी दोनों बाहुओं में भरकर भावाबिद्ध-सी वह उस चेहरे की ओर देखती रही। उससे

अपने गालों को सटाकर वह शून्य में जाने क्या देखती रही। फिर उसने उस सिर को अपनी गोद में कर लिया। अनायास ही उसका हाथ पीठ में घुसा हुआ छुरा को लग गया, दादू सब कुछ देख रहा था, उसने शीघ्रता की। भावावेश में मेम साहब कहीं आत्महत्या न कर लें। उसने आगे बढ़कर छुरा उनकी पीठ में से खींच लिया। रक्त पहले ही सारे फर्श पर आसपास फैला हुआ था, छुरे के निकलते ही, रक्त का एक और फव्वारा छूट पड़ा—दादू के हाथ और वस्त्र भी रक्ताक्त हो उठे!

उठकर दादू ने कहा—'मेम साहब, हत्या आपने नहीं की; हत्या मैंने की है। छुरा देखतीं नहीं?—छुरा भी मेरे पास है।'—और वह एक दीप्त उल्लास से छुरा हाथ में लिए दरवाज़े की ओर बढ़ा—कमला कहती ही रही, 'दादू—दादू यह क्या करते हो? कुछ सुनो तो?—कुछ सुनो तो?'—पर कौन सुनता उसकी बात वहां पर?—दादू बाहर निकल चुका था।

२५

संध्या हो गई थी, अपने कमरे में बैठे-बैठे जी उकता रहा था। नये उपन्यास का अन्तिम परिच्छेद किसी तरह समाप्त होना नहीं चाहता। उधर प्रकाशक ने पेशगी क्या दे दी है, पुलीस पीछे लगा दी है। कहता हूं, तुम छापना तो शुरू करो, जब तक तुम इस अंश तक पहुंच पाते हो, तब तक तो मैं ऐसे दो दर्जन उपन्यास समाप्त कर दूंगा—पर प्रकाशक पर किस लेखक का बस चला है, खासकर जब कि वह पेशगी भी दे चुका है। बहरहाल, किसी उपन्यास का अन्त उसके प्रारम्भ से भी अधिक कठिन है, इसमें कोई संशय नहीं। 'ऑल एण्ड्स वेल, दैट एण्ड्स वेल' अंग्रेजी की कहावत के अनुसार यदि सब अच्छाई-बुराई समाप्ति पर ही

निर्भर करती हो, तो समाप्ति के लिए लेखक को सावधान भी होना चाहिए, कम से कम उसे पाठकों और आलोचकों से कितनी गाली या कितना यश मिलेगा यह उस पुस्तक के अन्त पर ही निर्भर करता है। खैर जब यही बात है, तो जल्दी में नहीं लिखूंगा; जब मन स्वस्थ हो ले—आज नहीं कल, कल नहीं परसों !—

ऊपर छत पर दरी डालकर चाहता था कि उदय होते हुए तारों का संगीत सुनूंगा कि नीचे से आवाज आई, कोई आ रहा है। कौन है ?—नौकर समझदार है, जरूरत पड़ने पर वह यह भी कह सकता है, 'पंडित जी बाहर गए हुए हैं।—यानी जैसे कभी कोई किराया मांगने वाला हो, या फिर कभी ऐसा दोस्त भी हो, जिसके आते ही उसे चाय बनानी होगी, बाजार जाकर नाश्ता, सिगरेट आदि लाना होगा, तो वह निस्संकोच कह देगा कि मैं घर पर नहीं हूं ! एक बार तो एक मित्र को भी, जिन्हें मैंने मिलने का समय दे रखा था, वह इसी तरह टालना चाहता था। मित्र ने जब कहा कि 'अजीब हजरत हैं, समय देकर बाहर चले जाते हैं,' तो आप कहने लगे—'जरा ठहरिए, कहीं ऊपर कमरे में बैठे लिख ही रहे हों ! कहा मुझसे उन्होंने यही था कि बाहर जा रहे हैं।'

खैर—सो आकाश में देख रहा था कि कब सबसे पहला तारा कहां उदय होता है, कि अपने पुराने मित्र कमलनयन जोशी और कृपानारायण जोशी यानी जूनियर और सीनियर दोनों ही आ टपके !

सीनियर जोशी ने कहा उसी तरह कन्धे उछालते हुए, 'अरे यार माई लॉर्ड ! कहां छिपे बैठे हो ? कैसे हो ? बड़ी अजीब खबर है, कुछ सुना है ?'

सीनियर जोशी का भी तबादला हो गया था। दरी पर सबके लिए जगह करके बैठने का इशारा करते हुए मैंने कहा—'बहुत बरसों बाद दिखाई दिए हो जोशी ! कब आए हो ?'

सिर को अपनी गर्दन की धुरी से बिल्कुल बाहर करके मोटे साफे के साथ घुमाते हुए उसने कहा, 'गोली मार यार आने को ! आया परसों

ही तो हूं—पर यह कमल जोशी क्या खबर लाया है कुछ सुना है ?'

मैंने देखा कि खबर सुनाने को दोनों ही का पेट फटा जा रहा है ! कमल के हाथ में शायद आज का दैनिक समाचारपत्र है।—कृपानारायण अपने झोले जैसे कोट की जेब में से कुछ निकालने का प्रयत्न करने लगा, तो मैंने उसकी ओर देखा—चेहरा वैसा ही पतला-पतला-सा, कुछ आगे निकले हुए दांतों के ऊपर फैले हुए सूखे ओठों को छिपाने वाली मूंछों के बाल सफेद होना शुरू हो गए थे; बगल का ऊपर का एक दांत शायद टूट चुका था; उनके ऊपर पानों की पीक जमी हुई थी। पैंट पहने हुए था, किन्तु वह भी उतना ही ढीला कि सरलता से बैठने में कोई कष्ट न हो, लखनऊ के गरारे जैसा ही।—दो दिन की बढ़ी हुई दाढ़ी के बाल भी यत्र-तत्र सफेद हो चले थे, जो सींक जैसे अलग ही मुंह निकाले दिखाई दे रहे थे।

कमल में सुरुचि शिक्षा के मान से अधिक ही है। वह मलमल का कुरता तथा ढीला पाजामा पहने हुए है। प्रतिदिन श्मश्रुनिरसन के द्वारा चहरे को चिकना-सुथरा रखने के पक्ष में है। गाहे-बगाहे सिगरेट का शौक भी कर लेता है। सिर के बालों में कंघी प्रायः घण्टे में एक बार दौड़ लगा आती है—और अब तो कुछ ही दिनों में उसका विवाह भी होने वाला सुना गया है। अतः उसकी सज्जा, उसका उल्लास, और आने वाले जीवन की ताज़गी की साक्षी भी उसके शरीर और मन पर देखी जा सकती है।

मैंने कहा, 'कमल की खबर तो मैं जानता हूं ! तुमने शायद अपने एक कलैंडर के सब पत्ते गिन डाले हैं न ?—कमल को तुमसे ईर्ष्या हो, और वह भी किसी ऐसे ही साहस के कार्य में प्रवृत्त होना चाहे तो क्या बुराई है !—तुम अपनी कहो।'

'अपनी क्या है माई लॉर्ड !—अब तो संन्यासी होने की इच्छा हो रही है ! सरकार के तो आंखें हैं नहीं। रूस में सुनते हैं कि हर बच्चे का अलाउन्स मिलता है, और यहां पाकिट की गिरह कटती चली जाती है।

बीवी ने भी अब तो जवाब दे दिया है !'

'जवाब दे दिया ?'

'अरे माई लार्ड ! पहले कम से कम प्रसूति का खर्चा तो मत्थे नहीं पड़ता था, अब श्रीमती जी ने कह दिया, कि पीहर नहीं जाएंगी। उनकी छोटी बहन ने पहले ही वहां अड्डा जमा रखा है।'

कमल ने कहा, 'और इसीलिए डिलीवरी के ब्याज के साथ ही साथ चक्रवृद्धि ब्याज भी चुकाना पड़ रहा है ! है न ?'

मैंने कहा, 'और वह तुम्हारा शरणार्थी परिन्दा क्या हुआ ?'

जोशी ने उसी तरह पेंच खाकर घूमते हुए लड्डू की तरह सिर को हिलाकर कहा—'अरे यार !—वह बात मत पूछ, माई लार्ड। वह परिन्दा उड़ गया बम्बई उसका एक दूर का बहनोई रहता है—सो बहन के साथ उसे भी घसीट ले गया। कहता था फिल्म कम्पनी में काम दिलवा देगा।'

'तब तो उसे परदे पर देखकर आंखें तृप्त कर सकोगे।—अच्छा किराए का क्या हुआ ?'

'क्या होगा ?—वह भी तब तक माफ था—'कमल ने कहा—'अब चढ़ी दर से वसूल करने का नोटिस जा चुका है।'

'क्यों जोशी ?' मैंने पूछा।

'अरे यार—तुम भी क्या बेकार बातों में फंसे हो।—आज का अखबार पढ़ा या नहीं ?—तुम्हारे नटनागर चन्दा मामा के देश पहुंच गए···'

'क्या मतलब ?···'

'और पहुंचाया भी किसने ?—उनकी उसी छबीली ने !—क्या माई लार्ड ! इस बीसवीं शताब्दि में भी तुम अखबार नहीं पढ़ते ?—देखो न····'

और उसने कमल के पास से अखबार छीनकर एक पेज मेरे सामने पटक दिया !

अखबार हिन्दी का था, पर था आज का ही। मैं ऊपर की हेड-लाइन पढ़कर ही उस सम्वाद को तलाश करना चाहता था किन्तु जोशी को इतना धैर्य कहां ?—उसने हाथ के इशारे से एक कॉलम पर मेरी दृष्टि को निबद्ध कर दिया।

'रेलवे अधिकारी के घर में लोमहर्षक हत्याकांड।—डिविजनल-सुपरिण्टेण्डेण्ट श्री कपूर····' और मैं सारे वातावरण को भूलकर उस सम्वाद को पढ़ने लगा। 'अर्धरात्रि को जब कि सुपरिण्टेण्डेण्ट महोदय बाहर दौरे पर गए हुए थे, उनके बंगले पर उनके हेड क्लर्क श्री एन० एन० नटनागर की मृत देह पाई गई। इस सम्बन्ध में दो व्यक्तियों को गिरफ्तार किया गया है; जिनमें एक है इनकी पत्नी ! विस्तृत समाचारों की प्रतीक्षा है।'

एक आघात-सा लगा।—कमला को मैंने वहां इसलिए पहुंचाया था कि वह पति और पुत्र दोनों को पास के !—कई दिनों से वहां के कोई सम्वाद नहीं पाए हैं। पहले तो कमला प्रति तीसरे दिन पत्र दे दिया करती थी, किन्तु एक पत्र में उसने संकेत कर दिया था कि श्री नटनागर अब उसका किसीको पत्र लिखना बर्दाश्त नहीं करते ! नटनागर का भी कोई पत्र कई दिनों से नहीं मिला था। इधर कपूर साहब के जो एकाध पत्र मिले थे, वे केवल सोम के अस्वास्थ्य के सम्बन्ध में ही थे—कमला का जिक्र केवल स्कूल की पृष्ठभूमि में ही कुछ आया था।—किन्तु इससे क्या हुआ ?—अपने मन में कोई विशेष भाव न था। यदि अपनी व्यस्तता लेकर वे मुझे याद न करें तो इसका मुझे अक्रोश क्यों हो ?—वे अपना मार्ग पा गए हैं, बस यही तो चाहिए !—अतः मैंने भी उनका विशेष सम्वाद जानने की अपने में कभी उत्सुकता नहीं पाई और इसीलिए उस दिशा में कभी कोई प्रत्यन भी नहीं किया।

जोशी ने कहा, 'सोचने क्या लग गए माई लार्ड।—यह औरतों की जात ही ऐसी होती है। तुम तो साधू आदमी हो, मगर हम जैसे भुक्त-

भोगी से पूछो तो बताएं !—इसकी परवाजी के लिए यह आकाश भी नाकाफी है।'

मैंने कहा, 'अपनी प्रेमिका की बात कह रहे हो, पर अपनी बीवी की बात भूलकर !—ठीक है न ?—उस बेचारी साध्वी महिला में कभी तुम्हें कोई शिकायत के लायक बात मिली है ?'

कमल ने हंसकर कहा, 'भाई साहब, आपसे यह खुलकर नहीं कहेगा ! पर दो शिकायतें तो यह कर ही चुका है !'

'कौन-सी ?'

'एक तो यही कि दर्जन की संख्या भाभी ने छोटी साबित कर दी, कौड़ी की ओर शायद उनकी दृष्टि हो ! दूसरे अब वे पिता के ऊपर अपने पति की करतूत का बोझ नहीं डालना चाहतीं।'

जोशी ने कहा, 'देखता हूं कमल, तू कहां तक बचता है। ओखल में एक बार सिर तो दे ले।'

सोच रहा था कि शायद कमल का दिल तो चुटीला हो गया होगा, किन्तु विषयान्तर होते ही इतनी शीघ्र वह चोट उसे भूल जाएगी कि उसे चोट कहना उचित न होगा।

मैंने कहा, 'और सुनाओ जोशी।—कैसा चल रहा है आजकल ?—कड़की का बाजार कैसा है ?'

'अपनी क्या है माई लॉर्ड ! खींचे जा रहे हैं किसी तरह। एक तरफ खचड़ा है, दूसरी तरफ हम जैसे खचेड़ू ; अब तो कभी-कभी आशा बंध चलती है, कि शायद एकाध पिल्ला पीछे से धक्का भी दे दे।'

'अच्छा ! फसल इस काबिल हो गई ?'

'बड़ा लड़का अगले साल मैट्रिक दे लेगा। माई लॉर्ड ! मैंने सुना है, कपूर साहब पर तुमने कोई जादू कर रखा है।'

कमल ने मेरी ओर भावपूर्ण दृष्टि से देखा, जैसे यह कहना चाहता हो कि इस जादू करने की घटना को वह जानता हो। किन्तु मैंने उस

ग्रोर ध्यान नहीं दिया। बोला, 'हां, यदि भूले न होंगे, तो जानना ही पड़ेगा।'

'बस ज़रा इस लड़के की सिफारिश कर दोगे, तो यह खचड़ा रस्ते लग जाएगा। देख ही रहे हो, मैं तो दो साल बाद रिटायर हो रहा हूं। बड़ी लड़की के लिए हलदी तैयार करनी है, सो प्राविडेण्ट फण्ड के पैसे के बिना सम्भव नहीं होगा, यदि तब तक भी लड़के का कुछ सहारा नहीं लगा, तो इस सारी फौज-पल्टन के साथ फाकामस्ती के सिवा कोई चारा न रह जाएगा।'—ग्रौर सचमुच ही उसकी ग्रांखों की रंगीनी क्षण भर में ही ऐसे गायब हो गई, मानो वह कभी ग्राई ही न थी।

मैंने कहा, 'यानी फिर उस गरीब छोकरे पर सारे कुनबे का बोझ लाद दोगे?'

'चारा ही क्या है?'

'उसे ग्रागे पढ़ाग्रोगे नहीं?'

'कहां से पढ़ाऊं?—ग्रौर भी तो सात लड़के, सभी उमर के हैं, उनका भी तो खर्च होता ही है!—पांच लड़कियां तब ग्रौर बच रहेंगी!—हिसाब लगाग्रो माई लॉर्ड! प्राविडेण्ट फण्ड का ज्यादा से ज्यादा पांच हज़ार समझ लो, पर जैसा कि कह चुका हूं, वह एक लड़की की हल्दी के लिए ही पूरा हो जाएगा।'

'तो बच्चे पैदा करने के पहले यह सब क्यों नहीं सोच लिया?'

'लो! ग्रब क्या सभी तुम्हारी तरह साधू हो जाएं?—पर माई-लॉर्ड, सच कहो, क्या यह साधूपना निभ जाता है?'

'तुम क्या सोचते हो?'

'भई! हमें तो भरोसा नहीं होता।—तुम तो ग्रभी काफी जवान हो, लोग-बाग जो कहते हैं, वही शायद सही हो!'

'लोग-बाग क्या कहते हैं?'

'बुरा तो नहीं मानोगे न?'

'कभी नहीं।'

'कहते तो यही हैं, कि इस नाटक से परदे के भीतर को छिपाने में बड़ी सरलता मिलती है।'

'परदे के भीतर यदि कुछ हो तो नाटक से वह छिपता ही है।'

जोशी को जैसे मेरे कथन से अपने मंतव्य में बल मिला, उल्लसित होकर वह बोला :

'अच्छा माई लॉर्ड, एक बात बताओ। यह जो सुना जाता है कि मिसेज़ नटनागर से तुम्हारा भी रब्त-जब्त था, बड़े छिपे रुस्तम निकले यार! लेकिन मानता हूं दोस्त!···' और मेरी जंघा पर ज़ोर का हाथ मारकर फिर उसने मुस्कराते चेहरे से अपने सारे सर को अपने तरीके से घुमाकर कहा, 'किसीको कानोकान खबर भी नहीं हो पाई। यह तो वे लोग हैं, जो खत को देखकर ही मजमून को भांप लेते हैं।'

मैं केवल सोचता रहा क्लर्क के जीवन की उस प्रतारणा को जो अपने सर्वनाशमय दुर्भाग्य को समझकर भी दूसरे के दुर्भाग्य को आनन्दोपयोगी करने का अवसर नहीं खोती। शायद इतने बड़े बोझ को अपने ऊपर उठाकर उसके चलते रहने की असम्भव दिशा को हृदय का ऐसा ही हल्कापन सम्भव कर पाता है। अभी ही जो जोशी अपने भविष्य की निविड़ निराशा की भयानक किन्तु वास्तविक छाया देखकर अर्धमृत हो उठा था, वही रोमांस की इस वीभत्सतामय भद्दे मज़ाक के एक क्षण का उपभोग करने में तनिक भी नहीं हिचकिचाया। कोई परवाह नहीं, यदि उसे मनुष्यता के बड़े नीचे स्तर पर उतरना पड़ा हो! मुझे जोशी पर क्रोध नहीं आया। उसीने तब कहा :

'हां, माई लॉर्ड! इस खबर को सुनकर इस तरह खो जाना स्वाभाविक ही है।—कुछ भी हो, मंज़ूर करोगे उस्ताद कि जिसे किसी भी बहाने कुछ भी दिल दिया जाता है, लौट आने पर भी दिल चुटीला तो हो ही जाता है। हमारी परी भी जब बम्बई के लिए उड़ गई थी, तो वहां उस पराए गांव में भी खबर सुनकर दो दिन तक खाना नहीं खाया जा सका था!'

कमल ने कहा, 'भाई साहब, आपको वहां जाना तो चाहिए।'

'तुम्हें नहीं जाना चाहिए ?'

'यहां से जाने के पहले ही मुझसे तो उनकी बोलचाल भी लगभग बन्द हो चुकी थी।'

'अच्छा ?—किन्तु एक बार तो उन्होंने मुझसे तुम्हारे बारे में बातचीत की थी।'

'बातचीत ?—वह क्या भाई साहब ?'—और उसके मुंह पर उद्विग्नता स्पष्ट हो उठी।

'कुछ याद नहीं रहा। शायद कुछ अर्थ सम्बन्धी बातचीत थी।'

कमल ने मेरे चेहरे की ओर देखा, शायद जानना चाहा कि मैं कितना कुछ जानता हूं उसके ऋण के सम्बन्ध में। साहूकार तो अब है सींखचों में बन्द। वह क्या कह सकती है, उसके कथन की प्रामाणिकता पर कितने व्यक्ति विश्वास करेंगे ? सब बातें मानो एक क्षण भर में ही उसने सोच लीं और कहा :

'अच्छा ! जाने से पहले मुझसे कुछ ऋण चाहती थीं। आप तो जानते ही हैं, नटनागर से उनकी बनती न थी, तब भी खर्चे के लिए उन्हें हर माह अपनी ओर से कुछ भेजना पड़ता था।'

'ओह !—मुझे साफ उन्होंने कुछ कहा नहीं। फिर कुछ तुमने उन्हें दिया तो नहीं कमल ?'

हंसकर कमल ने कहा, 'अब क्या उसका ढिंढोरा पीटता फिरूंगा भाई साहब !—नहीं, इतना ओछा मैं नहीं हूं।'

मैंने मुस्कराकर कहा, 'ओछेपन का प्रश्न तो तब हो कमल, कि जब उनका तुममें पाना हो, और इस समय का लाभ उठाकर तुम उन्हें लौटाओ नहीं। यह तो तुम्हारी उदारता है।'

कमल ने केवल मुस्करा भर दिया—पर मैंने स्पष्ट देखा कि उसके चेहरे पर एक झीनी-सी परत कालिख की छा गई है। अपने आपको इतना अस्वस्थ अनुभव करने लगा कि वह जोशी से बोला, 'जोशी ! तुम्हें

नानकचन्द के यहां भी तो जाना था ?'

मैंने पूछा, 'नानकचन्द ?'

'हां वही, जो अपने साथ था। भूल गए ? उसने अपने बच्चों के लिए कुछ सामान भेजा है। तो फिर माई लॉर्ड, आज छुट्टी दो ! जाने से पहले एक बार और मिलूंगा। कपूर साहब के लिए एक चिट्ठी ले जाऊंगा तुमसे।'—और जोशी जब उठा तो कमल भी उसके पीछे खड़ा हो गया।

मैंने कहा, 'अरे, अभी क्या जाते हो ?—चाय पी के जाना।'

जोशी सीनियर ने ही कहा, 'नहीं माई लॉर्ड ! आज की चाय उधार—ब्याज सहित वसूल कर लेंगे !'

'छुट्टी कितने दिन की है तुम्हारी ?'

'पन्द्रह दिन की, जिसमें पांच दिन तो हो ही गए। दस दिन और हैं।'

मैं भी उठ खड़ा हुआ—'ये दस दिन तो यहां बिता रहे हो न ?'

'बिल्कुल यहीं।'

'तो शाम को आ जाया करो। कुछ गपशप हो जाया करेगी। कितने बरसों बाद मिल रहे हैं।'

'लेकिन तुम तो ठहरे कामकाजी आदमी।'

'अरे काम कोई तुमसे बढ़कर है ?'

'अपना क्या है ?—चाय-वाय का अगर मुफ्त में ही इन्तजाम हो जाए तो जरूर शाम को यहीं रहा करेगी।'

'तो तै रहा !—और कमल तुम भी !'

'चेष्टा करूंगा भाई साहब, पर वादा नहीं कर सकता। जोशी को तो छुट्टी है, और आप हैं अपने समय के मालिक ! लेकिन मैं तो पराए बस में हूं। फिर भी अवसर मिलते ही जरूर आऊंगा।'—और दोनों रवाना हो गए।

मनुष्य की कमजोरियों पर मुझे आश्चर्य नहीं होता—जब बिना

कारण ही वह कमल के समान कृतघ्न भी हो उठता है, तो क्रोध भी नहीं होता, किन्तु मन पर एक आघात अवश्य लगता है। सीनियर जोशी ने जब कमला और मुझे लेकर एक अपवाद की ओर संकेत किया, तो हंसकर उसे टाल दिया, उसका प्रतिवाद करने की भी जरूरत नहीं समझी। आदमी को सोचने की और मत बनाने की स्वतन्त्रता है, वह घटनाओं का और प्रसंगों का मनमाना अर्थ लगाए तो उसे कौन रोकेगा? अर्थ की प्रेरणा देने वाले उसके संस्कार, उसका वातावरण, उसकी परिस्थितियां—किनके लिए वह उत्तरदायी है? किन्तु अपने ही व्यक्तित्व की परिधि में किसीके त्याग को खींच लेकर और उसे न केवल अस्वीकार करके, प्रत्युत् अपने लोभ को मिथ्या के साथ त्याग के रूप में प्रचारित करने की इस घृणित प्रवृत्ति की क्या कैफियत दी जाए?—यह केवल मेरी जेब से गए हुए एक हजार रुपयों का आक्रोश नहीं है, क्योंकि तब भी तो मैं कमल पर क्रोध नहीं कर सका। दुःख हुआ है तो मुझे केवल मनुष्यता के पतन पर!

किन्तु समाचारपत्र की जिस खबर की ओर ये दोनों क्लर्क अभी निर्देश कर गए हैं, उसकी गुरुता की तुलना में इन क्लर्कों की यह मनोवृत्ति ही ऐसी कौन-सी भारी है कि मेरे मन पर मानो यही घटना प्रमुख होकर छा गई है।—यह सच है कि कई दिनों से उस ओर से कोई समाचार नहीं मिले हैं! नटनागर ने मना कर दिया था, न भी किया होता तो भी क्या बात थी?—सम्वाद पाने की ऐसी कोई लालसा भी तो मन में थी नहीं! फिर क्या बात है?—यह अच्छा ही है कि व्यक्ति को लेकर मैं माथा-पच्ची नहीं करता।

नटनागर अब इस दुनिया में नहीं है, किसने उनकी हत्या की, क्यों की—कमला की उसमें क्या भूमिका है? वह क्यों गिरफ्तार की गई? गिरफ्तारशुदा दूसरा व्यक्ति कौन है? और फिर यह सब कपूर साहब के घर पर कैसे घटित हुआ? विस्तार से जानने की उत्सुकता होना स्वाभाविक है। कल से अखबार के लिए व्यवस्था कर लेनी होगी, किन्तु

जैसा कि कमल ने प्रस्तावित किया था, वहां जाने की आवश्यकता क्या है ? दाल-भात में मूसरचन्द बनने की तो कोई जरूरत नहीं देखता। कमला के मन को जानता हूं। उसकी भूख से भी परिचय प्राप्त किया है, और उसकी सामर्थ्य से भी। उसके दिल की गहराइयों में भी मैं उतरा हूं। समझता हूं कि किसी भरे हुए बड़े बर्तन में यदि फूटा हुआ बर्तन छोड़ दिया जाए, तो वह टपककर शेष नहीं हो सकता ! कमला को यदि ऐसे ही किसी स्नेह से भरे पात्र में स्थान मिल पाता, तो मन के छिद्रों के बावजूद उसकी तृप्ति चू न पड़ती ? किन्तु मुझे क्या ? मेरी जाति बड़ी कृतघ्न है, निस्संग होकर दूसरों की पीड़ा का व्यवसाय करते रहना ही मेरा धन्धा है। बहुत हुआ तो कमला मेरे किसी आख्यान की नायिका हो जाएगी। यदि सचमुच ही उसने नटनागर की, अपने पति की हत्या की है, तो प्रकट में अखबार के पाठक उसपर थूकेंगे, मैं अपने हृदय का राग उस पर उत्सर्ग करके अपने उपन्यास के पाठकों को प्रेरित करने का प्रयत्न करूंगा, कि वे उसके लिए दो बूंद आंसू बहा दें ! इससे अधिक एक अकर्मण्य दरिद्र लेखक कर ही क्या सकता है ?

दूसरे दिन प्रातःकाल जब नौकर अखबार खरीदने बाजार गया हुआ था, डाकिए ने लाकर एक तार पकड़ा दिया। तार कपूर साहब का है, एक्सप्रेस; लिखा है समाचारपत्र मैंने पढ़ा ही होगा—मुझे पहली गाड़ी से वहां पहुंचने का अनुरोध है ! बड़ी जरूरत है। सो मैं मानता हूं—बड़ी जरूरत हो सकती है कपूर साहब की—पर उसमें मेरा क्या ? जो हो। आज शाम की गाड़ी से पहले तो जाना हो नहीं सकता।

फिर भी जाना तो होगा ही। जीवन जब जी रहा हूं, तो जिसने भी इसे जीने लायक बना रखा है, उनका दावा तो स्वीकार करना ही पड़ेगा। निस्संग, अपने मानी में अधिक से अधिक हो तो मन हो सकता है, सो रहे मन निस्संग ! मन तो कहीं पर भी जाकर स्वतन्त्र रह सकता है।

कपूर साहब से दफ्तर में ही मिलना हुआ। सोम शरीर से बीमार

तो था, किन्तु श्रीमती नटनागर के इस काण्ड ने उसे इतना अधिक प्रभावित किया है कि अपने शरीर के अस्वास्थ्य का उसे खयाल ही नहीं रह गया है। फिर भी सारी परिस्थिति को समझकर अब वह प्रकृतिस्थ होने का प्रयत्न कर रहा है।

घटना वास्तव में बड़ी अशोभनीय हो गई। हत्या किसने की, यह कहना बड़ा कठिन है, श्रीमती नटनागर कहती हैं, कि हत्या उन्होंने की, नटनागर का नौकर दादू कहता है कि उसने की। श्रीमती नटनागर किसी प्रकार का लाभ उठाना नहीं चाहतीं। कपूर साहब ने स्वयं उन्हें बहुत समझाया कि जब दादू स्वीकार कर रहा है, तो उन्हें क्यों आपत्ति हो रही है? मान भी लो, हत्या उन्होंने की, किन्तु यदि वे जीवित रहकर मुक्त रह सकीं तो समाज की कितनी सेवा कर सकेंगी। इधर दादू जैसे नौकर का समाज में महत्व ही क्या है? यों भी है वह एक हाथ का, यदि उसके कुटुम्ब में कहीं कोई हो, तो उसकी जीविका का भार लेने के लिए भी कपूर साहब तत्पर थे। किन्तु श्रीमती नटनागर जाने क्या जिद पकड़ बैठी हैं उस नौकर के लिए। यह ठीक है कि नौकर ने उनकी ईमानदारी से खिदमत की है। सो वही तो नौकर का फर्ज है। उन्होंने भी तो उसे अब तक निभाया है! कपूर साहब ने तो यहां तक कहा कि खाली किसी-के स्वीकार करने मात्र से कोर्ट किसीको अपराधी नहीं ठहरा देती, वह उसकी जांच करती है, और प्रकृत हत्यारा बच कर नहीं जा सकता।

यों, कोई नहीं मान सकता कि एक हिन्दू पत्नी अपने पति ही की हत्या कर डाले। कमला तो अपने पति की प्राणांतक बीमारी में भी उनकी सहायता करती आई है। उसकी कमाई से ही श्री नटनागर दुःख के दिनों में अपनी नाव किनारे लगा सके थे। जिसको मौत के मुंह से बचाया जाता है, उसे इस तरह निर्दयता से पीठ में छुरा भोंककर मारा नहीं जा सकता। दादू के बारे में भी कपूर साहब ने पूरी जांच कर ली है। नटनागर के लिए उसके मन में रोष होना स्वाभाविक था। दादू का जब काम करते समय हाथ कट गया था, तो नटनागर ने उसकी फाइल

पर ऐसा नोट लिखा था कि बेचारे को दुर्घटना की क्षतिपूर्ति नहीं मिल सकी थी। मालूम पड़ता है तभी से वह उनके खिलाफ हो गया था। नौकरी तो उसे देनी ही पड़ी थी। श्रीमती नटनागर अपनी दयालुता के कारण उसपर विशेष कृपा करती थीं, इसलिए नटनागर उससे और भी जले-भुने थे। कपूर साहब को दादू के बयान से ही यह भी मालूम हुआ था कि नटनागर ने एक बार पहले दादू का खून करने की चेष्टा भी की थी, जिसके फलस्वरूप उसके कटे हुए बाएं हाथ में छुरे का निशान भी था।

वारदात की रात को कपूर साहब घर पर न थे। उन्हें तो श्रीमती नटनागर के उस दिन बीमार होने की सूचना मिली थी। उन्हींके हाथ की लीव-अप्लीकेशन को उन्होंने स्वीकृत किया था। नटनागर उस दिन देर तक दफ्तर में काम करते रहे, यह भी प्रमाणित हो चुका था। मालूम होता है दोनों में उस दिन अनबन हो गई थी, और जैसा कि दादू कह रहा है, उसका कारण वह खुद है! रात को जब नटनागर देर तक घर न लौटे, तो कमला उनकी खोज करती हुई कपूर साहब के बंगले पर पहुंची। सोम को बीमार देखकर वह वहां कुछ देर तक रुक गई। इसी बीच नटनागर घर पहुँचे और कमला को न पाकर उसकी खोज में कपूर साहब के बंगले पर दौड़े आए। दादू भी चोर की तरह पीछे लग गया, हाथ में छुरा लेकर। कपूर साहब के बंगले पर नौकर शिब्बू ने कुछ बीच-बचाव किया तो नटनागर ने उसे नीचे गिरा दिया। बस मौका देखकर दादू ने पीछे से पीठ में छुरा भोंककर नटनागर का काम तमाम कर दिया।

कपूर साहब ने किस्सा तो पूरा सुना दिया। चाहते थे कि मैं श्रीमती नटनागर को समझाऊं, और मनाऊं कि वे अपने आपको इससे निकाल लें। दादू को किए का फल पाने दें, और न्याय को सहायता दें। कपूर साहब ने व्यवस्था कर दी कि मैं दादू और कमला से जेल में भेंट कर सकूं।

दादू से मिलने पर कोई नई बात मालूम नहीं दी। उसे खूब अच्छी तरह समझा दिया गया था। सारा बयान इस तरह रटे हुए था कि जो

उसे जानता उसे सहज ही विश्वास हो जाता कि उसने बड़े मनोयोग से खूब मेहनत की है, और सारे वक्तव्य को कंठाग्र कर लिया है। उससे कमला के प्रति उसकी आन्तरिक भक्ति ही का परिचय मिला।

मैंने कहा, 'दादू ! तुम चाहे जो कहो, मुझे सच्ची बात का पता लग गया है।'

'मेम साहब ने कहा होगा आपसे ! पर वे तो इसलिए ऐसा कहेंगी कि मुझे बचाना चाहती हैं। पर पुलीस ने तो मुझे देखा है। मेम साहब के कपड़ों पर खून था, पर हाथ तो मेरे खून में रंगे हुए थे, छुरा तो मेरे पास था।'

'तुम्हारी बात सही भी हो, तो मेम साहब तुम्हें क्यों बचाना चाहती हैं ? इस दुनिया में कौन अप्रतिष्ठा से अपनी जान का मोह छोड़कर दूसरों की जान बचाना चाहता है ?'

दादू ने मेरी ओर इस तरह देखा, मानो कह रहा है, मेरी ओर देखो—क्या तब भी तुम्हें उत्तर नहीं मिलता ?—पर मुंह से बोला :

'मैं क्या जानूं सरकार ! मगर जब से मेरा हाथ कटा तभी से तो वे मुझे मां की तरह बचाती आ रही हैं।'

'इसलिए न तुम बेटे की तरह अपना फर्ज अदा करना चाहते हो ?'

दादू की आंखें चमक उठीं—उसकी छोटी-सी नाक के नीचे फैले हुए मोटे काले ओठ जरा-से फैल गए, पीले गन्दे दांतों को जीभ से चाट-कर उसने कहा, 'फर्ज की क्या बात है सरकार ? मां का कर्ज कौन उतार सका है। इस तन की चमड़ी का जूता पहनकर वे चलें तो भी पूरा नहीं हो सकता। भगवान भला करे।' और उसने अपनी आंखें बंद कर दीं। उनमें बहुत दूर कहीं एक आंसू का दरिया तूफान मचाने के लिए बेचैन हो रहा दिखाई दे रहा था !

मुझे देखते ही सीखचों में से ही हाथ बढ़ाकर कमला ने मेरे पैर पकड़ लिए, और कहा, 'इस पापिनी से घृणा नहीं की तुमने ?'

'चाह कर घृणा की जाती है क्या किसीसे ?'

'अनचाहे ही सही !'

'तुम गलत समझ गईं कमला ! चाहकर भी जब घृणा नहीं कर सका, तो अनचाहे कर ही कैसे सकता था ! घृणा-प्रेम, क्या इनपर किसी व्यक्ति का वश रहता है ?'

'नहीं रहता—यह मुझसे अधिक कौन जानता है—फिर भी तुम्हारी इस 'चाह' शब्द का मैंने गलत अर्थ लगा ही लिया था, यह जानते हुए भी कि तुमने कभी भी तो मुझे चाहा नहीं।'

'फिर भी सदैव कल्याण-कामना तो की है !—खैर, इन सब बातों का प्रयोजन तो तब होता, जब तुम इन सीखचों के बाहर होतीं। बहुत कुछ कथा कपूर साहब के मुंह से सुनी है ! यह आत्महत्या क्यों कर रही हो ?'

'आत्महत्या कह रहे हो ?—अरे भाई, एक हत्या का ऋण चुकाने को आत्महत्या नहीं कहते, कानून तक इसे ऋण-परिशोध ही कहता है।'

'पर यदि सरलता से पैसा मार देने की सुविधा मिल जाए ?'

'पर किसलिए ?—और जबकि पैसा मार देने का मतलब केवल कर्जे को बढ़ा देना ही हो।—आखिर मेरे कर्जे को दादू क्यों चुकाए ?'

'शायद मुझे विश्वास करना चाहिए, कि हत्या तुम्हींने की है ! अगर दादू ने की हो तो उसका कारण मैं सुन चुका हूं ! तुम्हारा कारण भी सुन सकता हूं क्या ?'

'तुम्हींको न सुनाऊंगी तो और किसे सुनाऊंगी ! पर दादू की कहानी पर तुमने विश्वास कर लिया था ?'

'क्यों नहीं कर लेता ? स्त्रियां यों ही किसीकी हत्या नहीं कर सकतीं। फिर तुम तो हिन्दू पत्नी हो, शिक्षित, दीक्षित, सुसंस्कृत,—और देखा तो यही गया है कि तुमने अपने पति का सदैव ही ध्यान रखा है।'

कमला ने आंखें बन्द कर लीं, कुछ समय तक उसने अपने अन्तरतम में कदाचित् अपने इस रूप को प्रत्यक्ष देखने का प्रयत्न किया, फिर बोली,

एक लम्बी सांस लेकर, 'शायद तुम सत्य ही कहते हो। दुनिया स्त्री को ऐसा ही तो समझती है, न समझती हो तब भी उससे चाह तो यही होने की की जाती है। लेकिन यदि मैं यह कहूं कि नारी भी मैं अपनी इच्छा के विपरीत बना दी गई,—यदि बना ही दी गई तो पत्नी मुझे नहीं बनना था, कम से कम उस व्यक्ति की तो नहीं! और फिर ये शिक्षा, दीक्षा, संस्कार सभी तो मुझे मेरी मर्जी के खिलाफ ही मिलते चले गए।—मानो यहीं तक मेरा भ्रम पर्याप्त न था, इसलिए मुझे जबर्दस्ती मां भी बना दिया गया! शायद मैं अपने भ्रम में सुखी भी रह लेती, पर निष्ठुर, तुम्हींने तो मुझमें एक अतृप्त भूख पैदा कर दी!'

'मैंने?'

'खुद मेरे निकट आकर, तथा मेरी सन्तान को मेरी आंखों के आगे करके!—तभी मैंने नस-नस में उस भूख को तड़पते हुए देखा। उचित पति के प्राप्त न होने के कारण वह एक पत्य की भूख थी, और सन्तान की अप्राप्ति से वह अपत्य की भूख थी। मेरे जीवन के इन दोनों कगारों को कोई तूफान ध्वंस कर दे, चाहे वह मेरे शरीर का पति ही क्यों न हो, और तब भी मुझसे आशा की जाए कि मैं सीमा न छोड़ूं?'

'कगारों का ध्वंस? मैं नहीं समझा कमला।'

'समझना चाहते हो?—तुम उस कष्ट को अनुभव नहीं कर सकते। जिस देवता की मूर्ति कोई अपने हृदय में लिए फिरे, जिसकी पवित्रता का प्राण देकर वह प्रमाण दे सकती है, उसको कोई क्षण-क्षण कलुषित करना चाहे, उसकी क्या सजा हो?—जिस सन्तान को मैंने जन्म दिया, जिस मांसपिण्ड से प्राण-प्रतिष्ठा करके एक पीढ़ी अपनी अमरता का उद्घोष करके निःशेष हो जाती है, उस संतान को यदि कोई नष्ट कर देना चाहे, चाहे वह उस अभागिनी मां का पति ही हो—वह स्त्री गाय हो, तो भी क्या उस बाघ का सामना करने को तैयार न हो जाएगी?—फिर भी, यह सच है कि मैं नारी हूं—नारी थी।—सच कहती हूं, किस क्षण में मुझसे क्या हो गया, इसका मुझे पता ही नहीं। कैसे हो गया

यह भी मैं नहीं जानती। केवल यही जानती हूं कि हो गया! किसने मुझसे वह काम करवाया, यह क्या कोई कह सकता है?'

'अच्छा! मुझे यह मालूम न था। कैसे हुआ यह कुछ?'

कमला ने वह समस्त कथा सुना दी! किस तरह वह नटनागर से संघर्ष करती रही, अपने मन से संघर्ष करती रही। फिर उस रात को कैसे वह अपने आपको न रोक सकी, और सोम के लिए वह कपूर साहब के घर जाने को विवश हुई, और किस तरह बाध्य होकर वह दिन उसे वहीं बिताना पड़ा। फिर उस काल रात्रि का वर्णन जिसमें विक्षिप्त नटनागर का हत्या के निश्चित उद्देश्य को कपूर साहब के यहां आना, कमला का असफल प्रतिरोध, सोम पर आक्रमण, कमला पर आक्रमण, तथा शिब्बू पर आक्रमण, और शेष में फिर उनके निःशेष होने की कथा, जितना वह जानती थी, सब सच-सच सुना गई। मैं कब जमीन पर बैठ गया, इसका पता ही नहीं रहा।

लम्बी सांस, रुंधा गला तथा भारी आंखों कमला ने कहा, 'किसीको यह कहानी सुनानी नहीं है। कपूर साहब की अप्रतिष्ठा का भी सवाल है!'

'लेकिन तुम्हारी प्रतिष्ठा पर जो आंच बढ़ जाएगी?'

'मरने वाले की प्रतिष्ठा ही क्या है भाई!'

'पर जैसा कि कपूर साहब कहते हैं, छोटे हित की तुलना में बड़े हित की ओर ध्यान देना ही तो हमारे कल्याण का मार्ग है।'

'मतलब?'

'तुम्हारी मनोस्थिति को देखते हुए जो कुछ तुमने किया वह स्वाभाविक ही कहा जाना चाहिए! सामाजिक जीवन में दादू की अपेक्षा तुम्हारी उपयोगिता अधिक है, इसे तो तुम भी स्वीकार करोगी!'

कमला कुछ मुस्करा दी, बोली, 'सामाजिक जीवन में न हो, तब भी एक व्यक्ति के जीवन में तो होगी ही।'

'मेरा भाग्य कुछ मन्द ही है कमला! सामाजिक उपयोगिता मेरी

कुछ नहीं है, पर समाज का भार बढ़ाना मैं नहीं चाहता।'

कमला ने हंसकर कहा, 'तुम्हें यदि इतना निकट से न जानती होती, तो अपने प्रेम का कभी विश्वास मुझे नहीं होता। मैं कह रही थी कपूर साहब की बात।'

'कपूर साहब की बात ?—कैसे ?'

'उनके लड़के को मिलती मां—और लड़के की मां के व्याज से मिलती उन्हें मिसेज़ कपूर···'

'कमला !'

'चौंक क्यों उठे ?—अस्वाभाविक क्या है इसमें ?'

'नहीं, अस्वाभाविक नहीं है। किन्तु कपूर साहब को देखकर यह अकल्पनीय अवश्य लगता है। खैर, यदि ऐसा हो भी तो मैं समझता हूं बुरा तो इसमें कुछ नहीं है। कपूर साहब भले आदमी ही हैं। उनके मन में कोई प्रतारणा तो अवश्य नहीं होगी।'

'मनुष्य कब भला नहीं होता है ?—नटनागर क्यों कम भले थे ? उस बेचारे का क्या दोष था ?—पत्नी होकर भी प्यार नही कर सकी, यह दुर्भाग्य तो मेरा है—पर आज उनके प्रति दया तो उत्पन्न होती ही है। और अनजाने ही जो शिक्षा, दीक्षा, संस्कार मुझे मिले हैं, उनके लिए मुझे उन्हींका तो कृतज्ञ होना चाहिए। बल्कि अपनी इस उपलब्धि के लिए जिन्हें मैं अपना शत्रु अनुभव करती रही हूं, उन्हींके निकट तो आभार मानना चाहिए।—तुम्हें आश्चर्य होगा, परसों मेरे अतीत के प्रेमी धर्मप्रकाश मुझसे मिलने के लिए आए थे !—धर्मप्रकाश को तो जानते हो !'

'हां-हां !—वे ही नटनागर के बड़े बाबू···'

'आजकल यहां आए हुए थे—कपूर साहब के ऑफिस में कुछ काम रहा होगा।'

'क्या कहते थे ?'

'बड़े दुःखित हुए !—पुराना किस्सा एकाएक याद न आया, लगे

नटनागर से सहानुभूति जताने ।—पर जब एक सूत्र मैंने उन्हें थमाया तो मुलाकात शीघ्र ही शेष हो गई !'

मेरे मन में आया कि दूसरे प्रेमी कमल का कच्चा चिट्ठा भी पेश कर दूं । पर क्यों ? क्यों इस दुःखित-प्रपीड़ित नारी की शेष यात्रा भारवह हो, और इस दुनिया से उसकी आस्था ही नष्ट हो जाए !

कह रही थी वह, 'उससे मैं तो उसकी ही बातें पूछ रही थी । जीवन सचमुच दुर्वह हो गया है बेचारे के लिए । पहले जैसे दिन तो रहे नहीं । न वे नौकर, न वे नाज़—बीवी, कहता था, खूब मोटी हो गई है, चल-फिर भी नहीं सकती, बच्चे-कच्चे बेकाबू हो रहे हैं, और दफ्तर में कोई उन्हें दो कौड़ी का नहीं पूछता ।'

'उनकी बात रहने दो । तुम यह कहो कि कपूर साहब के प्रस्ताव में तुम्हें क्या बुराई लगी ?'

'अच्छाई ही क्या लगती ?—उपलक्ष्यों से खिलवाड़ करने की न मेरी अवस्था है, न मेरी चाहना ही ।'

'पर मेरा ख्याल है, कपूर साहब निश्चय ही तुम्हारे जीवन में सुख की सृष्टि कर सकते कमला !'

'पर यह तो तुम नटनागर के लिए भी कहते थे ।'

'खैर, जब वह रहे ही नहीं, तो उस बात को जाने दो ।'

कमला कुछ क्षण चुप रही, फिर बोली, 'कपूर साहब अच्छे व्यक्ति हैं, आखिर वे मेरी सन्तान को प्राणों से अधिक प्यार करते हैं । मेरे आकर्षण का यही कम कारण नहीं है । किन्तु इस आकर्षण से तो मैं उनका भेद केवल नटनागर ही से देख सकती हूं । केवल इसीलिए घर बसाना दूर रहा, जीवन बसाने की जोखिम मैं कैसे ले लूं ?'

'जोखम क्यों कहती हो उसे ?'

'तो और क्या कहूं ! गुड्डों से खेलने की मेरी उमर बीत गई भाई !'

'कपूर साहब क्या एक गुड्डे ही हैं ?'

'जहां प्रेम न हो, वहां सभी तो गुड्डे-गुड्डियां हैं ।—कर्तव्य ने या

सामाजिक विधान ने उन्हें किसी तरह सजाकर आमने-सामने बिठा दिया है। जैसा आदेश मिले, वैसा व्यवहार करने के सिवा और क्या है उनके वश में ?'

'पर प्रेम भी तो एक आकर्षण ही है।'

'पर वही तो नहीं—अब तुम कहोगे, प्रेम जैसी कोई स्थायी वस्तु तो होती नहीं ! नहीं होती, यह मैं मानती हूं, जब जीवन ही स्थायी नहीं, तो उसमें प्राप्त होने वाली बाहरी वस्तु ही क्यों स्थायी हो जाएगी ?—किन्तु तुम मानो या न मानो, मजाक भी उड़ा सकते हो, मैं प्रेम को एक कला मानती हूं। इसके लिए साधना तो करनी ही पड़ती है, अपने उपकरणों की सामर्थ्य भी परख लेनी होती है। हर किसी कागज पर हर किसी तूलिका से तो कोई चित्र नहीं बनाया जा सकता ! यदि कागज में रंग ही फैल जाए, या तूलिका ही गड़ जाए, तो कलाकार के असंतोष का अन्दाज़ लगा सकते हो ?'

'हां—वह कागज ही को फाड़ फेंक सकता है।'

कमला ने मेरी ओर देखा। आंखें चार होते ही, मैंने आंखें गिरा लीं। एक लम्बी सांस का आभास-सा कानों को हुआ, किन्तु मैंने दृष्टि को मोड़ा नहीं। सुनाई दिया—'जीवन किसीका पूर्ण नहीं होता—प्रयत्न इसीलिए करना है कि वह पूर्ण हो जाए।—जिस बर्तन को लेकर हम इसे भरने चले हैं, उसमें समाज ने कितने छेद कर रखे हैं। रस-पात्र तक पहुंच ही नहीं पाता। इधर जिस गन्दगी में जीवन का घड़ा पड़ा हुआ है, वहां उसे जंग खाए जा रही है, यदि कभी घड़े में कुछ रस पड़ा भी तो वह उस जंग में भिदकर घड़े को ही खाना शुरू कर देता है। ऐसी ही विडम्बना में लौट चलने के लिए कह रहे हो ?'

'सम्भव है ऐसा आशय मिल जाए कि उसमें घट और पात्र दोनों ही समा जाएं।—बाहर और भीतर जब रस ही रस हो तो, छिद्र होने से भी रस-हानि नहीं होगी।'

'यही तो चाहा था। यही तो चाहा था नारी ने नर से।—कि

समर्पण कर दे वह अपने आपको समग्र रूप से नर के व्यक्तित्व में और वही नर, उसी समर्पण में से उसकी सन्तान बनकर प्रकट हो, और उससे जीवन मांगे।—नारी अधिकार नहीं चाहती, संरक्षण नहीं चाहती, वह केवल मिट जाना चाहती है समग्र रूप से—पर जब वह मिट नहीं पाती, तब वह अधिकारों से अपने आपको बहलाना चाहती है, संरक्षण की कामना करती है, और फिर जाने क्या-क्या नहीं करती।—मैंने भी यही चाहा था, पर नहीं हो सका।—अब और अधिक जीवन को व्यर्थ करने की दिशा में नहीं बहकूंगी।—जानते हो यह हत्या न हो जाती तो मैं क्या करती ?'

'कहो।'

'पुनः नटनागर के घर लौटने का इरादा न था। तुम्हारा आदेश था कि मैं पति और पुत्र दोनों को प्राप्त करूं—लौट आकर कहना चाहती थी कि क्यों दिया तुमने पत्थर से टकराकर मस्तक फोड़ने का आदेश मुझे ? —यदि मेरा सिर ही तुम फोड़ना चाहते हो, तो तुम्हारे चरणों की धूल का एक कण भी वह कर सकता था। अब यदि वह आदेश नहीं लौटाना चाहते, तो मुझे मेरी मुक्ति ही लौटा दो !···पर अच्छा हुआ—उसका अवसर ही नहीं आया। तुम कह देते—लो तुम मुक्त हुईं !—और मैं एकदम से निरर्थक हो उठती।'

'पर मैंने तो तुम्हें कभी बांधा नहीं ?'

'तब भी बंध तो गई ही।—आत्मा क्या होती है, मन क्या होता है, पता नहीं, इतना ही कह सकती हूं कि अपनी अद्वैतता के गंभीर निर्जन तल पर मैंने जिस मूर्ति को पाया, उससे बंधने के सिवा कोई चारा न था।'

'पर उससे अधिक गहरे तल तक भी तो कोई मूर्ति उतर सकती है। आखिर एक दिन नटनागर की मूर्ति को भी तो तुमने निर्जन तल में देखा था। बंधी शायद तब भी थी तुम !'

'बंधी थी, पर वह बंधन बड़ा सरल था, सरलता से टूट भी गया।

अधिक गहराई की बात कह सकते हो, किन्तु उथली चीजों से दृष्टि ऐसी क्षीण हो गई है कि गहराई में डर लगता है।—अद्वैत की उस डरावनी गुफा में अधिक उतरकर तो अपने को भी खो दूंगी !—नहीं, इस बन्धन में ही मेरा बचाव है। गोताखोर की तरह यह बंधन ही मुझे ऊपर की याद दिलाता रहेगा···'

मैंने एक लम्बी सांस ली। कमला शायद अब तक आंखें बन्द करके ही भावावेश में सब कुछ भूल-सी गई थी। मेरी आंखों को देखकर उसने कहा—'तुम्हें प्यार इसलिए नहीं किया, कि तुम मुझे लेकर दुःख पाओ ! तुम्हें तो तट के स्तम्भ की तरह अकम्प रहना चाहिए। यदि तुम्हीं हिल उठोगे तो तुमसे बंधी हुई नावों का क्या होगा ?—तुम तो लेखक हो, निस्संग—अपने आप में भरपूर, अपनी सृष्टि के नियामक, स्रष्टा, संहारक ! तुम्हें यह मोह शोभा नहीं देता।—आखिर तुमसे मैंने जो यह रस्सी अटका दी है, इसकी ही कुछ सार्थकता रखो···'

और कमला ने दोनों हथेलियों में अपना मुंह छिपा लिया।

सोच नहीं पाता, क्या कहकर मैं उसे सांत्वना दूं।—क्या कह दूं कि वह सीखचों से बाहर निकल जाए तो हम दोनों चले जाएं कहीं दूर, दुनियां के किसी कोने में जहां हमें कोई न पहचानता हो, जहां हमारे जीवन का कोई भी उपलक्ष्य निर्वेद न बने।—दादू है ही, केवल कमला के कहने भर की देर है, और फिर जीवन ही जीवन है ! प्रेम से पोषित, उमंगों से भरे सब प्रकार से समर्थ दो प्राणियों के लिए इस दुनियां में अप्राप्य क्या है ?—पर पाना ही क्या जीवन का सब कुछ है ?—यदि ऐसा है तो कितनों ने इस जीवन में पाया है ? यदि किसीने नहीं, तो क्या यह दुनियां व्यर्थ हो गई ? सब जीवन व्यर्थ हो गए ?

अपने ही हाथों से आंसू जिसको पोंछने पड़ते हैं, रुदन ही उसका रुदन शेष करता है। कमला ने कहा, 'दादू, तुम्हारा कहना मान लेगा। उसकी जिद से यह प्रवंचना का नाटक लम्बा होता जा रहा है। उसे कह दो, जीवन तो उसका ऋणी है ही, मृत्यु को भी वह क्यों न अपना ऋणी बना लेता।

उस मूक जड़ पिण्ड से सभी ने सदैव ही घृणा की है, किन्तु कोई नहीं जानता कि इन छल-छन्दों से हीन कितना निर्मल हृदय उसके पास है ! —उसने मुझे बेटी की तरह माना है, बिना मेरे दोषों पर ध्यान दिए ! दुनियां में मैं यदि किसीकी भक्ति कर पाई हूं तो वह केवल इस दादू की।—और उसे कहना कि वह मुझसे मिलने का प्रयत्न न करे। मुझसे सहा नहीं जाएगा।'

'और क्या आदेश है तुम्हारा ?....' मैंने अपने आपको कड़ा बनाकर पूछा।

'नटनागर के बाद उनके निकट की तो मैं ही हूं। तुम्हें उनकी मां के पास जाना पड़ेगा।'

'मां के पास ?'

'हां, वे अंधी हैं। जीवन में उन्हें मैंने सदैव ही दुःख दिया है, पास रहकर न सही, दूर रहकर ही, और अन्त में उनका बेटा भी छीन लिया। —उनकी व्यवस्था कर देनी होगी।—नटनागर की जो कुछ सम्पत्ति है, रेलवे की निर्वाह-निधि तथा बीमे से जो कुछ मिले, उसके अतिरिक्त निर्वाह-निधि का मेरा पैसा भी उन्हें दे दिया जाए। एक छोटा-सा बीमा मेरा भी है, उसका अधिकार मैंने दादू को दिया है। इसकी लिखा-पढ़ी का भी प्रबन्ध कर देना होगा।'

'अच्छा !'

'पर तुम्हें एक बार उनकी मां के पास जरूर जाना पड़ेगा। मां होकर मैंने मां के दर्द को पहचानने का प्रयत्न किया है। इस चोट को वे किस तरह सह सकेंगी, मैं कल्पना भी नहीं कर सकती। यदि उनको कुछ हो गया...'

'तो...सोचती हो, मैं तमाशा देख सकूंगा !'

कमला के ओठों पर मुस्कराहट नहीं आई, बोली—'उस बेचारी की दुर्दशा न होने पाएगी।'

'अच्छा ! सोम के लिए कुछ कहना है ?···यों कपूर साहब शायद तुमसे मिलेंगे ही।'

'नहीं, उनसे मिलने की आवश्यकता नहीं है। सोम के लिए क्या कहूं ?···वह ठीक हाथों में है। यदि हो सके तो वह न जानने पाए कि मैं उसकी मां थी।···अपनी मां की लांछना सुनकर वह क्यों दुःख पाए, यद्यपि यह अस्वीकार न करूंगी कि मां न समझकर भी उसने मुझे पुत्र का ही आनन्द दिया है।···यह क्या कम दुर्भाग्य है कि मां होकर भी मैं यह स्वीकार नहीं कर सकती।'

फिर काफी देर तक चुप्पी रही। जब कमला का रोने से कुछ दिल हल्का हुआ तो बोली :

'तुम्हें तो और देख पाऊंगी न ?'

'दरकार है क्या ?'

कमला ने मेरी ओर देखा, देखती रही, देखती रही !

मैंने कहा, 'कहो····क्या कहना चाहती हो !'

'शेष कथन।'····उसकी वाणी कांप उठी।

मैंने अपने आपको सम्हालकर कहा, 'नहीं; मैं फिर आऊंगा।'

कमला ने कहा, रोते हुए—'मुझे···मुझे तुम भूल जाने की चेष्टा करना।'

'सो क्यों ?'

'इसलिए कि इससे तुम दुःख ही पाओगे।'

'वह मेरी बात है, तुम अपनी कहो।'

'जो तुम्हारी है, वह मेरी नहीं है क्या ?'

एकाएक मेरे मुंह से निकला, 'तो चलो—मुझे जीवन की बड़ी साध है। हम दोनों कहीं बहुत दूर जाकर संसार की दृष्टि से ओझल हो जाएंगे।—देखता हूं, तुम भी तो मृत्यु से डर ही रही हो।'

'नहीं; मैं मृत्यु से नहीं डरती, किंतु जीवन के साथ मेरा अशेष दुलार रहा है। मृत्यु ही तो उसका सबसे बड़ा सत्य है, फिर उससे डर कैसा ?

जीवन की समस्त चेतनाएं, समस्त शक्तियां, उसी समय तो उद्‌बुद्ध होती हैं ! विकास के उस चरम क्षण से रोमांच हो सकता हो, कुछ आतंक भी हो, पर भय कैसा ?—तुम तो उपन्यासकार हो, समाप्ति के चरम क्षण की वह क्षिप्रता, सम्पन्नता, सिद्धि और प्रभाव क्या ऐसे तत्व नहीं हैं, जिनकी ओर प्रारम्भ ही से सबकी दृष्टि लगी रहती है !—फिर क्यों मैं इससे डरूंगी ?—तुम कहोगे कि पुस्तक का अन्त बीच ही में हो रहा है।—पर किसी परिधि में कहां आदि है, कहां मध्य है और कहां है अन्त ?—किन्तु प्रत्येक अध्याय की भी तो एक परिसमाप्ति होती है !—कभी यह भी होता है कि किसी ऐसे अध्याय पर ही पटाक्षेप हो जाना ही पुस्तक की प्रभविष्णुता की रक्षा कर सकता है।—मैं अनुभव करती हूं मैं जीवन के ऐसे ही मोड़ पर पहुंच गई हूं।'

'मोड़ ही तो रास्ते का अन्त नहीं है।'

'न हो, पर आगे का रास्ता मेरा नहीं है !'—फिर किंचित मुस्कराकर उसने कहा, 'तुम्हारे साथ से बढ़कर जीवन में सचमुच कामना की कोई वस्तु न थी ! तुम्हारे इस प्रस्ताव का क्षण ही मेरे जीवन की सबसे बड़ी सार्थकता हो गई है। इस क्षण को पकड़े रहकर ही मैं अमर हो गई। इससे अधिक मैं कुछ नहीं चाहती। तुम्हें तो मैं बहुत जानती हूं, यदि कहीं जन्म-जन्मांतर हों, तो शायद कई जन्मों से तुम्हें जानती हूं, बंध भी तुम जाओगे, पर यदि तुम्हें ही बांधने का प्रयत्न मैं करूंगी, तो मेरा आधार क्या रहेगा !···'

मैंने कहा, 'तो फिर आज मैं चलूं ?—क्योंकि समय तो हो गया है, और इसके पहले कि सिपाही आकर हमें अलग कर दे, हम स्वतः ही अलग हो जाएं ?'

'फिर आओगे न !'

'कमला—इस मोह को क्या आगे बढ़ाना ठीक होगा ?—पुस्तक न हो—यह अध्याय ही सही, यदि यहीं समाप्त कर दिया जाए···'

'ठीक तो है !—' और उसने सीखचों में से एक बार और अपने

हाथ बढ़ाकर मेरे आंसू पोंछ दिए। तभी दूर पर सिपाही दिखाई दिया। कमला ने शीघ्र ही मेरे पैरों को छूकर माथे से लगा लिया।

मैं उठा, पर एकाएक पैर लड़खड़ा गए, गिरते-गिरते बचा—सीखचों पर हाथ टिक गए, पर तभी कमला ने उठकर सीखचों से ही हाथ बढ़ाकर मुझे थाम लिया, बोली, 'क्या हो गया तुम्हें ?'

मैंने सम्हलकर कहा, 'नहीं, कुछ नहीं—' और मैं चल पड़ा, दरवाजे की ओर—कानों में किसीके क्रन्दन की गम्भीर सुबकियां एक आघात करने लगीं, करती रहीं, करती रहीं जीवन भर !

पर मैं लेखक हूं, यह कमजोरी मुझे शोभा नहीं देती है।

◇ ◇ ◇